कृष्णदास संस्कृत सीरीज १५१

श्री नारायणदैवज्ञ विरचितः

मुहूर्तमार्त्तण्डः

'मार्त्तण्डवल्लभा'-संस्कृत 'मार्त्तण्डप्रिया'-हिन्दी टीकासहितः

विशिष्ट 'चक्र सारिण्यादि' विभूषितः

हिन्दीटीकाकारः सम्पादकश्च

डॉ० सत्येन्द्रमिश्रः

कृष्णदास अकादमी, वाराणसी

कृष्णदास संस्कृत सीरीज
१५१

श्री नारायणदैवज्ञ विरचितः

मुहूर्तमार्त्तण्डः

'मार्त्तण्डवल्लभा' संस्कृत 'मार्त्तण्डप्रिया' हिन्दी टीकासहितः
विशिष्ट 'चक्र सारिण्यादि' विभूषितः

हिन्दीटीकाकारः सम्पादकश्च
डॉ० सत्येन्द्रमिश्रः
ज्यौतिषाचार्यः (स्वर्णपदक), पी-एच. डी.
ज्यौतिष विभाग
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयः
वाराणसी–५

कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
१९९७

प्रकाशक : कृष्णदास अकादमी, वाराणसी
मुद्रक : चौखम्बा प्रेस, वाराणसी
संस्करण : प्रथम, विक्रम संवत २०५३
मूल्य : रु० ६०-००

पो० बा० नं० १११८
के० ३७/११८, गोपाल मंदिर लेन
वाराणसी-२२१००१ (भारत)
फोन : ३३५०२०

अपरञ्च प्राप्तिस्थानम्

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस

के० ३७/९९, गोपाल मन्दिर लेन
गोलघर (मयदागिन) के पास
पो० बा० १००८, वाराणसी-२२१००१ (भारत)
फोन { आफिस : ३३३४५८
: ३३४०३२
आवास : ३३५०२०

KRISHNADAS SANSKRIT SERIES
151

MUHŪRTA MĀRTAṆḌA

OF

NĀRĀYAṆA DĀIVAJÑA

Mārtaṇḍavallabhā Sanskrit

AND

Mārtaṇḍapriyā Hindi Commentaries

TRANSLATED AND EDITED

By

Dr. SATYENDRA MISHRA

Jyotishacharya (Gold Madelist), Ph. D.

Deptt. of Jyotish

Banaras Hindu University

Varanasi–5

Krishnadas Academy

VARANASI, 1997

Publisher : Krishnadas Academy, Varanasi
Printer : Chowkhamba Press, Varanasi
Edition : First, 1997

Oriental Publishers and Distributors
Post Box No. 1118
K. 37/118, Gopal Mandir Lane, Varanasi–221001
(INDIA)
Phone : 335020

Also can be had from :
Chowkhamba Sanskrit Series Office
K. 37/99, Gopal Mandir Lane
Near Golghar (Maidagin)
Post Box No. 1008, Varanasi–221001 (India)
Phone { Office : 333458
Res. : 334032 & 335020

भूमिका

"मुहुः पुनः पुनः शश्वद भीक्ष्णमसकृत्समाः"

(यः कालो मूढ इव अव्यक्तः सन झटिति गच्छति स मुहुः शब्देनोच्यते)। निरुक्त के इस कथन से सिद्ध होता है कि "मुहु" शब्द का अर्थ थोड़ा समय होता है जो कि जल्दी (झटिति) बीत जाता है।

"मुह" प्रातिपदिक शब्द है इसमें "उरट" का आगम होने पर "मुहुरट" शब्द बनता है। इसमें "अट" का अनुबन्ध लोप और उपधा दीर्घ होने पर "मुहूर्त" शब्द निष्पन्न होता है।

मुहूर्त शब्द का उल्लेख ऋग्वेद में दो जगहों पर मिलता है—

(१) "रमध्वं मे वचसे सोम्याय ऋतावरीरुप मुहूर्तमेवैः (शुतुद्रि एवं विपाशा के संगम में आये हुए विश्वामित्र ऋषि एवं नदियों के संवाद क्रम में)।

(२) त्रिर्यद्दिवः परिमुहूर्तमागात्स्वैर्मन्त्रैरनृतुप ऋतावा" (इन्द्र के सोमरस पीने हेतु तीनबार आने के क्रम में)।

इन दोनों जगहों पर मुहूर्त शब्द का प्रयोग कुछ क्षण-काल के लिए ही हुआ है। "शतपथब्राह्मण" में भी "मुहूर्तंधारयित्वा" ऐसा उल्लेख मिलता है। इससे यह सिद्ध होता है कि प्राचीनकाल में मुहूर्त शब्द का प्रयोग कुछ क्षण के लिए ही होता था।

ऋग्वेद के अनुसार मुहूर्त का दूसरा अर्थ दिन का एक निश्चित भाग भी होता है। "त्रिंशद्धाम विराजति वाक्पतंगाय धीयते" के अनुसार यह सिद्ध होता है है कि सूर्य के किरणों से दिन-रात्रि के ३० धाम प्रकाशित होते हैं। २ घटिका एक धाम (६० ÷ ३० = २) यानि की एक मुहूर्त। इस प्रकार दिन में १५ मुहूर्त और रात्रि में भी १५ मुहूर्त होते हैं। "तैत्तिरीय ब्राह्मण" में दिन एवं रात्रि के मुहूर्तों का उल्लेख है जिनका क्रम इस प्रकार से है—

दिन के मुहूर्त

१. चित्र	६. ज्योतिष्मान	११. रोचन
२. केतु	७. तेजस्वान	१२. रोचमान
३. प्रभान	८. आतपन	१३. शोभन
४. आभान	९ तपन	१४. शोभमान
५. संभान	१०. अभितपन	१५. कल्याण

रात्रि के मुहूर्त

१. दाता	६. आवेशयन	११. आभवन
२. प्रदाता	७. निवेशयन	१२. प्रभवन
३. आनन्द	८. संवेशयन	१३. संभवन
४. मोद	९. संशान्त	१४. संभूत
५. प्रमोद	१०. शान्त	१५. भूत

पुराणों–स्मृतियों में भी "मुहूर्त" का उल्लेख है जिसका विवरण बौधायनधर्मसूत्र–मनुस्मृति एवं याज्ञवल्क्यस्मृति में विशेष मिलता है। "पाणिनि व्याकरण" में पतजंलि भगवान ने भी ऐसे व्यक्ति की चर्चा की है जो प्रतिदिन एक "मुहूर्त" तक पाठ करे। कालिदास के रघुवंश में आया है कि अज का जन्म ब्राह्म (अभिजित) मुहूर्त में हुआ था। कुमारसंभव में भी है कि पार्वती को विवाह हेतु मैत्रमुहूर्त में अलंकृत किया गया था।

उपर्युक्त उल्लेखों और प्रमाणों से यह सिद्ध होता है कि मुहूर्त शब्द का प्रचलन वैदिककाल से ही है परन्तु कालक्रमानुसार इनके नामों में कुछ परिवर्तन होते रहे हैं। 'जो 'तैत्तिरीय ब्राह्मण" काल में नाम थे उनमें कुछ परिवर्तन आगे चलकर हुए जो आथर्वण ज्योतिष में हमें देखने को मिलता है। आथर्वण ज्योतिष के अनुसार दिन के मुहूर्तों के नाम इस प्रकार हैं—

१. रौद्र	६. वैराज	११. विजय
२. श्वेत	७. विश्वावसु	१२. नैऋत
३. मैत्र	८. अभिजित	१३, वारुण
४. सारभट	९. रौहिण	१४. सौम्य
५. सावित्र	१०. बल	१५. भग

उपर्युक्त तथ्यों–उल्लेखों से यह स्पष्ट होता है कि कालक्रम से मूहूर्तों के दो बार नाम पड़े, प्रथम तो तैत्तिरीय ब्राह्मणकाल में और द्वितीय आथर्वण ज्योतिष एवं पुराण–स्मृतिकाल में।

"वराहमिहिर" के ग्रन्थों को देखने से यह प्रतीत होता है कि उस समय तक मुहूर्तों के नामों का प्रचलन कम और उनके देवताओं के नामों का प्रचलन ज्यादा हो गया था। "वराहमिहिर" के "बृहद्योग-यात्रा" में मुहूर्त के विषय में "अह्नः पंचदशांशे रात्रश्चैवं मुहूर्त इति संज्ञा" ऐसा लिखा हुआ है। मुहूर्तों के नाम भी दिये गयें है। जिसमें से दिन के मुहूर्त इस प्रकार हैं—

१. शिव	६. जल	११. इन्द्र
२. भुजग	७. विश्वेदेव	१२. निशाचर
३. मित्र	८. विरंचि	१३. वरुण
४. पितर	९ ब्रह्मा	१४. अर्यमा
५. वसु	१०. इन्द्राग्नि	१५. भग

इस तरह वराहमिहिर के समय में जो मुहूर्तों के नाम प्रचलित थे उसका उल्लेख उन्होंने अपने ग्रन्थों में किया है। उसी का अनुसरण आगे चलकर रत्नमाला आदि ग्रन्थों में होता रहा और आजतक भी प्रचलित है। मुहूर्तों के जो नाम हैं उनका उल्लेख वैदिक–वेदाङ्ग और पुराणकालिक क्रम से यहाँ कर देना उपयुक्त रहेगा। नीचे सारणि देखें—

मुहूर्त	वैदिक काल (तैत्तिरीय ब्रा०)	वेदाङ्ग काल (आथवर्णज्यौ०)	पुराण स्मृतिकाल (वराहमिहिरकाल)	मुहूर्त-मार्त्तण्ड काल
१	चित्र	रौद्र	शिव	शिव
२	केतु	श्वेत	भुजग	सर्प
३	प्रभान	मैत्र	मित्र	मित्र
४	आभान	सारभट	पितर	पितर
५	संभान	सावित्र	वसु	वसु
६	ज्योतिष्मान	वैराज	जल	अम्बु
७	तेजस्वान	विश्वावसु	विश्वेदेव	विश्वेदेव
८	आतपन	अभिजित	विरंचि	अभिजित
९	तपन	रौहिण	ब्रह्मा	ब्रह्मा
१०	अभितपन	बल	इन्द्राग्नि	इन्द्र
११	रोचन	विजय	इन्दु	इन्द्राग्नि
१२	रोचमान	नैऋत	निशाचर	निशाचर
१३	शोभन	वारुण	वरुण	वरुण
१४	शोभमान	सौम्य	अर्यमान	अर्यमा
१५	कल्याण	भग	भग	भग

उपर्युक्त नामों में वैदिक और वेदाङ्गकालीन नामों में साम्यता नहीं है परन्तु वेदाङ्ग और वराहमिहिर कालीन नामों में कुछ साम्यता है जैसे मैत्र-मित्र, विश्वावसु-विश्वेदेव, वारुण–वरुण, भग-भग आदि।

इस प्रकार से यह पता चलता है कि वैदिककाल में जो नाम प्रचलित थे वे वेदाङ्गकाल में परिवर्तित हुए। वेदाङ्गकालीन जो नाम थे वे वराहमिहिर काल में परिवर्तित हुए और आजकल भी वहीं प्रचलित हैं। वराहमिहिर के समय में जो परिवर्तन हुए उसमें अधिकांश मुहूर्तों के स्वामियों के नाम ही ले लिए गये जैसे रोहिणी-ब्रह्मा, नैऋत्य-निशाचर आदि।

अब यहाँ मुहूर्त के मान के विषय में भी कुछ विचार कर लेना आवश्यक है। "राज निर्घण्टु" में "मुहूर्तो घटिका द्वयम्" ऐसा दिया है। "अमरकोश" के अनुसार—

१८ निमेष = १ काष्ठा
३० काष्ठा = १ कला (८ सेकेण्ड)
३० कला = १ क्षण (४ मिनट)
१२ क्षण = १ मुहूर्त (४८ मिनट) = (२ घटी) होता है।

इस सबसे यह निश्चित है कि एक मुहूर्त का समयकाल २ घटी (४८ मिनट) का होता है। अब इसके मान के न्यूनाधिक होने के कारणों पर थोड़ा विचार कर लें।

मध्यममान से दिन-रात्रि के ३० + ३० घटी के मानों में ही द्विघट्यात्मक मुहूर्तों की गणना की गई है परन्तु वे सर्वदा द्विघट्यात्मक नहीं होते, उनमें कुछ न्यूनाधिक भी होता रहता है। जैसे मेषसंक्रान्ति के बाद दिनमान जब ३० घटी से बड़ा होता है तो दिन के मुहूर्तो का मान भी २ घटी से अधिक हो जाता है और रात्रि मान के ३० घटी से कम होने के कारण रात्रि के मुहूर्त २ घटी से कम हो जाते हैं। ठीक इसके विपरीत तुलासंक्रान्ति के बाद दिन के मुहूर्त का मान २ घटी से कम और रात्रि का अधिक हो जाता है।

प्राचीनकाल में मुहूर्त शब्द का प्रयोग थोड़ी देर या दो घटिका के अर्थ में होता था। आगे चलकर इन मुहूर्तों में से कुछ शुभ अशुभ मान लिए गये। जैसे प्रियकार्य मैत्रमुहूर्त में, क्रूरकार्य रौद्र में, जादू टोना आदि सारभट में, विवाह भग में इत्यादि इत्यादि। इस तरह मुहूर्त का एक तीसरा अर्थ भी प्रचलित हो गया कि "वह काल जो किसी शुभ कार्य के योग्य हो" वह मुहूर्त कहा जाने लगा। जैसे कि "मुहूर्त दर्शन" में लिखा है "कालः शुभ क्रिया योग्यो मुहूर्त इति कथ्यते"।

प्राचीनकाल में वैदिककर्म-गृहकर्म एवं संस्कार सम्पादन में केवल शुभ नक्षत्रों को ही ग्रहण किया जाता था, उससमय तिथि-वार-राशि-लग्न आदि का विचार नहीं होता था। आगे चलकर विवाहादि शुभकार्य या गृहकार्य हेतु 'शुभकाल' का विचार किया जाने लगा जो हमारे शास्त्रों में 'मुहूर्त' नाम से विख्यात हुआ। मुहूर्त के इस तीसरे अर्थ को परिभाषित करने में पंचाङ्ग (तिथि-वार-नक्षत्र-योग-करण) तथा राशि-लग्न-मास-ऋतु, ग्रहों के उदयास्त, धर्मशास्त्रीय निर्णय आदि इन सबका सहयोग रहता है अतः यह निःसन्देह कहा जा सकता है कि 'मुहूर्त' ज्यौतिष और धर्मशास्त्र का निचोड़ (सारतत्व) है।

हमारे समस्त धार्मिक सांसारिक एवं व्यावहारिक कृत्य 'मुहूर्त' पर ही आधारित हैं। प्राचीनकाल में 'मुहूर्तविचार' संहिताग्रन्थों का अंग हुआ करता था बाद में मुहूर्तसम्बन्धी विषयों का प्राधान्य हो जाने के कारण स्वतन्त्र 'मुहूर्तग्रन्थ' बनने लगे। हमारे लोक व्यवहार से प्राचीनकाल से ही मुहूर्तों का घनिष्ट सम्बन्ध रहा है और आज भी है। आजकल बहुत से ऐसे कार्य हैं जो विना मुहूर्त के सम्पन्न नहीं किये जा सकते। अतः यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि ज्यौतिषशास्त्र के अस्तित्व संरक्षण और प्रतिष्ठासंवर्धन में 'मुहूर्तों' का बहुत बड़ा योगदान है। वराहमिहिर के काल तक तो संहिताग्रन्थों में ही मुहूर्तों का उल्लेख रहता था परन्तु बाद में 'लल्ल' के समय से स्वतन्त्र मुहूर्तग्रन्थों की रचना होने लगी। यहाँ लल्ल के समय से मुहूर्त-मार्त्तण्ड के समय तक के जो प्रचलित मुहूर्तग्रन्थ हैं उनके नाम प्रस्तुत हैं—

ग्रन्थ	लेखक	शक	ईशवीयसन
रत्नकोश	लल्ल	५६०	६३८
रत्नमाला	श्रीपति	९६१	१०३९
राजमार्त्तण्ड	भोजराज	९६४	१०४२
अद्भुतसागर	बल्लालसेन	१०९०	११६८
व्यवहार प्रदीप	पद्मनाभ	१०७२	११५०
ज्योतिर्विदाभरण	कालिदास	११६४	१२४२
विवाह वृन्दावन	केशव	११६५	१२४३
विवाह पटल	शार्ङ्गधर	१४००	१४७८
मुहूर्ततत्व	केशव (नन्दिग्राम)	१४२० (संभवतः)	१४९८
विवाहपटल	पीताम्बर	१४४४	१५२२
ज्योतिर्निबन्ध	शिवदास	१४४६ (संभवतः)	१५२४
ज्योतिषदर्पण	कच्चपल्लु	१४७९	१५५७
मुहूर्तमार्त्तण्ड	नारायण	१४९३	१५७२

प्रस्तुतग्रन्थ मुहूर्तमार्त्तण्ड के लेखक का नाम 'नारायण' था। उन्होंने स्वयं इस ग्रन्थ के विषय में लिखा है कि 'यः षष्ट्यायुत शतवृत्त बद्धमेनं मार्त्तण्डं' अर्थात् १६० श्लोकों से युत यह ग्रन्थ है। इस ग्रन्थके मंगलाचरण के श्लोक से लेकर यः "षष्ट्यायुत शतवृत्त"श्लोक तक की संख्या ही १६० है बाद में २ श्लोक और हैं जिनमें रचनाकाल और रचना का उद्देश्य है अतः इन्हें मिलाकर ग्रन्थ में १६२ श्लोक हैं। विषयों के अनुसार प्रकरण (अध्याय) जो हैं उनके नाम इस प्रकार हैं—

संख्या	प्रकरण	श्लोकसंख्या
१	त्याज्य प्रकरण	५
२	नक्षत्र ,,	४
३	संस्कार ,,	१९
४	विवाह ,,	५५
५	अग्न्याधान ,,	१
६	गृह ,,	२१
७	यात्रा ,,	२१
८	मिश्र ,,	१९
९	अनध्याय ,,	७
१०	पल्ली-सरठ ,,	१
११	गोचर ,,	३
१२	संक्रान्ति ,,	२
१३	ग्रन्थकर्तुः परिचयप्रकरण	४
		कुल श्लोक १६२

अपने जन्मस्थान और कुलगोत्र के विषय में ग्रन्थकार ने स्वयं लिखा है कि देवगिरि पर्वत से उत्तर दिशा में जो घुश्मेश नामक ज्योतिर्लिङ्ग है उससे उत्तर में

'टापर' नामक ग्राम इनका जन्मस्थान है। यह स्थान महाराष्ट्र राज्य के औरङ्गाबाद जिले में प्रसिद्ध एलोरा की गुफाओं के निकट में है।

'मुहूर्तमार्त्तण्ड' ग्रन्थ की रचना शक १४९३ (सन १५७२) में करने के पश्चात ग्रन्थकार ने वर्षभर के बाद शक १४९४ (सन् १५७३) में 'मार्त्तण्डवल्लभा' नामक संस्कृत टीका की जो अत्यन्त ही उत्कृष्ट और प्रामाणिक है। टीका में स्वयं ग्रन्थकार ने लिखा है कि उनके पूर्वजों का निवासस्थान 'सासमणूर' था और वे कौशिकगोत्रीय वाजसनेई माध्यन्दिनी शाखाध्यायी अग्निहोत्री ब्राह्मण थे। इनके वंशवृत के विषय में जो कुछ उपलब्ध हुआ है उसका विवेचन आगे ग्रन्थ के १३वें प्रकरण में किया गया है।

इस ग्रन्थकी बहुत सी टीकायें बाजार में उपलब्ध थी परन्तु छात्रों के लिए वे सुगम्य नहीं थी। यह ग्रन्थ कई विश्वविद्यालयों के ज्योतिषविषयक पाठ्यक्रमों में है जिसके कारण छात्रों के पठन पाठन हेतु एक सुगम्य और प्रामाणिक टीकाकी अत्यन्त आवश्यकता थी। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए मैंने इस ग्रन्थ की अत्यन्त प्रामाणिक संस्कृतटीका 'मार्त्तण्डवल्लभा' के साथ अपनी हिन्दीटीका का नाम भी 'मार्त्तण्डप्रिया' रखा। इस हिन्दीटीका में छात्रों के ज्ञान हेतु सरल भाषा और सारणी-चक्रों द्वारा इस ग्रन्थ के रहस्यों को खोला गया है। मुझे आशा ही नहीं विश्वास भी है कि 'मार्त्तण्डवल्लभा' और 'मार्तण्डप्रिया' का यह संयोग विद्वानों को आह्लादित करेगा तथा छात्रों का ज्ञान वर्धन करता रहेगा।

इस ग्रन्थ के दुरुह स्थलों को सुलझाने में गुरुवर्य प्रोफेसर डा० रामचन्द्र पाण्डेय जी का सहयोग प्राप्त होता रहा है अतः हम उनके अत्यन्त आभारी हैं। इसमें मुहूर्तसम्बन्धी भ्रमोत्पादक शब्दों को स्पष्ट करने में 'पं० हीरालाल मिश्र' गुरुजी का योगदान रहा है अतः मैं उनके चिरायुष्य की कामना करता हूँ। ग्रन्थ की प्रेसकापी निर्माण और प्रूफ संशोधनादि में 'आमोद कुमार पाण्डेय' शोधछात्र ज्यो. वि. का. हि. वि. वि. का सहयोग प्राप्त होता रहा है अतएव हम उनके उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हैं। इस ग्रन्थ के प्रकाशक चौखम्बा संस्कृत सीरीज के 'वृजमोहनदास' जी बराबर मेरा उत्साहवर्धन करते रहे हैं अतः हम इनके चिरायुष्य होने की कामना करते हैं ताकि इनके द्वारा हमारे प्राचीन ग्रन्थों का उद्धार होता रहे। इस ग्रन्थ के सम्पादन-टीका मुद्रण आदि में जो कुछ त्रुटियाँ हुई हों उसे सुधी पाठक क्षमा करेंगे। इसी सबके साथ "असतो मा सद्गमय"।

माघी पूर्णिमा
संवत् २०५३

सुहृत्कृपाकांक्षी
सत्येन्द्र मिश्र

विषयानुक्रमणिका

८ मिश्र प्रकरणम् २३०-२५६

—::०::—

॥ श्रीः ॥

मुहूर्तमार्त्तण्डः

"मार्त्तण्डवल्लभा" संस्कृत टीका "मार्त्तण्डप्रिया" हिन्दी टीका

त्याज्यप्रकरणम्–१

मार्तण्डोऽवतु वाचं नः पादैर्जाडयतमोहरः ।
वृत्तबद्धतनुः सेव्योभीष्टदो विश्वलोचनः ॥

कुर्वे मुहूर्तमार्त्तण्डटीकां मार्त्तण्डवल्लभाम् ।
इयमाकल्पमेतेन दीव्याद्विप्रास्यवेश्मसु ॥

अर्थद्वयवाची । तत्र प्रथमं सूर्यपक्षे—मार्त्तण्डः श्रीसूर्यः नोऽस्माकं वाचमवतु रक्षतु, किं लक्षणो मार्त्तण्डः वृत्तबद्धतनुः वृत्ते मंडले बद्धा तनुर्यस्य स तथा । तथा च स्मृतौ—

सशंखचक्रं रविमंडले स्थितं कुशेशयं कांतमनंतमच्युतम् । इत्यादि ।

श्रुतिरपि—

य एष एतस्मिन्मण्डले पुरुषः सोऽग्निः । इत्यादिः ।

पुनः किं लक्षणः पादैः किरणैः जाड्यतमोहरः जाड्यं पातकं शीतं वा तमोंधकारस्तद्धरतीति तथा । पुनः किं सेव्यः सेवितुं योग्यः सेव्यः अभीष्टफलदातृत्वात् । पुनः अभीष्टदः सेवितः सन्नभीष्टार्थदायीत्यर्थः । पुनः कथंभूतः विश्वलोचनः विश्वं लोच्यते अनेनेति विश्वलोचनः "लोकचक्षुर्ग्रहेश्वर" इत्यादित्यहृदये उक्तत्वात् प्रकाशकत्वात् ।

अथ ग्रन्थपक्षे मार्त्तण्डः मुहूर्तमार्त्तण्डः नः वाचम् अवतु, किं लक्षणः वृत्तबद्धतनुः वृत्तानि प्रहर्षिणीशार्दूलविक्रीडितानि तैर्निबद्धा तनुर्यस्य तथा, पुनः पादैर्जाड्यतमोहरः पादैर्वृत्तचरणैर्जाड्यं मूर्खत्वं तदेव तमः तद्धरतीति तथा, पुनः सेव्य निरन्तरं पठनीय इत्यर्थः, पुनः अभीष्टदः यथोक्तमुहूर्त-व्युत्पत्तिकरणादभीष्टार्थसिद्धिकारीत्यर्थः। पुनः विश्वलोचनः समयप्रकाशकत्वात्।

मंगलाचरण—

सिंदूरोल्लसितमिभेन्द्रवक्त्रमंबां श्रीविष्णुं वियतिचरान्गुरून्प्रणम्य।
बह्वर्थं विबुधमुदे लघुं मुहूर्तमार्तण्डं सुगममहं तनोमि सिद्धयै॥१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

इहशास्त्रे तावत्संबन्धाभिधेयप्रयोजनान्युच्यन्ते। आब्रह्मादिविनिःसृतमिदं वेदांगमितिसंबन्धः। उक्तं च नारदमुनिना स्वसंहितायाम्—

वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिःशास्त्रमनुत्तमम्।
अस्य शास्त्रस्य संबंधो वेदांगमिति धातृतः॥[1] इति।

अत्राप्युक्तम्—

पूर्ववाक्यार्थमादाय ग्रंथोयं रचितो लघुः।[2]

त्याज्यनक्षत्राद्यतुलग्नगोचरं गर्भाधानादिसंस्कारविवाहाग्न्याधानवास्तु-यात्रामिश्रानध्यायपल्लीग्रहगोचरसंक्रांतिकथनमभिधेयम्। तथा च नारदः—

अभिधेयं च जगतः शुभाशुभनिरूपणम्।[3] इति।

अस्य प्रयोजनं मुहूर्तैर्नानाकार्यसाधनं अस्य सम्यग् ज्ञानान्मोक्षावाप्तिरिति वा किमेभिरुक्तैरित्यत्रोच्यते नृणां संबन्धाभिधेयप्रयोजनकथनात् शास्त्रे प्रवृत्तिर्जायते उक्तं च—

सिद्धिः श्रोतृप्रवृत्तीनां संबन्धकथनाद्यतः।
तस्मात्सर्वेषु शास्त्रेषु संबन्धः पूर्वमुच्यते॥
किमेवात्राभिधेयं स्यादिति पृष्टस्तु केनचित्।
यदि न प्रोच्यते तस्मै फलं शून्यं तु तद्भवेत्॥
सर्वस्यैव हि शास्त्रस्य कर्मणो वापि कस्यचित्।
यावत्प्रयोजनं नोक्तं तावत्केन न गृह्यते॥ इति।

---

१. नारद संहिता—अध्याय १ श्लो० ४–५
२. मुहूर्त मार्त्तण्ड—अ० १२ श्लो० ४
३. नारद संहिता—अ० १ श्लो० ५

इह शास्त्रे कस्याधिकार इति प्रोच्यते द्विजस्यैव वेदांगत्वात्। यतः षडंगो वेदो हि द्विजैरेवाध्ययनीयो ज्ञातव्यश्च। तथा चोक्तं भास्करीय-सिद्धान्तशिरोमणौ—

तस्माद्विजैरध्ययनीयमेतत्पुण्यं रहस्यं परमं पवित्रम्।
यो ज्योतिषं वेत्ति नरः स सम्यक् धर्मार्थमोक्षाँल्लभते यशश्च ॥[1]इति।

शिष्टास्तावच्छास्त्रारंभे—

सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः"

इति शास्त्रेण सर्वारंभेष्वंतरायप्राप्तौ सत्याम्—

धर्मेण पापमपनुदति। इति

श्रुतिसिद्धं प्रयोजनमास्थाय "स्वस्ति न इंद्रो वृद्धश्रवाः" इति लिंगाच्च ग्रंथस्य निष्प्रत्यूहपरिसमाप्तये मंगलमाचरंति तस्मान्माध्यन्दिनीयो ब्राह्मणो नारायणो नारायणाच्चावाप्तमतिर्ज्योतिःशास्त्रसंहितास्कन्धं चिकीर्षुरशेषप्रत्यूहोपशांतये अभिमतदेवतानमस्कारलक्षणमंगलपूर्वकं ग्रंथकरण-प्रतिज्ञां प्रहर्षिण्याह। सिंदूरोल्लसितमिति। सिंदूरेण उल्लसितं शोभाय-मानम् इभेंद्रवक्त्रं गजाननम् अंबा सरस्वतीम् श्रीविष्णुं प्रसिद्धम्। वियतिचरान् ग्रहान् गुरून् निजगुरून् शास्त्रोपदेष्टॄन् प्रणम्य नमस्कृत्वा अहं नारायणो मुहूर्तमार्तण्डनामग्रन्थं तनोमि विस्तारयामि, किमर्थं सिद्ध्यै कार्यसाधनाय पुनः किमर्थम्। विबुधमुदे पंडितहर्षाय। हर्षकारणं विशेषणद्वारेणाह। किं लक्षणं मुहूर्तमार्त्तण्डम् लघुम् अतिशयेनाल्पम् अल्पे बह्वर्थाभावशंकां विशेषण-द्वारा परिहरति, पुनः किं लक्षणम् अर्थबहुलम् अल्पग्रन्थे बह्वर्थे दुर्बोधशंकां परिहरति। पुनः किं सुगमम् प्रकटार्थमिति ॥१॥

मार्त्तण्डप्रिया—

सिन्दूर की शोभा से सुशोभित गजानन श्रीगणेश, सरस्वती, श्रीविष्णु सूर्यादि नवग्रह और शास्त्र ज्ञान कराने वाले गुरूजनों को भक्तिपूर्वक प्रणाम करके मैं नारायणदैवज्ञ विद्वानों के प्रसन्नार्थ बहुत अर्थों से युक्त किन्तु सरल और सुगम शब्दों में कार्य सिद्धि हेतु मुहूर्तमार्तण्ड नामक ग्रन्थ की रचना करता हूँ ॥१॥

आचार्य ने इस ग्रन्थ के तीन विशेषण (अल्प—अर्थ बहुल—सुगम) और दो हेतु (विद्वानों की प्रसन्नता एवं मुहूर्त सम्बन्धी कार्यों की सिद्धि) दिये हैं ॥१॥

---

१. सि॰ शिरोमणि—अ॰ १ श्लो॰ १२

शुभ कर्मों में त्याज्य--

यामार्द्धं कुलिकं दिनर्द्धिमवमं पूर्वं दलं पारिघं
विष्टिं वैधृतिपातसंक्रमगणं गंडांतमेकार्गलम् ।
कृष्णानंगचतुर्दिनं रविशशिक्रांत्योः समत्वं खलां
होरां रात्रिदिनार्द्धके क्षयदिनं पित्रोर्जनन्यार्तवम् ।।२।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथ नानामुहूर्तान्विवक्षुस्तावच्छुभेकर्मणित्याज्यं त्रिभिः शार्दूलविक्रीडितैराह । यामार्द्धमिति । यामार्द्धादिकं शुभेशुभकर्मणिसंत्यजेदित्यंतिमश्लोकेनान्वयः । यामार्द्धकुलिकौ वक्ष्यमाणलक्षणौ दिनर्द्धिर्नाम यत्रतिथिः सूर्योदयात् षष्टिघटिकाभवति सैवान्यस्मिन्दिनेदृश्यतेसादिनर्द्धिः अवमः प्रसिद्धः पारिघंप्राग्दलं परिघयोगस्यपूर्वार्द्धम् विष्टिर्भद्रावक्ष्यमाणा वैधृतिर्योगः पातोव्यतीपातः संक्रमणं सूर्यादीनां राशिसंक्रमणं सर्वेषां ग्रहाणां संक्रमणेत्याज्यघटिका अग्रेवक्ष्यमाणाः गण्डान्तंत्रिविधंवक्ष्यमाणम् एकार्गलो वक्ष्यमाणः कृष्णानंगचतुर्दिनं कृष्णत्रयोदश्यादिप्रतिपदंतम् चंद्रस्यक्षीणत्वात् । कैश्चिद्वादश्यादिसार्द्धदिनपंचकं त्यज्यते कृष्णे चांत्यत्रिकंकैश्चित् तेषुमध्यमोऽयंपक्षोऽत्रांगीकृतः कृष्णानंगचतुर्दिनमिति । रविशशिक्रांत्योः समत्वं सूर्याचंद्रमसोः क्रांतिसाम्यं गणितगम्यम् । तथापि तस्यावलोकनं कस्मिन् दिने कर्तव्यमित्यग्रे वक्ष्यति । खलां होरां पापग्रहहोराम् रात्रिदिनार्द्धकेदिनार्द्धंरात्र्यर्द्धंच उक्तं ग्रंथांतरे—

"मुहूर्तः कालोनिवसतिमहानिशायां च दिनदले यस्मात् ।
दशपूर्वंदशपरास्तस्माद्वर्ज्यानि च पलानि"

इति क्षयदिनंपित्रोः माता च पिता चपितरौ तयोः पित्रोः क्षयदिनंश्राद्धदिनमित्यर्थः जनन्यार्तवंमातुः रजस्वलात्वम् ।।२।।

मार्त्तण्डप्रिया—

शुभ कार्यों में यामार्द्ध, कुलिक, तिथिवृद्धि, तिथिक्षय, परिघ योग का पूर्वार्द्ध, भद्रा, वैधृति-व्यतिपातयोग, संक्रान्ति, गण्डान्त और एकार्गल दोष, कृष्ण १३ से शुक्ल १ तक, सूर्य चन्द्र का क्रान्तिसाम्य, पापग्रह की होरा, रात्र्यर्द्ध-दिनार्द्ध, माता-पिता का श्राद्धदिन तथा माता का ऋतुमतीकाल इन सबका त्याग करना चाहिये ।।२।।

शुभ कर्मों में त्याज्य—

मासाद्यंजनिसम्भवं ग्रहणभं चंडायुधं दुःक्षणं
ज्येष्ठं पूर्वभवस्य पापयुगितैष्यर्क्षाणि विद्धं च भम् ।
ऊनाख्याधिकमासकौ युतिषु विव्याशूव गण्डांतिषु
त्र्यंकार्थाङ्करसर्तु पूर्वघटिका भानां विषाख्याघटीः ॥३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

मासाद्यमिति । मासाद्यं जनिसंभवम् जनिरुत्पत्तिस्तत्र संभवो यस्य एवं विधं मासाद्यंमासप्रभृति जन्ममासजन्मतिथिजन्मनक्षत्रादि ग्रहणभं ग्रहणनक्षत्रम् चंडायुधं वक्ष्यमाणं दुःक्षणो दुर्मुहूर्तो वक्ष्यमाणः तम् ज्येष्ठं पूर्वभवस्यप्रथमजातापत्यस्यज्येष्ठमासम् पापयुगितैष्यर्क्षाणि पापाः पापग्रहाः वक्ष्यमाणास्तेषामन्यतमेनयुक्युक्तम् इतं गतं एष्यं पुर स्थितम् एतानि ऋक्षाणि नक्षत्राणि विद्धं भं च विद्धनक्षत्रं वक्ष्यमाणलक्षणम् ऊनाख्याधिकमासकौ क्षयमासाधिमासौ वक्ष्यमाणलक्षणौ युतिषु विव्याशूवगंडांतिषु त्र्य ३ ङ्का ९ र्थां ५ क ९ रस ६ र्तु ६ पूर्वघटिकाः विविष्कंभः व्याव्याघातः शूशूला ववज्रः गंडः प्रसिद्धः अतिअतिगंडः एषु योगेषु क्रमेण त्र्यंकार्थांकरसर्तुसंख्याङ्काः पूर्वघटिकाः प्रथमघटिकाः तद्यथा विष्कंभे तिस्रः व्याघातेंकाः नव शूले अर्थाः पंच वज्रे अंकाः नव गंडेरसाःषट् अतिगंडे ऋतवः षडिति भानांविषाख्या घटीः भानां अश्विन्यादीनांनक्षत्राणां विषाख्याघटीर्वक्ष्यमाणलक्षणाः ॥३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

जन्ममास-जन्मतिथि-जन्मनक्षत्र, ग्रहणनक्षत्र, चण्डायुध दोष, दुष्टमुहूर्त्त, प्रथमसन्तान के लिये ज्येष्ठमास, पापग्रह से युक्त नक्षत्र, पापग्रह का गत और ऐष्य नक्षत्र, पापग्रह से विद्ध नक्षत्र, क्षयमास-अधिमास, विष्कुम्भ की ३ व्याघात की ९ शूल की ५ वज्र की ९ गण्ड की ६ और अतिगण्ड की ६ घटिकायें प्रारम्भ की और अश्विन्यादि नक्षत्रों की विषघटिकाओं को शुभ कार्यों में त्याग देना चाहिये ॥३॥

शुभ कर्मो में त्याज्य—

लत्तापंचकपापवर्गमशुभं चंद्रं दशारिष्टकं
जन्मर्शेज्यसितास्तमंगशशिनोः क्रूरोद्भवां कर्तरीम् ।
रिष्टं गोचरसंभवं ग्रहजनिप्रांतोद्भवं सूतकं
दुश्चिह्नानि मनोविभंगमपि च व्याधिं शुभे संत्यजेत् ॥४॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

लत्तेति। लत्तापंचकपापवर्ग एतत्सर्वं वक्ष्यमाणं अशुभं चंद्रं वक्ष्यमाण-गोचरप्रकरणे वेद्यं दशारिष्टकं जातकशास्त्रगम्यम् जन्मेशेज्यसितास्तं जन्मेशो राशिस्वामी ईज्योगुरुः सितः शुक्रः एषाम् अस्तगमनं रविलुप्तकिरणत्वम् अंगशशिनोः क्रूरोद्भवां कर्तरीम् अंगं लग्नम् शशीचंद्रः तयोः क्रूरोद्भवां क्रूरग्रहजनितां कर्तरीं वक्ष्यमाणलक्षणाम् रिष्टं गोचरसंभवं गोचरे दुष्टग्रहा-धिक्यं गोचरं वक्ष्यमाणम् ग्रहजनिप्रांतोद्भवं सूतकम् ग्रहोग्रहणम् जनिर्जन्म प्रांतो मरणम् एभ्य उद्भूतं सूतकम् ग्रहणसूतकं जन्मसूतकं मृतसूतकमिति तेषु ग्रहणसूतकं वक्ष्यमाणम् दुश्चिह्नानिकार्यारंभसमयेक्षुतदुर्वचनश्रवणादीनि मनोविभंगमंतःकरणस्य अप्रवर्तनं व्याधिर्ज्वरः तमपि—

"रोगः पाप्माज्वरोव्याधिर्विकारोदुःखमामयः" इतिवाग्भट।

ज्वरितस्यमंगलं न कुर्यादित्यर्थः। तथाचोक्तंज्योतिः प्रकाशे—

"जन्माधिपविलग्नेशचंद्रभार्गवमंत्रिणाम् ।
विरश्मित्वंजन्ममासोजन्मभंजन्मवासरः ॥
दुर्निमित्तंमनोभंगः क्षयमासाधिमासकौ।
मृतजातकयोश्चैवसूतकंग्रहणस्यच ॥
ज्वरोत्पत्ति रजो मातुः पित्रोःक्षयदिनं तथा।
गंडांतत्रितयं कालः संधिर्भस्यतिथेस्तनोः॥
क्रांतिपातो व्यतीपातो वैधृतिः परिघार्धकम्।
भानोः संक्रांतिभोगश्चकुलिकश्चार्द्धयामकः॥
क्रूरैर्मुक्तंयुतंभाग्यंसराहुशिखिभूषितम् ।
धिष्ण्यंग्रहणगं पापैर्विद्धं सौम्यैश्चपादतः॥
विष्टिः क्रूरयुतंलग्नलग्नेशो रिपुमृत्युगः।
जन्मतो दुःस्थितश्चंद्रोलग्नस्थो निधनोपगः॥
जन्मभाज्जन्मलग्नाच्चलग्नलग्नांशकाष्टमो ।
पापयोर्मध्यगं लग्नं क्षीणेन्दुःकुनवांशकः॥
क्रूरवारेपापहोरादुष्टयोगाग्रहोद्भवाः ।
तिथिवृद्धिः क्षयोभानां नाडिकाविषसंज्ञिताः॥
एते दोषाः समाख्याताः शुभकर्मणि गर्हिताः।
दशारिष्टोद्भवाश्चान्ये गोचरोत्थास्तथापरे॥
लत्तैकार्गलचंडास्त्रकालवेलाश्चपंचकम् ।
मृत्युयोगोपग्रहाद्याः स्वेस्वदेशेतु निन्दिताः॥ इति॥४॥

मार्त्तण्डप्रिया—

लता, पंचक, पापग्रह का षडवर्ग, अशुभस्थान (४।८।१२), गत चन्द्र, अरिष्ट कारक ग्रह की दशा, जन्मराशीश, गुर्वस्त-शुक्रास्त, लग्न और चन्द्रमा से पापग्रह कृत कर्त्तरी योग, गोचर ग्रह से उत्पन्न अरिष्ट समय, विविध अशौच (ग्रहण-जन्म-मरणसूतक), कार्यारम्भ में दुष्ट लक्षण (छिक्का आदि), अन्त: करण (मन) की अप्रवृति और व्याधि (रोग) की अवस्था इन सबों का शुभकार्यों में त्याग करना चाहिए ॥४॥

शुभकर्मो में उपग्रहदोष—

नो कुर्याद्रविभादगेंद्रधृतितो युग्मेषु पंचाशयोः
स्वर्गात्पंचसु शोभनानि तनुयादेषूग्रशस्त्रादिकम् ।
मासर्क्षायनवारयोगतिथिभादीनां च सिद्धाभिधा
ज्ञातव्याः पुनरुक्तिरस्ति कुहचित्सा तत्स्मृतिप्राप्तये ॥५॥

इति श्रीमदनंताख्यचातुर्मास्ययाजिपुत्रनारायण-
विरचिते मुहूर्तमार्त्तण्डे त्याज्यप्रकरणम् ॥१॥

मार्तण्डवल्लभा—

अथोपग्रहांतर्वर्तिदोषांतरं वृत्तार्द्धेनाह । नोकुर्यादिति । रविभात् सूर्याधिष्ठितनक्षत्रात् अगेंद्रधृतिमितानि यानि नक्षत्राणि तेभ्यो युग्मेषु । एतदुक्तं भवति । सप्तमाष्टमयोः चतुर्दशपंचदशयोः अष्टादशैकोनविंशयोरिति तथा-पंचाशयोः रविनक्षत्रात् पंचमदशमयोः तथास्वर्गात्पंचसु एकविंशात्पंचसु नक्षत्रेषु २१।२२।२३।२४।२५ शोभनानि कर्माणि नोकुर्यात् एषु उग्रशस्त्रघातादिकं तनुयात् विस्तारयेत् कुर्यादित्यर्थः । उक्तंच—

"विद्युत्पंचमभेक्षितेश्चचलनं स्यात्सप्तमे सूर्यभा-
च्छूलश्चाष्टमभे शनिश्चदशमे केतुस्तथाऽष्टादशे ।
दंडः पंचदशे चतुर्दश इहप्रोक्तो निपातो बुधै-
रुल्काकालविदां गणैर्निगदिता चैकोनविंशेर्कभात् ।"

इति । दैवज्ञवल्लभेपि—

क्रमशो मोहनिर्घातभूकंपावज्र एवच ।
परिवेषश्च विज्ञेया नक्षत्रादेकविंशतेः ॥
एतेष्विदुसमेतेषु कुर्यात्कर्मनशोभनम् ।
दहनास्त्रविषैः साध्यं यत्तत्सिद्धिमुपैतिच ॥ इति ।

अन्यानपिदोषानग्रेप्रसंगतो वक्ष्यामि । अथास्मिन्ग्रंथे मासादीनां संज्ञा लोकसिद्धाज्ञेया इति । तथापुनरुक्तिनिर्दूषणं वृत्तार्द्धेनाह । मासत्वयिनेति । मासाश्चैत्रादयः ऋतवोवसंतादयः अयनेदक्षिणोत्तरे वाराः सूर्यादयः योगाः विष्कंभादयः तिथयः प्रतिपदादयः भान्यश्विन्यादीनि इत्यादीनां करणराशिभावादीनांसिद्धाभिधाः शास्त्रांतरसिद्धाः संज्ञा ज्ञातव्याः । तथा इहास्मिन्ग्रंथे कुहचित् कुत्रचित् पुनरुक्तिर्वतते सा तस्य दूरान्तरितस्य स्मृतिप्राप्तये स्मरणायेति न दोषः ॥

इतिस्वोक्तमुहूर्तमार्त्तण्डटीकायां मार्त्तण्डवल्लभायां त्याज्यप्रकरणम् ॥१॥

मार्त्तण्डप्रिया—

सूर्य नक्षत्र से ७।८।१४।१५।१८।१९।५।१०।२१।२२।२३।२४।२५ वे नक्षत्रों में शुभ कार्य नहीं करना चाहिए, इन नक्षत्रों में उग्र-क्रूर कर्म और शस्त्रादि कार्य करना चहिए। मास ऋतु अयन-वार-योग-तिथि-नक्षत्र इत्यादि की संज्ञाये अन्य ग्रन्थों से जान लेना चाहिए। इस ग्रन्थ में भी उनकी पुनरावृत्ति हो गई है, जो मात्र स्मरण हेतु हैं, अतः उसे पुनरूक्ति दोष नही समझना चाहिए ॥५॥

मुहूर्तमार्त्तण्ड की "मार्तण्डप्रिया" हिन्दी टीका में त्याज्यप्रकरण समाप्त–१

नक्षत्र प्रकरणम्–२

नक्षत्रों के स्वामी—

भेशा दस्त्रयमाग्निकेन्दुगिरिशाः प्रोक्ता अदित्यंगिराः
सर्पाः कव्यभुजो भगोऽर्यमरवी त्वष्टासमीरः क्रमात् ।
इंद्राग्नी त्वथ मित्र इंद्रनिर्ऋतिर्नीरंचविश्वे विधिः
वैकुंठो वसुपाशयजैकचरणाहिर्बुध्न्यपूषाभिधाः ॥१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथसाधारणनक्षत्रप्रकरणं विवक्षुरादौ नक्षत्रदेवताः वृत्तेनैकेनाह। अस्मिन्प्रकरणे सर्वाणिशार्दूलविक्रीडितानि । भेशा इति । अश्विन्याः सकाशात्क्रमेण भेशा बुधैः प्रोक्ता इत्यन्वयः । भानां नक्षत्राणामीशाः स्वामिनः दस्त्रौ अश्विन्याः यमो भरण्याः अग्निः कृत्तिकायाः को ब्रह्मारोहिण्याः इंदुर्मृगस्य गिरिशो महादेवः आर्द्रायाः अदितिः पुनर्वसोः अंगिराः गुरुः पुष्यस्य पन्नगाः सर्पाः आश्लेषायाः कव्यभुजः पितरः मघायाः भगः पूर्वाफाल्गुन्याः अर्यमा उत्तराफाल्गुन्याः रविर्हस्तस्य त्वष्टाचित्रायाः समीरणो वायुः स्वात्याः इंद्राग्निदेवताद्वयं विशाखायाः मित्रो अनुराधायाः इंद्रो ज्येष्ठायाः निर्ऋतिः राक्षसो मूलस्य नीरं जलं पूर्वाषाढायाः विश्वे उत्तराषाढायाः विधिर्ब्रह्माभिजितः वैकुण्ठो विष्णुः श्रवणस्य वसवो धनिष्ठायाः पाशीवरुणः शततारकायाः अजैकचरणः पूर्वाभाद्रपदायाः अहिर्बुध्न्य उत्तराभाद्रपदायाः पूषारेवत्याः । देवताप्रयोजनं नक्षत्रज्ञानार्थं शांतिकादौ यजनार्थञ्च ॥१॥

मार्त्तण्डप्रिया—

अश्विनी नक्षत्र का स्वामी अश्विनीकुमार, भरणी का यमराज, कृत्तिका का अग्नि, रोहिणी का ब्रह्मा, मृगशिरा का चन्द्रमा, आर्द्रा का शिव, पुनर्वसु का अदिति, पुष्य का गुरू, श्लेषा का सर्प, मघा का पितर, पूर्वाफाल्गुनी का भग, उत्तराफाल्गुनी का अर्यमा, हस्त का सूर्य, चित्रा का त्वष्टा, स्वाती का समीर (वायु), विशाखा का इन्द्राग्नि, अनुराधा का मित्र (सूर्य), ज्येष्ठा का इन्द्र, मूल का राक्षस, पूर्वाषाढ़ का जल, उत्तराषाढ़ का विश्वेदेव, श्रवण का गोविन्द (विष्णु), धनिष्ठा का वसु, शतभिषा का तोयप (वरूण), पूर्वभाद्रपद का अजपाद नामक सूर्य, उत्तराभाद्रपद का अहिर्बुध्न्य, और रेवती का स्वामी (पूषा) पूषण नामक सूर्य है ।

संख्या	नक्षत्र	स्वामी	संख्या	नक्षत्र	स्वामी
१	अश्विनी	अश्विनी कुमार	१५	स्वाती	वायु
२	भरणी	यम	१६	विशाखा	इन्द्राग्नि
३	कृतिका	अग्नि	१७	अनुराधा	मित्र
४	रोहिणी	ब्रह्मा	१८	ज्येष्ठा	इन्द्र
५	मृगशिरा	चन्द्रमा	१९	मूल	राक्षस
६	आर्द्रा	शिव	२०	पू० षा०	जल
७	पुनर्वसु	अदिति	२१	उ० षा०	बिश्वेदेव
८	पुष्य	गुरु	२२	श्रवण	गोविन्द
९	श्लेषा	सर्प	२३	धनिष्ठा	वसु
१०	मघा	पितर	२४	शतभिषा	वरूण
११	पू० फा०	भग	२५	पू० भा०	अजपाद
१२	उ० फा०	अर्यमा	२६	उ० भा०	अहिर्बुघ्न्य
१३	हस्त	सूर्य	२७	रेवती	पूषा
१४	चित्रा	त्वष्टा (विश्वकर्मा)			

जिस नक्षत्र के जो स्वामी हैं, उनका उल्लेख श्लोकों में नक्षत्रों के स्थान पर किया जाता है, तथा नक्षत्रस्वामी की आवश्यकता नक्षत्र शान्ति में पूजन हेतु होती है ॥१॥

नक्षत्रों की स्थिरादि संज्ञा—

ब्राह्मं त्र्युत्तरयुग्ध्रुवंस्थिरमथो पूर्वा मघा याम्यभं
क्रूरोग्रं श्रवणत्रयादितियुता स्वातीचराख्या चला ।
दस्त्रार्काभिजिदीज्यभं लघु तथाक्षिप्रं च मैत्रांतिमें-
दुत्वाष्ट्रं मृदुमैत्रमग्निभविशे मिश्रे च साधारणे ॥२॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथनक्षत्राणां स्थिरचरादिसंज्ञामाह । ब्राह्मं रोहिणी, किं लक्षणम् ब्राह्मं त्र्युत्तरयुक्तिसृणामुत्तराणां समाहारस्त्र्युत्तरम् तेनयुक्युक्ताम् ध्रुवस्थिरमिति द्वयभिधानं मुनींद्रैः स्मृतमित्यन्वयः । अथो पूर्वामघायाम्यभं पूर्वात्रयं मघा-भरणीति पंचकम् क्रूरोग्रं क्रूरमुग्रं चोक्तम् । श्रवणत्रयादिति युतास्वाती श्रवण-धनिष्ठाशततारकाः अदितिः पुनर्वसुः एभिः सहिता स्वाती चराख्याचला-चोक्ता । श्रवणत्रयादिपंचकं चराख्यं चलं प्रोक्तमित्यर्थः । दस्त्रार्का भिजिदीज्यभं दस्त्रौ अश्विनी अर्कौ हस्तः अभिजिद्वक्ष्यमाणलक्षणः ईज्यो

गुरुस्तस्य भं पुष्य इतिचतुष्टयं लघुतथाक्षिप्रं प्रोक्तम् । मैत्रांतिमेन्दुत्वाष्ट्रम् मैत्रमनुराधा अंतिमं रेवती इंदुमृंगः त्वाष्ट्रं चित्रा एतच्चतुष्टयं मृदु तथा मैत्रं प्रोक्तम् अग्निभविशे अग्निभं कृत्तिका विशा विशाखा एते द्वे मिश्रे साधारणे प्रोक्ते ॥२॥

मार्त्तण्डप्रिया —

रोहिणी और तीनों उत्तरा इनकी ध्रुव और स्थिर संज्ञा है। तीनों पूर्वा, मघा और भरणी इनकी उग्र और क्रूर संज्ञा है। श्रवण धनिष्ठा शतभिषा पुनर्वसु और स्वाती-इनकी चर और चल संज्ञा है। अश्विनी, हस्त, पुष्य और अभिजित इनकी लघु और क्षिप्र संज्ञा है। अनुराधा रेवती मृगशिरा और चित्रा इनकी मृदु और मैत्र संज्ञा है। कृतिका और विशाखा इनकी मिश्र और साधारण संज्ञा है ॥२॥

नक्षत्रों की संज्ञा —

मूलाहींद्रशिवं च दारुणमदस्तीक्ष्णं मुनीन्द्रैः स्मृतं
संज्ञातुल्यमिहाचरंति सुधियः कार्यंहि संसिद्धये ।
सूर्याद्याः स्थिरचंचलोग्रमिलिताः क्षिप्रो मृदुर्दारुणः
क्षीणेन्द्वर्कयमारराहुशिखिनः पापाबुधस्तैर्युतः ॥३॥

मार्त्तण्डवल्लभा —

मूलंप्रसिद्धम् अहिराश्लेषा इंद्रो ज्येष्ठा शिवः आर्द्रा एतच्चतुष्टयं दारुणम् अदः इदं तीक्ष्णं प्रोक्तम्। इह एषु ध्रुवादिसंज्ञेषु नक्षत्रेषु संज्ञातुल्यं कार्यं सुधियः पंडिताः आचरंति। किमर्थं संसिद्धये। एतदुक्तंभवति--स्थिरनक्षत्रेषु स्थिरं स्तंभं प्रतिष्ठादिकम् चरे चरमित्यादि कुर्वन्तीति स्पष्टम्। अत्र समानार्थं संज्ञाद्वयकरणं कवित्वबंधनार्थम्। अत्रप्रसंगेन सूर्यादीनामपि स्थिरादिसंज्ञासौम्यपापत्वं च वृत्तार्द्धेनाह। सूर्याद्या इत्यादि। सूर्यः स्थिरः चंद्रश्चंचलः भौमः उग्रः बुधः मिलितो मिश्रः गुरुः क्षिप्रः शुक्रो मृदुः शनिर्दारुणः। अथ पापसौम्यान् ग्रहानाह । क्षीणेति । क्षीणेंदुः कृष्णाष्टम्यूर्ध्वं प्रतिपत्पर्यन्तं क्षीणः अर्कः सूर्यः यमः शनिः आरो भौमः राहुः प्रसिद्धः शिखी केतुः एते क्षीणेंद्वादयः पापाः क्रूराः तैः पापैर्युतो बुधः पापःस्यात्। उक्तं च जातकोत्तमे

"क्षीणेंद्वर्कार्किभौमाः स्युः पापाः सौम्योपितद्युतः।
राहुकेतू पापतरौ पापः पापयुतस्तथा।" इति।

अर्थादन्ये सौम्याः एषां प्रयोजनम् क्रूरसौम्यकर्मसाधने ॥३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

मूल, श्लेषा, ज्येष्ठा और आर्द्रा इनकी दारूण और तीक्ष्ण संज्ञा है। कार्य सिद्धि हेतु तत्तद संज्ञातुल्य नक्षत्रों में तत्तदकार्य सम्पादन करना चाहिए जैसे स्थिर संज्ञक में स्थिर कार्य गृह निर्माण आदि और दारूण संज्ञक में अभिचार, घात, शाठ्यादि।

नक्षत्रों की तरह ग्रहों और वारों की भी ध्रुवादि संज्ञाये हैं, जैसे सूर्यवार या सूर्य ग्रह की ध्रुव संज्ञा, चन्द्रवार या चन्द्र ग्रह की चर संज्ञा; भौम की उग्र, बुध की मिश्र, गुरू की क्षिप्र-लघु, शुक्र की मित्र-मैत्र, शनि की दारूण संज्ञा है।

क्षीणचन्द्र (कृष्ण ८ से शुक्ल १ तक), सूर्य, भौम, शनि, राहु और केतु ये पापग्रह हैं इनसे संयुक्त रहने पर बुध भी पापग्रह हो जाता है। बुध अकेला या शुभ-ग्रह के साथ होने पर पापग्रह नहीं होता। अर्थात् शुक्र, गुरू, पापग्रह से रहित बुध और पूर्ण चन्द्र शुभग्रह हैं ॥३॥

संज्ञक	वार	नक्षत्र
ध्रुव स्थिर	सूर्यवार	रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद
चर चल	चन्द्रवार	पुनर्वसु, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा
उग्र-क्रूर	भौमवार	भरणी, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद
मिश्र-साधारण	बुधवार	कृत्तिका, विशाखा
लघु-क्षिप्र	बृहस्पतिवार	अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित
मृदु-मैत्र	शुक्रवार	मृगशिरा, अनुराधा, चित्रा, रेवती
दारूण-तीक्ष्ण	शनिवार	आर्द्रा, श्लेषा, ज्येष्ठा, मूल

दिन और रात्रि के मुहूर्त--

अह्नःस्युः शिवसार्पमित्रपितरो वस्वम्बुविश्वेभिजि-
त्कोंद्रेन्द्राग्निनिशाचरा अपि जलाधीशोर्यमाख्योभगः ।
रात्रेः स्युःस्मरहा त्रयोजचरणात्पंचाश्वितोथोदिति-
र्जीवो विष्णुरिनास्त्रयस्तिथिलवाः कर्मैषु भोक्तं स्मृतम् ॥४॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथ प्रसंगेन नक्षत्रसमाननार्थान् दिनरात्रिमुहूर्त्तान्निक्षत्रोक्तकार्यसाधकान्वृत्तेनेकेनाह। एतेह्नो दिवसस्यतिथि १५ लवाः पंचदशांशाः मुहूर्त्ताः शिवादयः स्युः प्रथमः शिवः द्वितीयः सर्पः तृतीयोमित्रः चतुर्थः पिता पंचमो वसुः षष्ठोंबु सप्तमो विश्वे अष्टमोभिजित् नवमो ब्रह्मा दशम इन्द्रः एकादशइंद्राग्नी द्वादशो निशाचरः त्रयोदशोजलाधीशोवरुणः चतुर्दश अर्यमाख्यः पंचदशो भगः। अथरात्रेः प्रथमः स्मरहाशिवः अजचरणात्रयः अजचरणाहिर्बुध्न्यपूषाह्वाः क्रमेणद्वितीयोजरणः तृतीयोहिर्बुध्न्यः चतुर्थः पूषा। पंचाश्वित इति। अश्वितः पंच दस्रयमाग्निकेन्दवः पंचमो दस्रः षष्ठो यमः सप्तमोग्निः अष्टमः कः ब्रह्मा नवमः इन्दुः अथोदितिर्दशमः एकादशो जीवः द्वादशो विष्णुः इनाःत्रयः रवित्वष्टानिलाः त्रयोदशो रविः चतुर्दशस्त्वष्टा पंचदशोनिलः वायुः प्रयोजनमाह। कर्मैषु भोक्तं स्मृतम् एषु मुहूर्त्तेषु भोक्तं नक्षत्रोक्तं कर्मस्मृतम् मुनीन्द्रैरित्यध्याहारः। एतदुक्तंभवति। शिवमुहूर्त्ते आर्द्रानक्षत्रोक्तं सार्पमुहूर्ते आश्लेषोक्तम् मित्रमुहूर्ते अनुराधोक्तं कर्मकुर्यादित्यादि। तदुक्तंरत्नमालायाम्—

"यस्मिन्धिष्ण्ये यच्चकर्मोपदिष्टं तद्दैवत्येतन्मुहूर्तेपि कार्यम्"

इति लोकेहिस्वामिशब्दं सेवके प्रयुंजानादृश्यन्ते। अतोदेवताशब्दस्तन्नक्षत्रतिथ्यादिषुस्मर्यंते तथाविधवृद्धप्रयोगदर्शनाच्च

"नागोद्वादशनाडीभिर्दिक्पंचदशभिस्तथा।
भूतोष्टादशनाडीभिर्दूषयत्युत्तरां तिथिम्" इति।

नागः पंचमी दिग्दशमी भूतश्चतुर्दशीतिथयः ॥४॥

इतिस्वोक्तमुहूर्तमार्त्तण्डटीकायां नक्षत्रप्रकरणम् ॥२॥

मार्तण्डप्रिया—

एक अहोरात्र (दिन-रात) में ३० मुहूर्त होते हैं, दिन में १५ और रात्रि में १५, दिनमान में १५ का भाग देने से दिन के एक मुहूर्त का मान निकलता है। इसी प्रकार रात्रिमान में भी १५ का भाग देने से रात्रि के एक मुहूर्त का मान निकल जाता है।

दिन के मुहूर्तादिपति ये हैं,

१--शिव	६--अम्बु	११--इन्द्राग्नि
२--सर्प	७--विश्वेदेव	१२--राक्षस
३--मित्र	८--अभिजित	१३--वरुण
४--पितृ	९--ब्रह्मा	१४--अर्यमा
५--वसु	१०--इन्द्र	१५--भग

रात्रि के मुहूर्तादिपति ये हैं,--

१--शिव	६--यम	११--जीव (गुरू)
२--अजपाद	७--अनल	१२--विष्णु
३--अहिर्बुध्न्य	८--ब्रह्मा	१३--सूर्य
४--पूषा	९--चन्द्र	१४--त्वष्टा (विश्वकर्मा)
५--दस्र	१०--अदिति	१५--समीर

दिन के या रात्रि के मुहूर्तों में तत्तद नक्षत्रों के कर्म किये जाते हैं जैसे अश्विनी नक्षत्र का कोई कार्य करना है, और उस दिन यदि अश्विनी नक्षत्र नही हैं तो रात्रि का पाँचवा मुहूर्त दस्र (अश्विनी) होता हैं, अतः उसी मुहूर्त में वह कार्य करना चाहिये;

स्पष्टार्थ चक्र देखें—

मुहूर्त्त संख्या—	१	२	३	४	५	६	७
दिन के मुहूर्तादिपति–	शिव	सर्प	मित्र	पितृ	वसु	अम्बु	विश्वेदेव
नक्षत्र —	आर्द्रा	श्लेषा	अनु	मघा	धनिष्ठा	पू०भा०	उ.भा
रात्रि के मुहूर्त्तादिपति—	शिव	अजपाद	अहिर्बुध्न्य	पूषा	दस्र	यम	अनल
नक्षत्र—	आर्द्रा	पू०भा०	उ० भा०	रे०	अश्वि	भ०	कृ०

मुहूर्त्त संख्या—	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
दिन के मु०—	अभि	ब्रह्मा	इन्द्र	इद्राग्नि	राक्षस	वरूण	अर्यमा	भग
नक्षत्र—	अभिजित	रोहिणी	ज्येष्ठा	विशा	मूल	शत	उ.फा.	पू.फा.
रात्रि के मु०—	ब्रह्मा	चन्द्र	अदिति	जीव	विष्णु	सूर्य	त्वष्टा	समीर
नक्षत्र	रोहिणी	मृगशिरा	पुनर्व	पुष्य	श्रवण	हस्त	चित्रा	स्वाती

एक अहोरात्र में ३० मुहूर्त्त (दिन में १५ और रात्रि में भी १५) होते हैं इनको तिथ्यंश स्वामी भी कहा जाता है यह दिनमान या रात्रिमान के १५ वाँ भाग के बराबर होता है इसे नक्षत्रों का भाग भी समझा जाता हैं। अश्विन्यादि नक्षत्रों के स्वामी ही इन मुहूर्त्तों के भी स्वामी होते हैं ॥४॥

मुहूर्तमार्त्तण्ड की "मार्तण्डप्रिया" हिन्दी टीका में नक्षत्रप्रकरण समाप्त–२

संस्कार प्रकरणम्—३

प्रथम रजोदर्शन में शुभाशुभ—

आद्यर्तौ पौषशुक्रोर्जमधुशुचिनभस्याः कुयुक्पापवारा-
रिक्तामार्काष्टषष्ठ्यः परगृहकुपदे रात्रिसंध्यापराह्णाः।
मिश्रोग्रामूलतीक्ष्णं विवरमनरुणाल्पाधिकास्रं गराष्टो-
स्पातः पापस्य लग्नं न सदरुणजरत्नीलचित्रांबरं च ॥१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथगर्भाधानादिसंस्कारप्रकरणं विवक्षुस्तावद्गर्भाधानस्य ऋतुसंबंधात् प्रथमर्तुफलंस्रग्धरावृत्तेनाह। आद्यर्ताविति। तत्राद्यौमासफलमाह। आद्यर्तौ प्रथमर्तौ पौषशुक्रोर्जमधुशुचिनभस्याः संतोनस्युरित्यन्वयः। विभक्तिविपरिणामः पौषः प्रसिद्धः शुक्रोज्येष्ठः ऊर्जः कार्तिकः मधुश्चैत्रः शुचिराषाढः नभस्यो भाद्रपदः एतेषण्मासाः नशुभा इत्यर्थः। अर्थादन्ये शुभाः तदुक्तं ज्योतिर्निबंधे—

प्रथमर्तौ मधौ नारीविधवाभवतिध्रुवम्।
वैशाखे धनपुत्राढ्या ज्येष्ठे रोगान्विता भवेत्॥
आषाढे च मृतापत्या श्रावणे च धनान्विता।
भाद्रपदेदुर्भगा च आश्विने च तपस्विनी॥
ऊर्जेल्पायुष्मतीनारीमार्गशीर्षे बहुप्रजा।
पौषे तु पुंश्चलीनारी माघे पुत्रसुखान्विता।
फाल्गुने श्रीमती साध्वी क्रमान्मासफलं स्मृतम्॥

इति। योगफलमाह। कुयुगिति। कुयोगो विष्कंभादिकः योगेषु नवयोगाः दुष्टाः संति विष्कंभातिगंडव्याघातवज्रव्यतीपातपरिघवैधृतयः एते योगानशुभा इत्यर्थः। अर्थादन्ये शुभाः। तदुक्तं—

आद्यर्त्तौ दुर्भगानारीविष्कंभे चेद्रजस्वला।
वंध्याचैवातिगंडे च शूले शूलवतीभवेत्॥
गंडे च पुंश्चलीनारीव्याघातेचात्मघातिनी।
वज्रे च स्वैरिणीप्रोक्तापाते च पतिघातिनी॥
परिघे मृतवंध्याच वैधृतौपतिमारिणी।
शेषाः शुभावहायोगा यथानामफलप्रदाः॥

इति। वारफलमाह। पापवारा इति। क्षीणेंद्वर्कयमाराः पापाः तेषां वारानशुभाः अर्थादन्ये शुभाः। उक्तंचकारिकायाम्—

आदित्येविधवानारीसोमेचैवमृतप्रजा।
अंगारेस्त्रसृहंत्रीचबुधेकन्याप्रसूर्भवेत्॥
पुत्रिणीगुरुवारेचकन्यापुत्रवतीभृगौ।
शनौ तु पुंश्चलीनारी प्रथमर्तौविदुर्बुधाः॥

इति। तथाचनारदः—

रोगी पतिव्रता दुःखी पुत्रिणी भोगभागिनी।
पतिप्रिया क्लेशभागी सूर्यवारादिषु क्रमात्[1]॥ इति।

कारिकावचने सोमवारफलं मृतप्रजेति। नारदवचने पतिव्रतेति। एवं द्वयोर्विरोधे मृतप्रजेति कृष्णपक्षे सोमवारविषयम्। पतिव्रतेति शुक्लपक्षीय सोमविषयमितिव्यवस्थापनीयम्। अतो मार्तंडवचनं पापवारा इत्येतदतिप्रशस्तम्। तिथिफलमाह। रिक्तामार्काष्टषष्ठ्य इति। रिक्ताचतुर्थीनवमीचतुर्दश्यः अमा अमावास्या अर्को द्वादशी द्वादश्याः स्वामी अर्कः। अथवा अर्कसंख्यापिद्वादशवाचकसंख्ययापिद्वादशीभवति। तिथिदेवतापिरत्नमालायाम्—

"तिथिपाश्चतुर्मुखविधातृविष्णवः"। इत्यादयः।

अष्ट अष्टमी षष्ठी प्रसिद्धा एताः सप्ततिथयः न शुभाः अर्थादन्याः शुभाः। उक्तंच—

आद्यर्तौ सुभगानारी प्रतिपत्सु रजस्वला।
द्वितीयायां भाग्यवतीतृतीयायां सुतान्विता॥
चतुर्थ्यां विधवानारी पंचम्यां धनदायिनी।
षष्ठ्यां च क्लेशभाङ्नारी सप्तम्यां धनवर्धिनी॥
अष्टम्यां राक्षसीनारीनवम्यां पापवर्धिनी।
दशम्यां प्रीतिकृन्नारी एकादश्यां सुतान्विता॥
द्वादश्यां दुर्भगानारी त्रयोदश्यां हिरण्यदा।
चतुर्दश्यां पुंश्चलीस्यात्पौर्णमास्यां सुपुत्रिणी॥
यदिभद्रानजायेत दर्शस्याच्चौरिकाध्रुवम्"

इति। स्थानफलमाह परगृहकुपद इति। परगृहं भर्तृगृहादन्यत् कुपदं कुत्सितस्थानम् एते उभे निंद्ये अर्थादन्यच्छुभम्। उक्तं च—

"देवस्थाने पितृस्थाने निंद्यस्थानेन्यवेश्मनि।
पुष्पवत्याः फलंनस्यान्मार्गे चांडालवेश्मनि॥"

---

१. नारद संहिता—अ० १५ श्लो० २

इति। देवस्थानं देवालयम् पितृस्थानं स्मशानम् निन्द्यस्थानं कुत्सितस्थानम् अन्यवेश्मभर्तृगृहादन्यगृहम्। अन्यत्सुगमम्। नन्वत्रश्लोके बहूक्तम्। अत्र कथं परगृहकुपद इत्येवोक्तम्। सत्यम्। यत्स्थानद्वयमुक्तं तस्मिन्नेवसर्वंश्लोकोक्तमधितिष्ठति। तद्यथा। देवस्थानान्यवेश्मचांडालवेश्मेतिपदत्रयम् परगृह इत्येतस्मिन्पदेधितिष्ठति। अन्यच्छ्लोकोक्तं न कुपदे वर्तते। ननुमार्गः कथं कुपदोस्ति सतुकुत्सितो न भवति। अस्तिमार्गेपिदुष्टत्वं सर्वजनसंचाराद्धर्मशास्त्रप्रसिद्धं तर्हिपूर्वश्लोकोक्तं बहुभाषणं व्यर्थं स्यात्। मैवम्। तदुक्तं बहुभाषणं त्वनधिकाधिकदोषविषक्षयोक्तमितिनदोषः। वेलाफलमाह—रात्रिसंध्यापराह्ण इति। रात्रिः प्रसिद्धा संध्ये द्वे अपराह्णस्त्रेधाविभक्तस्याह्नस्तृतीयो भागः एतेचत्वारः काला न शुभाः अर्थादन्यौपूर्वाह्णमध्याह्नौशुभौ। उक्तंच—

"पुत्रिणीसुभगापुण्यापूर्वाह्णेयारजस्वला।
मध्याह्ने तुशुभप्राप्तिः स्वैरिणीचापराह्णके॥
संध्ययोरुभयोर्वेश्यानिशायां विधवातथा" इति।

नक्षत्रफलमाह। मिश्रोग्रामूलतीक्ष्णमिति। मिश्रे कृत्तिकाविशाखे उग्राणि पूर्वात्रयभरणीमघाः अमूलतीक्ष्णानिमूलरहिततीक्ष्णानि आश्लेषाज्येष्ठार्द्रा इत्येतन्नक्षत्रदशकं नशुभम्। अर्थादन्यानिशुभानि। तदुक्तंनारदीयसंहितायाम्—

"श्रीयुता सुभगा पुत्रवती सौख्यान्विता स्थिरा।
कुलाधिकामानवतीचाश्विन्यां प्रथमार्तवा ॥१॥
दुःशीला स्वैरिणीस्वस्यगर्भपातनतत्परा।
परप्रेष्या काकवंध्या भरण्यां प्रथमार्तवा ॥२॥
अनर्था पुंश्चली वंध्या गर्भपातनतत्परा।
प्रेष्या मृतप्रजा वापि वह्निभेप्र० ॥३॥
सुशीला सुप्रजा मान्या पतिभक्ता दृढव्रता।
गृहार्चनरता नित्यं धातृभेप्र० ॥४॥
गुणान्विता धर्मरता नारीसर्वसहासती।
पतिप्रियासुताढ्या च चन्द्रभेप्र० ॥५॥
कुलटादुर्भगा कष्टा मृतपुत्राखला जडा।
दुष्टाव्रतपरिभ्रष्टा रौद्रभेप्र० ॥६॥
पतिभक्ता पुत्रवती वरसंतानमोदिनी।
कुलाचारानुरक्ताढ्यादितिभेप्र० ॥७॥

पतिप्रियापुत्रवती नानाभोगवतीशुभा ।
स्वकर्मनिरतादक्षा तिष्यभेप्र० ।।८।।

परभर्तृरता प्रेष्या कोपिनीनिर्घृणालसा ।
मृषावागीशदुष्पुत्राभौजंगे प्र० ।।९।।

निर्द्वेष्या रोगसंयुक्ता सर्वदा रतिलोलुपा ।
पितृवेश्मरतामान्यापितृभे प्र० ।।१०।।

परकार्यरतादीना दुष्पुत्रा क्लेशभागिनी ।
मलिना कर्कशाक्रुद्धाभाग्यर्क्षे प्र० ।।११।।

प्रजावतीधर्मरतानिर्वैरामित्रपूजिता ।
सतीमातृगृहासक्ता अर्यमर्क्षे रजस्वला ।।१२।।

निर्द्वेष्या भूरिविभवा पुत्राढ्या भोगभोगिनी ।
प्रधानादानकुशलाहस्तर्क्षे प्रथमार्तवा ।।१३।।

चित्रकर्माभोगिनी च कुशला क्रयविक्रये ।
विकीर्णकामाश्लक्ष्णाढ्यात्वाष्ट्रभे प्र० ।।१४।।

बहुवित्तवतीभीरुः कुशला शिल्पकर्मणि ।
पुत्रपौत्रवतीसाध्वीवायुभे प्रथमार्तवा ।।१५।।

नीचकर्मरतादुष्टा पानासक्ता परप्रिया ।
विपुत्रा मलिना क्रुद्धा द्विदैवे प्र० ।।१६।।

स्वामिपक्षार्चितास्वस्य गुणैः सम्यग्विभूषिता ।
सुपुत्रासुभगा कांता मित्रभे प्रथमार्तवा ।।१७।।

दुश्चरित्ररता क्लेशिन्यनर्थापुंश्चलीव्यसुः ।
दुःसंतानवतीज्येष्ठानक्षत्रे प्रथ० ।।१८।।

संतानार्थगुणैर्नाल्पैर्युतान्यक्लेशमोचनी ।
स्वकर्मनिरतानित्यं मूलर्क्षे प्र० ।।१९।।

प्रच्छन्नपापादुष्पुत्रा प्राणिहिंसनतत्परा ।
अजस्रं व्यसनासक्ता तोयभे प्र० ।।२०।।

कार्याकार्येषु कुशलासदाधर्मानुवर्तिनी ।
गुणाश्रया भाग्यवतीविश्वभे प्र० ।।२१।।

पुत्रपौत्रान्विताभोग धनधान्यवतीसती ।
कालानुमोदिनीमान्या विष्णुभे प्र० ।।२२।।

धनधान्यवतीभोग पुत्रपौत्रसमन्विता ।
स्वकर्मनिरतासाध्वी वसुभे प्रथमा० ॥२३॥
बहुपुत्राधनवती स्वकर्मनिरतासती ।
कुलानुमोदिनीमान्या वारुणे प्र० ॥२४॥
बंधकीवंधुविद्वेष्या नित्यं दुष्टरताखला ।
शिल्पकार्येषु कुशलाऽजांघ्रिभे प्र० ॥२५॥
आढचा पुत्रवतीमान्या सुप्रसन्नापतिप्रिया ।
बंधुपूज्याधर्मवत्याहिर्बुध्न्ये प्रथ० ॥२६॥
दृढव्रताधर्मवती पुत्रसौख्यार्थसंयुता ।
विख्यातागुणसंपन्ना पौष्णभे प्रथमार्तवा ॥२७॥"[१]

अथ संधिफलमाह । विवरमिति । तिथिभादीनां विवरं संधिःन शुभम् । उक्तंच "दुर्भगासर्वसंधिषु" इति । रक्तफलमाह । अनरुणाल्पाधिकास्रमिति । अरुणादन्यत् अनरुणम् अनरुणंच अल्पंच अधिकंच अनरुणाल्पाधिकंतच्चतत् अस्रंच अनरुणाल्पाधिकास्रंनसतस्यात् अनरुणं नाम यत्सुरंगम् आरक्तं नभवति अस्रं रक्तम् अन्यत्सुगमम् अर्थादन्यच्छुभम् । उक्तंच—

"प्रथमर्तौ फलंस्त्रीणामुच्यतेरजसोऽधुना ।
सुभगापुत्रसंयुक्ता शुक्लवर्णेतथार्तवे ॥
शशशोणितसंकाशे यद्वाऽलक्तकसंनिभे ।
पुत्रकन्याप्रसूतिःस्यान्नीलेतुस्यान्मृतप्रजा ॥
कर्बुरे म्रियते सा च पिंगले च मृतप्रजा ।
कृष्णे तु विधवानारी रजस्येवं विनिर्दिशेत् ॥
शोणिते बिंदुमात्रेतुस्वैरिणीचाल्पशोणिता ।
वरामध्यस्रवास्यात्तुदुर्भगाबहुशोणिता ॥"

इति । ग्रंथांतरेप्युक्तं

"रक्ते रक्ते भवेत्पुत्रःकृष्णे च मृतपुत्रका ।
पिच्छलाभे भवेद्वन्ध्याकाकवन्ध्याचपांडुरे ॥
पीते च स्वैरिणीप्रोक्ता सुभगागुंजवर्णके ।
सिंदूराभे भवेत्कन्यारजःशोणितलक्षणम् ॥"

---

१. नारदीय संहिता--अ० १५ श्लोक ३-२९

इति । करणफलमाह । गराष्टेति । गरात् अष्टगराष्टगराद्यष्टकरणा[illegible]
बवपर्यन्तानि न संति न शुभानिस्यु: अर्थादन्यानिशुभानि । उक्तंच—

बवेपुष्पवतीनारी वन्ध्या वा विधवाभवेत् ।
बालवे पुत्रिणीनारी कौलवे प्रमदा भवेत् ॥

तैतिले सन्मतयती गरे नारीविनश्यति ।
नष्टप्रजावणिक्संज्ञे विष्टयां वंध्यावनोज्झिता ॥

शकुनौ च चतुष्पादे नारीवैधव्यमाप्नुयात् ।
नागे नरमतेरामा किंस्तुघ्नेविधवाभवेत् ॥

इति । अथोत्पातफलम् । उत्पातस्त्रिविधः सत् नस्यात् । तथाचनारदः
"संध्यासूपप्लवे विष्टयामशुभं प्रथमार्तवे"[1]

इति । अथलग्नफलमाह । पापस्थलग्नमिति । पापग्रहस्थलग्नं न सत्स्या[illegible]
क्षीणेंद्वर्कयमारा:पापास्तेषामन्यतमस्थलग्नमित्यर्थः । पापग्रहस्य मेषसिं[illegible]
वृश्चिकमकरकुंभाः एतानिलग्नानिनशुभानीत्यर्थः अर्थादन्यानिशुभानि क[illegible]
लग्नेशुक्लपक्षे शुभम् कृष्णपक्षे अशुभम् । स्वामिवशात् लग्नस्वामिनोवक्ष्य
माणाः । उक्तंच—

'आत्मघ्नीभ्रूणहामेषे वृषे पुत्रवतीभवेत् ।
द्वंद्वे कन्याप्रसूर्नारी मृतापत्याचकर्किणि ॥

सिंहे वैधव्यमाप्नोति कन्यायां स्त्रीप्रसूर्भवेत् ।
तुलायां बहुपुत्राढ्या दुष्टकर्मरतालिनि ॥

चापे पुत्रधनाढ्यास्यान्मकरे दुःखिनीभवेत् ।
सकृत्प्रजावतीकुंभे मीने चाल्पप्रजाभवेत्" ॥

नारदोपि

"कुलीरवृषचापांत्यनृयुक्कन्यातुलाधनाः ।
राशयःशुभदाज्ञेया नारीणां प्रथमार्तवे" ॥[2]

इति । अत्रापिकर्कलग्नस्यद्वंधेचंद्रस्यसौम्यत्वपापत्ववशाद्व्यवस्थाज्ञेया
अथ वस्त्रफलमाह । अरुणजरन्नीलचित्रांबरमिति नसत्स्यात् अरुणमारक्त
जरज्जीर्णं नीलं प्रसिद्धम् चित्रं नानावर्णै रंजितम् एवंविधमंबरं न सत्स्यात
नशुभं स्यादित्यर्थः अर्थात् दृढं शुभ्रं पीतवस्त्रं शुभम् । उक्तंच—

---

१. नारद संहिता--अध्याय १५ श्लोक २
२ ,, ,, अ०५ श्लोक ३०,

"सुभगाश्वेतवस्त्रा च रोगिणीरक्तवाससा।
नीलांबरधरानारी विधवा प्रथमार्तवा॥
भोगिनीपीतवस्त्रा च दृढवस्त्रापतिव्रता।
दुर्भगाजीर्णवस्त्राच सुभगाचारुवस्त्रिणी"॥

अत्रानुक्तमपित्याज्यं प्रकरणोक्तमन्यद्दुष्टं विचारणीयम्। अत्रास्मिन्नुक्ते निषिद्धकाले रजोदर्शने सति अक्षततिलघृतैर्देव्या ईज्यया यजनं स्यात्। केन देव्यागायत्रीमंत्रेण संख्यानुपादानादक्षततिलघृतानामष्टोत्तरशतं होम:-यथाशक्तिस्वर्णगोभूतिलदानंच कार्यम्॥ १॥

मार्त्तण्डप्रिया—

स्त्रियों के प्रथम रजोदर्शन (ऋतुधर्म) में निम्नलिखित योग अशुभकारक माने जाते हैं।

अशुभ मास—क्षयमास, पौष, कार्तिक, चैत्र, आषाढ़ और भाद्रपद,

,, योग—विष्कुम्भ, अतिगण्ड, शूल, गण्ड, व्याघात, वज्र, व्यतीपात, परिघ और वैधृति,

,, वार—रविवार, सोमवार, भौमवार और शनिवार,

,, तिथि—१।४।९।१४।३०।१२।८।६,

अशुभ स्थान—दूसरे के घर में, कुत्सित जगह में,

,, समय—रात्रिकाल, दोनों सन्ध्या और अपराह्णकाल (दिन का तृतीय भाग)

,, नक्षत्र—मिश्रसंज्ञक, उग्रसंज्ञक, तीक्ष्णसंज्ञक अर्थात् विशाखा, कृत्तिका, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी, मघा, मूल, आर्द्रा, श्लेषा और ज्येष्ठा में,

गण्डान्त (तिथि, नक्षत्र, लग्न की सन्धि) काल भी अशुभ है। ऋतुकाल में रक्त-यदि भिन्न वर्ण का निकले. अत्यल्प निकले या अत्यधिक निकले तो अशुभ कारक होता हैं, वव-गर-वणिज-विष्टि-शकुनि-चतुष्पद-नाग-किस्तुघ्न ये आठ करण अशुभ होते हैं। दिव्य-भौम और अन्तरिक्ष इन तीन उत्पातों में, पापग्रहों के लग्नों (१।८।५।१०।११) में अशुभ है। ऋतुकाल में लाल-पुराना-नीला-या चितकबरा वस्त्र अशुभ होता हैं।

उपरोक्त मास-तिथि-नक्षत्र इत्यादि जो कहे गए हैं, उनसे अतिरिक्त मास-तिथि नक्षत्रादि शुभ होते हैं।

विशेष—निषिद्ध समय में प्रथम रजोदर्शन होने पर उसकी शान्ति आवश्यक होती हैं। अक्षत, तिल घृत से १०८ बार गायत्री मन्त्र द्वारा हवन और यथाशक्ति स्वर्ण-गो-भूमि आदि का दान करना चाहिए॥१॥

सभी कार्यों में सामान्य लग्नबलादि—

प्रायश्चन्द्रं त्यजांत्याष्टमरिपुतनुगं भांशकौ मूढनाथौ
क्रूरेन्द्वाप्तौखलांशं मृतिगतखचरं मृत्युतत्पौ तनुस्थौ ।
सौम्यःकेंद्रत्रिकोणेष्वरिभवसहजेष्वन्यखेटाः प्रशस्ताः
सर्वत्रैतत्प्रयोज्यं प्रकरणपठितांस्तद्विशेषान्विदित्वा ॥२॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथसाधारणलग्नबलं स्रग्धरावृत्तेनाह । प्राय इति । इहवक्ष्यमाणे गर्भाधानादिकृत्ये प्रायो बाहुल्येन चन्द्रमंत्याऽष्टमरिपुतनुगम् त्यज जहीति । अन्त्यं द्वादशम् अष्टमं प्रसिद्धं रिपुः षष्ठं तनुर्लग्नम् एतान्प्रतिगतं चंद्रं त्यजेति । तथाभांशकौत्यज किंलक्षणौ भांशकौ मूढनाथौ मूढः नाथो ययोस्तौ तथा अस्तां गतस्य लग्ननवांशावित्यर्थः । पुनः किंलक्षणौ क्रूरेन्द्वाप्तौक्रूरग्रहचंद्राणामन्यतमेन युक्तौ । तथा खलांशंत्यजयत्रकुत्रापि लग्ने पापग्रहनवांशं त्यज । तथामृतिगतखचरंत्यज । लग्नादष्टमं ग्रहं त्यजेत्यर्थः तथामृत्युतत्पौ तनुस्थौ त्यज मृत्युर्जन्मराशिजन्मलग्नाभ्यामष्टमं त्यज । तत्पस्तत्पतिस्त्यज एतौ तनुस्थौ त्यजेत्यर्थः । लग्नगोचरमाह । सौम्या इति । सौम्याःसौम्यग्रहाः केन्द्राणि लग्नचतुर्थसप्तमदशमानित्रिकोणे नवपंचमे एतेषु केंद्रत्रिकोणेषु सौम्यग्रहाः प्रशस्ताः अरिभवसहजेषु अन्यखेटाः अरिःषष्ठं भवः एकादशं सहजं तृतीयम् एषु स्थानेषु अन्ये खेटाः सौम्येभ्योऽन्ये पापग्रहाःप्रशस्ताःस्युः । सर्वत्रै तत्प्रयोज्यम् एतच्छलोकोक्तं सर्वत्रगर्भाधानादिकृत्ये प्रयोज्यम् साधारणत्वात् । किं कृत्वा प्रकरणपठितांस्तद्विशेषान् विदित्वा पृथक्कृत्ये प्रकरणपठितविशेषान्ज्ञात्वा ॥ २ ॥

मार्त्तण्डप्रिया—

सभी शुभ कार्यों में १२।८।६।१ भावस्थ चन्द्रमा का त्याग करना चाहिए, उस लग्न और नवांश का जिसका अधिपति अस्तगंत हो, क्रूर ग्रह से युक्त लग्न और नवांश, क्रूर ग्रह का नवांश, अष्टमस्थ कोई भी ग्रह, जन्मलग्न-जन्मराशि से आठवाँ लग्न और उसका अधिपति जिस राशि में हों उसका भी त्याग करना चाहिए ।

केन्द्र–त्रिकोण १।४।७।१०।५।९ में शुभ ग्रह हों और पापग्रह ३।६।११ में रहैं तो शुभ होता है, अर्थात् वह लग्न श्रेष्ठ माना जाता है । इन बातों का प्रत्येक शुभ कार्यों में सामान्य रूप से विचार करना चाहिए ॥२॥

गर्भाधान मुहूर्त--

स्वस्त्रींप्राङ्ङ्टिचतुष्कासमदिनविवर श्राद्धतत्प्राग्दिनानि ।
त्यक्त्वामूलं मघांत्येवसुकलिजनिभाहानि पर्वाणि चर्तौ ॥
याहीज्यार्केन्दुलग्नैर्विषमभलवगैरुद्गलैर्भो:सुतार्थिन् ।
व्यस्तैरेतैरिहेवायुगहनि मुदितःकन्यकेच्छो सुचन्द्रे ॥३॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथगर्भाधानंस्रग्धरावृत्तेनाह। भोः सुतार्थिन् ऋतौ मुदितः सन् स्वस्त्रीं प्रतियाहि गच्छ इत्यन्वयः। सुतमर्थयतेऽसौ सुतार्थी तस्य संबोधनं भोः सुतार्थिन् ऋतौ रजोदर्शनादारभ्य षोडशरात्रयः ऋतुःतस्मिन् मुत्हर्षः संजातो यस्य समुदितः एवं विधः सन्स्वस्त्रीं प्रतिगच्छेत्यर्थः। यतोत्रस्त्रीगर्भधारणं करोति अत्र स्त्री अपि हर्षिता भाव्या। तथाचमनुः—

"ऋतुःस्वाभाविकः स्त्रीणां रात्रयः षोडशस्मृताः"[1]

इति। किंकृत्वाप्राङ्निट्चतुष्कासमदिनविवरश्राद्धतत्प्राग्दिनानित्यक्त्वा। प्राचांनिशांचतुष्कंप्राङ्नट्चतुष्कं पूर्वरात्रिचतुष्टयम् असमदिनं विषमदिनं विवराणि दिनरात्रितिथिभादीनां संधयः श्राद्धं स्वपित्रोः श्राद्धदिनं तत्प्राग्दिनं तस्य श्राद्धस्य पूर्वदिनं एतानि त्यक्त्वेत्यर्थः। एवं मूलं त्यक्त्वा तथामूलमघांत्येत्यत्क्वा मूलमघे प्रसिद्धे अंत्यं रेवती एतानित्यक्त्वेत्यर्थः। तथा वसुकलिजनिभाहानि त्यक्त्वा। वसुरष्टमी कलिश्चतुर्दशी जतिभंजन्मनक्षत्रम् अहोदिवा एतानित्यक्त्वेत्यर्थः। तथापर्वाणिचत्यक्त्वापर्वाणिदर्शपौर्णिमाव्यतीपातवैधृतिसंक्रांतिमहापातादीनित्यक्त्वास्त्रियंप्रतिगच्छेत्यर्थः। तथाचनारदः

"रजोदर्शनतोऽस्पृश्या नार्यो दिनचतुष्टयम्।[2]
ततः शुद्धाःक्रियास्वेताः सर्वे वर्णेष्वयंविधिः" इति।

वसिष्ठः

"उपप्लवे वैधृतिपातयोश्च विष्टचां दिवापारिघपूर्वभागे।
संध्यासु सर्वास्वपिमातृपित्रोर्मृतेह्निपत्नीगमनं विवर्ज्यम् ॥
दिनेषु युग्मेषु च वक्ष्यमाण योगैः सुतार्थीस्वसतीमुपेयात्।
दिनेष्वयुग्मेषु च कन्यकार्थी हित्वाचगंडांस्तिथिलग्नभागान् ॥"

---

१. मनुस्मृति—स्मृति चन्द्रिका संस्कारकाण्ड (गर्भाधान)

२. नारद संहिता—अ० १६ श्लो० १।

ज्योतिषार्के

"ऋतौ युग्मनिशिस्वस्त्रींगच्छेत्पुत्राय सद्विधौ ।
मघामूलांत्यपक्षांतभूतदर्शाष्टमीस्त्यजेत्" ।। इति

कैःईज्यार्केन्दुलग्नैः विषमभलवगैः ईज्योगुरुः अर्कः प्रसिद्धः इन्दुश्चन्द्रः-लग्नं प्रसिद्धम् एतैर्विषमभलवगैः भं राशिः लवोनवांशः विषमराशि-र्विषमनवांशस्थितैरित्यर्थः । न केवलं विषमभलवगैः अपितु उद्बलैः उत्-उत्कृष्टं बलं येषांतानितथातैः । अथ कन्याकामिनोविशेषमाह । भोः कन्य-केच्छो इहैव अनन्तरोक्तलक्षणे काले अयुगदिनिकामेदिनेमुदिता सन्स्त्रींप्रति-याहि । कैः एतैर्व्यस्तै एतैः ईज्यार्केंदुलग्नैः व्यस्तैरितिसमभलवगैः सम-राशिसमांशस्थैः । तथाच बृहज्जातके—

"ओजर्क्षे पुरुषांशकेषुबलिभिर्लग्नार्कगुर्विन्दुभिः[1]
पुंजन्मभवदेत्समांशकगतैर्युग्मेषुतैर्योषितः" इति ।

कस्मिन्सति सुचंद्रे शोभने चंद्रेसति गोचरेण चंद्रबलेसतीत्यर्थः । सुचंद्रे इति । अनन्यगतिकं विना सर्वत्र बोध्यम् पूर्ववल्लग्नबलम् ।।३।।

मार्त्तण्डप्रिया—

रजस्वला होने के प्रारम्भ के ४ दिन, तिथि नक्षत्र लग्नों की सन्धि में (गण्डान्त), मातृ-पितृ श्राद्ध दिन और उससे पूर्व का दिन, मूल-मघा और रेवती नक्षत्र, ८।१४ तिथि, जन्म नक्षत्र, दिन का समय तथा पर्वदिन (अमावास्या, पूर्णिमा-व्यतीपात-वैधृति-संक्रान्ति) का त्याग करना चाहिए ।

पुत्रेच्छु को सम दिनों ६।८।१०।१२।१४।१६ में तथा गुरू-सूर्य-चन्द्र और लग्न बलवान होकर विषम राशि और विषम नवांश में तो प्रसन्न होकर गर्भाधान करना चाहिए ।। ३।।

पुँसवन सीमन्तोन्नयन मुहूर्त—

पुंभेऽर्केज्यारवारे विमिथुनविषमांगांशयोः पुँसवं स्यात् ।
सीमंताख्यंचसत्सुव्ययसुतगृहयोःपर्वरिक्तोनतिथ्याम् ।।
मासेद्वित्रिप्रसंख्ये प्रथमकमपरं तुर्यषष्ठाष्टमेषु ।
प्रोक्तंपुङ्भलग्नं ग्रहबलमनयोर्ज्यमाद्यश्च पक्षः ।।४।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

---

१. बृहज्जातक—अ० ४ श्लो ११ ।।

अथ पुंसवनसीमन्तोन्नयनेस्रग्धरयाह। पुंभेति। पुंभे--

"पुन्नक्षत्राणि चैतानि पुष्योहस्तः पुनर्वसुः।
अभिजित्प्रोष्टपाच्चैष अनुराधाश्वियुक्तथा"

इति। प्रोष्ठपात्पूर्वाभाद्रपदा एषामन्यतमे पुंनक्षत्रे अर्केज्यारवारे रवि-गुरुभौमवारे विमिथुनविषमांगांशयोः अंगं च अंशश्च अंगांशौ विगतंमिथुनं याभ्यां तौ विमिथुनौ तौ चतौ अंगांशौ च तथातयोः मिथुनरहितेविषमलग्ने विषमनवांशे इत्यर्थः पुंसवं पुंसवनंसीमन्ताख्यं चसीमंतोन्नयनमिति सत्स्यात्। नामैकदेशग्रहणेनामग्रहणम्। कयोः सतोः सुव्ययसुतग्रहयोः सतोः पापग्रह-रहितयोः व्ययसुत भवनयोः सतोरित्यर्थं। पर्वरिक्तोनतिथ्याम् पूर्णिमामा-रिक्तातिथिरहिततिथ्याम्। मासे द्वित्रिप्रसंख्ये प्रथमकम्। पाठोक्त्याप्रथम-कं पुंसवनंगर्भाधानात्द्वित्रिप्रसंख्येमासिद्वितीये तृतीयेवामासिसत्स्यात्। अपरंसीमंतोन्नयनम्। तुर्यषष्ठाष्टमेषु गर्भाच्चतुर्थषष्ठाष्टमेषुमासेषु सत्स्यात् यत्पुंगर्भायलग्नबलमुक्तम् ईज्यार्केन्दुलग्नैरित्यादिकं तदनयोः पुंसवनसीमं-तोन्नयनयोर्योज्यम्। आद्यः पक्षः शुक्लपक्षश्चयोज्यः न कृष्णः। अत्रगर्भावि-नाशनांतेषु गुरुशुक्रमौढ्यादिकं न चिंत्यमित्यग्रे वक्ष्यति। लग्नबलं पूर्ववत्। जातूकर्ण्यः—

"द्वितीये वा तृतीये वा मासिपुंसवनंभवेत्।
व्यक्ते गर्भे भवेत्कार्यंसीमंतेनसहाथवा"॥

नृसिंहः--

"रिक्तांचपर्वनवमीं त्यक्त्वा पुंसवनेशुभाः"।

वृत्तशते—

"सीमंतोन्नयनं बुधैस्तुहिनगौ पुन्नामधिष्ण्ये स्थिते
कुर्यात्पुंसवनं च सूर्यदिवसे भौमस्य जीवस्यवा"

इत्यादि। बृहस्पतिः—

"कुलीरं मिथुनं कन्यां हित्वाशेषाः शुभावहाः" इति।

नारदः—

"चतुर्थे मासि षष्ठे वाप्यष्टमे वा तदीश्वरे।
बलोपपन्नेदंपत्योश्चंद्रताराबलान्विते।
अरिक्ता पर्वदिवसे कुजजीवार्कवासरे।
तीक्ष्णमिश्रोग्र वर्ज्येषु पुंलग्ने पुंनवांशके॥

शुद्धेऽष्टमे जन्मलग्नात्तयोर्लग्ने न नैधने।
शुभग्रहयुते । दृष्टे पापखेटायुतेक्षिते॥
पंचेष्टिके चतुर्भिर्वा इष्टेर्केन्द्रीज्यपूर्वकैः।
स्त्रीणां तु प्रथमे गर्भे सीमंतोन्नयनं शुभम्॥
शुभग्रहेषु धीधर्मकेंद्रेष्वरिभव त्रिषु।
पापेषु सत्सु चंद्रेन्त्य निधनाद्यरि वर्जिते।
क्रूरग्रहाणामेकेपिलग्नान्दंत्यात्मज।ष्टगः[1] ।
सीमंतिनींवातद्गर्भं बलीहंति न संशयः" इति॥४॥

मार्त्तण्डप्रिया—

पुरुष संज्ञक नक्षत्रों (पुन, पुष्य, हस्त, अभिजित, पू० भा० अश्विनी, अनुराधा) में, सूर्य–गुरू–मंगल वारों में, मिथुन को छोड़कर विषम लग्न और विषम नवांशों में, लग्न से ५ और ११वाँ भाव शुभग्रहों से युक्त हो, पूर्णमासी–अमावास्या संक्रान्ति और रिक्ता (४।९।१४) तिथियों में पुसंवन और सीमन्तोनयन संस्कार शुभ होता है।

पुंसवन संस्कार गर्भाधान से दूसरे या तीसरे मास में और सीमन्तोनयन संस्कार गर्भाधान से ४।६।८ मासों में शुभ होता है। इन दोनों संस्कारों में शुक्लपक्ष और पुत्रोत्पत्ति कारक योगों (ग्रह–नक्षत्र–तिथि–लग्न आदि) को ग्रहण करना चाहिए॥४॥

"कृष्ण पक्ष में यह संस्कार शुभ नहीं होता है"।

जातकर्म नामकरण मुहूर्त—

सूतौ जातंविदध्यादपिजनिमरणाशौचके वा तदंते-
क्षिप्रैर्ब्राह्मोत्तराभिश्चरमृदुभिरथो नामवर्णा विदध्युः॥
सूतेः सूर्याष्टिविंशाकृतिमितदिवसे जातभैर्वा चरांगं
रिक्ताष्टम्यारमंदान्व्ययगतखचरं प्रोज्झ्यरात्रिपराह्णम्॥५॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथजातकर्मविधिस्रग्धरावृत्तेनाह। सूतौ प्रसूतौ जातायां जातं जातकर्म विदध्यात् कुर्यात्। अथकदाचित् सूतकमध्ये प्रसूतौ जातायां सत्यां स्मार्तकर्म-परित्यागो—

---

१. नारदसंहिता–अ० १८ श्लोक १–६।

"राहोरन्यत्रसूतक" इति—

शास्त्रेणजातकर्मणोवरोधे प्राप्ते तदपवादमाह। जनिमरणाशौचकेपि। अयमर्थः कदाचिज्जातकमृतसूतकयोः प्रसूतिर्भवति। तदाजातकर्मविषये सूतकांतरदोषोनास्तीतिभावः। सूतकांतरे सत्यपिजाते पुत्रे पितासचैलं स्नानं कुर्यात् इतिस्वस्वगृह्योक्तं कर्मकुर्यादित्यर्थः। यतः पूर्वाशौचे नैवास्यशुद्धिः पितुरितिकर्तुरुपलक्षणं वातदंतेपूर्वाशौचान्तेषाएतस्यांतेवाक्षिप्रादिभिर्नक्षत्रैः कुर्यात् क्षिप्राणि अश्विनीहस्ताभिजित्पुष्या ब्राह्मं रोहिणी उत्तरास्तिस्रः चराणिश्रवणत्रयंपुनर्वसुस्वात्यः मृदूनि अनुराधारेवतीमृगचित्राः एभिरित्यर्थः। लग्नबलंपूर्ववत्। उक्तं च

"तस्मिन्जन्ममुहूर्तेपि सूतकांतेथवा शिशोः।
जातकर्मचकर्तव्यंपितृपूजनपूर्वकम् ॥
क्षिप्रैश्चरैर्ध्रुवैर्मिश्रैर्द्वादशेप्रथमेह्निवा।
केन्द्रेगुरौभृगौकार्यंजातकर्मसनातनम्"[१] इति।

प्रजापतिः

सूतके तु समुत्पन्ने पुत्रजन्मयदा भवेत्।
कर्तुस्तात्कालिकीशुद्धिः पूर्वाशौचेन शुध्यति" इति।

संवर्तः

"जाते पुत्रे पितुः स्नानं सचैलं तु विधीयते[२], तच्च शीतोदकेन कार्यम्। तत्र जाबालिः "कुर्यान्नैमित्तिकं स्नानं शीताद्भिः काम्यमेव च"[३] इति।

एतच्चरात्रावपिकार्यम्। तत्रवसिष्ठः

"पुत्रजन्मनि यज्ञे च तथा संक्रमणे रवेः।
राहोश्चदर्शने स्नानं प्रशस्तं नान्यथा निशि"।[४]

तच्च उत्तराभिमुखं कार्यम्। तदुक्तंतेनैव

"श्रुत्वा जातं पिता पुत्रं सचैलं स्नानमाचरेत्।
उत्तराभिमुखो भूत्वा नद्यांवादेवखातके"[५] इति।

रात्रौ उदकादिगमनाशक्तौविशेषमाह सांख्यायनः—

१. नारद संहिता-अ० १ श्लो० १-२
२. संवर्तस्मृति श्लो० ४१।
३. जाबालिः—स्मृति चन्द्रिका संस्कारकाण्ड जातकर्म
४. वशिष्ठः—स्मृति चन्द्रिका संस्कारकाण्ड जातकर्म
५. ज्योतिर्वशिष्ठ—वीरमित्रोदय (जातकर्म संस्कार)

"दिवा यदाहृतं तोयं कृत्वास्वर्णयुतं तु तत् ।
रात्रिस्नाने तु संप्राप्ते स्नायादनलसन्निधौ"[1] इति ।

अथनामकर्माह । अथोनाम वर्णाविदध्युः—

सूतेः सूर्याष्टिविंशाकृतिमितदिवस" इति ।

अथोऽनन्तरंवर्णाः ब्राह्मणादयः क्रमेणसूते; प्रसूतेः सकाशात् सूर्या १२ ष्टि १६ विंशा २० कृति २२ मितदिवसे द्वादशषोडशविंशद्वाविंशमितदिवसेनामविदध्युः कुर्युरित्यर्थः । अयमर्थः ब्राह्मणो द्वादशदिवसे क्षत्रियः षोडशे वैश्योविंशतिमिते शूद्रोद्वाविंशतिदिवसे नामकुर्यादित्यर्थः तच्चोक्तं बृहस्पतिना—

"द्वादशेदिवसेवापि जन्मतो दिवसे शुभे ।
षोडशे विंशतौ चैव द्वाविंशे वर्णतः क्रमात्.'[2] इति ।

अत्रान्येपि विकल्पाः सन्ति । तत्र व्यासः

"नामधेयंदशम्यांतुकेचिदिच्छंतिसूरयः ।
द्वादशेह्न्याहुरन्येतुमासपूर्णेतथा परे ॥
अष्टादशेह्नितथावदंत्यन्येमनीषिणः" इति ।

प्राप्तकालेपिविशेषमाह गर्गः

"व्यतीपाते च संक्रांतौ ग्रहणे वैधृतावपि ।
श्राद्धंविनाशुभंनैव प्राप्तकालेपिमानवः ॥
अमासंक्रान्तिविष्टयादौ प्राप्तकालेपिनाचरेत्" इति ।

यत्रकालनिरोधस्तत्रदोषोनास्ति

यस्यांक्रियायां सर्वोक्ताः काले मासदिनैरपि ।
तस्यां नदोषोमूढत्वं वक्रंवाजीवशुक्रयोः ॥ इति ।

अथकालातिक्रमेनक्षत्राण्याह । जातभैर्वेति । जातभै र्जातकर्मोक्तनक्षत्रैर्मैत्रैः क्षिप्रैरित्यादिभिर्वा कार्यम् । तदुक्तं नारदेन

देशकालोपघाताद्यैःकालातिक्रमणं यदि ।
अनस्तगेभृगावीज्ये तत्कार्यं चोत्तरायणे ॥
चरस्थिर मृदुक्षिप्र नक्षत्रे शुभवासरे ।
चन्द्रताराबलोपेते दिवसे च शिशोः पिता"[3] इति ।

अथात्रत्याज्यविशेषमाह । चरांगमिति । चरांगलग्नंरिक्ताष्टस्यारमंदान् रिक्ताचतुर्थीनवमीचतुर्दश्यः । अष्टमीप्रसिद्धा आरोभौमवारः मन्दः शनैश्चरः

१. सांख्यायनः—स्मृतिचन्द्रिका संस्कारकाण्ड (जातकर्म)
२. बृहस्पति—वीर मित्रोदय (नामकर्म संस्कार)
३. नारद संहिता—अ० २० श्लो० २-३

तान्व्ययगतखचरं खचरं व्ययभावगतं सौम्यमसौम्यंवा भग्निः प्रसिद्धा अ
राह्ने दिनतृतीयोंश एतान्प्रोज्झ्यत्यक्त्वा । लग्नबलंपूर्ववत् । तथाचबृहस्पतिः

पूर्वाह्नः श्रेष्ठ इत्युक्तो मध्याह्नो मध्यमः स्मृतः ।
अपराह्नंचरात्रिं च वर्जयेन्नामकर्मणि" इति ।

नृसिंहः

सायाह्ने दुष्टयोगे च शनिभूमिजवारयोः ।
रिक्तापर्वाष्टमीविष्टिः किंस्तुघ्नं च विशेषतः ॥
एतैर्दोषयुते काले रात्रावपिनकारयेत्" इति ।

बृहस्पतिः

शुभवारे च षड्वर्गे शुभानां नामसंपदे ।
राशयश्चस्थिराः श्रेष्ठा द्विःस्वभावाः शुभैर्युताः[१]

नृसिंहः

लग्नद्वचायाष्टमे सर्वे नशुभानामकर्मणि" इति ।

केषां नामकार्यमिति । संग्रहे उक्तम्—

देवालयगजाश्वानां वृक्षाणां वापिकूपयोः ।
सर्वोपकारणानां च चिह्नानां योषितां नृणाम् ॥

काव्यादीनां कवीनां च पश्वादीनां विशेषतः ।
राजप्रासादसंज्ञानां नामकर्मविशिष्यत" इति ॥५॥

मार्त्तण्डप्रिया—

किसी बालक का जन्म यदि जनना शौच या मरणा-शौच में हुआ हो तो उसका जातकर्म संस्कार अशौच निवृत्ति के पूर्व या पश्चात् भी किया जा सकता है। अश्विनी, पुष्य, अभिजित (क्षिप्र संज्ञक), रोहिणी, तीनों उत्तरा ध्रुव संज्ञक, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा (चरसंज्ञक), मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा (मृदु संज्ञक), इन १७ नक्षत्रों में जातकर्म संस्कार करना चाहिए।

जन्म से १२ वें दिन ब्राह्मणों के १६ वें दिन क्षत्रियों के २० वें दिन वैश्यों के तथा २२ वें दिन शूद्रों के बालकों का नामकरण संस्कार करना चाहिए या इससे अन्य दिनों में भी जातकर्मोक्त नक्षत्रों में नामकरण करना चाहिए। इसमें चरलग्न (मे० क० तु० म०), ४।६।१४।८ तिथि, भौम-शनिवार, द्वादश में कोई ग्रह हो वह लग्न, दिन का तीसरा भाग तथा रात्रिकाल अशुभ माना गया है ॥५॥

२. बृहस्पति-वीरमित्रो. (नामकर्म सं०)

दोलारोहण-भुम्युपवेशन-दुग्धपान-निष्क्रमण मुहूर्त्त—

जन्माहाद्द्वादशेह्निध्रुवमृदुलघुभैर्बान्यसेत्पालकेऽर्भं
सौम्याश्वीज्यध्रुवेन्द्रैर्भुवि शुभदिवसे पंचमे मासि दध्यात् ॥
एकत्रिंशे दिने वाशननिगदितभैः कंबुना योज्यमर्भं
व्यग्वाशास्ये पयोथास्य गमवदुदितोनिष्क्रमो मासितुर्ये ॥६॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथपालकारोहणं भूम्युपवेशनं दुग्धपानं निष्क्रमणं चेतिचतुष्टयं वृत्तैकेनाह। प्रसूतेः सकाशात्द्वादशे दिवसे पालके खट्वायां वा अर्भं बालकं न्यसेत् निदध्यात्। उक्तकालातिक्रमेध्रुवमृदुलघुभैर्वानक्षत्रैर्निदध्यात्। लग्नबलंपूर्ववत्—

सूर्यभाच्चंद्रभं यावत् पंचपंचचतुर्दिशम्।
मध्येचसप्तदेयानि बालकस्य हितायवै॥
पूर्वभागेतुरोगित्वं दक्षिणे मरणं ध्रुवम्॥
पश्चिमे विकृतीबाल उत्तरे व्याधिसंभवः॥
शेषेतुमध्यनक्षत्रे बालकस्य हितायवै।

तथाचोक्तं बृहस्पतिना स्वसंहितायाम्—

खट्वारोहस्तु कर्तव्यो दशमे द्वादशेऽपिवा।
षोडशे दिवसे वापि द्वाविंशे दिवसेऽपिवा।[1]

तथोक्तं भविष्योत्तरे

अभीष्ट दिवसे पुण्ये चन्द्रताराबलान्विते।
मृदुध्रुवक्षिप्रभे तु मातावाकुलयोषितः॥
शेषशायिनमाचिंत्य प्राक्शीर्षंविन्यसेच्छिशुम्" इति।

भूम्युपवेशनमाह। सौम्येति। सौम्योमृगः अश्विनी प्रसिद्धा ईज्यः पुष्यः ध्रुवाणि पूर्वोक्तानि त्र्युत्तरारोहिण्यः इन्द्रोज्येष्ठा एभिर्नक्षत्रैः शुभदिवसे रिक्तादिवर्जिते जन्मतः पंचमे मासि भुविभूम्याम् अर्भंनिदध्यात् उपवेशयेदित्यर्थः। तथाचोक्तं ब्रह्मपुराणे—

---

१. बृहस्पति संहिता—वीरमित्रो नामकर्म सं०

पंचमे च तथामासिभूमौ तमुपवेशयेत् ।
तत्र सर्वेग्रहाः शस्ताभौमोप्यत्रविशेषतः ।।
तिथिविवर्जयेद्रिक्तां शस्तान्याः श्रृणुभानिमे ।
उत्तरात्रितयं सौम्यं पुष्यर्क्षं शुक्रदैवतम् ।।
प्राजापत्यंचहस्तश्च शस्तमाश्विनमित्रभम् ।
वराहं पूजयेद्देवं पृथिवींचतथा द्विजान् ।।
भूभागमुपलिप्याथतत्रकृत्वातुमंडलम् ।
वाद्यपुण्याहशब्देन भूमौतमुपवेशयेत् ।। इति ।

उपवेशनमंत्रस्तत्रैवोक्तः

रक्षैनं वसुधे देवि सदासर्वगतं शिशुम् ।
आयुः प्रमाणं सकलं निक्षिपस्वहरिप्रिये" इति ।

दुग्धपानमाह । एकत्रिंशेदिन इति । एकत्रिंशेदिवसे अर्भे बालके कंबुना शंखेन पयः दुग्धंयोज्यं पाययेदित्यर्थः । अत्रनृसिंहः—

एक विंशदिने चैव पयः शंखेनयोजयेत्[1]" इति ।

अथमातुः स्वल्पपयस्त्वे पक्षांतरमाह । वाशननिगदितभैरिति । अन्नप्राशननक्षत्रैर्योज्यम् भैरित्युपलक्षणम् । अन्नप्राशनोक्तम् अन्यदपि विचार्यम् । किंलक्षणे अर्भे व्यग्वाशास्ये विगतः अगुः राहुर्यस्याः साव्यगुः साचासौ आशा च तस्याम् आस्यं मुखं यस्यसतथा तस्मिन् राहुवर्जितदिङ्मुखः इत्यर्थः । लग्नबलं पूर्ववत् । व्यग्वाशास्य इति उपलक्षणं तेन रुद्रयोगिन्यादिकमपिवर्ज्यम् । तथाचोक्तं ज्योतिर्निबन्धे—

योगिनीराहुरुद्रादि मुखं चैवविवर्जयेत

राहुलक्षणं—

गुरुभान्वोर्वसेत्प्राच्यामिन्दौशुक्रेचदक्षिणे ।
कालराहुः कुजेप्रत्यगुत्तरे बुधमन्दयोः

लक्षणांतरम् —

इन्द्रेवायौ यमे रौद्रे तोयाग्निशशिराक्षसे ।
यामार्धमुदयाद्राहुर्भ्रमत्येवं दिगष्टके ।। इति ।

उदयात्सूर्योदयात् । रुद्रलक्षणं—

हरिसोमवह्निराक्षसयमवरुणानिलहरालयेष्वेवम् ।
उदयादिभ्रमतिसदाघटिकारुद्रोमहालयेत्यादि ।।

---

१. नृसिंह––वीरमित्रो (दुग्धपान सं०)

हरिरिन्द्रः। अथ निष्क्रमणमाह। अथास्यगमवदुदितोनिष्क्रणंमासितुर्ये। तुर्येचतुर्थेमासि अस्यार्भकस्य निष्क्रमो निष्क्रमणं गमवत् गमनवदिति यावत्। उदितः उक्तः पूर्वैः अत्रयात्राप्रकरणोक्तं सर्वंयोज्यमित्यर्थः निष्क्रमणं बृहस्पतिनोक्तम्—

अथनिष्क्रमणं नाम गृहात्प्रथमनिर्गमः।
अकृतायां क्रियायां स्यादायुःश्रीनाशनंशिशोः" इति।

यमः—

उपनिष्क्रमणं कुर्याच्चतुर्थेमासिसावने" इति।

कारिकायां—

चतुर्थेमासिपुण्यर्क्षेशुक्लेनिष्क्रमणं भवेत्।
स्नातं स्वलंकृतंस्वाभिः कृतस्वस्त्ययनंशिशुम्" इति।
आदाय गेहान्निर्गम्यगच्छेयुर्देवतालयम्।
अभ्यर्च्यदेवतांसम्यगाशिषोवाचयेदथ ॥
कृत्वाप्रदक्षिणं गेहमानयन्तिततः स्वकम्।
मातृस्वसृगृहंगत्वामातुलादेर्गृहंनयेत् ॥
तदाशीर्वचनाद्यैश्चदीर्घायुरभिनंदितः।
जयंतस्यमतेनायंलिखितः शिशुनिष्क्रमः॥
स्वगृह्यानुसारं योजयेत् ॥६॥

मार्त्तण्डप्रिया—

जन्म दिन से १२ वें दिन या उसके पश्चात् तीनों उत्तरा, रोहिणी (ध्रुवसंज्ञक) मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा (मृदुसंज्ञक) हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित (लघुसंज्ञक) इन १२ नक्षत्रों में बालक को पालना (दोला) में बिठाना चाहिए।

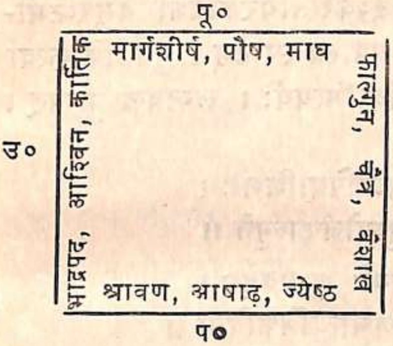
जन्म से ५ वें मास में, शुभवार में, मृगशिरा, अश्विनी, पुष्य, जेष्ठा, तीनों उत्तरा, रोहिणी इन ८ नक्षत्रों में, बालक को भूमि पर बिठलाना चाहिए। जन्म से ३१ वें दिन या अन्नप्राशन के नक्षत्रों में (श्लोक ८), राहु जिस दिशा में हो उससे भिन्न दिशा में मुख करके बालक को शंखद्वारा बाहर का दुग्ध पान कराना चाहिए।

जन्म से चौथे मास में यात्रा के मुहूर्त्त में बालक को पहले-पहल घर से बाहर निकालना चाहिए।

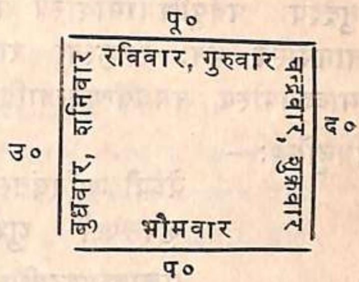
विशेष—दुग्ध पान में राहु की दिशा जो वर्जित की गई हैं, उसमें दो प्रकार के राहु होते हैं।

(१) राहु (२) काल राहु।
राहु सौरमास के अनुसार दिशा बदलता है और कालराहु दिन के अनुसार।

राहु की दिशा



काल राहु की दिशा



कर्णवेध मुहूर्त—

मैत्रैःक्षिप्रैः स्थिरभचरभैर्व्यानिलांभः पकर्क्षै-
श्चैकाफापौष्विन शनिकुजर्क्षांशवारानपास्य॥
रिक्तापर्वेश्वरवसुतिथीन् रात्रिसंध्ये समाब्दं,
पुंस्त्रीकर्णौ सविधि पटुना दक्षवामादि वेध्यौ॥७॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथकर्णवेधं मन्दाक्रांतयाह मैत्रैरिति। मैत्रैः अनुराधारेवती मृगचित्राभिः क्षिप्रैःदस्रार्काभिजिदीज्यभैः स्थिरभचरभैः स्थिराणि उत्तरात्रयरोहिण्यः चराणि श्रवणत्रयपुनर्वसुस्वात्यः तैः कथंभूतैः स्थिरभचरभैः व्यानिलांभः पकर्क्षैः विगतानि अनिलांभः पकर्क्षाणियेभ्यस्तानि तथातैः अनिलंस्वाती अंभः पः शततारका कक्षंरोहिणी तद्रहितैरित्यर्थ। चैकाफापौषु चैत्रकार्तिक-फाल्गुनपौषेष्वित्यर्थः। पुंस्त्रीकर्णौ पुरुषस्त्रियोः कर्णौ पटुना कुशलेन सविधियथास्यात् तथादक्षवामादिवेध्यो पुरुषस्य दक्षिणकर्णादिः स्त्रिया वाम-कर्णादिरित्यर्थः कर्णवेधने सूचीमाह बृहस्पतिः—

सौवर्णीराजपुत्रस्य राजतीविप्रवैश्ययोः।
शूद्रस्यत्वायसी सूची मध्यमाष्टांगुलात्मिका॥

कर्णवेधविधिस्तुगृह्यपरिशिष्टे उक्तः। अथ कर्णवेधो वर्षे तृतीये पंचमेवा पुष्येंदुहरिचित्रारेवतीषु पूर्वाह्णे प्राङ्मुख उपविश्य दक्षिणं कर्णमभिमंत्र-येत्। भद्रंकर्णेभिरिति। सव्यंवक्ष्यंन्तीवेदिति। कुमारायमधुरंदत्त्वाथाभि-

वंद्यात्ततोब्राह्मणभोजनम् इति । किंकृत्वा इनशनिकुजक्षांशवारानपास्य रवि-शनिकुजानां ऋक्षाणि लग्नानि अंशानवांशाः वाराः प्रसिद्धास्तांस्त्यक्त्वे-त्यर्थः । पुनः किंकृत्वा रिक्तापर्वेश्वरवसुतिथीनपास्य रिक्ताश्चतुर्थीनवमी-चतुर्दश्यः पर्वपूर्णिमामावास्ये संक्रांतिश्च ईश्वरतिथिरेकादशी वसुरष्टमी-एतानपास्य पुनः किंकृत्वा रात्रिसंध्ये अपास्य स्पष्टम् । पुनः किं कृत्वा समाब्दमपास्य समवर्षत्यक्त्वाविषमेवर्षेकर्तव्यमित्यर्थः । लग्नबलं प्राग्वत् ।

अत्रनृसिंहः—

वेध्यौकर्णाविदंतस्य विषमेब्देपिवाशिशोः ।
शुक्लपक्षे शुभेवारेचैत्रपुष्योर्जफाल्गुने ॥
एकादश्यष्टमीपर्वरिक्तावर्ज्याः शुभावहाः ।
शिष्टाश्चतिथयः सर्वाः कृष्णेचांत्यत्रिकंविना ॥
कर्णद्वयादितिक्षिप्रमृदुभैस्त्र्यायगैः शुभैः ।
गुरौलग्नेचकेप्याहुरुत्तरासु श्रुतिंव्यधेत् ॥ इति ।

अगस्त्यः--

द्वयोश्चसंध्ययोर्लग्ने नकुर्यात्कर्णवेधनम् ।
रात्रावपितथा लग्ने नक्षत्रतिथिसंधिषु ॥
कर्णवेधंनकुर्वीतकुर्याच्चेच्छेदनं भवेत्, इति ।

बृहस्पतिः--

मंदार्काराशवाराः स्युर्वर्ज्याः कर्णस्यवेधने ।
गुरुशुक्रेंदुजेंदूनांपूज्यवारांशकोदयात्, इति ।

संग्रहे--

शातकुम्भमयीसूचीवेधनेषु शुभप्रदा ।
राजतीवायसीवापियथाविभवतः शुभा ॥
सुभूमौप्रांगणेरम्येशुचौदेशेंऽबरेरवौ ।
संस्थितेवेधयेत्कर्णौ स्त्रीपुंसोर्वामदक्षिणौ ।
शुक्लसूत्रसमायुक्तताम्रसूच्याथवेधयेत् ।
वेधात्तृतीयनक्षत्रे क्षालयेदुष्णवारिणा, इति ।

देवलः--

कर्णरंध्रे रवेश्छायानविशेदग्रजन्मनः ।
तंदृष्टाविलयंयांतिपुण्यौघाश्चपुरातनाः, इति ॥७॥

मार्त्तण्डप्रिया—

कर्णवेध जन्म से विषम वर्षो में करना चाहिए। यदि कन्या का कर्णवेध हो तो पहले बाँया कान छेदकर उसके बाद दाँया कान छेदना चाहिए।

कर्णवेध संस्कार में

त्याज्य	ग्राह्य
स्वाती, शतभिषा,	स्थिर संज्ञक-मैत्र संज्ञक
रोहिणी	चर संज्ञक -क्षिप्र संज्ञक नक्षत्र
सूर्य-शनि-भौमवार	चैत्र, कार्तिक, पौष, फाल्गुन मास
सूर्य-शनि-भौम का लग्न नवांश	चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्रवार और इन के लग्ननवांश
४।९।१४।११।८।१५।३० तिथि	१।२।३।६।७।१०।१२।१३ तिथियों में
रात्रिकाल तथा प्रातःकाल सन्ध्याकाल	पूर्वाह्न से अपराह्ण काल तक ॥७॥

अन्नप्राशन मुहूर्त—

मासे षष्ठेऽष्टमे नुर्निगदितमशनं पंचमे सप्तमे वा,
भीरोरुज्झंति नंदाहरिवसुरजनीरिक्तकाः स्वर्क्षमेके ॥
सदृक्कांशाह्नचचांद्रे ध्रुवमृदुचरभं क्षिप्रभेजालिमीनो।
नांगेकेंद्रत्रिकोणांत्यमृतिषु विमलास्विन्दुरिष्टो खिलोंगे ॥८॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथ अन्नप्राशनंवृत्तेकेनाह। जन्मतः षष्ठमासे अष्टमेवा मासे नुः नरस्य अशनम् अन्न- प्राशनंनिगदितंप्रोक्तम्। भीरोःकन्यायाः पंचमेसप्तमेवामासे अशनंप्रोक्तम्। अत्रनंदाहरिवसुरजनीरिक्तकाः उज्झंतिमुनयः नंदाः प्रतिपत्षष्ठयेकादश्यः हरिर्द्वादशी वसुरष्टमी रजनीरात्रिः रिक्ताश्चतुर्थीनवमीचतुर्दश्यः ताः स्वर्क्षंजन्मनक्षत्रं च एके आचार्या अत्र उज्झंति। तथाचोक्तं—

जन्मर्क्षे श्रीक्षयंविद्यात्, इति।

जन्मर्क्षंतुपुंविवाहान्नप्राशनादिषुबहुभिर्गृह्यते तदग्रेवक्ष्यते पुनः कस्मिन् सदृक्कांशाह्नि दृक्कोदृक्काणः अंशोनवांशः अहोदिनम् एषां समाहारः दृक्कांशाहः सतोग्रहस्यदृक्कांशाहः सदृक्कांशाहः तस्मिन्कथं भूतेस-

दृक्कांशाह्नि अचांद्रे न विद्यते चांद्रदृक्कांशो यस्मिंस्तदचांद्रं तस्मिन्
चंद्रस्य दृक्कांशाह्वानिर्निद्यानिक्षीणश्चेत् पूर्णेतुनदोषः। अन्यशुभग्रहाणां शुभा
नीत्यर्थः। पुनः कस्मिन् ध्रुवमृदुचरभक्षिप्रभे ध्रुवादिनिप्रसिद्धानि पूर्वमेवो
क्तानि तत्रेत्यर्थः। पुनः अजालिमीनोनांगे अजोमेषः अलिर्वृश्चिकः मीन
प्रसिद्धः एभ्योन्यलग्ने मेषवृश्चिकमीनलग्नान्यन्नप्राशने नशुभानीत्यर्थः। कासु
सतीषु केन्द्रत्रिकोणांत्यमृतिषु विमलासुसतीषु केन्द्राणिप्रथमचतुर्थसप्तमदश
मानि त्रिकोणेनवपंचमे अंन्त्यंद्वादशं मृतिरष्टमम्।

परवल्लिगं द्वन्द्वतत्पुरुषयोः,

एतासुविमलासु पापग्रहरहितासु सतीषु पापग्रहोत्र अनिष्टकारीत्यर्थः
इंदुश्चंद्रः अखिलः पूर्णः अंगे लग्ने इष्टः अन्नप्राशनेपूर्णचन्द्रोलग्नेशुभ इत्यर्थः
अन्यल्लग्नबलंपूर्ववत्। अत्रनारदः--

षष्ठेमास्यष्टमेवापि पुंसां स्त्रीणां तु पंचमे।
सप्तमे मासि वा कार्यं नवान्नप्राशनं शिशोः॥

रिक्तांदिनक्षयं नंदांद्वादशीमष्टमींसमाम्।
त्यक्त्वान्यतिथयः श्रेष्ठाः प्राशनेशुभवासराः[1] इति।

ज्योतिर्विवरणेः--

जन्मर्क्षेश्रीक्षयंविद्यात्कर्मर्क्षेचातिसौख्यकृत्।
आधानर्क्षेचबालानां प्राशनेरोगनाशनम्॥

वृद्धनारदः—

जीवसौम्यसितानांतदृक्काणादिवसांशकाः।
बालान्नप्राशने शस्तानचंद्रार्कार्किजासृजाम्" इति।

अर्णवे—

गोश्वौकुंभस्तुलाकन्या सिंहःकर्किमृगोयमः।
एताश्चराशयश्शास्तानमेषझषवृश्चिका, इति।

नारदः—

चरस्थिरमृदुक्षिप्रनक्षत्रेषुननैधन[2]" इति।

रवौलग्नेकुष्ठीत्याह॥८॥

---

१. नारद संहिता—अ० २१ श्लोक १-२।

२. नारद संहिता—अ० २१ श्लोक ३।

मार्त्तण्डप्रिया—

जन्म से ६ या ८ मास में बालक का और ५ या ७ मास में कन्याका अन्न प्राशन शुभ होता है। अन्नप्राशन में नन्दा (१।६।११), १२।८ और रिक्ता (४।९। १४) तिथि, रात का समय तथा जन्म नक्षत्र त्याज्य हैं। क्षीण चन्द्र का द्रेष्काण और नवांश भी अशुभ होता है।

शुभग्रह (बुध, गुरु, शुक्र) का द्रेष्काण और नवांश शुभ होता है। चन्द्रवार को छोड़कर अन्य शुभवार (बुध, गुरु, शुक्र) में ध्रुव संज्ञक (तीनों उत्तरा, रोहिणी) मृदुसंज्ञक (मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा) चरसंज्ञक, (स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा) क्षिप्रसंज्ञक (हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित) इन १७ सत्रह नक्षत्रों में १।८।१२ को छोड़कर अन्य लग्नों में, और लग्न से केन्द्र (१।४।७।१०) त्रिकोण (५।९) १२ और ८ स्थान शुद्ध रहने पर अन्नप्राशन शुभ होता है। यदि पूर्ण चन्द्रमा लग्न में हों, तो वह लग्न शुभकारक होता है।

अन्नप्राशन में

ग्राह्य	त्याज्य
मास—६ या ८ में बालक का ५ या ७ में कन्या का	—
तिथि-२।३।५।७।१०।१३।१५।३०	तिथि-१।४।६।८।९।११।१२।१४
वार—बुध, गुरू, शुक्र	रात्रि का समय
नक्षत्र—उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तर भाद्रपद, रोहिणी, मृगशिरा, रेवती, चित्रा; अनुराधा, स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित,	वार—रवि, चन्द्र, भौम, शनि
लग्न—वृष, मिथुन, कर्क, सिंह; कन्या तुला, धनु, मकर, कुम्भ,	लग्न—मेष-वृश्चिक-मीन
लग्न—जिस लग्न के १।४।५।७।८।९। १०।१२ में पापग्रह नहीं हों।	

गुरु शुक्र के अस्तादि में कृत्य—

गर्भाद्यन्नाशनांतेषु न गुरुसितयोर्बाल्यवार्ध्ये च मौढ्यं
जह्यात्कालस्य रोधाद्धरिगुरुमयनं याम्यमूनाधिमासौ।

एतच्चौलादिषूज्झेदथ गुरुसितयोर्बाल्यवार्ध्यं नगाहे
चाथो शाखेशमौढ्ये व्रतमपि निगमारंभमार्यो न कुर्यात् ॥९॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथ येषुसंस्कारेषुगुरुशुक्रास्तादिदोषाभावः येषुदोषः बालत्ववृद्धत्वप्रमाण शाखेशस्य मौढ्येकिंनकार्यमिति चतुष्टयं वृत्तैकेनाह। गर्भाद्यन्नाशनांतेषु गर्भाधानाद्यन्नप्राशनांतेषु कर्मसु गुरुसितयोर्बाल्यवार्ध्यंच, परंमौढ्यंगुरुशुक्र मूढत्वंजह्यात्। कस्माद्धेतोः कालस्यरोधात् यतःशास्त्रेगर्भाधानाद्यन्नप्राशनां तानांकर्मणांकालनिरोधः कृतोस्ति तस्माद्धेतोः तथाच मांडव्यः

"नित्ययाने- गृहेजीर्णे प्राशनांतेषु सप्तसु।
वधूप्रवेशमांगल्ये नमौढ्यंगुरुशुक्रयोः" इति।

हरिगुरुं सिंहस्थितम् बृहस्पतिम् याम्यमयनंदक्षिणायनम्। ऊनाधिमासौ क्षयमासाधिमासौ नत्यजेत्। कालस्यरोधादित्येतत्पदंबुद्ध्यावगंतव्यम्। तद्यथ प्रसूतिसमय एवजातकर्मविहितम्-तत्रकालनिरोधात् किमप्यस्तादिकंनचिंत्यम् अन्नप्राशनंतु मासेषष्ठेऽष्टमेवेतिविकल्पेनमासद्वयेविहितम् तत्र यस्मिन्मास मौढ्यादिकंनस्यात्तत्रकर्तव्यं कालस्यसावकाशत्वात्। तयोरपिमासयोर्यदि सिंहस्थगुर्वादिनिरोधःस्यात् सोप्यत्रानुचिंतनीयः। एवंगर्भाद्यन्नाशनांते विचारणीयम्।

"अनन्यगतिकंकुर्यान्नित्यंनैमित्तिकंतथा"

इतिस्मरणात्। संस्कारक्रमस्तुकात्यायनगृह्यकारिकायामुक्तः—

"गर्भाधानंपुंसवनंसीमंतोन्नयनं ततः।
जातकर्माभिधेयं च निष्क्रमप्राशनेक्रमात्॥
चूडोपनयनंवेदव्रतानां च चतुष्टयम्।
गोदानंमेखलामोको विवाहःषोडशक्रियाः" इति।

अनेनक्रमेणगर्भाद्यन्नाशनांतेषुमौढ्यादिकं बुद्ध्यावलोकयेदित्यर्थः। तथा चबृहस्पतिः—

"मासप्रयुक्तकार्येषुमूढत्वंगुरुशुक्रयोः।
नदोषकृत्तदामासलक्षणोबलवानीति"

यमोपि—

"गर्भेवार्धुषिकेभृत्ये श्राद्धकर्मणिमासिके।
सपिंडीकरणेनित्येनाधिमासंविवर्जयेत्"

भृगुः—

"सीमंतजातकादीनिप्राशनांतानि च क्रमात् ।
कर्तव्यानि नदोषोस्ति पंचाननगते गुरौ" इति ।

कात्यायनस्मृतौ—

"गर्भाधानादिका अन्नप्राशनांतामलिम्लुचे ।
आकर्णवेधाःकर्त्तव्यानान्या इत्याहभास्कर" इति ।

अस्तादिकंचूडादिषुवर्जनीयमित्याह एतच्चौलादिषूज्झेदिति एतद्गुरुसितास्तादिकंचूडादिषुकर्मसु उज्झे त्यजेत् । अथबालत्ववृद्धत्वप्रमाणमाह । अथ गुरुसितयोरिति । गुरुसितयोर्गुरुशुक्रयोर्बाल्यवार्ध्येबालत्ववृद्धत्वे नगाहे सप्ताहे सप्ताहंबाल्यंसप्ताहंवार्ध्यमिति । बालत्वंवृद्धत्वं बहुविधमस्तितत्रमध्यमः पक्षोत्रांगीकृतः । अथशाखेशस्य अस्तेवर्ज्यमाह । अथोशाखेशमौढ्य इति । शाखेशोवेदपतिर्वक्ष्यमाणः तस्यमौड्ये अस्ते व्रतं मौञ्जीबंधनंनिगमारंभमपि आर्यः श्रेष्ठोनकुर्यात् । तस्यास्ते व्रतादिकृतेसति बटोर्मूर्खत्वंस्यात् । ननुवेदारंभे मूर्खत्वंघटतेवेदपतित्वात् व्रतेमूर्खत्वंकिमुक्तम् । उच्यते—व्रतबंधस्तुवेदाध्ययनार्थंक्रियते । तस्मात्तत्रापिमूर्खत्वंघटते । तथाचयाज्ञवल्क्यः—

"उपनीय गुरुः शिष्यं महाव्याहृतिपूर्वकम् ।
वेदमध्यापयेदेनं शौचाचारांश्चशिक्षयेत् ॥
प्रतिवेदं ब्रह्मचर्यं द्वादशाब्दानि पंच वा ।
ग्रहणांतिकमित्येके केशांतश्चैव षोडशे [1]" इति ॥
"यज्ञानां तपसांचैव शुभानां चैव कर्मणाम् ।
वेद एव द्विजातीनां निःश्रेयस्करः परः[2]" ॥

तथा कात्यायनगृह्यसूत्रे—

"वेदंसमाप्यस्नायाद्ब्रह्मचर्यंवाष्टाचत्वारिंशके द्वादशकेप्येकेगुरुणानुज्ञात" इत्यादि ॥९॥

मार्त्तण्डप्रिया—

गर्भाधान संस्कार से अन्नप्राशन तक के (सात) संस्कारों में गुरू-शुक्र के उदय-अस्त या बाल्य-बार्धक्य, सिंहस्थ गुरु, दक्षिणायन, क्षयमास या अधिकमास ये सब वर्जित नहीं है, अर्थात् इन समयों में भी उपरोक्त संस्कार किए जाते हैं।

परन्तु चूड़ाकरण संस्कार से लेकर विवाह तक के ९ (नव) संस्कारों में ये सब

---

१. याज्ञवल्क्य स्मृति आचाराध्याय ।
२. ,, ,, ॥

त्याज्य हैं। तात्पर्य यह कि दक्षिणायन या शुक्रास्तादि में ये संस्कार नहीं करने चाहिए।

गुरू और शुक्र के उदय के पश्चात् सात दिनतक बाल्यावस्था और अस्त के सात दिन पहले वृद्धावस्था होती है।

अपने-अपने शाखेश (आगे १७ श्लोकोक्त) के अस्तकाल में उपनयन वेदारम्भ विद्वानों को नहीं करना चाहिए।

षोडश संस्कार क्रमशः ये हैं—

१—गर्भाधान
२—पुंसवन (गर्भ के तीसरे मास में होता है।)
३—सीमन्तोन्नयन (गर्भ के सातवें मास में होता है।)
४—जातकर्म (पैदा होने पर होता है)
५—नामकरण
६—निष्क्रमण (बच्चे को घर से बाहर निकालना)
७—अन्नप्राशन
८—चूड़ाकरण (बाल काटना)
९—उपनयन (यज्ञोपवीत)
१०—अक्षरारम्भ
११—विद्यारम्भ
१२—वेदारम्भ
१३—व्रतबन्ध
१४—केशान्त संस्कार
१५—समावर्तन
१६—विवाह

चूड़ाकरण मुहूर्त—

चौलंमाघादिपंचस्वमधुषुगदितं द्वित्रिपञ्चोन्मितेऽब्दे
स्वाचाराद्वा सगर्भायदि भवति जनन्यत्र नो कार्यमेतत्।
साकं यत्रोपनीत्या क्रियत इहतदायं निरोधो न हिस्या
ज्जह्यादंबार्तवोऽब्दो व्रतमुपयमनं चाविशुद्धेः शुभार्थी॥१०॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथ चौलंसनिर्णयंवृत्तकेनाह। चौलमिति। कार्यवर्णैरित्यग्रिमश्लोके-नान्वयः। चूडाकरणं माघादिपंचसु मासेषु अमधुपुचैत्ररहितेषुगदितमुक्तम्।

तथाचोक्तंनारदेन "माघादिपंचकेचौलं हित्वाक्षीणविधुंमधुम्" इति। द्वित्रिपंचोन्मितेब्दे द्वितीयेतृतीयेपंचमे वर्षे स्वाचाराद्वा स्वकुलाचारतोवा। उक्तंचकात्यायनगृह्ये—

सांवत्सरिकस्यचूडाकरणंतृतीयेवाप्रतिहतेषोडशवर्षस्य
केशांतो यथा मंगलं वा सर्वेषाम्" इति।

सांवत्सरिकस्य अतिक्रांताब्दस्येति हरिहरमिश्रैर्व्याख्यानं कृतम्। तथाच सद्गुरुशिष्यः—

आद्येऽब्देकुर्वतेके चित्पंचमेन्येद्वितीयके।
उपनीत्यासहैवेति विकल्पःकुलधर्मत" इति।

सगर्भायदिभवतिजनन्यत्रनोकार्यमेतत्। अत्र उक्तवर्षेषु द्वित्रिपंचाब्दकेषुजननीकुमारस्यमातायदिसगर्भाभवतिस्यात्तदा एतच्चौलंनोकार्यम् पंचमाब्दादूर्ध्वंगर्भिण्यांसत्यामपिकार्यमित्यर्थ सिद्धम्। अत्रनारदः—

सूनोर्मातरि गर्भिण्यां चूडाकर्म न कारयेत्।
पंचाब्दात्प्रागथोर्ध्वं तु गर्भिण्यामपि कारयेत्॥[1]

उपनयनेनसहक्रियमाणे नदोष इत्याह।

साकंयत्रोपनीत्याक्रियत इहतदायन्निरोधोनहिस्यात्" इति।

यत्र उपनीत्यासाकमुपनयनेनसहक्रियते तदा इहास्मिन्चौले अयमुक्तोनिरोधश्चैत्रमासमातृगर्भलक्षणोनह्येवस्यात्। तदुक्तं तेनैव—

"सहोपनीत्याकुर्याच्चेत्तदा दोषोनविद्यते" इति।

अंबार्तवेनिषेधमाह—

जह्यादंबार्तवेऽदो व्रतमुपयमनंचाविशुद्धेः शुभार्थीति।

अंबार्तवेमातृरजसि अदः अनंतरोक्तं चौलमित्यर्थः व्रतंमौजी उपयमनं विवाहः आविशुद्धेः शुद्धिपर्यंतं शुभार्थीनरः एतत्रयंजह्यात् नकुर्यादित्यर्थः। तथाचमनुस्मृतौ—

उद्वाहव्रतचूडासुमातायदिरजस्वला।
तदानमंगलंकार्यं शुद्धौकार्यंशुभेच्छुभिः,

अन्यमुहूर्तालाभेकारिकानिबंधेशांतिकमुक्तम्—

अलाभेसुमुहूर्तस्य रजोदोषेतुसंस्थिते।
श्रियंसंपूज्यतत्कुर्यादवृत्रहत्याभयंकरी ॥

---

१. नारद संहिता—वीरमित्रोदय (चूड़ाकर्म सं०)

हैमींमाषमितांपद्मांश्रीसूक्तविधिनार्चयेत् ।
प्रत्यृचंपायसंहुत्वाऽभिषिच्यशुभमाचरेत् ॥
सूतिकोदक्ययोः शुद्धौगांदद्याद्धेमपूर्वकम् ।
प्राप्तेकर्मणिशुद्धिःस्यादितरस्मिन्नशुद्धयति" इति ।

उदक्या रजस्वला ॥१०॥

मार्त्तण्डप्रिया—

चैत्र को छोड़कर माघ से पाँच महीनों में अर्थात् माघ, फाल्गुन, वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ़ मासों में जन्म से २ रे ३ रे या ५वें वर्ष में अथवा अपने कुल के आचारानुसार शिशु का चूड़ाकरण करना चाहिए ।

शिशु की माता के गर्भिणी रहने पर चूड़ाकरण नहीं करना चाहिए। इसका विचार पाँच वर्ष तक ही करना चाहिए। इसके बाद यह दोष नहीं लगता है ।

यदि चूड़ाकरण और उपनयन संस्कार एक ही साथ हों तो चैत्रमास और माता के गर्भवती होने का दोष नहीं लगता । अर्थात् उपनयन संस्कार के साथ चूड़ाकरण चैत्रमास और माता के गर्भिणी होने पर भी करना चाहिए क्योंकि उसमें उपनयन ही मुख्य संस्कार होता है. इसमें चैत्रमास या मातृगर्भ दोषरहित माना गया है। परन्तु यदि माता का रजस्वला काल हो तो उसके शुद्धिकाल तक चूड़ाकरण उपनयन या विवाह नहीं करना चाहिए ॥१०॥

वर्णक्रम से प्रशस्त वारादि—

कार्यं वर्णैरिनारार्किशनिषु निखिलैर्ज्ञत्रये शुक्लसोमे
द्व्यंत्यद्व्यादित्यशाक्रेन्दुभिरिनहरितस्त्रित्रिभैश्चौलकर्म ॥
द्यूनेर्कारार्किशुक्रा गतकविनिखिला मृत्युगा मृत्युदाःस्यु-
र्व्यब्जाःसंतोंत्य इष्टास्त्यज गुरुशशिनौ रात्रिसंध्ये च रिक्ताः ॥११॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथवर्णविशेषेणवारविशेषं तथानक्षत्राणिलग्नबलंचवृत्तेकेनाह। कार्यमिति। वर्णैर्ब्राह्मणादिभिः यथाक्रमेण इनारार्किशनिषुचौलकर्मकार्यमित्यन्वयः। इनः सूर्यः आरो भौमः आर्किःशनिः शनिःप्रसिद्धः तेष्वित्यर्थः। एतदुक्तंभवति। विप्रेणरविवारे क्षत्रियेण भौमवारे वैश्येनशनिवारे शूद्रेणापिशनिवारे चौलंकर्तव्यमित्यर्थः। शूद्रस्य द्वादशसंस्कारा उक्ताः।

वेदोव्रतोपनयनं महानाम्नीमहाव्रतम् ।
विनाद्वादशशूद्राणां संस्कारानाममंत्रतः" इति ।

निखिलैश्चतुर्भिर्वर्णैरविशेषेण ज्ञत्रयेबुधत्रये शुक्लपक्षगतसोमवारे कार्यम् । कृष्णपक्षेसोमवारोतिनिंदितः क्षीणत्वात् । अत्रनारदः--

अपर्वरिक्तातिथिषु शुक्रेज्यज्ञेंदुवासरे" इति ।

बृहस्पतिः--

सोमवारःसिते पक्षे कृष्णपक्षेऽतिगर्हितः ।
बुधवारेऽशुभःप्रोक्तः पापग्रहयुतेबुधे ॥
पापग्रहाणां वारादौ विप्राणां शुभदो रविः ।
क्षत्रियाणां क्षमासूनुर्विट्शूद्राणां शनिःशुभः[1]" इति ॥

कैःद्वयंत्यद्वयादित्यशाक्रेन्दुभिः अंत्याद्व इतिद्वयंत्यंरेवत्यश्विन्यौ द्वयादित्यंपुनर्वसुपुष्यौ शाक्रंज्येष्ठा इंदुर्मृगः तैः पुनःकैः इनहरितस्त्रित्रिभैः इनोहस्तः हरिः श्रवणःताभ्यां त्रित्रिभैः हस्तात्त्रिभिः श्रवणात्त्रिभिरित्यर्थः । तथाचनारदः--

दस्रादितीज्य चंद्रेंद्र पूषभानि शुभान्यतः ।
चौलकर्मणि हस्तर्क्षात्त्रीणि त्रीणि च विष्णुभात्[2]" इति ॥

द्यूनेर्कारार्किशुक्राः अत्रचौलेमृत्युदाः स्युः द्यूनेसप्तमेअर्कारार्किशुक्राः अर्कः-सूर्यः आरो भौमः अर्कस्यापत्यमार्किःशनिः शुक्रःप्रसिद्धः एते चत्वारोमृत्युदा इति । चतुर्णासमानं फलमुक्तम् । वसिष्ठेनात्रविशेषफलमुक्तम्--

जामित्रे भास्करे क्षौरे मृत्युः स्याद्भूमिजे तथा ।
शुक्रे सौख्यविनाशः स्यान्मंदभाग्यं शनैश्चरे[3]" इति ।

अत्रचतुर्णामपिसामान्येनमृत्युफलमुक्तम् । तद्दारिद्र्यान्मरणंवरमितिन्यायेन नदोषः । गतकविनिखलामृत्युगामृत्युदाः स्युः गतःकविःशुक्रःयेभ्यस्तेगतकवयःते चते निखिलाश्चशुक्ररहिताः सर्वेमृत्युगाःअष्टमगामृत्युदाः । अत्र-बृहस्पतिः--

अष्टमस्थानगाः सर्वे नेष्टाः शुक्रविवर्जिताः ।
शुक्रस्तु निधने क्षौरे सर्वसंपत्प्रदः शिशोः[4]" इति ।

---

१. बृहस्पतिः—वीरमित्रो, (चूड़ाकरण सं०)
२. नारदः— " "
३. वशिष्ठः— " "
४. बृहस्पतिः-- " "

व्यब्जा:संतोंत्य इष्टा: विगत: अब्ज: चंद्रोयेभ्यस्तेव्यब्जा: एवंविधा: संतो सद्ग्रहा: चन्द्ररहिता: सद्ग्रहा अंत्येद्वादशे इष्टा:शोभना: स्यु: । तथाचनारद:-

चौलान्नप्राशनेशस्ता: सौम्यारंध्रव्ययोपगा:" इति ।

अन्यच्च--

ननैधनेभेशीतांशौषष्ठाष्टांत्यविवर्जिते'' इति ।

तस्यैववचनम् । अन्यल्लग्नबलंपूर्ववत् । त्यजगुहशशिनौरात्रिसंध्ये च रिक्ता: । गुह: षष्ठी शशी पौर्णिमा । स्पष्टमन्यत् ।

क्रूरवारंनिशांरिक्तांषष्ठींसंध्यां च जन्मभम् ।
सद्भिर्विवर्जयेदेतन्नारदस्य वचोयथा ॥ इति ॥११॥

मार्त्तण्डप्रिया—

ब्राह्मणों का रविवार को क्षत्रियों का भौमवार को वैश्यों और शूद्रों का शनिवार को चूड़ाकरण करना चाहिए। ये तीनों वार वर्ण विशेष के लिए ही ग्राह्य हैं अन्यथा सभी वर्ण वालों के लिए बुध, गुरु, शुक्रवार और शुक्लपक्ष का सोमवार प्रशस्त माना गया है । कृष्णपक्ष का सोमवार प्रशस्त नहीं होता हैं ।

रेवती-अश्विनी, पुनर्वसु, पुष्य, ज्येष्ठा, मृगशिरा, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा इन १२ नक्षत्रों में चौल (चूड़ाकरण) शुभकारक होता है । लग्न से सप्तम में सूर्य, भौम, शनि और शुक्र तथा अष्टम में शुक्र के विना सभी ग्रह मृत्युकारक होते हैं ।

अर्थात् शुक्र ७ में अशुभ परन्तु ८ में शुभ होता है । चन्द्रमा को छोड़कर कोई भी ग्रह १२ में शुभ होता है । अर्थात् चन्द्रमा १२ में शुभ नहीं होता है । चूड़ाकरण में लग्न बल पूर्ववत् विचारना चाहिए जैसे षष्ठी, पूर्णिमा और रिक्ता तिथि रात्रि और सन्ध्यासमय इत्यादि का विचार करना चाहिए ॥११॥

व्यक्ति विशेष काल विशेष में क्षौरकर्म--

भुक्ताभ्यक्तोपवासीश्वरजनयुवतीप्राग्वयस्काश्च योगी
यात्रायुद्धोन्मुखा ये कृतदिनविधयोस्त्र्यंबकास्ते न मुन्ड्या: ॥
सीमंतोर्ध्वं न पत्युर्नखकचलवनं दूरदेशप्रयाणं
वृक्षच्छेद: समुद्राप्लुतिमृतहरणे स्यादृतेवश्यकार्यात् ॥१२॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथप्रसंगात् क्षौरनिर्णयंसार्द्धवृत्तेनाह । भुक्त इति । भुक्त: कृतभोजन: अभ्यक्त: कृताभ्यंग: उपवासीप्रसिद्ध: ईश्वरजनो राजसेवक: समर्थोवा युवति: स्त्रीसौभाग्यवती प्राग्वयस्का: प्रथमवयस्का: पंचाशद्वर्षपर्यंतपूर्ववय: योगी

राजयोगीगीतादौ प्रसिद्धः यात्रायुद्धोन्मुखाः यात्राप्रयाणं युद्धंप्रसिद्धं तौप्रतिये उन्मुखाः प्रचलिताः यात्रोन्मुखायुद्धोन्मुखाश्चेत्यर्थः। कृतः दिनविधिः आह्निकंयैस्तेकृतदिनविधयः अस्त्यंबकोजीवत्पितृकः ते न मुंड्याः मुंडनार्हा न भवंति। अवश्यकार्यादृते इत्युत्तरार्द्धोक्तमत्रानुसंधेयम् यत्रावश्यमुंडनकारणंभवति तत्रावश्यं मुंड्याः। अथक्षौरनिषेधप्रसंगाद्गुर्विणीपतेर्निषिद्धं सापवादमाह। सीमंतोर्ध्वमिति। सीमंतोर्ध्वं सीमंतोन्नयनादूर्ध्वं पत्युः कृतसीमंतसंस्कारायाः पत्युः भर्तुरवश्यकार्यादृतेनखकचलवनादिकंनस्यात्। नखकचलवनं नखकेशच्छेदनम्। अन्यत्सुगमम्। आवश्यकार्यादृतेनस्यादित्यनेन आवश्यके नदोष इत्यर्थात्सिद्धम्। यथापितृमरणेक्षौरादिदेशविप्लवेदेशांतरगमनमित्यादिविचारणया आवश्यके न दोष इत्यर्थः। कृताग्न्याधानस्य मुण्डनं पक्षांगीकारे मुंडनमावश्यकं––

मासिमास्युपासनीकस्यपक्षेपक्षेऽग्निहोत्रिण" इति ॥१२॥

मार्त्तण्डप्रिया—

जो व्यक्ति भोजन कर चुका हो, तैल मर्दन किया हो, व्रत (उपवास) किया हो, राजसेवक, सौभाग्यवती स्त्री, प्रथम अवस्था वाला (५० वर्ष के कम) योगी, यात्रा या युद्ध में जाने को तत्पर, जो अपना दैनिक कृत्य (संध्या तर्पणादि) कर चुका हो और जिनकी माता जीवित हो उनको आवश्यकता के बिना व्यर्थ मुण्डन नहीं कराना चाहिए।

इसी तरह सीमन्त संस्कार के पश्चात् गर्भिणी स्त्री के पति को बिना आवश्यकता नख केश कटाना, दूर देश की यात्रा, वृक्ष काटना, समुद्र स्नान, शव का वहन (शवयात्रा) नहीं करना चाहिए ॥१२॥

सामान्य क्षौरमुहूर्त-अक्षरारम्भ मुहूर्त—

क्षौरं चौलोक्तभादौ गदितमथ रविक्षेत्रगंगाध्वराग्न्या-
धाने पित्रोर्विनाशे द्विजनृपकथने सर्वदा क्षौरमिष्टम् ॥
मित्रत्र्यर्कादितींद्रांतिमहरितुरगैः पंचमेऽब्दे व्रतात्प्राग्-
विद्यारंभोक्तकालेऽक्षरविधिरघटे सौम्यसंज्ञेऽयनेऽर्के ॥१३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथोक्तेभ्योन्येषांक्षौरार्थंनक्षत्रादिकमाह। क्षौरमिति। चौलोक्तभादौ क्षौरंगदितंप्रोक्तम्। चौलार्थमुक्तश्चौलोक्तः सचासौभादिश्चतस्मिन्नक्षत्रतिथ्यादिकाले क्षौरं गदितंप्रोक्तम्। अथक्षौरनिमित्तान्याह। रविक्षेत्रगंगाध्वराग्न्या-

धानेपित्रोर्विनाश इत्यादि रविक्षेत्रंभास्करक्षेत्रं गंगाप्रसिद्धा अध्वरोयागः अग्न्याधानमग्निहोत्रं तस्मिन् पित्रोर्विनाशोमरणंतस्मिन् द्विजनृपकथने ब्राह्मणाज्ञायां राजाज्ञायां च सत्यांसर्वदाक्षौरमिष्टंस्यात्। क्षौरेनक्षत्रादिनियमोनास्तीत्यर्थः। तदुक्तं वृत्तशते "भुक्ताभ्यक्तनिरासनैः" इत्यादि। रत्नमालायाम्

आज्ञायानरपतेर्द्विजन्मनाम्" इत्यादि।

बृहस्पतिः—

राजकार्येनियुक्तानां नराणां भूपसेविनाम्।
श्मश्रुलोमनखच्छेदे नास्तिकालविशोधनम्[1]॥

ज्योतिर्निबंधे—

राजायोगीपुरंध्रीच मातापित्रोश्चजीविनोः।
मुंडनंसर्वतीर्थेषु नकुर्याद्गुर्विर्णापतिः॥

स्मृत्यंतरे—

सिंधुस्नानंद्रुमच्छेदं वपनं प्रेतवाहनम्।
विदेशगमनं चैव नकुर्याद्गुर्विणीपतिः॥
क्षौरंनैमित्तिकंकुर्यान्निषेधेसत्यपिध्रुवम्।
पित्रोः प्रेतविधानं च न दोषस्तत्रविद्यते॥
गंगायां भास्करक्षेत्रे मातापित्रोर्मृतेहनि।
आधानेसोमपानेच षट्सु क्षौरंविधीयते॥
अंतर्वत्न्यांतुजायायां तीर्थेक्षौरंनकारयेत्।
प्रेतवाहादिकंनैव सीमंतोन्नयनादनु॥
पचाशद्धायनात्पूर्वं क्षौरंनैमित्तिकंविना।
नकुर्यात्तत ऊर्ध्वंतुस्वेच्छयावपनं चरेत्" इति।

अथाक्षरारंभंवृत्तार्द्धेनाह। मित्रत्र्यर्केति। मित्रादिभिर्नक्षत्रैः जन्मतः पंचमेवर्षे व्रतात्व्रतबंधात् प्राक् प्रथमंविद्यारंभोक्तकाले वक्ष्यमाणलक्षणे अक्षरविधिः शुभः स्यादित्यध्याहारः। कस्मिन्सति सौम्यसंज्ञे अयने अर्के सति कथंभूतेसौम्यसंज्ञे अयने अघटे नविद्यतेघटोयस्मिन् तथातस्मिन् कुंभरहित उत्तरायणे इत्यर्थः। ब्रह्मतुल्ये अयनलक्षणं—

कर्किमृगादिषट्केतेचायनेदक्षिणसौम्यायनेस्त" इति।

मित्रमनुराधा त्र्यर्कंहस्तत्रयम् अदितिः पुनर्वसुः इंद्रोज्येष्ठा अंतिमंरेवती हरिःश्रवणः तुरगोऽश्विनी। शेषं प्रथममेवव्याख्यातम्। व्रतात्प्रागित्यनेनव्रत-

१ बृहस्पति—वीरमित्रो० (चूड़ाकरण सं)

बन्धादुपरिनिषेधोर्थसिद्धः । पंचमेवर्षेपठनरुच्याव्रतबंधोग्रेवक्ष्यति । तथा-चोक्तं बृहस्पतिना—

द्वितीयजन्मतः पूर्वमारभेताक्षरान्सुधीः" इति ।

नृसिंहः—

अक्षरस्वीकृतिः प्रोक्ता प्राप्ते पंचमहायने ।
उत्तरायणगे सूर्ये कुंभमासं विवर्जयेत्[1]" इति ॥१३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

चूड़ाकरण के नक्षत्रों में (११वाँ श्लोक) साधारण क्षौरकार्य शुभ होता है । श्री भास्करक्षेत्र (कुरु क्षेत्र) में, गंगातट पर, यज्ञों में, माता-पिता के मरण में, ब्राह्मण अथवा राजा की आज्ञा होने पर, इन परिस्थितियों में सर्वदा क्षौरकार्य शुभ होता है ।

यज्ञोपवीत से पूर्व जन्म से पाँचवें वर्ष में सूर्य के उत्तरायण रहने पर कुम्भ राशि को छोड़कर शेष मासों में, विद्यारम्भ के समय में (आगे १८वाँ श्लोक) अनु ह. चि. स्वा. पुन. ज्ये. रे. श्र . अश्वि. इन नक्षत्रों में, द्विस्वभाव लग्न में अक्षरारम्भ[2] शुभ होता है ॥ १३॥

द्विजातियों के उपनयनकाल—

विप्रादेर्गर्भतोऽब्देऽष्टशिवरविमिते जन्मतो वा व्रतं स्या-
दत्रानिष्टेपि जीवेऽनिमिषरविमधौ कार्यमब्दस्य दार्ढ्यात् ॥
स्वाब्दादूर्ध्वं क्रमाद्द्विगुणितशरदो निंद्यमब्दक्रमेण
पंचाष्टांकाब्दतो वा प्रपठनरुचितः शस्तमेषां तदाहुः ॥१४॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथब्रह्मक्षत्रविशांमुख्यं गौणंचव्रतबंधकालंवृत्तेनाह । विप्रादेरिति । गर्भतः गर्भाधानाज्जन्मतोवा अष्टशिवरविमिते अब्देविप्रादेर्व्रतंस्यात् । विप्र-स्याष्टमे क्षत्रियस्यशिवमिते एकादशेवर्षेस्यात् वैश्यस्यरविमितेद्वादशेवर्षे-स्यात् । अत्रस्वस्ववर्षे जीवेगुरौ अनिष्टे अशुभे सत्यपिव्रतंकार्यम् । क्व अनि-मिषरविमधौ अनिमिषेरविः अनिमिषरविः अनिमिषरविणाविशिष्टोमधुः

१ नृसिंहः वीरमित्रो० (विद्यारम्भसं)

२. मुहूर्त चिन्तामणिकार ने अक्षरारम्भ में ज्येष्ठा का त्याग किया है और पुष्य एवं आर्द्रा को ग्रहण किया है । इस प्रकार मु० चिन्तामणि में १० नक्षत्र उक्त हैं जबकि मु० मार्त्तण्ड में ९ नक्षत्र ही उक्त हैं ।

अनिमिषरविमधुः तस्मिन्मीनस्थेरवौसति चैत्रेव्रतंकर्तव्यमित्यर्थः। अब्दस्य-दाढर्यात्वर्षबलात्। तदुक्तंसंग्रहे--

शुद्धिर्नविद्यतेयस्य वर्षेप्राप्तेऽष्टमेयदि।
चैत्रेमीनगतेभानौ तस्योपनयनंशुभम्॥

जन्मभादष्टगेसिंहे नीचेवाशत्रुभेगुरौ।
मौंजीबंधः शुभः प्रोक्तश्चैत्रेमीनगतेरवौ॥

अशुभेऽब्देग्रहाः सर्वे शुभगोचरनालभेत्।
शांतिभावाच्छुभंनैव यात्यब्दः कालमृत्युवत्'' इति॥

अथगौणकालफलमाह। स्वाब्दादूर्ध्वक्रमादिति। स्वाब्दात्स्ववर्षादूर्ध्वं-क्रमात् आद्विगुणितशरदः द्विगुणिताचासौशरच्चद्विगुणितशरद्वर्षंतांमर्यादी-कृत्येति तथातस्याःअब्दक्रमेणनिंद्यम्। तद्यथाब्राह्मणस्याष्टमंवर्षंमुख्यं तद्वि-गुणितंषोडशम् अष्टवर्षात्षोडशवर्षपर्यंतंब्राह्मणस्य एकादशवर्षाद्द्वाविंशतिवर्ष-पर्यंतंक्षत्रियस्य द्वादशवर्षाच्चतुर्विंशतिवर्षपर्यंतंवैश्यस्य। अब्दक्रमेणोत्तरोत्तरं-निन्द्यम्। अर्थादतऊर्ध्वमनधिकारिणोभवन्ति। तदुक्तंसंग्रहे--

नृपा १६ कृति २२ जिना २४ ब्दांतं नातिकालस्ततः परम्।
पातित्यंस्यादग्रजादेर्व्रात्यस्तोमोविशोधनम्''। इति।

तथाचकात्यायनगृह्ये—

आषोडशाद्ब्राह्मणस्यानतीतः काल आद्वाविंशात्क्षत्रियस्या
चतुर्विंशाद्वैश्यस्यातऊर्ध्वंपतितसावित्रीका भवन्ति।
नैनानुपनयेयुर्नाध्यापयेयुर्नयाजयेयुर्नचैभिर्व्यवहरेयुः
कालातिक्रमेनियतवत् त्रिपुरुषंपतितसावित्रीकाणामपत्य-
संस्कारोनाध्यापनं तेषां संस्कारेप्सुर्व्रात्यस्तोमेनेष्ट्वाकाम-
मधीयीरन्व्यवहार्याभवंति'' इति।

वचनादिति अथस्वाब्दात्प्रागपि अध्ययनौत्सुक्यादुपनयनकालमाह। पंचाष्टांकाब्दतोवेति। पंचमाष्टमनवमवर्षेभ्यः सकाशादेषांब्रह्मक्षत्रविशां-क्रमेणप्रपठनरुचितः वेदादिपठनरुच्यातद्व्रतंशस्तमाहुर्मुनयः।

उक्तंचसंग्रहे ब्रह्मवर्चसमूर्जश्चविद्यायुःश्रीर्यशः सुखम्।
विप्रादेरुपनीतस्य पंचाष्टांकाब्दतः फलम्॥१४॥

मार्त्तण्डप्रिया--

गर्भाधान काल से या जन्मकाल से ब्राह्मणों का ८वें वर्ष में, क्षत्रियों का ११वें वर्ष में तथा वैश्यों का १२वे वर्ष में उपनयन प्रशस्त माना गया है। इन वर्षों में

यदि बृहस्पति गोचर से अशुभ हो तो भी चैत्र मास में मीन के सूर्य रहने पर उपनयन करना शुभद होता है। अर्थात् ब्राह्मणादि वर्णों के अपने-अपने वर्षों में गुरु शुद्धि की आवश्यकता नहीं होती है।

अपने-अपने वर्ष संख्या के दूने वर्षों तक उन-उन वर्ण वालों के लिए उपनयन का गौण काल होता है। स्पष्टार्थ नीचे सारणि देखें—

वर्ण	प्रशस्तकाल	गौणकाल
ब्राह्मण	८ से ९ वर्ष तक	९ से १६ वर्ष तक
क्षत्रिय	११ से १२ ,,	१२ से २२ ,,
वैश्य	१२ से १३ ,,	१३ से २४ ,,

तात्पर्य यह कि ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य आदि का उपनयन संस्कार १६–२२–२४ वर्ष की अवस्था होने से पूर्व अवश्य हो जाना चाहिए।

विशेष—विद्याध्ययन की कामना से ब्राह्मणादि वर्णों का क्रम से ५वें, ८वें और ९वें वर्ष में भी उपनयन करना शुभद होता है ॥१४॥

उपनयन में गुरु शुद्धि—

राशेः षट्त्र्याद्यखस्थो गुरुरिह शुभदः पूजया स्यात्तयापि
प्रांत्योंबुस्थोऽष्टमो नो यदि निजगृहगस्तुंगगोऽत्रापि शस्तः ॥
एव कन्यर्क्षतः स्यादतितरगुणिनो लब्धये वातिकालेऽ-
निष्टोपीह द्विरचर्योऽष्टमभवनगतः शोभनः स्यात्रिरर्च्यः ॥१५॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथात्रगुरुबलाबलंवृत्तैकेनाह। राशेरिति। राशेःजन्मराशेः सकाशात् षट्त्र्याद्यखस्थोगुरुः इहास्मिन्व्रतबंधेपूजयाशुभदः स्यात्। षट्षष्ठं त्रितृतीयम् आद्यंजन्मराशिःखंदशमम् एषुतिष्ठतीतितथा तयापिपूजयापि प्रांत्योद्वादशः अंबुचतुर्थः अष्टमः नशुभदः स्यात् पूजयापि अशुभदः स्यादित्यर्थः। स यदि-निजगृहगः स्वगृहगः धनुर्मीनग इत्यर्थः। तुंगगोवा यदिभवति। तदा इहदुष्ट-स्थानेषु वर्तमानः शस्तः स्यात् अस्यतुंगंकर्कटः। तदुक्तंबृहज्जातके

अजवृषभमृगांगनाकुलीरा झषवणिजौ च दिवाकरादितुंगाः।
दश १० शिखि ३ मनुयुक् २८ तिथीं १५ द्रियांशै ५ स्त्रिनवक
२७ विंशतिभि २० श्चतेऽस्तनीचाः [१]"इति।

---

३. बृहज्जातक अ० १ श्लो० १३।

४ मु० मा०

अर्थादुक्तस्थानेभ्योन्यस्थानगः शुभदः स्यात् एवंकन्यर्क्षतः स्यात् कन्यर्क्षतः कन्याराशेःसकाशात् एवमुक्तवत् शुभाशुभः स्यात्। अतितरगुणिनोवरस्यलब्धये अतिकाले वा अनिष्टोपिगुरुर्द्वादशचतुर्थाष्टमःद्विरर्च्यः षट्त्र्याद्यखस्थस्यशास्त्रे यापूजोक्तातत्प्रमाणतोद्विरर्च्यः तेनद्विगुणार्चनेनशोभनः स्यात् एवं सामान्येनोक्त्वा अष्टमस्यविशेषमाह। अष्टमभवनगतःत्रिरर्च्यः तेनशोभनः स्यात्। अत्रबृहस्पतिः--

झषचापकुलीरस्थो जीवोप्यशुभगोचरः।
अतिशोभन तां दद्याद्विवाहोपनयादिषु ॥
व्रतेजन्मत्रिखारिस्थो जीवोपीष्टोर्चनात्सकृत्।
शुभोतिकालेतुर्याष्टव्ययस्थोद्विगुणार्चनात् ॥

उद्वाहतत्त्वे—

कन्यर्क्षाद्द्विसुतद्युनायनवमेश्रेष्ठोगुरुश्चान्यथा
पूज्योष्टांत्यसुखेतिकाल इहतुप्राज्ञैर्द्विरर्च्यः शुभः।
रिष्फांबत्रिधनाभ्रगैर्यदिग्रहैः श्रेष्ठोपिविद्धोह्यसन्
वामाद्विद्ध इहेष्टदोननिधनेवेधास्त्रिरर्च्यःशुभः" इति ॥१५॥

मार्त्तण्डप्रिया--

उपनेय बालक की जन्म राशि से यदि ६-३-१-१० इन स्थानों में बृहस्पति हों तो पूजन करने पर शुभद होते हैं। अर्थात् इन स्थानों में गुरु निन्द्य होते हैं। यदि १२-४-८ इन स्थानों में बृहस्पति हों तो अतिनिन्द्य होते हैं और पूजन करने पर भी शुभद नहीं होते। परन्तु यदि स्वराशि (ध. मी.) या स्वोच्च (कर्क) का होकर १२-४-८ इन स्थानों में रहें तो शुभद होते हैं।

इसी प्रकार कन्या की जन्म राशि से भी (विवाह के समय) बृहस्पति के शुभाशुभ का विचार करना चाहिए। यदि सुयोग्य वर प्राप्त हो और कन्या के विवाह में अति विलम्ब हो रहा हो तो उपरोक्त अशुभ बृहस्पति द्विगुणित पूजन से शुभद हो जाता है परन्तु अष्टमस्थ बृहस्पति त्रिगुणित पूजन से ही शुभद होता है।

बालक के उपनयन या कन्या के विवाह में बृहस्पति की स्थिति, जन्मराशि से—

पूज्य स्थान	शुभ स्थान	अशुभ स्थान
१-३-६-१०	२-५-७-९-११	४-८-१२

यदि सिं. म. या शत्रुगृह का
हो तो अशुभ होता है ॥१५॥

गुरु का वामवेध और उपनयन का शुभ समय—

द्वीष्वायागांकसंस्थो व्ययजलनिधनत्र्यभ्रगैश्चेन्न विद्धः,
शस्तोऽनिष्टोऽपि वामं शुभ इह खचरैर्वेधितो नोऽष्टमस्थः ।।
शुक्ले माघादिपंचस्विनशुभदिवसे प्राग्दलेऽह्नो व्रतं सत्,
त्यक्त्वानध्यायरिक्तातिथिमुनिमदनाञ्चंद्रभागं प्रदोषम् ।।१६।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथगुरोर्वामवेधमाह । द्वीष्विति । द्वीष्वायागांकसंस्थोगुरुस्तदाशुभःस्यात् तदाकदायदिव्ययजलनिधनत्र्यभ्रगैःखचरैर्नोविद्धः स्यात् द्विर्द्वितीयम् इषुपंचमम् आय एकादशम् अगाःसप्तमम् अंकःनवमम् एतत्संस्थोगुरुः व्ययंद्वादशं जलं-चतुर्थं निधनमष्टमं त्रिस्तृतीयम् अभ्रंदशमम् एतत्संस्थै खचरैः यदि नोविद्धो-भवति तदाशुभःस्यात् । २ । ५ । ११ । ७ । ९ स्थः । १२ । ४ । ८ । ३ । १० स्थैश्च वेधितश्चेदशुभ इत्यर्थः । अनिष्टोपिव्ययजलनिधनत्र्यभ्रगोपिवामंविद्धः सन्द्वीष्वायागांकसंस्थैः खचरैर्वेधितः सन्नित्यर्थः इह अस्मिन्व्रतबंधेविवाहे वा शुभः नोष्टमस्थः अष्टमस्थो वेधितोनशुभदःस्यादित्यर्थः । सोतिकालादौ-त्रिगुणार्चनेनैवशुभः स्यात् । तथाचबृहस्पतिः—

रजस्वला यदाकन्या गुरुशुद्धिनचिन्तयेत् ।
अष्टमेपिप्रकर्तव्योविवाहस्त्रिगुणार्चनात् ।।

अथोपनयनेमासादिकमाह । शुक्ल इति । शुक्लेशुक्लपक्षेमाघादिपंचमासेषु ज्येष्ठांत्येषु इनशुभदिवसे इनः सूर्यःशुभाःवर्धमानेन्दुगुरुबुधशुक्राःएषां दिवसे तस्मिन् अह्नःप्राग्दले दिवसस्यपूर्वार्द्धे व्रतमुपनयनंसत्शुभंस्यात् । किंकृत्वा अनध्यायरिक्तातिथिमुनिमदनान् चंद्रभागंप्रदोषंत्यक्त्वा अनध्यायाः वक्ष्य-माणाः रिक्तातिथयश्चतुर्थीनवमीचतुर्दश्यः मुनिः सप्तमी मदनस्त्रयोदशी एतान्चंद्रभागः कर्कांशः पापांशादिकंपुरैवनिषेधितम् प्रदोषोऽनध्यायप्रकरणो-क्तःतं त्यक्त्वा ।।१६।।

मार्त्तण्डप्रिया—

बालक या कन्या की जन्मराशि से २–५–११–७–९ स्थानों में गुरु हों और १२–४–८–३–१० स्थानस्थित ग्रहों से वेधित नहीं हों तो शुभ होते हैं। अर्थात् गुरु जब २ में रहें तो १२ में, ५ में रहें तो ४ में, ११ में रहें तो ८ में, ७ में रहें तो ३ में और ९ में रहे तो १० में किसी ग्रह (पापग्रह) का रहना शुभ नहीं होता है।

यदि गुरु १२-४--८-३-१० इन स्थानों में हों और २-५-११-७-९ स्थानस्थित ग्रहों से वेधित हों तो यह वाम वेध कहलाता है यह शुभ होता है परन्तु अष्टमस्थ गुरु वाम वेध होने के बाद भी अशुभ ही रहता है।

ग्रह	स्थान (जन्मराशि से)	वेध	फल
गुरु	२-५-११-७-९	दक्षिण वेध	अशुभ
पापग्रह	१२-४-८-३-१०		
गुरु	१२-४-८-३-१०	वाम वेध	शुभ
पापग्रह	२-५-११-७-९		

(अष्टमस्थ गुरु को छोड़कर)

माघ-फाल्गुन-चैत्र-वैशाख-ज्येष्ठ इन ५ मासों में, शुक्लपक्ष और कृष्ण ५ तक में, रवि-चन्द्र-बुध-गुरु-शुक्र इन वारों में, दिन के पूर्वार्द्ध में, उपनयन शुभदायक होता है। उपनयन में अनध्याय (१-८-१५-३०), रिक्ता (४-९-१४), सप्तमी-त्रयोदशी, चन्द्रनवांश (लग्न में कर्क का नवांश) और प्रदोष इनका त्याग करना चाहिए ॥१६॥

उपनयनमुहूर्त वेदाधिप और ग्रहशुद्धि—

शस्तो द्वीशाग्निशाक्रांतकपितृरहितैः सर्वभैमौञ्जिबंधो
वेदेशे ज्ञे बलाढ्ये गुरुसितकुजवित्संज्ञका वेदपाःस्युः ॥
स्वर्क्षोच्चांशेषु सौम्याः श्रुतिपतिरपि चेत्केंद्रकोणस्थिताः स्यु-
र्वर्णीवेदार्थवेत्ता पशुगृहधनवानत्र मंदेऽन्त्यसेवी ॥१७॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथव्रतबंधेनक्षत्राण्याह। स्पष्टम्। उक्तं च—

मघाचभरणीज्येष्ठाविशाखाचैवकृत्तिका।
नक्षत्रपंचकंप्राज्ञैर्नग्राह्यं व्रतबंधने ।

वेदेशे वेदपतौ ज्ञेबुधे बलाढ्ये सति स्थानादिनाबलसमृद्धेसति। तेकेवेदेशा इत्यपेक्षायामाह। गुरुसितकुजवित्संज्ञकाः क्रमात्वेदपाः वेदाधिपतयःस्युः। गुरुः ऋग्वेदस्य शुक्रोयजुर्वेदस्य कुजः सामवेदस्य वित्बुधोऽथर्ववेदस्य पतिरित्यर्थः। लग्नगोचरबलमाह। स्वर्क्षोच्चांशेषुसौम्या इति। सौम्याः स्वोच्चस्वभागांशेवर्तमानाः श्रुतिपतिरपिवेदपतिरपि स्वोच्चस्वभांशेवर्तमानश्चेद्यदि केंद्रकोणेस्थिताः स्युस्तदावर्णीब्रह्मचारीवेदार्थवेत्तास्यात्। नकेवलंवेदार्थवेत्ता स्यात् अपितु पशुगृहधनवान् स्यात्। अत्रकेंद्रकोणेशनौमंदेसति अन्त्यसेवी अंत्यजसेवकः स्यात्। तस्मात्केंद्रकोणेशनिर्नभवितव्यः। उक्तंचसंग्रहे--

केंद्रस्थितैरिनाद्यैर्नृपसेवीविट्क्रियःस्ववृत्तिश्च ।
वेदाभ्यासीयज्वाक्रतुकर्ताहनिसेवकोभवति" इति ॥१७॥

मार्त्तण्डप्रिया—

अपने-अपने वेदाधिपति ग्रह के बली रहने पर और बुध के भी बली रहने पर वि कृ ज्ये. भ. म. इन ५ नक्षत्रों को छोड़कर शेष २२ नक्षत्रों में उपनयन करना शुभदायक होता है।

गुरु ऋग्वेद का, शुक्र यजुर्वेद का, भौम सामवेद का और बुध अथर्ववेद का स्वामी होता है।

शुभ ग्रह तथा वेदाधिपति ग्रह उपनयन कालिक लग्नचक्र में स्वगृही हों या उच्च के हों या स्व स्व नवांश राशि के होकर केन्द्रस्थ (१-४-७-१०) या त्रिकोणस्थ (५-९) रहें तो ऐसे लग्न में उपनीत बालक वेदों का ज्ञाता, पशु, गृह और धनधान्य से युक्त होता है। यदि शनि केन्द्र या त्रिकोण रहे में तो बालक नीच जाति का सेवक होता है अर्थात् केन्द्रस्थ या त्रिकोणस्थ शनि शुभ नहीं होता है ॥१७॥

उपनयन में लग्नभङ्ग और विद्यारम्भ मुहूर्त--

चंद्रक्रूरा विलग्ने शशिसिततनुपाः षष्ठगेहे सितोऽन्त्ये
सर्वे रंध्रे वटुघ्नाः क्वच तनुग इनः श्रेष्ठ उच्चेंदुरेके ॥
विद्यां मौञ्ज्युक्तकाले स्थिरचरहरिजत्र्युत्तरब्राह्महीने
मौञ्ज्या ऊर्ध्वं गणेशं गिरमपि विधिवत्पूजयित्वारभेत ॥१८॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथलग्नभंगानाह। चंद्र इति। चंद्रः क्रूराः क्रूरग्रहाः विलग्ने तनौ शशिसिततनुपाः षष्ठगेहे शशीचंद्रः सितः शुक्रः तनुपो लग्नपः षष्ठ गेहे सितः शुक्रः अंत्येद्वादशस्थाने शेषंसुगमम्। सर्वेरंध्रे अष्टमस्थाने एकेप्रत्येकं वटुघ्नाःवटुमारकाभवंति। किञ्च क्वचित् अन्यलग्नाभावे तनुगः इनः रविः श्रेष्ठः। उक्तंचमौंजीपटले--

शुभदोबलवान् भानुर्लग्नगोदशमस्तथा ।
सर्वशाखाधिपोयस्मात्सर्वेषां व्रतबंधने ॥
सर्वशाखाधिपोभानुः केचिदुचुर्महर्षयः ।
तस्माद्गत्यंतराभावे लग्नस्थोर्कः प्रशस्यते ॥

उच्चेन्दुरेक इति। एकेमुनयः उच्चेंदुः उच्चस्थश्चंद्रः तनुगश्चश्रेष्ठ इतिवदंति तद्वाक्यं--

चंद्रोदयेभि शस्तः स्यात्क्षयरोगीसितेतरे
सितेपक्षेभवेद्यज्वास्वभेतुंगेविशेषतः" ॥ इति।

अस्यार्थः सितेतरेकृष्णपक्षे चंद्रोदयेचंद्रयुक्तलग्नेसति व्रती अभिशस्तः स्यात् क्षयरोगीचस्यात् अभिशस्तोनाममिथ्याभिशस्तः मिथ्याभिशंसी अनेनेदंपातकंकृतमिति यल्लोकामिथ्यावदंतिसोऽभिशस्तः क्षयरोगी स्यादिति कृष्णपक्षे लग्नस्थचंद्रफलमुक्तं सितपक्षेभवेद्यज्वेतिवाक्यंस्पष्टम् । अयंश्लोकः पुनः संस्कार विषय इव भाति। यतः कृष्ण पक्षे व्रतबन्धे चन्द्रस्य फलमुक्तम् तस्यदिवा असंभवात् । पुनः संस्कारार्हस्यतु कर्मलोप भयाद्रात्रावपि संस्कारो विहितो नान्यस्य । प्रथम व्रतबन्धस्तु सर्वै ग्रन्थ कारैर्दिवैव पूर्वाह्णे विहितोन रात्रौ। अतः कारणादिदं वचनं पुनः संस्कार विषयं प्रति भाति। पुनः संस्कारनिमित्तानिरासभारोहणादीनिधर्मशास्त्रप्रसिद्धानि । तादृशंवाक्यंरत्नमालायाम्--

त्रिषट्खगोर्कस्त्रिधनास्तकर्मगश्चंद्रस्त्रिषष्ठाः शनिराहुभौमाः ।
सर्वेचलाभेद्वित्रिकोणकेंद्रगाः शुभाशुभाः स्युर्व्रतबंधकाले ॥ इति

अत्रतृतीयस्यषष्ठस्यसूर्यस्यराशिगतलग्नेसंभवः। नारदेनतु लग्नस्यचंद्रोनिंदित एव तद्वाक्यमेवं--

स्वोच्चसंस्थोपिशीतांशुर्व्रतिनो यदिलग्नगः ।
तंकरोतिशिशुंनिःस्वंसततंक्षयरोगिणम् ॥ इति ।

कन्यालग्नबलंपूर्ववत् । अथ विद्यारंभंवृत्तार्द्धेनाह । विद्यांमौंज्युक्तकाले इति। मौंज्या ऊर्ध्वंमौंज्युक्तकालेविद्याप्रारभ्यते मौंज्यर्थमुक्तः मौंज्युक्तः सचासौ कालश्चतस्मिन्विद्यांवेदमारभेत । मौंज्या ऊर्ध्वमित्यनेनमौंज्याः प्रागनधिकारः सूचितः । किंकृत्वा गणेशंगिरमपिसरस्वतीमपिविधिवद्विव्युक्तमार्गेणपूजयित्वा। कथंभूतेमौंज्युक्तकाले स्थिरचरहरिजत्र्युत्तरब्राह्महीने स्थिरचरहरिजंस्थिरलग्नं चरलग्नं तिसृणामुत्तराणां समाराहारस्त्र्युत्तरंब्राह्मं रोहिणी एभिर्हीनेरहिते मौंज्यर्थमेतानिगृहीतानि विद्यारंभे अग्राह्याणीत्यर्थः ।

॥ जाड्यंस्थिरेद्वयंगलग्ने सुविद्याप्तिश्चरेभ्रमः ॥

इति । श्रवणात् ॥१८॥

मार्त्तण्डप्रिया--

उपनयन कालिक लग्न में चन्द्र या पापग्रह रहें, चन्द्र-शुक्र और लग्नेश षष्ठ में रहें, शुक्र द्वादश में रहे और अष्टम में कोई भी ग्रह रहे तो अनिष्टकारक होता है ।

किसी आचार्य का मत है कि यदि कोई अन्य लग्न शुद्ध नहीं मिले तो मेषस्थ सूर्य या वृषस्थ चन्द्र लग्न में ग्रहण करना चाहिए ऐसी अवस्था में वह दोषकारक नहीं होता है ।

उपनयन के पश्चात् उपनयनोक्त मासों में, द्विस्वभाव लग्न में, उपनयन के जो २२ नक्षत्र हैं उनमें तीनों उत्तरा और रोहिणी इन ४ नक्षत्रों को छोड़कर बाकी १८ नक्षत्रों में गणेश-सरस्वती की विधिवत् पूजा करके विद्यारम्भ करनी चाहिए ॥१८॥

केशान्तकर्म मौन्जीविसर्जन छुरिकाबन्धन मुहूर्त—

केशांतं चौलवत्स्यान्नृपमितशरदीत्याहुरार्या व्रतोक्ते,
कालेमौञ्जीविमोक्षं गुरुबलमनयोर्नावलोक्यं सुधीभिः॥
शूद्राणां मौञ्ज्यभावात्तदुदिततिथिभेऽनस्तभौमेज्यशुक्रे।
व्यारे वारे लवे मास्युपयमविहिते च्छूरिकाबंधमाहुः ॥१९॥

इति मुहूर्तमार्त्तण्डे संस्कारप्रकरणम् ।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथकेशांतंमौंजीविमोक्षंचवृत्तार्द्धेनाह । केशांतमिति । तदुक्तंमनुना—

केशांतः षोडशेवर्षेब्राह्मणस्यविधीयते ।
राजन्यबंधोर्द्वाविंशेवैश्यस्यद्व्यधिके ततः ॥ इति ।

केशांतंकर्म नृपमितशरदि षोडशेवर्षेचौलवत्स्यादित्यार्या आहुः । सर्वं-चौलोक्तमत्रग्राह्यमित्यर्थः । व्रतोक्तेकालेमौंजीविमोक्षमाहुः । स्पष्टम् । अनयोः केशांतमौंजीविमोक्षयोः गुरुबलंसुधीभिर्नावलोक्यम् । अथशूद्राणांमौंज्यभावा-च्छूरिकाबंधंवृत्तार्द्धेनाह । शूद्राणांमौंज्यभावात्तदुदिततिथिभेमौंज्युक्तनक्षत्रे अनस्तभौमेज्यशुक्रैः उदितैः भौमगुरुशुक्रैः व्यारेवारे आरोभौमः तद्रहितवारे लवेनवांशे यत्र कुत्रापिलग्ने भौमनवांशवर्जित इत्यर्थः । उपयमविहितेमासि विवाहोक्तमासे "विवाहोपयमौसमौ" इत्यमरः । आरोभौम इत्यर्थः । छूरि-काबंधंकटिप्रदेशेच्छूरिकाबंधनमाहुः । तथाचसंग्रहे--

शूद्राणां राजपुत्राणांमौंज्यभावेऽस्त्रबंधनम् ।
मौंजीबंधोक्ततिथ्यादौ कार्यंभौमदिनंविना ॥

नारदः—

छूरिकाबंधनंवक्ष्ये नृपाणां प्राक्करग्रहात् ।
विवाहोक्तेषुमासेषु शुक्लपक्षेप्यनस्तगे ॥
जीवशुक्रेचभूपुत्रे चंद्रताराबलान्विते ।
मौंजीबंधर्क्षतिथिषु कुजवर्जितवासरे ॥
तेषांनवांशकेकर्तुरष्टमोदयवर्जिते ।
शुद्धेऽष्टमेविधौलग्नषडष्टांत्यविवर्जिते ॥

धनत्रिकोणकेंद्रस्थैः शुभैस्त्र्यायारिगैः परैः ।
छूरिकाबंधनंकार्यमर्चयित्वासुरान्पितृन् ॥
अर्चयेच्छूरिकां सम्यग्देवतानां च सन्निधौ ॥
ततः सुलग्नेबध्नीयात्कटयांलक्षणसंयुताम् ॥
तस्यास्तुलक्षणंवक्ष्येयदुक्तं ब्रह्मणापुरा ।
संमितंछूरीकायामंविस्तारेणैवताडयेत् ॥
भाजितंगजसंख्यैश्च अंगुलान्परिकल्पयेत् ।
शेषंचैवफलंवक्ष्ये ध्वजाये धनवान्भवेत् ।
धूमाये मरणं सिंहेजयंश्वायेतिरोगिता ॥
धनलाभोवृषेत्यंतंदुःखीभवतिगर्दभे ॥
गजायेत्यंतसंप्रीतिर्ध्वक्षेवित्तविनाशनम् ॥ इति ।

सर्वत्रत्याज्यप्रकरणोक्तं विलोक्यम् । अस्मिन्प्रकरणेकर्णवेधवृत्तंविना सर्वाणिस्रग्धरावृत्तानि ॥१९॥

इति स्वोक्तमुहूर्तमार्त्तण्डटीकायांमार्त्तण्डवल्लभायां संस्कारप्रकरणम् ॥३॥

मार्त्तण्डप्रिया--

जन्म से १६वें वर्ष में चूड़ाकरण के समान ही केशान्त संस्कार करना चाहिए तथा उपनयनोक्त तिथि नक्षत्रादिकों में ही मौंजी का विसर्जन आचार्यों ने कहा है। इन दोनों संस्कारों (केशान्त और मौंजी त्याग) में गुरु शुद्धि की आवश्यकता नहीं पड़ती है ।

शूद्रों का उपनयन संस्कार नहीं होता अतएव उपनयनोक्त तिथि नक्षत्रादिकों में ही मंगल–गुरु–शुक्र के उदित रहने पर मंगलवार और मंगल का नवांश छोड़कर अन्यवारों और नवांशों में विवाह विहित मासों में ही उनका (शूद्रों का) छुरिका बन्धन (कमर में छुरी बाँधना) शुभद होता है ॥१९॥

मुहूर्तमार्त्तण्ड की "मार्त्तण्डप्रिया" हिन्दी टीका में संस्कारप्रकरण समाप्त—३

विवाह प्रकरणम्–४

वर-कन्या मेलापक में गुण—

शुद्धां गोत्रकुलादिभिर्गुणयुतां कांतां वरश्चोद्वहे-
द्वर्णो वश्यभयोनिखेचरगणाः कूटं च नाडी क्रमात् ॥
वर्णाद्या बलिनो यथोत्तरमहींदूर्ध्वं गुणैक्यं शुभं ।
वर्णा विप्रमुखा झषादिह वरो वर्णोत्तमः स्याच्छुभः ॥१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथ विवाहप्रकरणंविवक्षुस्तावत्घटितगुणविचारंद्वादशभिर्वृत्तैराह । अतः परमत्रग्रंथेसर्वाणिशार्दूलविक्रीडितानि । वरः गोत्रकुलादिभिःशुद्धांकांतां-कमनीयाकन्यांमुद्वहेत् चकाराद्वरोपि एवं विधोभाव्यः गोत्रशुद्धिर्ग्रंथांतराज्ज्ञा-तव्या । कुलमपिपंचसप्तनिर्णयमपि एतद्वयंग्रंथांतराज्ज्ञात्वा अन्यदत्राव-लोकयेत् अथयथोत्तरंबलिष्ठंघटितक्रममाह । वर्णइति । वर्णः १ वश्यं २ भं ३ योनिः ४ खेचरः ५ गणः ६ कूटं ७ नाडी ८ क्रमाद्यथोत्तरं बलिनः स्युः अहींदूर्ध्वंमष्टादशाधिकंगुणैक्यं यथोत्तरंस्याच्छुभम् । तत्रादौ वर्णलक्षणमाह । झषात्मीनात्सकाशात् विप्रमुखाः ब्राह्मणादयोवर्णाः पुनर्गणनयाज्ञेयाः तद्यथा मीनोब्राह्मणः मेषः क्षत्रियः वृषो वैश्यः मिथुनः शूद्रः पुनः कर्कोब्राह्मणः सिंहः क्षत्रिय इत्यादि इहास्मिन्राशिमेलनेवर्णोत्तमोवरः शुभः स्यात् नान्यथे-त्यर्थात्सिद्धम् ॥१॥

मार्त्तण्डप्रिया—

गोत्र कुल आदि से शुद्ध रूपवती गुणवती कन्या का पाणिग्रहण वर को करना चाहिए। पाणिग्रहण में वर और कन्या के लिए १–वर्ण, २–वश्य, ३-तारा, ४–योनि, ५–राशीश, ६–गण, ७-भकूट, ८–नाड़ी, ये आठ विचारणीय विषय हैं। इनमें वर्णादि आठों क्रमशः एक दूसरे से उत्तरोत्तर बली होते हैं। अर्थात् उनकी गुण संख्या १–२–३ क्रमशः बढ़कर होती है। वर कन्या के मेलापक में १८ से कम गुणयोग का होना शुभ नहीं होता। अर्थात् गुणयोग १८ से अधिक होना चाहिए।

राशियों के वर्ण विभाजन में मीन राशि से क्रमशः ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्र होते हैं। चक्र में स्पष्ट है—

वर्ण	राशि		
ब्राह्मण	मीन	कर्क	वृश्चिक
क्षत्रिय	मेष	सिंह	धनु
वैश्य	वृष	कन्या	मकर
शूद्र	मिथुन	तुला	कुम्भ

कन्या के वर्ण से वर का वर्ण उत्तम होना शुभद होता है ।।१।।

वश्य-तारा-योनि—

नुर्भक्ष्या जलजा वशा विहरयो वश्या विकौर्प्या हरे-
रस्यालिर्न शुभोनुरब्जहरयो नेष्टाःस्युरन्यज्जनात् ।।
भे गण्येङ्कहृते मिथस्त्र्यगशराः शेषं न सच्चाशिवभा-
दश्वेभाव्यहिभोगिनः श्ववृषभुङ्मेषाखुभुग्घ्युन्दुराः ।।२।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथवृत्तार्द्धेन वश्यमाह— नुः नृराशेः मनुष्यराशेः जलजा जलचराभक्ष्याः तस्यैव विहरयः सर्ववशाः विगतः हरिः सिंहोयेभ्यस्ते विहरयः सिंहरहिताः सर्ववश्या इत्यर्थः । हरेः सिंहस्यविकौर्प्यावश्याः कौर्प्योवृश्चिकः विगतः कौर्प्यो येभ्यस्ते विकौर्प्याः सिंहस्य वृश्चिकरहिताः सर्वराशयोवश्याः अथानंतरोक्तस्यहरेः अलिर्वृश्चिकोनशुभः वैरीत्यर्थः । नुः मनुष्यराशेःअब्जहरयः नेष्टाः स्युः । अब्जाः जलजाः हरिः सिंहः एते नेष्टाः मेलनं न कर्तव्यमित्यर्थः । अन्यज्जनात् अन्यत् अस्य भक्ष्यादिकं जनाज्ज्ञेयम् । तद्यथा नुः पुरुषस्यगोर्वश्याभवति । अत्रपरस्परंमित्रत्वं दृश्यते तस्मादनयोर्मेलनं शुभं स्यात् । इदमेवम्लेच्छजातीय वधूवरयोर्नशुभम् म्लेच्छानां गौर्भक्ष्यम् । इत्येवं लोकप्रचारतो विचारणीयमित्यर्थः । राशिस्वरूपं बृहज्जातकवशादवगंतव्यम् । बृहज्जातके—

"मत्स्यौ घटी नृमिथुनं सगदं सवीणं
चापी नरोऽश्वजघनौ मकरो मृगास्यः ।।
तौली ससस्यदहना प्लवगा चकन्या
शेषाः स्वनामसदृशाः खचराश्चसर्वे" ।।[1]

१. बृहज्जातक—अ० १ श्लोक ५

अथभयोनीद्वावपिवृत्तैकेनाह —भेगण्ये इति। मिथः परस्परंवधूवरयोर्भे-नक्षत्रे वधूनक्षत्राद्वरनक्षत्रंगण्यं वरनक्षत्रात्कन्यानक्षत्रं गण्यम् उभे अपिनव-भिर्भाजिते कार्ये। शेषं त्र्यगशराः त्रिसप्तपंचभवन्ति तदानसत्स्यात्। अथ-योनिमाह —अश्विभादिति। अश्विभात्सकाशाद्भानां नक्षत्राणामश्वादयो योन-योभवन्ति। अश्वोऽश्विन्याः इभो भरण्याः अविर्मेषः कृत्तिकायाः अहिःसर्पो रोहिण्याः भोगीसर्पोमृगस्य श्वाश्वान आर्द्रायाःवृषमुंदुरुन्भुनक्तीतिवृषभुग्मा-र्जारः पुनर्वसोः मेषः प्रसिद्धः पुष्यस्य आखुभुगुमार्जार आश्लेषायाः द्वयुंदुरौ-द्वौउंदुरौमघापूर्वाफाल्गुन्योः ॥२॥

मार्त्तण्डप्रिया—

नर राशि की सभी जलचर राशियाँ भक्ष्य होती हैं।

सिंह राशि को छोड़कर सभी चतुष्पद राशियाँ नर राशि के वश्य (वश में) होती है।

सिंह राशि का वृश्चिक राशि शत्रु है तथा नर राशियों के सिंह राशि व जल-चर राशियाँ शत्रु हैं। इसके अतिरिक्त मित्र-शत्रु लौकिक व्यवहारानुकूल समझना चाहिए। जैसे गौ की नर से मैत्री होती है परन्तु यवनों के लिए नहीं क्योंकि वह उनकी भक्ष्य है। इसी तरह और भी समझना चाहिए। अर्थात् भक्ष्य-भक्षक और परस्पर शत्रु राशियों में सम्बन्ध नहीं करना चाहिए ॥२॥

वश्य चक्र

वश्य	राशि
नर	मि. कन्या तु. कु. धनुपूर्वार्द्ध
चतुष्पद	मे. वृ. धनु उत्तरार्द्ध, मकरपूर्वार्द्ध
वनचर	सिंह
जलचर	मकर उत्तरार्द्ध, कर्क, मीन

योनि-योनिवैर—

गौःकाली पशुभुङ्महिष्यथ पशुद्विड् द्वौ मृगौ श्वा कपि-
द्वौ बभ्रूकपिसिंहवाजिहरिगोनागाः क्रमाद्योनयः ॥
सिंहेभं महिषाश्वमोतुखनकं श्वैणं च कोशावि गो-
व्याघ्रं बभ्रुफणीतिभीरुवरयोः प्रेष्येशयोश्चत्यजेत् ॥३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

गोरुत्तराफाल्गुन्याः कालीमहिषीहस्तस्य पशुभुग्व्याघ्रश्चित्रायाः महिषी-स्वात्याः पशुद्विड्व्याघ्रोविशाखायाः द्वौमृगौ अनुराधाज्येष्ठयोः श्वामूलस्य कपिर्वानरः पूर्वाषाढायाः द्वौ बभ्रू उत्तराषाढाभिजितोः बभ्रूनकुलौ कपिर्वानरः श्रवणस्य सिंहोधनिष्ठायाः वाजी अश्वः शततारकायाः हरिः सिंहः पूर्वाभाद्र-पदायाः गौरुत्तराभाद्रपदायाः नागोहस्ती रेवत्याः । इतियोनिमभिधाययो-निवैरमाह सिंहश्च इभश्च सिंहेभंसिंहंगजं महिषाश्वम् ओतुखनकंमार्जारोंदुरु श्वैणंश्वानमृगौ कीशाविवानरमेषं गोव्याघ्रं बभ्रुफणिनकुलसर्पं इतिवैरं भीरुवरयोः वधूवरयोः प्रेष्येशयोः प्रेष्यः सेवकः ईशःस्वामी एतयोश्चत्यजे-द्वर्जयेत् ॥३॥

मार्त्तण्डप्रिया —

तारा विचार में वर के नक्षत्र से कन्या के नक्षत्र तक और कन्या के नक्षत्र से वर के नक्षत्र तक गिनकर दोनों संख्याओं में ९ से भाग देने पर जो शेष बचे वह तारा होती है। इनमें ३-५-७ तारायें शुभ नहीं होती हैं।

$$\frac{\text{वर नक्षत्र से कन्या नक्षत्र तक की संख्या}}{९} = \text{शेष वर की तारा}$$

$$\frac{\text{कन्या नक्षत्र से वर नक्षत्र तक की संख्या}}{९} = \text{शेष कन्या की तारा}$$

योनि विचार में अश्विनी और शतभिषा की अश्व योनि है, स्वाती और हस्त नक्षत्र की महिष योनि है। आगे चक्र में स्पष्ट है—

योनिचक्र

नक्षत्र		योनि
अश्वि.	शत	अश्व
स्वा	ह.	महिष
ध.	पू.भा.	सिंह
भर	रे.	गज
पुष्य	कृ.	मेष
श्र.	पू.षा.	वानर
उ.षा.	अभि.	नकुल
मृग	रो.	सर्प
ज्ये.	अनु.	मृग
मू.	आ.	श्वान
पुन.	श्ले.	मार्जार
म.	पू.फा.	मूषक
वि	चि.	व्याघ्र
उ.भा.	उ.फा.	गौ

योनिवैर चक्र

परस्पर वैरी						
सिंह	महिष	मार्जार	श्वान	वानर	गौ	नकुल
गज	अश्व	मूषक	मृग	मेष	व्याघ्र	सर्प

इन योनि वैर वाले राशियों में वर-कन्या का विवाह या सेवक स्वामी की नौकरी नहीं करनी चाहिए ॥३॥

राशीश-ग्रहमैत्री-गण—

भेशामंशुबुचंरबूशुमगुशाः शोगुः क्रियात्स्यूरवे-
र्मित्राणीज्यकुजेन्दवः शनिसितौ शत्रू विधोर्नो रिपुः ॥
मित्रे सूर्यबुधौ कुजस्य विदरिः सूर्येन्दुजीवा हिता-
ज्ञस्यार्कास्फुजितौ हितौ विधुररिः सूरेः सितज्ञावरी ॥४॥
मित्राण्यर्ककुजेंदवोऽथ भृगुजस्यारी रवीन्दू हितौ
मंदज्ञौ च शनेः कुजेंदुरवयो नेष्टाः सितज्ञौ हितौ ॥
पूर्वाद्रान्तककोत्तरं नरि सुरेऽर्कान्त्यादितीज्यानिले-
न्दुश्रुत्यशिवनि मित्रमन्यदसुरे दैत्यैर्नृणां स्यान्मृतिः ॥५॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथग्रहवैरावैरंविवक्षुस्तावद्राशिनाथानाह—क्रियान्मेषाद्भानां राशीनामीशाः भेशाः एतेक्रमेणस्युः। मंमंगलोमेषस्य शुशुक्रोवृषभस्येत्यादिस्पष्टम्। रवेः सूर्यस्य इज्यकुजेंदवोमित्राणि इज्योगुरुः कुजोभौमः इंदुश्चन्द्रः एतेरवेर्मित्राणि सुहृदः स्युः। शनिसितौशत्रू शनिः प्रसिद्धः सितः शुक्रः एतौशत्रूवैरिणौ अर्थादन्ये उदासीनाः विधोर्नोरिपुः विधोश्चंद्रस्यरिपुर्नास्ति सूर्यबुधौमित्रे अन्येसर्वे उदासीनाः। कुजस्यभौमस्यवित् बुधः अरिः। सूर्येन्दुजीवाः हिताः मित्राणि अन्यौ समौ। ज्ञस्यबुधस्य अर्कास्फुजितौ रविशुक्रौ हितौ मित्रे विधुश्चंद्रः अरिः वैरी अन्ये समाः। सूरेः गुरोः सितज्ञौ शुक्रबुधौ अरीवैरिणौ ॥४॥ अर्ककुजेंदवः रविभौमचन्द्राः मित्राणि अन्येसमाः। भृगोः जातः भृगुजः तस्य भृगुजस्य शुक्रस्य रवींदूसूर्यचंद्रौशत्रू मंदज्ञौशनिबुधौहितौमित्रे अन्येसमाः। शनेः कुजेंदुरवयः अरयः सितज्ञौमित्रे अन्येसमाः। अथगणमाह—पूर्वाद्रान्तकेति। पूर्वास्तिस्रः आर्द्राप्रसिद्धा अंतकोभरणी कःरोहिणी उत्तरास्तिस्रः एतन्नक्षत्रनवकंनरिभवति नृगणा इत्यर्थः। अर्कोहस्तः अंत्यंरेवती अदितिः पुनर्वसुः

इज्यः पुष्यः अनिलः स्वाती इंदुर्मृगः श्रुतिः श्रवणः अश्विनीप्रसिद्धा मैत्रमनुराधा एतन्नक्षत्रनवकंसुरेदेवेभवति देवगण इत्यर्थः। अन्यत्कृत्तिका आश्लेषा मघा चित्रा विशाखा ज्येष्ठा मूलं धनिष्ठा शततारका एतन्नक्षत्रनवकमसुरेभवति रक्षोगण इत्यर्थः। दैत्यैर्नृणां मृतिर्भवति ॥५॥

मार्त्तण्डप्रिया—

राशि स्वामी का विचार—मेष से मीन तक क्रमशः भौ. शु. बु. चं. सू. बु. शु. भौ. गु. श. श. और गु. राशिपति होते हैं। जैसे—

मेष—भौम	सिंह—सूर्य	धनु—गुरू
वृष—शुक्र	कन्या—बुध	मकर—शनि
मिथुन—बुध	तुला—शुक्र	कुम्भ—शनि
कर्क—चन्द्र	वृश्चिक—भौम	मीन—गुरू

ग्रह मैत्री चक्र

ग्रह	मित्र	शत्रु	सम
सूर्य	वृ. भौ. चन्द्र	श. शु.	बु
चन्द्र	सू. बु.	×	भौ. वृ. शु. श.
भौम	सू. चं. वृ.	बु.	शु. श.
बुध	सू. शु.	चं.	भौ. वृ श.
गुरु	सू. चं भौ.	शु. बु	श.
शुक्र	श. बु.	सू. चं.	भौ. वृ.
शनि	शु. बु	सू चं. भौ.	वृ.

मैत्रीचक्रम्।

सू.	चं.	मं.	बु.	वृ.	शु	श.	ग्रह
वृ.मं.चं.	सू.बु.	सू.चं.गु.	सू.शु.	सू.चं.मं.	बु.श.	बु.शु.	मित्र
बु.	मं.शु. गु.श.	शु.श	मं.गु.श	श.	मं.गु.	गु.	सम
श शु	०	बु	चं.	शु.बु.	चं,सू.	सू.चं.मं.	शत्रु

वर-कन्या के विवाह में दोनों के राशि स्वामियों में मैत्री का विचार करना चाहिए।

गण विचार—मनुष्य, देव, राक्षस इन तीनों गणों में २७ नक्षत्रों को विभाजित किया गया है। स्पष्टार्थ चक्र देखें—

गण	नक्षत्र
मनुष्य	भ. - रो - आ. - पू फा - उ फा - पूषा-उषा - पूभा - उ.भा
देव	अश्वि-मृग - पुन - पु - हस्त - स्वा.-अनु - श्र - रे.
राक्षस	कृ- श्लेषा-मघा - चि - विशा - ज्ये - मू - धनि. - शत.

भकूट—

स्याद्देवासुरयोः कलिर्नृसुरयोर्मध्यं स्वयोः सौहृदं
नैः स्व्यंद्विव्ययके षडष्टसु विपद्वैपुत्र्यमर्थांकके ॥
शेषेऽर्था विविधा विभैकचरणे भिन्नर्क्षराश्यैककं
भिन्नाङ्घ्रयेक भमेतयोर्गणखगौ नाडी नृदूरं न च ॥६॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

देवासुरयोर्देवदैत्ययोः कलिः स्यात्। नृसुरयोर्नृदेवयोर्मध्यं स्यात्। स्वयोर्मेलनेसौहृदं स्यात्। अथकूटमाह नैः स्वयमिति। द्विव्ययकेद्विर्द्वादशेनैः स्व्यंनिःस्वस्यभावोनैःस्व्यं निर्धनत्वंस्यात्। षडष्टसुविपत्मरणंस्यात्। वैपुत्र्यमर्थाङ्कके अर्थांककेपंचमेनवमे वैपुत्र्यमनपत्यत्वंस्यात्। शेषे उर्वरिते तृतीयैकादशेचतुर्थदशमे उभयसप्तमे एकर्क्षेविविधार्थाः धनपुत्रपश्वादयः स्युः। कथंभूतेशेषे विभैकचरणे विगतंभैकचरणं नक्षत्रैकचरणं यस्मात् तथातस्मिन्नक्षत्रैकचरणे कूटे अनिष्टंफलं श्रूयते—

"एकराशौशुभोद्वाह एकभांशेमृतिप्रदः" इति।

एकऋक्षस्यचत्वारोभेदः एकराशिर्भिन्नर्क्षमेकर्क्षभिन्नराशिः एकराशिनक्षत्र भिन्नचरणम् एकराशिनक्षत्रचरणंचेतिचत्वारोभेदाः तत्रएकराशिनक्षत्रचरणं निंदितम्। विभैकचरण इति। अथशुभकूटेयद्भिन्नर्क्षराश्यैककं राश्यैकत्वंयच्चभिन्नांघ्र्यैकभमेतयोर्गणखगौनाडीनृदूरं च न अत्रकिमपिनावलोक्यं शुभमित्यर्थः।

नृदूरंवक्ष्यमाणम् । भिन्नांघ्र्यैकभमित्यत्रभेदद्वयमागतं भवति । एकर्क्षभिन्नराशिकम् अपरमेकाशिनक्षत्रभिन्नचरणं तस्मात् एकराशिनक्षत्रचरणं त्यक्त्वा त्रिषुभेदेषुगणादिकंनचिंतयेत् तत्रगणादिदोषेसत्यपिशुभं स्यादित्यर्थः । उक्तं च बृहस्पतिना—

"एकराशौपृथग्धिष्ण्ये पृथग्राशौतथैकभे ।
गणनाडीनृदूरंच ग्रहवैरंनचिन्तयेत् ।।"

कालनिर्णये—

दंपत्योरेकनक्षत्रे भिन्नपादे शुभावहम् ।
दंपत्योरेकपादे तु वर्षान्ते मरणंध्रुवम् ।।६।। इति ।

मार्त्तण्डप्रिया—

१. एक गण में विवाह शुभद होता हैं अर्थात् वर-कन्या में परस्पर प्रेम रहता है ।

२. राक्षस–मनुष्य गण में विवाह मृत्युकारक होता है ।

३. देव–राक्षस गण में विवाह होने पर वर-कन्या में कलह होता है ।

४. मनुष्य–देव गण में विवाह होने पर परस्पर दोनों में समभाव रहता है ।

भकूट विचार–वर-कन्या की राशियों में परस्पर २–१२ (द्विर्द्वादश) सम्बन्ध हो तो वह दारिद्रय कारक होता है ।

६–८ (षडष्टक) सम्बन्ध हो तो मृत्युकारक होता है ।

५–९ (पंचम-नवम) सम्बन्ध हो तो अपुत्र कारक होता है ।

यदि ३–११, ४–१०, ७–७ या एक ही राशि दोनों की हो तो विविध सुखों से युक्त और धन सौभाग्यादि कारक होता है ।

गण-ग्रहमैत्री-नाड़ी आदि दोषों का परिहार—

(१) वर-कन्या की एक ही राशि हो पर नक्षत्र भिन्न-भिन्न हों ।

(२) एक ही नक्षत्र हो पर राशियाँ भिन्न-भिन्न हों ।

(३) एक ही नक्षत्र हो पर चरण भिन्न-भिन्न हों ।

यदि ऐसी स्थिति हो तो वर-कन्या के विवाह में गण आदि दोषों का परिहार हो जाता है ।।६।।

षडष्टक-द्विर्द्वादश परिहार और नाड़ी दोष—

षट्काष्टे समभं च षष्ठसहितं चेच्छोभनं स्यात्समं
भं द्विर्द्वादशके द्वितीयसहितं श्रेष्ठं स्त्रियायुग्घरिः ।।
मूलेन्द्रार्कभपाशथजैकचरणादित्यार्यमेशाश्विभं ।
याम्येन्द्वीज्यभमित्रभाग्यवसुभत्वाष्ट्रांबवहिर्बुध्न्यभैः ।।७।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथग्राह्यषट्काष्टकंद्विर्द्वादशंचाह षट्काष्टे इति। समभंकर्ककन्यादि चेद्यदिषष्ठसहितं स्यात्तदाशोभनंस्यात् ग्राह्यं स्यादित्यर्थः । तद्यथा वृषःसमभं तस्मात्सकाशात् षष्ठेनतुलाधारेणसहितं यदिभवतितदाग्राह्यं स्यादित्यर्थः । तत्स्वामिनोमैत्र्यभावात् समभम् अष्टमेनसमंनग्राह्यम् । एवमेवग्राह्याग्राह्यं-विलोकयेत् । अथग्राह्यं द्विर्द्वादशंचाह–द्विर्द्वादशकेसमभंद्वितीयसहितं यदा-भवतितदाश्रेष्ठंशोभनंस्यात् विपरीतमसत् । अत्रसिंहेविशेषमाह-स्त्रियायुग्घ-रिरिति । विषमोपिसिंहः स्त्रियाकन्यययायुग्युक्तः श्रेष्ठः । अथनाडीमाह मूलेति । अत्रश्लोकेतृतीयांतैस्त्रिभिः पदैः तिस्रोनाड्यःसूचिताः । मूलंप्रसिद्धम् इंद्रोज्येष्ठा अर्कभं हस्तः पाशीशततारका अजैकचरणं पूर्वाभाद्रपदा आदित्यं पुनर्वसुः अर्यमा उत्तराफाल्गुनी ईश आर्द्रा अश्विभमश्विनी एभिर्नवनक्षत्रैरेक-नाडीभवति । याम्यंभरणी इंदुर्मृगः इज्यभंपुष्यः मित्रमनुराधा भाग्यभंपूर्वा-फाल्गुनी वसुभंधनिष्ठा त्वाष्ट्रंचित्रा अंबुपूर्वाषाढा अहिर्बुध्न्यमुत्तराभाद्रपदा एभिर्नवनक्षत्रैरेकनाडीभवति ।।७।।

मार्त्तण्डप्रिया—

अशुभ भकूट परिहार—वर-कन्या की राशि परस्पर ६-८ हो परन्तु ६ यदि समराशि (वृ. क. आदि) हो और ८ विषम राशि (मे. मि. आदि) हो तो षडष्टक दोष नहीं लगता है। अर्थात् २–९, ४–११, ६–१, ८–३, १०–५, १२–६ राशियों (सम-विषम) का षडष्टक दोष एकाधिपत्य और सख्य पड़ने से उतना अशुभ नहीं होता।

२–१२ में भी यदि २ समराशि हो और १२ विषम राशि हो तो द्विर्द्वादश दोष नहीं लगता है। अर्थात् १२–१, २–३, ४–५, ६–७, ८–९, १०–११ राशियों (सम-विषम) का द्विर्द्वादश दोष मित्र और एकाधिपत्य होने से अशुभ नहीं होता।

नाड़ी विचार—आदि-मध्य-अन्त्य इन तीनों नाड़ियों में २७ नक्षत्रों का विभाजन किया गया है। ज्येष्ठा-मूल-आर्द्रा-पुनर्वसु-उ. फाल्गुनी-हस्त-शतभिषा-पू. भाद्र और अश्विनी इन ९ नक्षत्रों की आदि नाड़ी होती है।

पुष्य-मृगशिरा-चित्रा-अनुराधा-भरणी-धनिष्ठा-पूर्वाषाढ़ा-पूर्वाफाल्गुनी और उत्तर भाद्र इन ९ नक्षत्रों की मध्य नाड़ी है ॥७॥

नाड़ीविचार--

अन्त्यैर्नाड्च इहैकनाडिनवके स्यातां द्विभे चेन्मृति-
र्गोदादक्षिणतः क्वचिन्नृपमुखे पार्श्वैकनाडी हिता ॥
मैत्र्या द्विव्ययमर्थनंदमपि सत्षट्काष्टकं वश्यतः
षड्भिःस्त्री नृगणा वरोऽस्रपगणः सत्कूटमैत्र्योस्तदा ॥८॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अन्त्यैरुर्वरितैर्नक्षत्रैरेकनाडी एवं तिस्रोनाडचो भवंति। इहविवाहविषये यदा एकनाडीनवकेद्विभेवधूवरयोर्भे नक्षत्रेचेत्स्यातां तदामृतिर्मरणं स्यात्। अथगौतम्यादिदक्षिणेदेशे क्षत्रियादीनां च अन्यवध्वा अलाभेगतिमाह गोदादक्षिणतः गोदागौतमीतस्याः दक्षिणतः दक्षिणेदेशेसर्ववर्णेनृपमुखे क्षत्रियादौ सर्वदेशस्थे क्वचित् अन्यकन्याया अलाभेसतिपार्श्वैकनाडीहिताशुभास्यान्न-मध्यनाडी। उक्तं च रत्नकोशे:--

अग्रनाडीव्यधेभर्ता मध्यनाडीव्यधेद्वयम्।
पृष्ठनाडीव्यधेकन्या म्रियते नात्रसंशयः॥

समासन्नेव्यधेशीघ्रं दुरवेधेचिरेणतु।
व्यधांतरभमानेन वर्षेदुष्टंप्रजायते" इति॥

ब्राह्मणविषयम्—

जठरे निर्धनत्वंच गर्भे मरणमेवच।
पृष्ठेदौर्भाग्यमाप्नोति तस्मात्तांपरिवर्जयेत्" इति॥

ज्योतिः प्रकाशे—

निधनंमध्यनाडयां च दंपत्योर्नैवपार्श्वयोः" इति॥

अथव्यवस्थातत्रैवोक्ता—

करंग्रहेपृष्ठनाड्यौ ननिन्द्ये इतियद्वचः।
तत्क्षत्रियादिविषयं गौतमीयाम्यतस्तथा" इति ॥

अथपूर्वोक्तानां द्विर्द्वादशानांशुभत्वमाह मैत्र्येति। मैत्र्याग्रहमैत्र्या द्विव्ययंद्विद्वादशं अर्थनंदंपंचमनवमं सतशुभंस्यात् वश्यादिषड्भिः षट्काष्टकं शुभं स्यात्। वश्यभयोनिखेचरगणनाडीभिः षडष्टकं शुभं स्यादित्यर्थः। अथ यदा स्त्रीनृगणावरोऽस्त्रगणोरक्षोगणः स्यात्तदातन्मेलनंसत्कूटमैत्र्योः सत्योः शुभं स्यात् ॥८॥

मार्त्तण्डप्रिया —

स्वाती-विशाखा-कृत्तिका-रोहिणी-श्लेषा-मघा-उत्तराषाढ़ा-श्रवण और रेवती इन ९ नक्षत्रों की अन्त्य नाड़ी होती है।

इस नाड़ी को फणिचक्र भी कहा जाता है क्योंकि २७ नक्षत्रों की सर्पों की आकृति बनाने से तीनों नाड़ियों के ९, ९ नक्षत्र ठीक से बैठ जाते हैं।

श्रीपति के वचन "त्रिनाडी सर्व देशेषु वर्जनीया प्रयत्नतः" के अनुसार नाड़ी दोष को बचाना चाहिए।

नाड़ी चक्र

नाड़ी	नक्षत्र								
आदि	अश्वि	आ	पुन	उ.फा	ह	ज्ये	मू	शत	पू भा
मध्य	भ	मृ	पुष्य	पू फा	चि	अनु	पू.षा	ध	उ.भा
अन्त्य	कृ	रो	श्ले	म	स्वा	वि	उ.षा	श्र	रे

(i) वर-कन्या की एक नाड़ी होने पर मृत्युकारक योग बनता है।

(ii) गोदावरी नदी से दक्षिण के भागों में सभी वर्णों के लिए "आदि–अन्त्य" नाड़ी अशुभ नहीं होती। परन्तु "मध्य" नाड़ी होती है।

(iii) क्षत्रियादि वर्णों (क्ष. वै. शू.) के लिए किसी भी भाग (क्षेत्र) में "आदि–अन्त्य" नाड़ी अशुभ नहीं होती।

(iv) मध्य नाड़ी सर्वत्र अशुभ होती है।

तात्पर्य यह है कि अन्य भागों में केवल ब्राह्मणों को ही नाड़ी दोष लगता है परन्तु "मध्य" नाड़ी का दोष सर्वत्र सभी को लगता है। "मध्य" नाड़ी कही भी शुभद नहीं होती है।

दुष्ट भकूट परिहार—

(i) यदि वर-कन्या के राशिपतियों में परस्पर मैत्री हो तो २–१२ (द्विर्द्वादश) और ९–५ (नव–पंचम) दोष नहीं लगता है।

(ii) वश्य–तारा–योनि–ग्रहमैत्री–गण–नाड़ी इन ६ गुणों की शुद्धि रहने पर ६–८ (षडष्टक) दोष भी नहीं लगता है।

(iii) यदि कन्या का मनुष्य गण और वर का राक्षस गण हो तो दोनों का मेलापक भकूट शुद्धि और राशीशों की मैत्री रहने पर ही करना चाहिए अर्थात दुष्ट भकूट और ग्रहमैत्री के अभाव में मनुष्य–राक्षस गण वालों का मेलापक शुभ नहीं होता है ॥८॥

नाड़ी परिहार—

रक्षः स्त्री नृपुमान्यदा वशमुखैः षड्भिर्युतं शोभनं
स्त्रीभान्ना निकटेनृदूरमशुभं खेटोडुमैत्र्योः शुभम् ॥
द्व्यर्के ताम्रसुवर्णमष्टरिपुके गोयुग्ममर्थाङ्के
रौप्यंकांस्यमथैकनाडियुजि गो स्वर्णादि दत्त्वोद्वहेत् ॥९॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथ यदारक्षः स्त्रीरक्षोगणास्त्री नृपुमान्नृगणः पुरुषः स्यात् तदावशमुखैः षड्भिः वश्यभयोनिखेचरकूटनाडीत्येतैः षड्भिर्युतं तन्मेलनं शुभंस्यात्। अथनृदूरंसापवादमाह। स्त्रीभात्स्त्रीनक्षत्रात् ना इतिनृनक्षत्रं यदिनिकटेसमीपे भवति तदानृदूरं स्यात्। कथंभूतं नृदूरम् अशुभम् अशुभफलदम्। इदंनृदूरंखेटोडुमैत्र्योः सत्योः शुभंस्यात् उडुमैत्रीनक्षत्रमैत्रीयोनिमैत्रीति यावत्। अथसंकटे दुष्टकूटादौ दानमाह। द्व्यर्के इति। द्व्यर्केद्विर्द्वादशेताम्रसुवर्णादि दत्त्वा उद्वहेत्। अष्टरिपुके षडष्टके गोयुग्मंमिथुनंदत्त्वा उद्वहेत् अर्थांककेपंचमनवमेरौप्यं कांस्यंचदत्त्वोद्वहेत्। अथ एकनाड्यांदानमाह। एकनाडीयुजिगोस्वर्णादिदत्त्वोद्वहेत् एकनाडीयोगेगोस्वर्णान्नवस्त्राणि बहूनिदत्त्वोद्वहेत्।
राजमार्तण्डे--

षडष्टकेगोमिथुनंप्रद्यात्कांस्यंसरौप्यंनवपंचमेच ।
नाड्यांतुधेन्वन्नसुवर्णवस्त्रं द्विर्द्वादशेब्राह्मणतर्पणं च" इति ॥

उद्वाहतत्त्वे--

ताम्रं हेमधनव्ययेरजतयुक्कांस्यंशरांकेवृषं ।
गां दद्याच्चषडष्टके द्विजभुंजिस्वर्णं च नाडीयुतौ" इति ॥९॥

मार्त्तण्डप्रिया--

यदि कन्या राक्षस गण और वर मनुष्य गण हो तो वश्य-तारा आदि छै गुणों के शुभ रहने पर मेलापक शुभ होता है अन्यथा अशुभ होता है।

नृदूर दोष—

कन्या के नक्षत्र से वर का नक्षत्र दूसरा हो तो उसमें नृदूर दोष लगता है। अर्थात वर के नक्षत्र से कन्या का नक्षत्र २७ वाँ हो जाता है। यह दोष अशुभ-कारक होता है। यदि वर-कन्या की "ग्रह मैत्री" हो और "योनिवैर" नहीं हो तो यह दोष शुभकारक होता है अन्यथा नहीं।

आवश्यकता में दुष्ट दोषादि के शमन हेतु दान पदार्थ—

दोष	दानपदार्थ
द्विर्द्वादश (२–१२)	ताँबा और स्वर्ण
षडष्टक (६–८)	गोदान
नवपंचम (९–५)	चाँदी-कांसा
एक नाड़ी में	गो–स्वर्ण–अन्न–वस्त्र आदि

वर-कन्या के विवाह मेलापक में यदि इनमें से कोई दोष हो और विवाह करना आवश्यक हो तो उपरोक्त दान पदार्थों का दान करके विवाह किया जा सकता है॥९॥

वर्ण-वश्य-तारा-योनि गुण विचार—

भूर्वर्णैक्यवरोत्तमेऽथ वशभक्ष्येऽर्द्धं द्वयं मित्रयोः
खं वैराशनके धराऽरिवशकेऽथो सद्भयोरग्नयः॥
मिश्रे तच्छकलं त्वथातिसुहृदोर्वेदास्त्रयो मिश्रयो
रेकः स्याद्द्विषतोः स्वभावगुणयोर्द्वौ खं महद्वैरिणोः॥१०॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथगुणविचारं त्रिभिर्वृत्तैराह। तत्रादौवर्णगुणविचारमाह। वर्णैक्य-वरोत्तमे भूरेकोगुणोज्ञेयः वर्णयोरैक्यं यस्मिन्घटिते तद्वर्णैक्यं वर उत्तमोय-स्मिस्तद्वरोत्तमं च उभयत्रापि एकैकोगुणोज्ञेयः अर्थाद्धीनवरेगुणाभावः। उक्तं च ज्योतिर्निबन्धे—

एकोगुणः समेवर्णे तथावर्णोत्तमेवरे।
हीनवर्णे गुणः शून्यं केप्याहुः सदृशेदलम्" इति॥

अथवश्यगुणविचारमाह—

वशभक्ष्ये अर्द्धमेकस्यार्द्धगुणः वशभक्ष्यंयथामनुष्याणां जलजा वशा भक्ष्याश्च तत्रअर्द्धगुणोग्राह्यः। एतत्तुद्विजादौज्ञेयं द्विजातयस्तुकदाचिच्छ्राद्धे-पाठीनजातीयमत्स्यभक्षका भवन्ति नसर्वेषाम्। तस्माद्वधूवरजातिं विचार्य-योजनीयम् हीनजातौ शून्यंयतः खंवैराशनके इत्यस्मिन्नेवश्लोके उक्तत्वात् एवमेवसिंहस्य सर्ववश्याः भक्ष्याश्चभवन्ति। तत्र मनुष्याः वैरभक्ष्यं वृश्चि-कस्तुवैरी अन्येवशभक्ष्यम् अथमित्रयोः परस्परंसुहृदोः द्वयंगुणद्वयंज्ञेयम्। तत्र विचारः। स्वजातौमित्रत्वंप्रकटं मनुष्याणांमेष-वृषाश्वमृगैः सहमित्रत्वं तत्र-हीनजातीयानां पशवोवशभक्ष्यं तत्रार्द्धगुणः अन्यत्रद्वयम्। अथ अरिवशकेधरा एकोगुणः अरिवशकंयथा मनुष्याणां वृश्चिकः सिंहवृश्चिकयोर्नित्यवैरम् वृश्चिकदष्टः सिंहोमरणमाप्नोतीतिलोकेप्रसिद्धम् तस्मादत्रगुणाभावः। प्रथमं वशभक्षणे अन्यज्जनादित्युक्तम् तस्मात्सुबुद्धिभिर्विचार्यवक्तव्यम्। ममात्रवश्य-विचारणे बुद्धिरेवंस्फुरिता अत्रयद्वरुक्तंतद्बुधैः शोधनीयम्। ननुवश्यभक्षणे कौर्प्योनवश्यो हरेरित्येवोक्तम्। त्वयाकथमुक्तंसिंहस्यमनुष्यावैरिभक्ष्यमिति सत्यम्। तच्छ्लोकोक्तलक्षणं सर्वसामान्यमस्ति। अतएवोक्तं ग्रन्थकर्त्रा अन्यज्जनादिति। सिंहस्तुनरगजादिप्रतापि मारणेऽत्युत्सुकः अन्येषांमारणे उदासीनः असदृशत्वात्। उक्तंच—

वैरवश्येगुणाभावो द्वयोः सख्येगुणद्वयम्।
वशवैरेगुणश्चैकोवशभक्ष्ये गुणार्द्धकम्'' इति।

अथतारागुणविचारमाह। सद्भयोः उभयतः सत्तारयोः सतोः अन्तयः त्रयोगुणाः एतदुक्तंभवति भेगण्येकहृते इत्यनेन प्रकारेण उभयतोपि यदि सत्तारेभवतस्तदात्रयोगुणा इत्यर्थः। मिश्रेतच्छकलमिति। मिश्रे एकतः शुभा तारा एकतः अशुभा एवंविधेमिश्रे सति तच्छकलं तेषांत्रयाणां शकलं सार्द्धै-कोगुणंणइत्यर्थः। अन्यथागुणाभाव इत्यर्थात्सिद्धम्। उक्तं च—

एकतोलभ्यतेतारा शुभाचैवाशुभान्यतः।
तदासार्द्धोगुणश्चैकस्ताराशुद्धोमिथस्त्रयः॥
उभयोर्नशुभातारातदाशून्यंसमादिशेत्'' इति॥

अथयोनिगुण विचारमाह। अति सुहृदोर्वेदाश्चत्वारो गुणाः मित्रयोस्त्रयः द्विषतो वैरिणोरेकः स्वभाव गुणयोर्द्वौ महद्वैरिणोः खं शून्यंगुणः स्यात्। एवंपंचप्रकारेणयोनिगुणाः। अस्यविवेकः अष्टाविंशतिनक्षत्राणाम् अश्वादयः सर्वाश्चतुर्दशयोनयः तत्र सिंहेभंमहिषाश्वमित्यादियदुक्तं तन्महद्वैरं

तत्रापिमहद्वैरेमहिषाश्वं वानरमेषकम् एतद्द्वयमुदासीनं स्वभावगुणं परस्परघाताभावात् । अथैकयोनिषु अतिमित्रत्वंज्ञेयम् एकयोर्निष्वपिगजयोः श्वानयोः मार्जारयोः व्याघ्रयोः सिंहयोः एकयोनित्वेपिनमित्रत्वं परस्परकलहकारणात् एतद्युग्मपंचकंस्वभावगुणम् एतद्युग्मपंचकंतुमहद्वैरस्थं महिषाश्वंवानरमेषम् एतद्द्वयमित्येतद्युग्मसप्तकंस्वभावगुणं व्याघ्रस्तुसर्पोदुरुर्नकुलेषु उदासीनः सिंहोप्येवमेव उदासीनः तथा एतौव्याघ्रसिंहौ अन्येषां वैरिणौ सर्पमार्जारयोर्वैरं श्वमेषयोः मैत्रं गोमहिष्योर्मैत्रमुन्दुरुसर्पयोर्वैरम् एवं-शत्रुमित्रादिकम् उदासीनत्वंचविचार्यउक्तवद्गुणाज्ञातव्याः । औदासिन्ये स्वभावगुणवत्गुणग्रहणम् उदासीनानां गुणायद्यपिनोक्तास्तथापि स्वभावगुणे महिषाश्वेमेषवानरे च औदासीन्यंदृश्यते तस्मादेतद्द्वयम् उदासीनेगुणग्रहणं कर्तव्यमित्यर्थाज्ज्ञायते । उक्तंच—

महावैरेचवैरे च स्वभावेचयथाक्रमम् ।
मैत्रेचैवातिमैत्रेच खेंदुद्वित्रिचतुर्गुणाः" इति ।।१०।।

मार्त्तण्डप्रिया—

वर्ण गुण

यदि कन्या के वर का वर्ण श्रेष्ठ हो तो	१	गुण
यदि दोनों का समान वर्ण हो तो	१	,,
यदि एक का न्यून और दूसरे का श्रेष्ठ हो तो	०	,,

वश्य गुण

यदि समान वश्य हो तो	२ गुण (जैसे नर–नर, जलचर–जलचर आदि)
भक्ष्य वश्य में	।। गुण (जैसे–नर–जलचर)
वैर वश्य में	१ ,, (नर–चतु, वन्य–जल)
वैर–भक्ष्य वश्य में	० ,, (वन्य–चतु, वन्य–नर)

वर्ण गुण

वर

	वर्ण	वि	क्ष.	वै.	शू.
	विप्र	१	०	०	०
कन्या	क्षत्रिय	१	१	०	०
	वैश्य	१	१	१	०
	शूद्र	१	१	१	१

वश्य गुण

वर

कन्या	वश्य	चतु.	नर	जल	वन.	की.
	चतु.	२	१	१	०	१
	नर.	१	२	॥	०	१
	जल.	१	॥	२	१	१
	वन	०	०	१	२	०
	की	१	१	१	०	२

तारा गुण

यदि शुभ तारा हो तो ३ गुण (१-२-४-६-८-९ हो)

एक शुभ एक अशुभ हो हो १½ गुण

अशुभ-अशुभ हो तो ० गुण होता है

योनि गुण

यदि एक योनि हो तो ४ गुण (गौ-गौ····)

मित्र योनि हो तो ३ गुण (गौ-महिष····)

उदासीन योनि हो तो २ गुण (सर्प-अश्व····)

वैर योनि हो तो ० गुण (गौ-व्याघ्र····)

तारागुण । वर									
कन्या	१	२	३	४	५	६	७	८	९
१	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
२	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
३	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
४	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
५	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
६	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
७	१॥	१॥	०	१॥	०	१॥	०	१॥	१॥
८	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३
९	३	३	१॥	३	१॥	३	१॥	३	३

योनिगुण । वर

		अश्व	गज	मेष	सर्प	श्वान	मार्जार	मूषक	गौ	महिष	व्याघ्र	मृग	वानर	नकुल	सिंह
कन्या	अश्व	४	२	३	२	२	३	३	३	०	१	३	२	२	१
	गज	२	४	३	२	२	३	३	३	३	१	३	२	२	०
	मेष	३	३	४	२	२	३	३	३	३	१	३	०	२	१
	सर्प	२	२	२	४	२	१	१	२	२	२	२	१	०	२
	श्वान	२	२	२	२	४	१	१	२	२	२	०	२	२	२
	मार्जार	३	३	३	१	१	४	०	३	३	२	३	२	२	२
	मूषक	३	३	३	१	१	०	४	३	३	२	३	२	१	२
	गौ	३	३	३	२	२	३	३	४	३	१	३	२	२	१
	महिष	०	३	३	२	२	३	३	३	४	१	३	२	२	१
	व्याघ्र	१	१	१	२	२	२	२	०	१	४	१	२	२	३
	मृग	३	३	३	२	०	३	२	३	३	१	४	२	२	१
	वानर	२	२	०	१	२	२	२	२	२	२	२	४	२	२
	नकुल	२	२	२	०	२	२	१	३	२	२	२	२	४	२
	सिंह	१	०	१	२	२	२	२	१	१	३	१	२	२	४

ग्रहमैत्री-गण गुण—

एकेशोभयमित्रयोः शरमिता अर्द्धं समारातिके
चत्वारः सममित्रके रिपुहिते भूमिर्द्व्युदासे त्रयः ।
ना देवो मनुजा वधूरिह रसास्तद्वैपरीत्येशराः
षट्साम्येऽस्त्रपपूरुषः सुरवधूरत्रैककोऽन्यत्र खम् ॥११॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथखेचरगुणविचारमाह । एकः ईशो यस्मिन्तदेकेशम् उभयत्रमित्रेयस्मिन्तदुभयमित्रम् एकेशं च उभयमित्रं च एकेशोभयमित्रे तयोः शरमिताः पंचगुणाग्राह्याः उभयत्रापिपंचपंचग्राह्या इत्यर्थः । अद्र्धसमारातिकेसमः उदासीनः अरातिः शत्रुः एवं यस्मिन्मेलनेतत्समारातिकं तत्र अर्धमेकस्यार्धंगुणाः स्युः रिपुहिते अरिसुहृदिभूमिः एकः द्व्युदासेत्रयः द्वौ उदासीनौ यस्मिन् तत्रत्रयोगुणा अनुक्ते गुणाभावः । उक्तं च—

यत्रैकाधिपतित्वेच मित्रत्वेगुणपंचकम् ।
चत्वारः सममित्रेच द्वयोःसाम्ये त्रयोगुणाः ।।
मित्रवैरे गुणश्चैकः समवैरेगुणार्द्धकम् ।
परस्परंखेटवैरेगुणः शून्यंसमादिशेत्" इति ।

अथगुणविचारमाह । नादेव इति । यत्रनरोदेवगणः वधूर्मनुजामनुष्यगणाभवति । इहरसाः षट्गुणाग्राह्याः तद्वैपरीत्ये तयोर्वैपरीत्यं तद्वैपरीत्यन्तस्मिन् शरमिताः पंचगुणाग्राह्याः एतदुक्तं भवति यत्रनरोमनुष्यगणः वधूर्देवगणा अत्रपंचगुणाग्राह्या इत्यर्थः । षट्साम्ये गणसाम्ये षट्गुणाग्राह्याः यत्र अस्रपः पुरुषः दैत्यगणः पुरुषः सुरवधूर्देवगणास्त्रीभवतितत्रैकः एकगुणोग्राह्यः अन्यत्र उक्तादन्यत्रखंशून्यं स्यात् ।।११।।

मार्त्तण्डप्रिया —

ग्रहमैत्री गुण

वर–कन्या के	राशीश	एक हों	तो	५	गुण
दोनों	मित्र	,,	,,	५	,,
सम	मित्र	,,	,,	४	,,
सम	सम	,,	,,	३	,,
शत्रु	मित्र	,,	,,	१	,,
सम	शत्रु	,,	,,	½	,,
शत्रु	शत्रु	,,	,,	०	,,

स्पष्टार्थ आगे चक्र देखें

गण गुण

समान	गण	हो तो	६	गुण	(नर–नर, देव–देव)
देव	नर	,,	६	,,	(वर–देव, कन्या–नर)
नर	देव	,,	५	,,	(वर–नर, कन्या–देव)
राक्षस	देव	,,	१	,,	(वर–राक्षस, कन्या–देव)
नर	राक्षस	,,	०	,,	(वर–नर; कन्या–राक्षस)

स्पष्टार्थ आगे चक्र देखें

ग्रहमैत्रीगुण । वर

कन्या	सू.	च	म	गु.	ग.	शु.	श.
सूर्य	५	५	४	४	५	०	०
चन्द्र	५	५	४	१	४	॥	॥
मंगल	५	४	५	॥	५	३	॥
बुध	४	१	॥	५	॥	५	४
गुरु	५	४	५	॥	५	॥	३
शुक्र	०	॥	३	५	॥	५	५
शनि	०	॥	॥	४	३	५	५

गणगुण । वर

कन्या	दे.	म.	रा.
देव	६	५	१
मनुष्य	६	६	०
राक्षस	०	०	६

भकूट-नाड़ी गुण —

दुष्कूटे यदि योनिमैत्रमबलादूरं तदांभोधयो
नोचेत्खं त्वनयोर्यदेकमिह भूर्भाङ्घ्र्यैक्यके खं गुणः ॥
सत्कूटे वरदूरता भरिपुता षड्भिन्नराश्यैकभे
पंचान्यत्र सुकूटके च गिरयोऽथो नाडिभेदे गजाः ॥१२॥

मार्त्तण्डवल्लभा —

अथकूटेगुणविचारमाह । दुष्कूटेद्विर्द्वादशादौ सतियदियोनिमैत्रमबलादूरं स्त्रीदूरंस्यात् तदांभोधयश्चत्वारो गुणाग्राह्याः नोचेद्यदियोनिमैत्रमबलादूरं न स्यात्तदाखंशून्यंगुणः स्यात् अनयोर्योनिमैत्रस्त्रीदूरयोर्मध्ये यत्र एकंस्यात् इहोभूरेकोगुणः भांघ्र्यैक्यकेनक्षत्रैक्यचरणे खंशून्यंगुणोग्राह्यः । अथसत्कूटेसति यदिवरदूरताभरिपुता उभयोर्वैरं योनिवैरंचस्यात् तदारसाः षड्गुणा ग्राह्याः भिन्नाराश्यैकभे पंचभिन्नराशिश्च एकभर्ता च अत्रपंचगुणाग्राह्याः उर्वरितेसुकूटेगिरयः सप्तगुणाग्राह्याः । अथनाडी विचारमाह । अथोनाडीति । नाडीभेदे गजाः अष्टौ गुणा ग्राह्याः । अनुक्तगुणाभावः ॥ इतिमुहूर्तमार्तण्डेघटितम् ॥१२॥

मार्त्तण्डप्रिया —

भकूट गुण—

दुष्ट भकूट (द्विर्द्वादश २–१२, नवपंचम ५–९, षडष्टक ६-८) में योनि मैत्री और स्त्री दूर (वर नक्षत्र से कन्या नक्षत्र दूसरा हो) योग हो तो ४ गुण होता है ।

दुष्ट भकूट में योनि मैत्री या स्त्री दूर नहीं हो तो १ गुण होता है ।

एक ही नक्षत्र का एक ही चरण हो तो ० गुण होता है ।

शुभ भकूट (३–११, ७-७, ४–१०, या एक राशि) रहने पर नृदूर योग (कन्या के नक्षत्र से वर नक्षत्र दूसरा हो) अथवा योनिवैर ही रहे तो ६ गुण होता है।

यदि वर-कन्या की एक ही राशि हो और नक्षत्र भी एक ही हो तो ५ गुण होता है। अन्य शुभ कूटों में ७ गुण होता है।

नाड़ी गुण

वर–कन्या की भिन्न नाड़ी रहने पर ८ गुण होता है। यदि दोनों की एक ही नाड़ी हो तो ० गुण होता है।

भकूटगुण । वर

	मे.	वृ.	मि.	क	सि	क.	तु.	वृ.	ध	म.	कु.	मी
मे	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०
वृ.	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७
मि.	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०	७
क.	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०	०
सि.	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०	७	०
तु.	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०	०
वृ.	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७	०
ध.	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७	७
म	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०	७
कु.	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७	०
मी.	०	७	७	०	०	७	०	०	७	७	०	७

नाडीगुण । वर

		आ.	म.	अं.
कन्या	आदि	०	८	८
	मध्य	८	०	८
	अन्त्य	८	८	०

वर-कन्या का विवाह समय—

स्त्रीणामष्टमवर्षतस्त्रिषु नृणां तीर्णव्रतानामयु-
क्ष्वब्देष्वत्र च राधमाघयुगयोर्मार्गे विवाहः शुभः ॥
ज्येष्ठं पूर्वजयोस्त्यजेद्धिमरुचिज्ञेज्योनखेटान्वितं
यन्मासादि जनुर्भवं प्रथमके गर्भे त्यजेन्नानुजे ॥१३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथस्त्रीणांविवाहकालमाह । स्त्रीणामष्टमवर्षतः सकाशात्त्रिषुवर्षेषु विवाहः शुभः स्यात् । अष्टमनवमदशमेषु शुभः स्यादित्यर्थः । तथाचसंवर्तः—

अष्टवर्षा भवेद्गौरी नववर्षा च रोहिणी ।
दशवर्षा भवेत्कन्या द्वादशेवृषलीमता ॥
गौरीदानान्नाकलोकेवैकुंठेरोहिणींददत् ।
कन्यादानाद्ब्रह्मलोकेरौरवन्तुरजस्वलाम्"[1] इति ॥

रजस्वलेतिवृषलीपर्यायः । तथाच कारिकायामुक्तम्—

षडब्दमध्येनोद्वाह्याकन्यावर्षद्वयंयतः ।
सोमोभुंक्ते ततस्तद्वद्गन्धर्वश्चतथानलः" इति ।

अस्यवाक्यस्य सहायिनीश्रुतिरपि—

"सोमःप्रथमोविविद"

इत्युपक्रम्य—

"सोमोददद्गन्धर्वाय गन्धर्वोददद्ग्नये"

इत्यन्ता । नन्वस्यविरोधोब्रह्मपुराणेगौतमीमाहात्म्येभानुतीर्थवर्णनेविष्टिभानुसंवादेदृश्यते विष्टिभानुरुवाच—

चतुर्थाद्वत्सराद्रूर्ध्वं यावन्न दशमात्ययः ।
तावद्विवाहःकन्यायाःपित्रा कार्यःप्रयत्नतः ॥"[2] इति ।

सत्यम् । अत्रपुराणवाक्यं शूद्रादिविषयं श्रौतंस्मार्तंब्राह्मणादिविषयमित्यविरोधः सप्तमवर्षंविषमत्वान्नारदादिभिः स्त्रीविवाहेनांगीकृतम् तस्माच्छास्त्रतत्त्ववेदिना आचार्येण सर्ववर्णानामविरुद्धमेवोक्तम् । स्त्रीणामष्टमवर्षतस्त्रिष्विति । कथितकालादूर्ध्वंकदाचिद्वरालाभनिमित्तादौ समवर्षेषुद्वादशचतुर्दशषोडशेषु विवाहोग्रंथांतरे उक्तः । कालनिर्णयदीपिकाविवरणेस्वयंवरार्थंकालद्वयमुक्तम् । जीवत्पितृकायाऋतौ वर्षत्रयानंतरंस्वयंवरकालः अदातृकाया अपिऋतौवर्षत्रयानन्तरंस्वयंवरकालः । अदातृकाया इत्येतत्सर्ववर्णसाधारणम् । कन्याप्रदातारः कालनिर्णयदीपिकायामुक्ताः—

पितापितामहोभ्रातामाताबन्धुर्यदानहि ।
ऋतौवर्षत्रयादूर्ध्वंकन्याकुर्यात्स्वयंवरम्" इति ।

बौधायनोप्याह—

वर्षाणित्रीण्यृतुमतीकांक्षेतपितृशासनम् ।
ततश्चतुर्थेवर्षेतुविंदेतसदृशंपतिम्" इति ॥

अथपुंसांविवाहकालमाह । नृणांचीर्णव्रतानां कृतविसर्गाणाम् अयुग्मेषुविषमेषु अब्देषुवर्षेषु विवाहःशुभःस्यात् । विशेषत उक्तवर्षेषुकर्तव्य इत्याह ।

१. संवर्तः स्मृति श्लोक ६४ ।
२. 'ब्रह्मपुराण'—अ० ९५ श्लोक ६ (गौतमी माहात्म्य)

अत्रराधमाघयुगयोः अत्रविषमवर्षेषु राधोवैशाखः माघः प्रसिद्धः अनयोर्युगे-युगले राधयुगंवैशाखज्येष्ठौ माघयुगं माघफाल्गुनावित्यर्थः मार्गे मार्गशीर्षे-विवाहःशुभःस्यात्। एते पंचमासाःबहुसम्मताः एषुज्येष्ठंज्येष्ठमासंपूर्वजयोः प्रथमजातयोः द्वयोस्त्यजेत्। अर्थादेकतरेज्येष्ठेसतिनत्यजेत्। दोषांतरमाह। हिमरुचिचन्द्रं ज्ञेज्योनखेटान्वितं बुधगुरुरहितान्यग्रहयुक्तं पापग्रहयुक्तंशूद्राणाम् अन्यतमयुक्तंत्यजेत् अनिष्टफलश्रवणात् —

मासाद्यंजनिसंभवम्" इति।

त्याज्यप्रकरणोक्तंयत्तस्यविशेषनिर्णयमाह। यन्मासादितिस्पष्टार्थम्। नारदः—

नजन्ममासे नक्षत्रे न जन्मदिवसेपिवा।
आद्यगर्भे सुतस्यापि दुहितुर्वा करग्रहः"[1] इति ॥१३॥

मार्त्तण्डप्रिया——

आठवें वर्ष से ३ वर्षों (८–९–१०) तक कन्या का और समावर्तन (बह्म चर्यसमाप्ति) के बाद विषम वर्षों में वर का विवाह शुभ होता है।

वैशाख–ज्येष्ठ–माघ–फाल्गुन–मार्गशीर्षक ये ५ मास विवाह में शुभ होते हैं।

वर-कन्या यदि ज्येष्ठ सन्तति हों हो उनके विवाह में ज्येष्ठ मास का त्याग करना चाहिए। एक कोई यदि ज्येष्ठ हो तो ज्येष्ठ मास त्याज्य नहीं है।

बुध–गुरु को छोड़कर अन्य ग्रह से युक्त यदि चन्द्रमा हो तो विवाह लग्न में उसका त्याग करना चाहिए। अर्थात चन्द्र यदि बुध–गुरु से युक्त हो तो शुभकारक होता है।

जन्ममास–जन्मतिथि और जन्म नक्षत्र इन सबका विवाह में त्याग करना चाहिए, परन्तु यह दोष प्रथम गर्भ से उत्पन्न (ज्येष्ठ) होनेवालों को ही लगता है। अन्य को यह दोष नहीं लगता है ॥१३॥

विवाह में ग्राह्य और त्याज्य नक्षत्र तथा वेध—

मूलांत्यार्कमघास्थिरेंद्वनिलयुङ्मैत्रं विवाहे शुभं
पापत्यक्तमनिंदुभुक्खलयुतं भोग्यं च विद्धं च भम् ॥
विश्वेन्द्वोर्यममित्रयोर्द्विकभयोः पैत्र्यर्क्षहर्योर्मिथो-
ऽन्त्यार्यम्णोः पुनरस्त्रपोर्वरुणभस्वात्योरुभाहस्तयोः ॥१४॥

---

१. नारद संहिता अ० २९ श्लो० ७

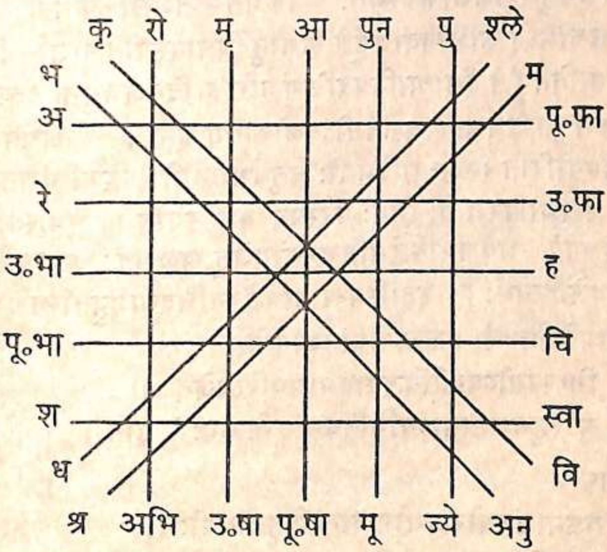
मार्त्तण्डवल्लभा—

अथ विवाहनक्षत्राणि सवेधान्याह। मूलांत्यार्केति ।। मूलंप्रसिद्धम् अंत्यं-रेवती अर्कौ हस्त: मघाप्रसिद्धा स्थिराणिरोहिण्युत्तरात्रयम् इंदुर्मृग: अनिलं-स्वाती एभि: सहितंमैत्रमनुराधा विवाहेशुभंशुभफलदम्। अथ एतेषूक्तेषु-निंद्यमाह। पापत्यक्तमसत् अनिदुभुक् चंद्राभुक्तंनशुभम् एतदुक्तंभवति। पापग्रहत्यक्तंनक्षत्रंचंद्रभुक्तिरहितंनशुभंस्यात्। खलयुक्तंपापग्रहयुक्तं भोग्यं-विद्धंनशुभं स्यात्। अथवेधमाहविश्वेंद्वो: उत्तरामृगयो: यममित्रयो: भरण्यनु-राधयो: द्विक भयो: कस्यभेकभेद्वे चतेकभेचद्विकभे रोहिण्यभिजितौ तयो: पैत्र्यर्क्षहर्यो: मघाश्रवणयो: मिथ: परस्परम् अंत्यार्यम्णो: रेवत्युत्तराफाल्गुन्यो: पुनरस्रपो: पुनर्वसुमूलयो: वरुणभस्वात्यो: शततारकास्वात्यो: उभाहस्तयो: उत्तराभाद्रपदाहस्तयोर्मिथ: परस्परंवेध: स्यादित्युत्तरश्लोकेनान्वय: ।।१४।।

मार्त्तण्डप्रिया—

विवाह में ग्राह्य नक्षत्र

मू. रे. ह. म. उफा. उषा. उभा. रो. मृ. स्वा. अनु. ये ११ वैवाहिक नक्षत्र हैं। इनमें विवाह करना शुभकर होता है।



त्याज्य - जो नक्षत्र पापग्रह ये युक्त हो परन्तु चन्द्र से भुक्त न हो, जो नक्षत्र पापग्रह से युक्त हो, जिस नक्षत्र पर कोई पापग्रह जानेवाला हो, जो नक्षत्र किसी पापग्रह या क्रूरग्रह से विद्ध हो वह नक्षत्र विवाह में त्याज्य होता है।

वैवाहिक नक्षत्रों में परस्पर पंचशलाका वेध इस प्रकार होता है —

मृग	अनु.	रो.	म.	उ. फा.	मू.	स्वा.	ह.
उ.षा.	भर.	अभि	श्र.	रे	.पुव.	श.	उ.भा

मृ.–उ.फा–हस्त इन तीन वैवाहिक नक्षत्रों का वेध परस्पर वैवाहिक नक्षत्र उ.षा–रे.–उ.भा. के साथ ही होता है। स्पष्टार्थ पीछे चक्र देखें ॥१४॥

कर्म विशेष में वेधनिर्णय—

वेधोऽयं करपीडने निगदितो नान्येषु तेषु स्मृतो
वेधः सप्तशलाकके शिवदिशः कार्शानवाद्यैर्युते ॥
वेधोऽन्त्यादिमयोर्द्विकत्रिमितयोरंघ्र्योर्मिथःसद्ग्रहै-
र्विद्धे भे चरणं त्यजेत्खलखगैः सर्वं त्विहांघ्रि क्वचित् ॥१५॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथकर्मविशेषेणवेधनिर्णयमाह। वेधोयमिति। अयंवेधः करपीडनेविवाहे-पूर्वंमुनिभिर्निगदितः। नान्येषु अन्येषुशुभकर्मसु अयंवेधोनोक्त इत्यर्थः। तेषु-विवाहान्यकर्मसुसप्तशलाककेस्मृतः किंभूतेसप्तशलाककेचक्रे शिवदिशः ईशान्याः सकाशात् कार्शानवाद्यैर्युते कृशानुर्देवतायस्येतिकार्शानवंकृत्तिका सा आद्यायेषांतानितैर्युते ईशान्यादिप्रदक्षिणंकृत्तिकादिनक्षत्रयुक्त इत्यर्थः। विवा-हादृतेसर्वकर्मसुसप्तशलाकाचक्रेवेधोऽवलोकनीय इति। अथपादवेधमाह। वेधोंत्यादिमयोरिति। अंत्यादिमयोः चतुर्थप्रथमयोः द्विकत्रिमितयोः द्वितीय-तृतीययोः अंघ्र्योश्चरणयोः मिथः परस्परं वेधः स्यात्। अथास्यनिर्णयमाह। सत्खगैः शुभग्रहैः भेनक्षत्रेविद्धेसतिचरणंत्यजेत् खलखगैः पापग्रहैः विद्धेसति-सर्वंनक्षत्रंत्यजेदित्यर्थः। इहास्मिन्पापविद्धेक्वचिदन्यमुहूर्तालाभेसति अंघ्रि-चरणंविद्धंत्यजेदित्यर्थः। उक्तंचमांडव्येन—

धिष्ण्यंसौम्यग्रहैर्विद्धंपादमात्रंपरित्यजेत् ॥
क्रूरैस्तुसकलंत्याज्यमितिवेधविनिश्चयः" इति।

वैद्यनाथः—

वेधमाद्यंतयोरंघ्र्योरन्योन्यद्वितृतीययोः ॥
क्रूरैरपित्यजेत्पादंकेचिदूचुर्महर्षयः" इति ॥१५॥

मार्त्तण्डप्रिया—

इस पंचशलाका वेध का विचार केवल विवाह में करना चाहिए। परन्तु अन्य कार्यों (उपनयनादि) में सप्तशलाका वेध का विचार करना चाहिए।

सप्तशलाका चक्र के निर्माण में सात खड़ी और सात पड़ी रेखाओं को खींचकर ईशान कोण से कृत्तिकादि नक्षत्रों को दक्षिण क्रम से स्थापित करने पर सप्तशलाका चक्र बनता है इसमें भी एक रेखा के दोनों छोर पर स्थित दोनों नक्षत्रों में परस्पर वेध होता है।



नक्षत्रों का चरण वेध—प्रथम चरण का चतुर्थ चरण से और द्वितीय चरण का तृतीय चरण के साथ वेध होता है। यदि शुभग्रह से नक्षत्र विद्ध हो तो केवल १ चरण का अन्यथा पापग्रह से विद्ध हो तो पूरे नक्षत्र का परित्याग करना चाहिए। कभी कभी अन्य मुहूर्त्त के नहीं मिलने पर पापग्रह से विद्धचरण का ही त्याग करना चाहिए।

वेध भंग और लत्ता दोष—

लग्नेशे भवगेथवा शशिनि सदृष्टे शुभे वांगगे
होरायां च शुभस्य वा व्यध भयं नास्तीति पूर्वे जगुः ॥
भौमात्र्याकृतिषड्जिनाष्टनखभं हंत्यग्रतो लत्तया
खेटोर्कोर्कमितं शशी मुनिमितं पूर्णो न सम्मालवे ॥१६॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथवेधभंगमाह। लग्नेश इति। लग्नस्वामिनिभवगे एकादशगेसतिवेधस्यदोषोनास्तीति एकोभंगः अथवाशशिनिसदृष्टेसतिद्वितीयोभंगः वा इत्यथवा शुभेशुभग्रहेचंद्रवर्जिते अंगे सतितृतीयोभंगः शुभस्यहोरायांचेतिचतुर्थोभंगः एषामन्यतमेसतिव्यधोनास्तीतिपूर्वेमुनयोजगुः आहुः। तथाच वसिष्ठः—

लग्नेशुभेसौम्ययुतेक्षितेवा लग्नादिनाथोभवगस्तथावा ॥
कालाख्यहोराचतथाशुभस्य भवेद्विदोषस्य तथाविमंगः ॥ इति।

उद्वाहतत्त्वेपि—

सद्युगदृक्तनुगेशुभेव्यधभयंनोवायगेलग्नपेह्रोरायां
च शुभस्यवाशशिनिसदृष्टेऽपिचार्यैरुडोः ॥ इति ।

अथलत्तामाह । भौमादिति । भौमात्सकाशात्खेटोग्रहोराह्वन्तः क्रमात्र्याकृत्यादिभंनक्षत्रमग्रतोलत्तयाहंति । भौमस्तृतीयं बुधः आकृतिर्द्वाविंशतिमितं गुरुः षष्ठं शुक्रः जिनमितंचतुर्विशं शनिरष्टमं राहुर्नखमितंविंशंलत्तयाहंति । अर्कः सूर्यः अर्कमितं द्वादशं शशिपूर्णचन्द्रमाः मुनिमितं सप्तमम् अग्रतो लत्तयाहन्ति । ततहतंनक्षत्रंमालवे मालवदेशे नसत्नशुभंस्यात् । उक्तं च—

लत्तामालवकेदेशे पातंकौशलकेतथा ।
एकार्गलंतुकाश्मीरे वेधंसर्वत्रवर्जयेत् ॥१६॥

मार्त्तण्डप्रिया—

(१) विवाह लग्न का स्वामी एकादश भाव में हो,

(२) चन्द्रमा शुभग्रह से दृष्ट हो,

(३) चन्द्रमा के अतिरिक्त कोई भी शुभग्रह लग्न में रहे,

(४) लग्न में किसी भी शुभग्रह की होरा रहे,

इन चारों परिस्थितियों में पंचशलाका वेध का दोष नहीं लगता है ऐसा पूर्वाचार्यों का मत है ।

लत्ता दोष—

मंगल अपने आगे के ३ रे नक्षत्र को, बुध २२ वें को, गुरु ६ ठे को, शुक्र २४वें को, शनि ८वें को, राहु २०वें को (पीछे के, क्योंकि राहु की वक्रगति है) सूर्य १२वें को और पूर्णचन्द्रमा ७वें को लत्तित करते हैं । यह लत्ता दोष मालवा प्रान्त में शुभद नहीं होता है ॥१६॥

विवाह में त्याज्य—

षण्मासं ग्रहणोडु चंद्रतनुगं विद्धर्क्षजन्मर्क्षके
त्याज्ये जन्मभलग्नके तनुगते सूर्यान्मिनूडु त्यजेत् ॥
दंतद्व्यंकदृशोर्कतोयुगगजास्तर्काः खबाणेंदवो
नाडीःसंक्रकणे त्यजेद्द्विविषदां प्रायोरवेर्दूषिताः ॥१७॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथदोषांतराण्याह । षण्मासमिति । षण्मासंषण्मासपर्यन्तं ग्रहणोडुग्रहणनक्षत्रं चन्द्रतनुगं चन्द्रगतंलग्नगतं च त्याज्यम् चन्द्रगतमिति यस्मिन्दिने चन्द्रमसायुक्तंभवति तच्चन्द्रगतंदिननक्षत्रमितियावत् । तनुगंयथा अश्विन्यांग्रहणे-

जातेतत्र्यंशत्रयोदशभागांतमेषलग्ने सति अश्विनीलग्नस्थास्यात् । एवंभरण्याद्यपि ग्रहणोडु इत्यनेनैव अन्यान्यपि उडूनिदुष्टानि त्याज्यानि । विद्धर्क्षंविद्धनक्षत्रंजन्मनक्षत्रमेते उभेतनुगेत्याज्ये भंचलग्नंचभलग्नंजन्मनिभलग्नेजन्मभलग्ने त एवजन्मभलग्नके जन्मराशिजन्मलग्नेतनुगेत्याज्ये । लग्नांतर्गतनक्षत्रज्ञानायस्वकल्पितसूत्रं—

"नवघ्नंतनुवेदाप्तंसैकंस्यात्तारकंतनौ"

अर्कनक्षत्रात्सूर्यनक्षत्रात् मनूडुचतुर्दशनक्षत्रंत्यजेत् । अथसूर्यादीनांराशिसंक्रमणेत्याज्यघटिका आह । त्याज्या इति । रविचन्द्रकुजसौम्यगुरुशुक्रमन्दानां संक्रमणे रदद्वयंकदृङ्नाडयस्त्याज्याः तद्यथा रविसंक्रमणे रदनाड्योद्वात्रिंशद्घटिकावर्ज्याः संक्रमणकालात्पूर्वतः षोडशघटिकाः परतः षोडशघटिकाः एवंद्वात्रिंशद्घटिकास्त्याज्या इत्यर्थः । तथा च चन्द्रसंक्रमणेद्वे नाड्यौ भौमसंक्रमणेनवघटिकाः बुधसंक्रमणेद्वे घटिकेत्याज्ये गुरोः संक्रमणेअब्ध्यष्टौ ८४ चतुरशीतिघटिकाः शुक्रस्यषट्घटिकाः शनेः संक्रमणे खतिथयः १५० पंचाशदधिकशतंघटिकाः त्याज्या इत्यर्थः । अत्रबाहुल्येनसर्वापेक्षयारवेः संक्रमणनाड्योबहुभिराचार्यैर्दूषिता इत्यर्थः ॥१७॥

मार्त्तण्डप्रिया—

जिस नक्षत्र में ग्रहण लगे उस नक्षत्र का छै मास तक चन्द्र के साथ और लग्न में त्याग करना चाहिए । जैसे मघा नक्षत्र में यदि ग्रहण लगा हो तो छै मास तक दैनिक नक्षत्रों में मघा का त्याग होगा और लग्न में भी मघा के अंश त्याज्य होंगे । मात्र नक्षत्रांश का त्याग होता है । जैसे सिंह में मघा का अंश १३°।२०′ है तो सिंह लग्न का प्रारम्भिक १३°।२०′ तक अशुद्ध रहेगा शेष आगे शुद्ध होगा ।

विवाह में त्याज्य—

विद्ध नक्षत्र और जन्म नक्षत्र त्याज्य होते हैं । जन्मराशि और जन्मलग्न का भी वैवाहिक लग्न में त्याज्य करना चाहिए ।

सूर्य से १४ वाँ नक्षत्र भी त्याग होता है ।

ग्रहों की संक्रान्तियों में त्याज्य घटी—

संक्रान्ति	त्याज्यघटी	विशेष
सूर्य की	३२ घटी	१६ पूर्व में १६ पश्चात में
चन्द्र ,,	२ ,,	१ ,, १ ,,
मंगल ,,	९ ,,	४।३०,, ४।३० ,,

संक्रान्ति	त्याज्यघटी	विशेष
बुध ,,	२ ,,	१ पूर्व में १ पश्चात में
गुरु ,,	८४ ,,	४२ ,, ४२ ,,
शुक्र ,,	६ ,,	३ ,, ३ ,,
शनि ,,	१५० ,,	७५ ,, ७५ ;,

बहुत से आचार्यो ने सूर्य की ही संक्रान्ति घटी को अशुभ माना है ।।१७।।

सन्धिदोष-ग्रहण में त्याज्य-भद्रा विचार—

षट्षष्टिऋतुसंधितस्थितिभयुक्संधौ द्विनाड्यौ ग्रहा-
त्तत्पादैर्दिवसांस्त्रिवेदषडिभान्प्रागर्द्धितान्संत्यजेत् ।
उत्पातेद्यहमुद्गमं च शिखिनो राकाष्टमीप्राग्दले
विट्प्रांत्ये कृतरुद्रयोरबहुले कृष्णे निरेकेष्विह ।।१८।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथसन्धिदोषमाह । षडिति । ऋतुसंधितः वसन्तादिऋतुप्रवृत्तेः षट्षष्टिः षड्भिरधिकाषष्टिः ६६ घटीनांषट्षष्टिस्त्याज्येत्यर्थः । ऋतुप्रवृत्तिलक्षणं रत्नमालायाम्—

मृगादिराशिद्वयभानुभोगात्षडर्तवः स्युः शिशिरोवसंत ।
ग्रीष्मश्चवर्षाचशरच्चतद्वद्धेमंतनामाकथितोत्रषष्ठः" इति ।

तिथिभयुक्संधौतिथिनक्षत्रयोगानांसंधौद्विनाड्यौ पृथक्द्वे द्वे घटिके-त्याज्ये । अथपूर्वमुक्तं ग्रहजनिप्रांतोद्भवंसूतकमिति । तत्रग्रहणसूतकलक्षण-माह । ग्रहादिति । ग्रहात्ग्रहणतः सकाशात् उपरितत्पादैस्तच्चरणैः ग्रहपादैः त्रिवेदषडिभान् ३।४।६।८ दिवसान्त्यजेत् । एतदुक्तं भवति—

पादैकमात्रग्रहणेत्रीन्दिवसान्त्यजेत्
अर्धग्रहणेचतुरोदिवसान्त्यजेत् ।
त्रिपादग्रहणेषट्दिवसान्त्यजेत्-
सर्वग्रहणअष्टदिवसान्त्यजेत् ।।

प्राग्ग्रहणात् प्राक्प्रथमः अर्द्धितान्त्रिवेदादीन् दिवसान्त्यजेत् एतदुक्तं-भवति । पादग्रहणे त्रयाणामर्द्धं तद्यथा पादग्रहणेग्रहणात्पूर्वंसार्द्धैकदिवसं ९० नवतिघटिकास्त्याज्याः अर्द्ध ग्रहणेचतुर्णामर्द्धम् द्वौदिवसौ पादत्रयग्रहणे षण्णामर्द्धं त्रीन्दिवसान्सर्वग्रहणे अष्टानामर्द्धं चतुरोदिवसान्ग्रहणात्पूर्वं-त्यजेत्—

उपरागो ग्रहो राहुग्रस्ते त्विदौ च पूष्णि च[1] ।

इत्यमरः । शार्ङ्गीयविवाहपटले

सर्वग्रासेदिनान्यष्टौशुभकार्येषुवर्जयेत्
त्रिभागोनेषट्दिवसानर्द्धग्रासेचतुर्दिनम् ।
चतुर्थांशेत्रिरात्रंतुग्रहणेचन्द्रसूर्ययोः" इति ।

अत्राप्यंतरालेतुपातोज्ञेयः । तथाचार्ष्टिषेणः—

ग्रहणात्रिदिनंपूर्वंपरतोदिनसप्तकम्"

इतिसर्वग्रहणविषयम् । ज्योतिःप्रकाशेपि—

खग्रासेसर्वपादोनं खंडाध्यल्पेतुवासराः ।
गजाश्वेष्वब्धिरामाब्जेनेष्टाः स्युः प्राग्दलेगृहाः" इति ।

अथोत्पातेवर्ज्यकालमाह । उत्पातेद्र्यहं मिति । उत्पाते भूकंपनिर्घातमहोल्कानिपाताादिके अद्र्यहमाद्रि मितानामह्नां समाहारः अद्रयहं सप्ताहमित्यर्थः । उत्पातेजातेसति शुभकर्मणित्यजेदित्यर्थः । दोषांतरमाह । उद्गमंचशिखिनः शिखिनः केतोः उद्गममुदयंत्यजेत् यावत्केतूदयस्तावन्मंगलंनकुर्यादित्यर्थः । तथाचार्ष्टिषेणः—

परंसप्ताहमुत्पातेत्यजेत्केतूदयेशुभम्" इति ।

भद्राकालमाह । राकाष्टमीप्राग्दलेविट्स्यात् । राकापौर्णिमा अष्टमीप्रसिद्धा अनयोस्तिथ्योः प्राग्दलेपूर्वार्द्धे विट्विष्टिः स्यात् । कृतरुद्रयोः प्रांत्येकृतंचतुर्थीरुद्र एकादशीअनयोः प्रांत्ये विट्स्यात् । एतद्भद्राचतुष्टयमबहुलेशुक्लपक्षेस्यात् कृष्णेनिरेकेष्विह उक्तेषुतिथिषुनिरेकेषु एकरहितेषु कृष्णेकृष्णपक्षेविट्स्यात् । भद्रापवादः शार्ङ्गीयविवाहपटलेदूषितोतःकारणान्नोक्तः ॥१८॥

मार्त्तण्डप्रिया—

ऋतुओं की सन्धिकाल में ६६ घटी त्याज्य है ।

तिथि-नक्षत्र-योग की सन्धियों में भी २ घटी पूर्व और २ घटी पश्चात में त्याज्य होता है ।

ग्रहण में त्याज्य काल

ग्रहण	त्याज्य काल			
चतुर्थांश में	$1\frac{1}{2}$ दिन पूर्व में		$1\frac{2}{1}$ दिन पश्चात में	
अर्द्धांश में	२	,,	२	,,
त्रिपाद में	३	,,	३	,,
सम्पूर्ण में	४	,,	४	,,

1. अमरकोषः—प्र० का० कालवर्ग श्लो० ९ ।

भूकम्प-उल्कापात-वज्रपात आदि उत्पातों के उपरान्त ७ दिन शुभकार्यों में त्याज्य होते हैं।

केतु का उदय भी शुभ कार्यों में त्याज्य है।

भद्रा विचार—

शुक्लपक्ष में
पूर्णिमा और अष्टमी के पूर्वार्द्ध में,
चतुर्थी और एकादशी के उत्तरार्द्ध में,
कृष्णपक्ष में
चतुर्दशी और सप्तमी के पूर्वार्द्ध में,
तृतीया और दशमी के उत्तरार्द्ध में

यह भद्रा भी अशुभ होने के कारण सभी शुभकार्यों में त्याज्य है ।।१८।।

गण्डान्त दोष—

सार्पेन्द्रांतिमभात्ततोऽब्धिघटिकं पूर्णान्ततोऽब्ध्यर्द्धकं
कीटांत्यालिविरामतः कुघटिकं गंडांतमूर्ध्वाधरम् ।।
सावैशूव्यहगाख्ययोगविरतौ भं तत्र चंडायुधं
दुर्योगे दिनभाच्च साभिजिदयुग्भेकंस्तदैकार्गलः ।।१९।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथगंडांतलक्षणमाह । सार्पेद्रांतिमभेति । सार्पमाश्लेषा इन्द्रोज्ये॰ अंतिमभंरेवती एषामन्तः तस्मात्कालात्प्राक्परंपूर्वापरतः अब्धिघटिकंगंडां कंस्यात् । अब्धयश्चतस्रोघटिका यस्मिन्नित्यब्धिघटिकं चतुर्घटिकमित्यर्थः एतदुक्तं भवति । उक्तनक्षत्रात्पूर्वतो घटिकाद्वयं परतोघटिकाद्वयम् ए॰ घटिकाचतुष्टयंनक्षत्रगंडांतम् । अथतिथिगंडांतमाह । पूर्णान्ततोऽब्ध्यर्द्धक॰ पूर्णापंचमीदशमीपूर्णिमा तासामंततः अब्ध्यर्द्धकं द्विघटिकंगंडांतं पूर्वापर॰ स्यात् । अथलग्नगंडांतमाह । कीटांत्यालिविरामतः कुघटिकं कीटःकर्कट॰ अंत्योमीनः अलिर्वृश्चिकः एषांविरामोवसानंतस्मात् कुघटिकं प्रागर्द्धघटिका परतोर्द्धघटिका एवमेकघटिकंलग्नगंडांतंस्यात् । अथचंडायुधमाह । सा॰ इति । सासाध्ययोगः वैवैधृतिः शूशूल व्यव्यतीपातः हहर्षणः गगंडः एत॰ ख्ययोगानां विरतिरवसांनंतत्रयद्भंनक्षत्रंतस्माच्चडायुधंस्यात् । चंडप्रच॰ महत् एवंविधमायुधंस्यात् । आयुधंघातकंस्यात् । तस्मात्तन्नक्षत्रवर्ज्यमित्यर्थ अथैकार्गलमाह । दुर्योगेदिनभादिति । विष्कंभातिगंडशूल गंडव्याघातव॰

व्यतीपात परिघवैंधृतयो नवदुर्योगाः एषामन्यतमे सतिदिनभाद्दिननक्षत्रात् साभिजिदयुग्मे अभिजितासह अयुग्मेविषमनक्षत्रेयदार्कः सूर्योभवतितदा एकार्गलःस्यात् । एका अर्गलाशुभावरोधिनीयस्मिन्नित्येकार्गलः शुभफलावरोधक इत्यर्थः ।।१९।।

मार्त्तण्डप्रिया--

नक्षत्र गण्डान्त--श्लेषा+मघा, ज्येष्ठा+मूल, रेवती+अश्विनी इन नक्षत्रों के सन्धिकाल से पूर्व और पश्चात की दो-दो घटी नक्षत्र गण्डान्त होता है। अर्थात श्लेषा-ज्येष्ठा-रेवती के अन्त की दो घटी और मघा-मूल-अश्विनी के आदि की दो घटी मिलाकर ४ घटी नक्षत्र गण्डान्त होता है।

तिथिगण्डान्त--पूर्णा तिथियों (५-१०-१५) और नन्दातिथियों (१-६-११) के सन्धिकाल में दो घटी तिथि गण्डान्त होता है। अर्थात ५ तिथि के अन्त की एक घटी और ६ तिथि के प्रारम्भ की एक घटी मिलकर दो घटी तिथि गण्डात हुआ, इसी प्रकार से १०-११, १५-१ तिथियों में भी होगा।

लग्नगण्डान्त--कर्क-सिंह वृश्चिक-धनु, मीन-मेष, इनकी सन्धियों में एक घटी का लग्न गण्डान्त होता है। अर्थात कर्क लग्न के अन्त की आधी घटी और सिंह लग्न के आदि की आधी घटी मिलकर १ घटी लग्न गण्डान्त होता है इसी तरह वृश्चिक-धनु, मीन-मेष लग्नों की सन्धियों में भी होता है।

चण्डायुध--साध्य-वैधृति-शूल-व्यतिपात्-हर्षण-गण्ड इन छै योगों के अन्त में जो नक्षत्र पड़े वह चण्डायुध होता है। वह शुभ कार्यों में त्याज्य होता है।

एकार्गल--विष्कुम्भ - अतिगण्ड-शूल-गण्ड-व्याघात-वज्र - व्यतिपात-परिघ-वैधृति इन नौ योगों के दिन जो चान्द्र नक्षत्र हो उससे सूर्य का नक्षत्र विषम हो तो एकार्गल होता है। इसमें नक्षत्रों की गणना साभिजित होती है। यह एकार्गल भी शुभकार्यों में अशुभ माना गया है ।।१९।।

यामार्ध-कुलिक-काल-कण्टक-यमघण्टदोष--

सूर्याद्यामदलं द्विवेव निगमद्रय श्वीषुनागत्रिषट्
संख्यार्क कुलिकं दिवेन्द्ररविदिङ्नागतु वेदद्विकम् ।।
व्येकं तन्निशि षोडशांशमपरे तिथ्यंशमुज्झंतितैः
कालं कंटकमौनिघंटयमरेज्यज्ञास्फुक्षिद्भूचः क्रमात् ।।२०।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथवारदोषमाह । सूर्यादिति । सूर्यात्सकाशाद्वारेषुक्रमेणनिगमादिकंयाम-दलंयामादर्धमुज्झंतित्यजंति मुनय इतिशेषः । निगममितंरवौ सप्तमितंसोमे अश्विनौद्वौतन्मितं भौमे इषुमितांबुधे नागाष्टौतन्मितांगुरौ त्रिमितंशुक्रे षण्मि-तांशनौ एतद्यामदलंदिवैव उज्झंतिनरात्रौ । अथकुलिकादीनाह । इनादौसूर्या-दौवारेदिवा इंद्रादिकंषोडशांशंदिनमानस्यषोडशांशोग्राह्य; तेनगण्यास्तेषोड-शांशाग्राह्या इत्यर्थः । तंकुलिकमुज्झंति अपरेतिथ्यंशंपंचदशांशंकुलिकमुज्झंति तन्निशितद्रात्रौचव्येकमेकरहितचन्द्रादिकंषोडशांशंपंचदशांशमुज्झंति । तद्यथा—

रवौदिवा इन्द्रमितांचतुर्दशं तद्रात्रौत्रयोदशं
सोमेदिवाद्वादशं तद्रात्रौ एकादशम्" इत्यादि ।

अथतैरेव इन्द्रादिभिर्मुहूर्तैः अमरेज्यज्ञास्फुजिद्भ्यःसकाशात् क्रमात्कालं कंटकम् ऐनिघंटम् इनस्यापत्यंपुमानं निःयमःतस्यघंटोयमघंट इत्यर्थः । तमु-ज्झंति । एतदुक्तंभवति अमरेज्योगुरुः तस्मात्सकाशात्तैरेव इन्द्रादिभिर्मुहूर्तैः कालमुज्झंति ज्ञाद्बुधात्तैरेवेंद्रादिभिःकंटकम् आस्फुजिच्छुक्रः तस्मात्सकाशात्-तैरेवेंद्रादिभिर्मुहूर्तैरैनिघंटंयमघंटमुज्झंति ।।२०।।

मार्त्तण्डप्रिया—

यामार्द्ध—दिनमान के अष्टमांश को यामार्द्ध कहा जाता है। दिन में आठ यामार्द्ध होते हैं।

रविवार को चौथा, सोमवार को सातवाँ, मंगलवार को दूसरा, बुधवार को पाँचवा, गुरुवार को आठवां, शुक्रवार को तीसरा और शनिवार को छठा यामार्द्ध निन्दित माना गया है। यह यामार्द्ध दिन में निन्दित होता है रात्रि में नहीं।

दिनमान के १६वें भाग को (किसी आचार्य में मत से १५वें भाग को) मुहूर्त्त कहा जाता है।[1] इसी प्रकार रात्रि में भी रात्रिमान के १६वें भाग को मुहूर्त्त कहा जाता है। अर्थात् दिन में १६ और रात्रि में भी १६ मुहूर्त्त होते हैं। इन्हें कुलिक भी कहा जाता है।

कुलिक—दिन में वर्जित किये जाने वाले कुलिक (मुहूर्त्त) ये हैं—

रविवार को १४वाँ, सोमवार को १२वाँ, मंगलवार को १०वाँ, बुधवार को ८वाँ, गुरुवार को ६ठा, शुक्रवार को ४था और शनिवार को २रा कुलिक वर्जित है।

रात्रि में वर्जित किये जाने वाले कुलिक (मुहूर्त्त) ये हैं—

१. मुहूर्तो घटिकाद्वयम् ।

रविवार को १३वाँ, सोमवार को ११वाँ, मंगलवार को ९वाँ, बुधवार को ७वाँ गुरुवार को ५वाँ, शुक्रवार को ३ रा और शनिवार को १ ला मुहूर्त्त ।

काल (कालवेला)— गुरुवार को १४वाँ, शुक्रवार को १२वाँ, शनिवार को १० वाँ, रविवार को ८वाँ, सोमवार को छठा, मंगलवार को ४था और बुधवार को २ रा मूहूर्त्त काल संज्ञक होता है।

कण्टक— बुधवार को १४वाँ, गुरुवार को १२वाँ, शुक्रवार को १०वाँ, शनिवार को ८वाँ, रविवार को ६ठा, सोमवार को ४था और मंगलवार को २रा मुहूर्त्त कण्टक संज्ञक होता है।

यमघण्ट —शुक्रवारको १४वाँ, शनिवारको १२वाँ, रविवार को १०वाँ, सोमवार को ८वाँ, मंगलवार को ६ ठा, बुधवार को ४था और गुरुवार को २रा मुहूर्त्त यम-घण्ट संज्ञक होता है।

ये सभी कुलिक-कालवेला–कण्टक और यमघण्ट शुभ कार्यों में त्याज्य हैं।

जिस दिन कुलिकादि मुहूर्त्तों का ज्ञान करना हो उस दिन से शनि–बुध–गुरु–मंगल वारों तक गिनकर जो संख्या हो उसे दूना करने पर क्रमशः कुलिक-काल-वेला–यमघण्ट और कण्टक संज्ञक मुहूर्त्त होता है। जैसे—

अभीष्टवार से शनिवार तक की संख्या × २ = कुलिक
,, बुधवार ,, ,, × २ = कालवेला
,, गुरुवार ,, ,, × २ = यमघण्ट
,, मंगलवार ,, ,, × २ = कण्टक

अब यदि बुधवार को कुलिकादि का ज्ञान करना है तो—

बुधवार से शनिवार तक की संख्या ४ × २ = ८ कुलिक
,, बुधवार ,, १ × २ = २ कालवेला
,, गुरुवार ,, २ × २ = ४ यमघण्ट
,, मंगलवार ,, ७ × २ = १४ कण्टक

निन्द्य यामार्द्ध चक्र

वार	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
निन्द्य यामार्द्ध खण्ड	४	७	२	५	८	३	६

कुलिकादि चक्र

वार	सू.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
मुहूर्त्त संख्या	मु सं.	मु.सं.	मु.सं.	मु सं.	मु.सं.	मु.सं.	मु.सं.
कुलिक संज्ञा (दिनमें)	१४	१२	१०	८	६	४	२
कुलिक संज्ञा (रात्रि में)	१३	११	९	७	५	३	१
काल संज्ञा (कालवेला)	८	६	४	२	१४	१२	१०
कण्टक संज्ञा	६	४	२	१४	१२	१०	८
यमघण्ट संज्ञा	१०	८	६	४	२	१४	१२

दुमुहूर्त-क्रान्तिसाम्य-मृत्युयोग—

शुक्रेन्द्वीज्ययमेषु गोंकरविभूतुल्या मुहूर्ता दिवा
दुष्टाःस्युःकुजनिश्यगो य इतरेसंत्यर्द्ध यामादिषु ॥
प्रेक्ष्यःसंप्रति वृद्धितुर्यचरणे ब्रह्मद्वितीयेऽपमः
सूर्याद्या अनुविश्वपाशियमलेंद्वह्यार्कभैर्मृत्युदाः ॥२१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथदुर्मुहूर्तानाह । शुक्रेंद्वीज्येति । शुक्रः प्रसिद्धः इंदुश्चंद्रः ईज्योगुरुः यमःशनिः एषुक्रमेणगोंकरविभूतुल्यामुहूर्तादिवादुष्टाःस्युः दुर्मुहूर्ता इत्यर्थः । कुजनिशि अगः सप्तमोमुहूर्तो दुर्मुहूर्तः । ग्रंथांतरे—

"अर्यम्णोर्केतुहिनकिरणेराक्षसब्राह्म्यसंज्ञौ"

इत्यादिबहवोदुर्मुहूर्ता उक्ताः । अत्रस्वल्पा उक्तास्तेषां परिहारमाह । य इतरेदुर्मुहूर्ताग्रंथांतरेपठितास्तेसर्वे अर्द्धयामादिषुसंति अतोत्रमयानोक्ताः यत अर्द्धयामादीनांत्यागेतेपित्यक्ताःस्युः । किंग्रंथविस्तरेणेतिभावः । एतत्तुसुज्ञाज्ञास्यंति यथारवौचतुर्दशोमुहूर्तोदुर्मुहूर्तः कुलिकोपिचतुर्दशोमुहूर्तः तयोरेकत्रसद्भाव इत्यन्येपिविचारगम्याः । नन्वेवंचेत्तर्हिपूर्वैर्व्यर्थंपठितमेवं तैस्त्वनधिकाधिकदोषविवक्षयोक्तमितिनदोषः । अथपातसंभवकालमाह । प्रेक्ष्य इति । संप्रतिसांप्रतं वृद्धितुर्यचरणे वृद्धियोगस्य चतुर्थचरणे तथाब्रह्मद्वितीये ब्रह्म-

योगस्यद्वितीयचरणे अपमःक्रांतिःपातोविलोक्यः ब्रह्मसिद्धांताद्युक्तप्रकारेण-विलोक्य इत्यर्थः। अथमृत्युं सर्वत्रवर्जयेदित्युक्तत्वान्मृत्युयोगमाह। सूर्याद्या-इति। सूर्याद्या अर्कादयः क्रमेणान्वादिभिर्नक्षत्रैः सहमृत्युदाःस्युः। अनु अनु-राधा विश्वे उत्तराषाढा पाशीशततारका यमलौ अश्विनी इन्दुर्मृगः अहिरा-श्लेषा अर्कभंहस्तः। एतदुक्तंभवति। अर्कः अनुराधयासहयुक्तोमृत्युदः सोम उत्तराषाढया भौमःशततारकया बुधः अश्विन्या गुरुर्मृगेण शुक्रः आश्लेषया शनिर्हस्तेनसहितोमृत्युदःस्यादित्यर्थः। मृत्युयोगापवादमाह—

विरुद्धयोगास्तिथिवारजाता नक्षत्रयोगप्रभवाश्चयत्र।
हूणेषुवंगेषुखसेषुवर्ज्याः सर्वेषुदेशेषुनतेनिषिद्धा।। इतिरत्नमालायाम् ।।२१।।

मार्त्तण्डप्रिया—

अशुभ मुहूर्त—

दिन में १५ और रात्रि में भी १५ मुहूर्त होते हैं। शुक्रवार और सोमवार को ९वाँ, गुरुवार को १२वाँ तथा शनिवार को १ला मुहूर्त दिन में अशुभ होता है। मंगलवार को रात्रि में ७वाँ मुहूर्त अशुभ होता है।

पातसम्भव—वृद्धियोग के ४ चरण में और ब्रह्मयोग के २ चरण में सूर्य और चन्द्रमा की क्रान्ति यदि समान रहे तो क्रान्तिपात दोष होता है जो अशुभ कारक माना जाता है।

मृत्युयोग— रविवार को अनुराधा, सोमवार को उत्तराषाढ़ा, मंगलवार को शतभिषा, बुधवार को अश्विनी, गुरुवार को मृगशिरा, शुक्रवार को श्लेषा और शनिवार को हस्त नक्षत्र रहे तो मृत्युयोग होता है जो सर्वत्र और सदा त्याज्य है ।।२१।।

नक्षत्रों की विषघटी—

पंचाशज्जिन खाग्नयश्च खकृता आखंडला मूर्च्छना
स्त्रिंश द्विश रदाः खराम नख धृत्येकाश्विनौ विंशतिः।।
शक्रेन्द्रौ दश वासवा रसशराः सिद्धा नखाशा दिशो
धृत्यष्टौ जिनखाग्नयोश्वितइमाभ्योऽग्रेऽब्धिनाड्यो विषम् ।।२२।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथविषघटिका आह। पंचाशदिति। अश्वितःसकाशात्नक्षत्रेषु इमाभ्यः पंचाशज्जिनेत्यादिभ्योघटिकाभ्यो अग्रेपरतोऽब्धिनाड्यश्चतुर्नाड्योविषं स्यात्। एतदुक्तंभवति। अश्विन्याः पंचाशत्घटिकाभ्योनंतरंचतुर्नाड्योविषम् एवमन्यत्। अत्रांकन्यास एव व्याख्यातम् ।।२२।।

मार्त्तण्डप्रिया--

अश्विनी से रेवती नक्षत्र तक २७ नक्षत्रों की कुछ घटी व्यतीत होने के पश्चात् ४ घटी विषघटी होती है जो शुभकार्यों में त्याज्य होती है। किस नक्षत्र में कितनी घटी के पश्चात् विषघटी होती है वह चक्र से स्पष्ट किया गया है—

नक्षत्र	अ.	भ.	कृ.	रो.	मृ.	आ	पुन.	पु.	श्ले.	म.	पू	उ.	ह	चि.
इतनी घटी के बाद	५०	२४	३०	४०	१४	२१	३०	२०	३२	३०	२०	१८	२१	२०

नक्षत्र	स्वा.	वि	अ.	ज्ये	मू.	पू	उ.	श्र.	ध.	श	पू.	उ.	रे.
इतनी घटी के वाद	१४	१४	१०	१४	५६	२४	२०	१०	१०	१८	१६	२४	३०

विषघटी का मध्यम मान ४ घटी माना गया है। नक्षत्रों के भोग्यमान के अनुसार इसका मान भी घट बढ़ सकता है। नक्षत्रों की जो ध्रुवा ऊपर कही गई है वह भी घट बढ़ सकती है ।।२२।।

विषघटी का साधन और उसका परिहार—

नक्षत्रस्य गतैष्ययोगगुणितः स्वस्वध्रुवः षष्टिहृत-
स्पष्टःस्यादत ऊर्ध्वमब्धिघटिकाःस्पष्टाःस्युरेवं कृता ।।
चंद्रः सौम्यभगोथवा शुभसुहृद्दृष्टोथ वा स्वांशगः
कोणास्ताश्र सुखेषु वाविषभयं हंतीह सांगेऽगपः ।।२३।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथैषांध्रुवकानांस्पष्टीकरणमाह । नक्षत्रस्येति । नक्षत्रस्यगतैष्ययोगेनगुणितःस्वस्वध्रुवः षष्टिहृत्स्पष्टःस्यात् । अत ऊर्ध्वंस्पष्टध्रुवानंतरम् अब्धिघटिकाश्चतुर्नाडचोविषंस्यात् । एतदुक्तप्रकारेणकृताःसत्यःस्पष्टाःस्युः । एतदुक्तंभवति । ध्रुवकचतुर्नाडचोपिनक्षत्रगतैष्ययोगगुणिताःकार्याः षष्टिहृताः कार्याःताःस्पष्टाःस्युः । स्पष्टानंतरंचतुर्नाडचोविषाख्याज्ञेयाः । अथविषघटीनामपवादमाह । चंद्रइति । चंद्रःसौम्यभगः शुभग्रहराशिगःसन्विषभयं हंति अथवा शुभसुहृद्दृष्टःशुभश्चासौसुहृच्चतेनदृष्टःसन्विषभयंहंति अथवा स्वांशगः

स्वनवांशेवर्तमानःसन्विषभयंहंति वा इत्यथवाकोणास्ताभ्रसुखगोपिचंद्रोविषभयंहंति। कोणे पंचमनवमे अस्तभंसप्तमम् अभ्रंदशमं सुखंचतुर्थम् एतत्स्थानगोपिचन्द्रोविषभयं हंतीत्यर्थः। अत्रास्मिन्कोणादिस्थाने सांगेलग्नेवर्तमानोंगपोलग्नपोविषभयं हंतीत्यर्थः। एवंपंचभंगाःसन्ति। ननुसप्तमः खेटोविवाहेनिंदितः कथमत्रचंद्रोगृहीतः। सत्यम्। इदंवाक्यंसर्वकर्मसाधारणं तस्मान्निदितंस्थानंवर्जयित्वान्यत्रग्राह्यः। तथाच बृहस्पतिः—

चन्द्रोविषघटीदोषं हंतिकेंद्रत्रिकोणगः।
लग्नंविनाशुभैर्दृष्टः केंद्रेवालग्नपेतथा॥

फलप्रदीपे—

विषनाड्युत्थितंदोषंहंतिसौम्यर्क्षगःशशी।
मित्रदृष्टोथवास्वीयवर्गस्थोलग्नपोपिच ॥२३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

नक्षत्रों के भोग्यमान (भभोग) को उनके ध्रुवकों से गुणा करके ६० का भाग देने से स्पष्ट ध्रुवा होती है, तथा ४ घटी को भी भभोग से गुणा करके ६० का भाग देने पर स्पष्ट विषघटी होती है। नक्षत्रों की स्पष्ट ध्रुवा के पश्चात् स्पष्ट विषघटीतुल्य त्याज्य घटी होती है।

विषघटी परिहार—विषघटी का परिहार ५ प्रकार से होता है—

१. चन्द्रमा शुभग्रह की राशि में हो।
२. चन्द्रमा मित्रग्रह या शुभग्रह से दृष्ट हो।
३ चन्द्रमा अपने नवमांश में हो।
४. चन्द्रमा लग्न से ९–५–७–४ स्थानों में हो।
५. लग्नेश यदि ९–५–७–४ स्थानों में या लग्न में रहे।

विशेष—वैवाहिक लग्न विचार में ७ में चन्द्र का रहना निषिद्ध है अतः ९-५-४ स्थानों में स्थित चन्द्रमा से ही विषघटी का परिहार समझना चाहिये।

स्पष्ट विषघटी का आनयन—जैसे मूल नक्षत्र का भभोग ५७।४० है तो मूल का ध्रुवाङ्क ५६ को ५७।४० से गुणा किया तो ३२२९।२० हुआ इसमें ६० का भाग दिया तो ५३।४९ हुआ यहीं मूल का स्पष्ट ध्रुवाङ्क हुआ।

अब ४ को ५७।४० से गुणा किया २३०।४० हुआ इसमें ६० का भाग दिया तो ३।५१ हुआ। यहीं मूल की स्पष्ट विषघटी हुई अर्थात् मूल नक्षत्र के ५३ घटी ४९ पला व्यतीत हो जाने पर विषघटी प्रारम्भ हुई जो ३ घटी ५१ पला तक रही।

नक्षत्रों की विषघटी की तरह तिथि विषघटी और वार विषघटी भी शुभ कार्यों में त्याज्य होती हैं।

तिथि विषघटी

तिथिषु नागाद्रि गिरीषु वारिधि-
गंजाद्रिदिक्पावक दिग्विभास्करः ।
मुनीभसंख्याः प्रथमातिथेः क्रमात्
परं विषं स्याद घटिका चतुष्टयम् ।।[1]

प्रतिपदादि तिथियों की इतनी घटिका व्यतीत हो जाने पर ४ घटी तिथि विषघटी होती है । नींचे चक्र में स्पष्ट है—

तिथि	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५
इतनी घटी के बाद	१५	५	८	७	७	५	४	८	७	१०	३	१०	१२	७	८

स्पष्ट तिथिविषघटी का साधन भी नक्षत्र विषघटी के अनुसार ही होगा । केवल भभोगमान के स्थान पर तिथिमान रहेगा और क्रियायें पूर्वोक्त प्रकार से ही होगीं ।

वार विषघटी

नखाद्वयं द्वादश दिक् च शैला
बाणाश्च तत्त्वानि यथाक्रमेण ।
सूर्यादि वारेषु परं चतस्रो
नाड्यो विषं स्यात् खलु वर्जनीयम् ।।

सूर्यादि वारों में भी सूर्योदय से इतनी घटी व्यतीत हो जाने पर ४ घटी वार विषघटी होती है नीचे चक्र में स्पष्ट है—

वार	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
इतनी घटी के बाद	२०	२	१२	१०	७	५	२५

वार विषघटी ४ घटी के तुल्य ही होती है इसमें न्यूनाधिक नहीं होता क्योंकि वार का मान ६० घटी ही माना गया है ।

उपरोक्त तीनों विषघटी (नक्षत्र–तिथि–वार) शुभकार्यों में त्याज्य हैं । यथा–

विवाह–व्रत–चूड़ासु–गृहारम्भ–प्रवेशयोः ।
यात्रादि शुभकार्येषु विघ्नदा विषनाडिका ।।२३।।

---

१. दैवज्ञ मनोहर

बिवाह लग्न में शुभाशुभ ग्रह —

लग्नेचन्द्रखला रिपौ शशिसितौ सर्वे द्युने खे बुधो-
ब्जोंत्येगुःसुखगोष्टमाःकुजशुभाः शुक्रस्तृतीयः शुचे ॥
लाभे सर्वखगाः शुभा अखिलगास्त्र्यष्टारिगाःस्युःखला-
श्चंद्रस्त्र्यंबुधने श्रियेंशभदृगेट्स्यान्मृत्यवेष्टारिगः ॥२४॥

मार्त्तण्डवल्लभा –

अथविवाहलग्ने इष्टानिष्टग्रहानाह। लग्नेचन्द्रखला इति। चन्द्रश्चखला-श्चतेचन्द्रखलाः लग्नेवर्तमानाः शुचेशोकायभवन्ति। तथारिपौषष्ठे शशिसितौ-चन्द्रशुक्रौ तथासर्वेद्यूनेसर्वेंक्रूरसौम्याः द्यूनेसप्तमे तथाखेदशमेबुधः तथा अब्जश्चन्द्रोंऽत्ये अगुःराहुःसुखगश्चतुर्थगः नविद्यन्तेगावः किरणाः यस्येत्यगुःराहुः "तमोगुरसुरश्च" इतिबृहज्जातकेराहुनामानि। तथा अष्टमाः कुजशुभाः कुज-श्चशुभाश्चतेतथा शुक्रस्तृतीय इतिस्पष्टार्थः। एतेप्रत्येकमुक्तस्थानगाः शुचेशोकायभवन्ति। अथ इष्टानाह। लाभइति। लाभे एकादशेसर्वखगाः तथा सौम्याः शुभग्रहाः अखिलगानिद्य विनासर्वस्थानगाः तथाखलाः क्रूरा-स्त्र्यष्टारिगास्तृतीयाष्टषष्ठगाः तत्र अष्टमेभौमोनिंदितः तंविनापापा अष्टमा-ग्राह्याः चंद्रस्त्र्यंबुधने तृतीयचतुर्थद्वितीयेचन्द्रः एतेप्रत्येकंश्रियैलक्ष्म्यैभवन्ति। श्रीकारका इत्यर्थः। एवंशुभाशुभग्रहानुक्त्वातत्रविशेषमाह। अंशभदृगेट् अष्टारिगः सन्मृत्यवेस्यात् अंशोनवांशः भंलग्नं दृक्कोदृक्काणः एषामिट्-स्वामी नवांशस्वामी लग्नस्वामी दृक्काणस्वामी एते प्रत्येकमष्टषष्ठगाः मृत्युहेतवो भवन्तीत्यर्थः ॥२४॥

मार्त्तण्डप्रिया—

विवाह कलिक लग्न में अशुभ ग्रह स्थिति

चन्द्र और पापग्रह	१ में
चन्द्र और शुक्र	६ में
सभी ग्रह	७ में
बुध	१० में
चन्द्रमा	१२ में
राहु	४ में
मंगल और शुभग्रह	८ में
शुक्र	३ में



इन स्थानों में यदि रहें तो अशुभ होता है।

शुभग्रह स्थिति—

सभी ग्रह ११ में,
शुभग्रह निन्दित स्थानों को
छोड़कर अन्य स्थानों में,
पापग्रह ६.८ में,
चन्द्रमा ३.४.२ में;



मंगल अष्टम में अशुभ होता है इसे छोड़कर अन्य सभी पापग्रह अष्टम में शुभ होते हैं। लग्नेश-लग्न का नवांशेश या द्रेष्काणेश यदि षष्ठ या अष्ठम भाव में रहें तो शोककारक होता है। मुहूर्त चिन्तामणि में १०वें भौम को अशुभ माना गया है परन्तु यहाँ पर ग्रन्थकार ने बुध को ही माना है ॥२४॥

दोषों का परिहार—

कन्यातौक्षिकशत्रुगेहगभृगुःषष्ठोपि नो भंगकृ-
भौमो मृत्युगतोपिशत्रुशशिनोर्गेहस्थितो वार्कगः ॥
शुक्लेन्त्यारिविधुः सवर्गदृगितःस्वोजोयुजीज्ये तनौ-
शुक्रे वा शुभदोथ कंटकनिजांशेज्येक्षितःसग्रहः ॥२५॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथकतिचिद्दोषाणामपवादमाह। तत्रप्रथमंभृगुषष्ठापवादमाह। कन्यातौक्षिकेति। कन्याप्रसिद्धा शुक्रस्यनीचं तौक्षिकोधनुर्धरः शत्रुगेहंपूर्वोक्तं—

"भृगुभुवः शशूरवींदू" इति—

तत्र रवेर्गृहंसिंहः इन्दोर्गृहंकर्कः एषां कन्यादीनामन्यतमगेहगतो भृगुः षष्ठोपिनोभंगकृत्स्यात्। लग्नभंगकरोनभवतीत्यर्थः। तथाच कश्यपः—

नीचगेतुतुरीयेवा शत्रुक्षेत्रगतेपिवा।
भृगुषष्ठोद्भवोदोषोनास्तीत्यत्रनसंशयः" ॥

अथकुजाष्टमदोषापवादमाह। भौमोमृत्युगतोपिशत्रुशशिनोर्गेहस्थितोयदिभवति। वा इत्यथवा अर्कगःअस्तंगतोपि यदिभवति तदानोभंगकृत्स्यात्। अस्यशत्रुर्बुधः। कुजस्यविदरिरितिप्रागुक्तस्तस्य गृहंकन्यामिथुनंच। शशिगृहंकर्कटस्तस्यनीचम् एषामन्यतमस्थोस्तंगतोवा अष्टमगतोपि वा लग्नभंगकरोनभवतीत्यर्थः ॥

अस्तगेनोच्चगेभौमेशत्रुक्षेत्रगतेपिवा ।
कुजाष्टमोद्भवोदोषोनकिंचिदवशिष्यत" इति ।

अथद्वादशषष्ठचन्द्रापवादमाह । शुक्लेति । शुक्लेशुक्लपक्षे अंत्यारिबिधुः द्वादशः षष्ठश्चन्द्रःसुवर्गदृगितः वर्गाश्चदृशश्चवर्गदृशः शोभनानांवर्गदृशः सुवर्गदृशः ता इतः प्राप्तः सुवर्गदृगितः शुभवर्गशुभदृष्टियुक्त इत्यर्थः । एवं विधोविधुः शुभदःस्यात् । कस्मिन्सति इज्ये गुरौशुक्रेवातनौ लग्नेसति । कथं-भूतेगुरौ स्वोजोयुजि सुतराम् ओजः स्वोजः उत्कृष्टबलंतेनयुनक्तीति स्वोजो-युक्तस्मिन्स्वोजोयुजि अतिबलिष्ठे सतीत्यर्थः । शुक्रस्याप्येतद्विशेषणम् । एतदुक्तंभवति । बलिष्ठेगुरौशुक्रेवालग्नस्थे सतिशुक्लपक्षेचन्द्रमा सुवर्गदृष्टि-सहितः यदिभवति तदाद्वादशषष्ठगोपिशुभद इतिभंगकरोनस्यात् अन्यथा न । मुहूर्तदर्पणे—

कवौगुरौवाबलिनि स्थितेतनौ शुभेनदृष्टः शुभवर्गगः शशी ।
विवर्धमानः शुभकृच्चनाशुभंकरोतितिष्ठन्नपिरिःफषष्ठयोः" इति ।

अथसग्रहचन्द्रदोषापवादमाह । सग्रहः ग्रहेणग्रहाभ्यांग्रहैर्वासहवर्तमानः सग्रहःबुधगुरुवर्ज्यं अन्यग्रहयुक्त इत्यर्थः । यतः पूर्वमुक्तम्—

हिमरुचिर्ज्ञेज्योनखेटान्वितम्" इति ।

एवंविधः सग्रहोविधुःकेन्द्रनिजवर्गेज्येक्षितः सन्शुभदःस्यात् । केन्द्रं-प्रसिद्धम् निजवर्गोनिजांशस्तत्रवर्तमानः इज्यः तेन ईक्षितः अवलोकितः सग्रहः चन्द्रमाः शुभदः भंगकरो न स्यात् । उक्तं च--

गुरुःस्वकीयवर्गस्थोबलवान्कंटकाश्रितः ।
पश्यन्सग्रहशीतांशुं तद्दोषंविलयं नयेत्" इति ॥२५॥

मार्त्तण्डप्रिया—

षष्ठस्थ शुक्रपरिहार

कन्या-धनु-कर्क और सिंह राशि का होकर यदि षष्ठ भाव में शुक्र रहे तो वह दोषकारक नहीं होता है।[1]

अष्टमस्थ भौम परिहार—मंगल यदि मिथुन-कन्या (शत्रुगृह) या कर्क (नीच) राशि का होकर अथवा अस्तंगत (सूर्य के साथ) होकर अष्टम में रहे तो लग्नभङ्ग नहीं होता है।

१. शुक्र कन्या में नीच का हो जाता है और धनु-कर्क-सिंह उसके शत्रु गृह हैं अतः वह बलहीन हो जाता है।

षष्ठस्थ-द्वादशस्थ चन्द्र परिहार—शुक्लपक्ष हो और गुरु या शुक्र पूर्णबली होकर लग्न में रहें तथा चन्द्रमा शुभवर्ग और शुभदृष्टि से युक्त रहे तो लग्नभङ्ग नहीं होता है।

केन्द्र में और स्ववर्ग (हो. द्रे. स....) में स्थित होकर गुरु यदि चन्द्रमा को देखता हो तो चन्द्र अनिष्टकर नहीं होता है।

विशेष—चन्द्र के दोष को बली गुरु और शुभग्रह क्षीण कर देते हैं। बुध और गुरु के साथ चन्द्रमा शुभ होता है अन्य ग्रह के साथ अशुभ होता है। यदि गुरु बलवान होकर चन्द्रमा को देखे तो वह अशुभकारक नहीं होता है ॥२५॥

दोषों का परिहार—

दोषाणां शतमिंदुजः शतयुगं शुक्रो गुरुर्घातये-
ल्लक्षं कंटककोणगोऽगमिनचंद्रौजस्वि पातादिकान् ॥
भंगा ये विबला न तेऽत्र सफलाः संध्यंशतुल्योऽफलः
स्याद्भावांशसमो ग्रहोऽखिलफलःसंध्यूर्ध्वगःस्यात्परः ॥२६॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथसामान्यदोषापवादमाह। दोषाणामिति। कंटककोणगः केंन्द्रकोणगः इन्दुजो बुधोदोषाणां शतंघातयेत् तत्स्थः १, ४, ५, ७, ९, १०, शुक्रःदोषाणां शतयुगं द्विशतं घातयेत् तत्स्थः १, ४, ५, ७, ९, १०, बृहस्पतिःदोषाणां लक्षं-घातयेत्। अपवादांतरमाह। अंगंलग्नमिनचंद्रौजस्विपातादिकान्घातयेत् इनचंद्रयोः सूर्यचंद्रयोः ओजोबलमस्यास्तीति इनचंद्रौजस्वि एवंविधंलग्नंपाता-दिकान् घातयेत्। उक्तंचवसिष्ठेन—

एकार्गलोपग्रहपातलत्ता जामित्रकर्तर्युदयादिदोषाः।
नश्यंतिचंद्रार्कबलोपपन्ने लग्नेयथार्काभ्युदयेंधकारः'' इति।

अथदोषापवादभंगमाह। भंगाइति। येभंगादोषभंगाविबलागतबलानिर्ब-लास्तेत्रदोषभंगविषयेसफला न भवंति। दोषभंगसमर्थानभवंतीत्यर्थः। तस्मा-द्दोषभंगकृतांबलंविचार्यदोषभंगमादिशेदितिभावः। उक्तंच—

सामान्येनोदितादोषां भंगास्तेषांतुतद्विदैः।
यदितेबलहीनाःस्युःप्रध्वंसाभावतां ययुः।

अथभावशुद्धिमाह। संध्यंशतुल्योफल इति। संध्यंशतुल्यःसंधिभागसमा-नोग्रहोऽफलःस्यात् सदसत्फलदो नभवति। भावांशतुल्योग्रहोखिलफलदःस्यात् सम्पूर्णफलदोभवति। अर्थान्मध्ये अनुपातात्फलंवेद्यम्। विशेषफलमाह।

संध्यूर्ध्वगःस्यात्पर इति । संध्यूर्ध्वगःसंध्यंशाधिको ग्रहःपरः स्यात् । परभावफलदःस्यादित्यर्थः ॥२६॥

मार्त्तण्डप्रिया—

बुध यदि केन्द्र (१-४-७-१०) या त्रिकोण (५-९) में रहे तो सौ दोषों का नाश करता है ।

शुक्र यदि केन्द्र या त्रिकोण में रहे तो दो सौ दोषों का और बृहस्पति यदि केन्द्र या त्रिकोण में रहे तो लाख दोषों का नाश करता है ।

अर्थात् केन्द्र या त्रिकोण में यदि बुध-शुक्र या गुरु रहें तो दोष समूहों का नाश होता है ।

लग्न यदि सूर्य और चन्द्रमा के बल से युक्त हो तो पात आदि दोषों का नाश होता है ।

यहाँ भङ्गकारक योगों को सबल होना चाहिए अन्यथा दोषों का नाश नहीं होता है । तात्पर्य यह कि दोषकारक योग की अपेक्षा भङ्गकारक योग को बलवान होना चाहिए ।

जब ग्रह सन्धि के राशि अंश के बराबर हो तो वह उस भाव का फल नहीं देता है । यदि भाव के राशि अंश के बराबर हो तो वह उस भाव का पूर्णफल देता है और जो सन्धि से ज्यादा हो वह आगे के भाव का फल देता है ॥२६॥

ससन्धि द्वादशभाव कथन—

भागाः स्युर्नतनाडिका रसहतास्तद्धीनयुक्प्राक्परे
सूर्यःखं सरसं सुखं कथितवल्लग्नं सषड्भं मदः ॥
व्यस्ता[1]भ्रत्रिलवोऽथ दृक्च्युत उभौ योज्यौ कुदृग्घ्नौ पृथ-
ग्लग्ने चांबुनि ते सषट्तनुमुखाः संधिर्द्वियोगोऽर्द्धितः ॥२७॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

संध्यंशतुल्य इत्याद्युक्तंतत्रकेतेसंधयः केतेभावा इत्यपेक्षायांतत्साधनं किंचित्स्थूलमेकेनवृत्तेनाह । भागाःस्युरिति । नतनाडिकारसहताभागाःस्युः । नतसाधनंजातकपद्धतावुक्तं—

"रात्रेःशेषमितंयुतंदिनदलेनाह्नोगतंशेषकं ।
विश्लेष्यंखलुपूर्वपश्चिमनतं त्रिंशच्च्युतंचोन्नतम्" इति ।

---

१. पाठांतरम्-व्यस्ताभ्रारिलवोथ भुच्युत इमौ भूयोंगपातालयोः ।
क्षेप्यौ षट् तनुतःसंधय इमे षड्भान्विताःस्युः परे ॥

एतदुक्तं भवति सूर्येष्टकालाभ्यामिष्टकालंसाधयित्वा नतांचसाधयित्वात-दिष्टकालभवंनतं षड्गुणंनतभागाःस्युरित्यर्थः। प्राक्पश्चिमेनतेन क्रमेणत-द्धीनयुक्सूर्यः तैर्भागैर्न्यूनयुक्पूर्वनतेसतिन्यूनःपश्चिमनतेसतियुक्युक्तः तात्का-लिकःसूर्यःखंस्यात्। दशमभावः स्यादित्यर्थः। तत्खंदशमभावं सरसंषड्राशि-युक्तं सत्सुखंचतुर्थभावःस्यात् कथितवल्लग्नंप्रोक्तवल्लग्नंज्ञेयम्। तत्सषड्भं षड्राशियुक्तं सत्मदःसप्तमभावः स्यात्। एवं भावचतुष्टयंसाधयित्वा अंतर्भाव-साधनमाह व्यस्ताभ्रत्रिलव इति। विगतः अस्तः सप्तमभावोयस्मात्तत्व्य-स्तंतच्चतदभ्रंच व्यस्ताभ्रंसप्तमभावरहितदशमभाव इत्यर्थः। तस्यत्रिलवो राश्यादिकोग्राह्यः अथदृक्च्युतः द्विपतितः कार्यः एतौ उभौकेवलत्रिलवयुक्-च्युतत्रिलवौ पृथक्पृथक्कुदृग्घ्नौ सन्तौ पृथक्-पृथक् लग्ने अंबुनिचयोज्यौ। अयमर्थः। कुघ्नः त्रिलवोलग्ने योज्यः सद्वितीयभावोभवति। दृग्घ्नोलग्नेयो-जितः तृतीयभावोभवति। अथदृक्च्युतः त्रिलवः कुघ्नः अंबुनिपूर्वसाधिते-चतुर्थभावेयोजितः पंचमभावो भवति। तत्रैव दृग्घ्नोंऽबुनियोजितः षष्ठभावो भवति। ते षडनंतरसाधिताभावाः षंड्राशिसहिताः कार्याः तेतुसप्तमा ज्ञेयाः। लग्नंषड्भं मद इतियावत्। तेतुलग्नमुखालग्नादयोभावाःस्युः। अथसंधिसाधनमाह। संधिर्द्वियोगोर्द्धित इति। द्वयोर्भावयोर्योगः अर्धितः संधिः स्यादितिस्पष्टम्। अथपाठांतरस्य व्याख्या। व्यस्तेति। सप्तमभा-वरहितस्य दशमभावस्य अरिलवः षड्भावोराश्यादिकः सपृथक्पृथक् भूच्युतः एकस्मात्पतितः इमौ उभौ भूयःवारंवारम् अंगपातालयोः प्रथमचतुर्थभा-वयोःक्षेप्यौ तनुतः लग्नात् ससंधयः संधिसहिताः षड्भावाःस्युः। इमे भावाः षड्भावान्विताः परेससंधयोभावाःस्युः। एवं भाव संधिसाधनं कृत्वासंध्यंशतु-ल्योऽफलइतिप्रागुक्तं ग्रहफलंविचार्यम्। अंतरे अनुपातः—

"भावसंध्यन्तरेणाप्तांखेटसंध्यन्तरात् फलम्"

इतिजातकपद्धतेः" इति। एतत्स्थूलभावानयनं सूक्ष्मतुजातकपद्धतावव-गंतव्यम् ॥२७॥

मार्त्तण्डप्रिया —

द्वादश भाव साधन

दशम-चतुर्थ—नत घटी को ६ से गुणा करने पर नतांश होता है। यदि पूर्वनत हो तो नतांश को सूर्य में घटाने पर और यदि पश्चिम नत हो तो सूर्य में जोड़ने पर दशम लग्न होता है। दशम लग्न में ६ राशि जोड़ने पर चतुर्थ लग्न होता है।

लग्न-सप्तम—इष्टकाल को ६ से गुणा करने पर उन्नतांश होता है उन्नतांश को राश्यादि सूर्य में जोड़ने पर लग्न होता है। लग्न में ६ राशि जोड़ने पर सप्तम लग्न होता है।

भाव—दशम लग्न में सप्तम लग्न को घटाकर जो शेष हो उसके तृतीयांश को लग्न में जोड़ने पर द्वितीय भाव और तृतीयांश को दूना करके लग्न में जोड़ने पर तृतीय भाव होगा।

पुनः उस तृतीयांश को दो राशि में घटाकर शेष को चतुर्थ लग्न में जोड़ने पर पंचम भाव तथा शेष को द्विगुणित करके चतुर्थ भाव में जोड़ने पर षष्ठ भाव होगा। लग्न से षष्ठ भावों तक में छै, छै राशि जोड़ने पर सप्तम से द्वादश भाव तक होते हैं।

प्रथम और द्वितीय भाव के मानों को जोड़कर आधा करने से प्रथम सन्धि और द्वितीय तृतीय भावों को जोड़कर आधा करने पर द्वितीय सन्धि इसी प्रकार द्वादश सन्धियाँ निकाली जाती हैं।

उदाहरण—राश्यादि सूर्य १०।१५।४०।३०
दिनमान २८।५०
इष्टकाल घटी ३५।३०

यहाँ इष्टकाल ३५।३० और दिनार्द्ध १४।२५ का अन्तर २१।५ पश्चिम नत[1] हुआ। ६ से गुणा करने पर १२६।३० हुआ। यह पश्चिम नतांश १२६।३० अंशादि हुआ। इस पश्चिम नतांश की राश्यादि १४।६।३० को सूर्य में जोड़ा तो—

सूर्य १०।१५।४०।३०
पश्चिमनतांश ४। ६।३०। ०

दशम लग्न २।२२।१०।३० हुआ। इसमें ६ राशि जोड़ा तो ८।२२।१०।३० चतुर्थ लग्न हुआ।

अब इष्टकाल ३५।३० को ६ से गुणा किया तो २१३।० उन्नतांश हुआ इसे राश्यादि बनाकर सूर्य में जोड़ा तो—

---

१ मध्याह्न के पूर्व इष्टकाल को दिनार्द्ध में घटाने से पूर्वनत;
मध्याह्न के बाद के इष्टकाल में दिनार्द्ध घटाने से पश्चिमनत,
मध्य रात्रि के पूर्व के इष्टकाल में दिनार्द्ध घटाने से पश्चिमनत;
मध्यरात्रि के बाद के इष्टकाल को ६० में घटाकर शेष में दिनार्द्ध जोड़ने से पूर्वनत,

सूर्य— १०।१५।४०।३०

उन्नतांश ७। ३। ०। ०

प्रथम लग्न ५।१८।४०।३० हुआ इसमें ६ राशि जोड़ा तो—

११।१८।४०।३० सप्तम लग्न हुआ।

अब दशम लग्न २।२२।१०।३० में

सप्तम लग्न घटाया ११।१८।४०।३० तो

३। ३।३०। ० हुआ।

इसका तृतीयांश १।१।१०।० को प्रथम लग्न ५।१८।४०।३० में जोड़ा तो ६।१९।५०।३० द्वितीय भाव हुआ।

पुनः द्विगुणित तृतीयांश २।२।२०।० को प्रथम भाव में जोड़ा तो ७।२१।०।३० तृतीय भाव हुआ।

अब तृतीयांश १।१।१०।० को २ राशि में घटाया तो ०।२८।५०।० हुआ इसे चतुर्थ लग्न ८।२२।१०।३० में जोड़ा तो ९।२१।०।३० पंचम भाव हुआ। पुनः ०।२८।५०।० को द्विगुणित कर १।२७।४०।० को चतुर्थ लग्न ८।२२।१०।३० में जोड़ा तो १०।१९।५०।३० षष्ठ भाव हुआ। अब लग्न से लेकर षष्ठ भाव तक क्रमशः छै छै राशि जोड़ने से सप्तम आदि छै भाव हो जायेगें।

लग्न ५।१८।४०।३० और द्वितीय भाव ६।१९।५०।३० का योग ०।८।३१।० हुआ इसका आधा ६।४।१५।३० प्रथम भाव की सन्धि हुई। इसी तरह द्वितीय-तृतीय भाव का योगार्द्ध द्वितीय भाव की संधि होगी। इस प्रकार १२ सन्धियाँ हो जायेंगी ॥२७॥

कर्त्तरी दोष और उसका परिहार—

इंदोर्वा हरिजाद्व्ययस्वगतयोः स्यात्क्रूरयोः कर्तरी।
स्वे वक्रयंत्य ऋजुर्महत्यथ गुरौ रिः फे शुभे वा तनौ ॥
स्वेऽब्जे सौम्य खगेऽपि वा गुरुभृगुज्ञैः केन्द्रकोणेषुवा।
चेत्स्तः कर्तरिकारकौ दिविचरौ नीचस्थितौ सा नहि ॥२८॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथकर्तरीदोषलक्षणंसापवादंवृत्तेनाह। इंदोर्वेति। इन्दोश्चन्द्रात्सकाशात् वा इत्यथवा हरिजाल्लग्नात्सकाशात् व्ययस्वगतयोः व्ययोद्वादशंस्वंद्वितीयंतदुभयत्रगतयोः क्रूरयोः पापग्रहयोः सतोःकर्तरीस्यात्। अथमहाकर्तरीलक्षणमाह। स्वेद्वितीयेस्थितः क्रूरःयदिवक्रीस्यात् अन्त्येद्वादशेस्थितःक्रूरोऋजुर्मार्गगामीस्यात् तदामहतीकर्तरी स्यात्। एवंकर्तरीलक्षणमुक्त्वातद्भङ्गमाह।

गुरौ रि:फेप्रांत्येसतिसाकर्तरीनस्यादेवेत्येको भंग: । वा इत्यथवा शुभेगृहेबुध-गुरुशुक्राणामन्यतमेतनौ लग्नेसतिसानेतिद्वितीयोभंग: । स्वेद्वितीये अब्जे-चन्द्रे सतिसानेतितृतीयोभंग: । वा इत्यथवा सौम्यखगेद्वितीयेसतिसानेति-चतुर्थोभंग: । वा इत्यथवा केन्द्र १, ४, ७, १० त्रिकोणेषु ५, ९ भृगुविदीज्यै: शुक्रबुधगुरव:तै:सद्भि: । कालाच्चेतिसप्तम्यर्थेतृतीया । साकर्तरीनस्यादेवेति-पंचमोभंग: । वा इत्यथवा कर्तरिकारकौक्रूरौदिविचरौनीचस्थितौ यदा-स्यातां तदासानस्यादितिषष्ठोभंग: । हि अवधारणे ॥२८॥

मार्त्तण्डप्रिया—

कर्तरी दोष

लग्न या चन्द्र से द्वितीय और द्वादश स्थानों में यदि पापग्रह हो तो कर्तरी दोष होता है ।

महाकर्तरी—लग्न या चन्द्रमा से दूसरे स्थान में यदि वक्रीपापग्रह हो और द्वादश में मार्गीपापग्रह हो तो महाकर्तरी दोष होता है ।

कर्तरी दोष परिहार—(i) बृहस्पति द्वादश भाव में हो,

(ii) लग्न में कोई शुभग्रह हो,

(iii) चन्द्र द्वितीय स्थान में हो,

(iv) कोई शुभग्रह द्वितीय स्थान में हो,

(v) गुरु-शुक्र-बुध केन्द्र या त्रिकोण में हो,

(vi) कर्तरी दोष करनेवाले दोनों ग्रह—

यदिअपनी अपनी नीच राशि के हों, तो कर्तरी दोष नहीं लगता है । इन छै परिहारों में से किसी एक परिहार के भी रहने पर कर्तरी दोष का परिहार हो जाता है ॥२८॥

पंचकदोष और परिहार—

लग्नं सेततिथि ग्रहैर्ह दिभदृग्वेदतुं भूशेषकै
रोगाग्नीनहरात्थयास्त्यज रुजं रात्र्यर्कमौंजीषु च ॥
अग्नि भौमग ृह्युषु द्यु शनिसेवेंदुष्विनं हारमी-
ज्यारेतिष्वपरं विवाहसितवित्संध्यासु हीने तनौ ॥२९॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथपंचकदोषंसापवादमाह । लग्नमिति । लग्नमिष्टलग्नं सेततिथि इता-चासौतिथिश्च इततिथि: गततिथि: तयासहवर्तमानंसेततिथि ग्रहैर्ह तुनवभक्तं

कार्यम् इभदृग्वेदर्तुभूशेषकैः इभा अष्टौ दृशौद्वे वेदाश्चत्वारः ऋतवःषट् भूरेकः एतन्मितैः शेषकैः कृत्वाक्रमेणरोगाग्नीनहरात्यया: स्युः । रोगः प्रसिद्धः अग्निः प्रसिद्धः इनोराजा—

राजाधिपः पतिः स्वामीनाथः परिवृढः प्रभुः ।
इश्वरोविभुरीशानोभर्त्तेन्द्र इन ईशिता''इतिधनंजयः ।

हरश्चौरः अत्ययो मृत्युः एतेपंचकाः स्युरित्यर्थः एतदुक्तंभवति । लग्नंशुक्लप्रतिपदादिगततिथियुक्तंकृत्वानवभिर्ह्त्वा अष्टशेषेरोगः द्विशेषे अग्निः चतुःशेषे राजा षट्शेषेचौरः एकशेषेमृत्युः । अथैतेकुत्रवर्ज्या इत्याह । रात्र्यर्कमौंजीषुरुजंत्यज रात्रौ अर्के आदित्यवारे मौंज्यां रुजं त्यज । भौमादयः प्रसिद्धास्तेषु द्युशनिसेवेन्दुषु इनंत्यज द्युर्दिवा शनिःशनिवारः सेवा स्वामिसेवनं इन्दुः सोमवारः एषुइनंराजानंराजपंचकंत्यज । ईज्यारेतिषु-हारंत्यज चौरंत्यज ईज्योगुरुवारः आरोभौमवारः इतिर्गतिर्यात्रेतियावत् आसुचौरंत्यजेत्यर्थः । विवाहसितवित्संध्यासु अपरमुर्वरितं मृत्युमित्यर्थः । विवाहः प्रसिद्धः सितः शुक्रवारः वित्बुधवारः संध्यासंध्याकालः आसु-मृत्युंत्यजेति । अस्यापवादमाह । कस्मिन्सति तनौलग्ने हीनेहीनबलेसति बलिष्ठेलग्नेसति एषांकिमपिनबाधा इत्यर्थः । तथाचज्योतिःप्रकाशे—

रोगेचौरंत्यजेद्रात्रौ दिवाराजाग्निपंचकम् ।
उभयोःसंध्ययोर्मृत्युमन्यकालेननिंदितम्'' इति ।
तत्रापियत्रलग्नंचेद्बलाढ्यंतच्चनिष्फलम्'' इति ।

बलंजातकाज्ज्ञेयं । लघुजातके—

अधिपयुतो दृष्टो वा बुधगुरुनिरीक्षितश्च यो राशिः ।
स भवति बलवान्न यदा युक्तोदृष्टोऽपि वा शेषैः''[१] इत्यादि ।।२९।।

मार्त्तण्डप्रिया—

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से गततिथि संख्या को लग्न की राशिसंख्या में जोड़कर ९ का भाग देने से यदि ८ शेष बचे तो रोग बाण

यदि २ शेष बचे तो अग्नि बाण
,, ४ ,, ,, राज बाण
,, ६ ,, ,, चौर बाण
,, १ ,, ,, मृत्यु बाण होता है ।

त्याज्य—

बाण	कार्य	वार	समय
रोगबाण	उपनयन	रविवार	रात्रि

१. लघुजातक १–१४ ।

अग्निबाण	गृहकार्य	मंगलवार	दिन
राजबाण	सेवाकार्य	शनि, सोम	दिन
चौरबाण	यात्रा	गुरु, मंगल	×
मृत्युबाण	विवाह	शुक्र, बुध	संध्या

जिस समय में जिस बाण का त्याग कहा गया है उस समय-वार और कृत्य में उस बाण का त्याग करना चाहिए।

बाण परिहार—लग्न यदि निर्बल रहे तभी इन बाणों का त्याग करना चाहिए। अन्यथा लग्न के बलवान रहने पर बाण दोष नहीं लगता है।

लग्न यदि अपने अधिपति या बुध गुरु से युत-दृष्ट रहे तो बलवान होता है ॥२९॥

लग्न नवांश शुद्धि और उसका परिहार—

जन्मर्क्षोदयतो मृती तदधिपौ तद्गाश्च ये तल्लवा-
स्तद्भं चांगगमंतकृत्खलु न चेत्तत्स्वामिमित्रैकता ॥
शस्तोंऽशो घटमीरुयुग्मधनुषां विज्ञास्तभांशौ तथा ।
चन्द्रापुण्ययुतौ मृतिं वितनुतो दैन्यं च हीनौजसः ॥३०॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथभवनांशयोः शुद्धिसापवादमाह। जन्मर्क्षेति। जन्मर्क्षोदयतः जन्मराशिजन्मलग्नाभ्यांसकाशात् तृतीये अष्टमभवनेयौतदधिपौतयोर्मृत्युभवनयोः स्वामिनौयेचतद्गाः मृत्युभवनगताः स्युः तेषाम् अंशोनवांशःअंगगोलग्नगतः च परंतेषांभंराशिः अंगगंलग्नगतंसत्तदाखलुनिश्चयेन अंतकृत्मरणकृत्स्यात्। तदाकदा चेद्यदितत्स्वामिमित्रैकता न स्यात्। तयोर्जन्ममृत्युभवनयोःस्वामिनौतत्स्वामिनौतयोः। अथवायमर्थः। तयोर्जन्मनिंद्यभयो स्वामिनौतत्स्वामिनौ तयोर्यदिमित्रैकतानस्यात्। मित्रं च एकश्च मित्रैकौमित्रैकयोर्भावोमित्रैकतासाचेन्नस्यात्। अनेनसर्वस्योक्तस्यसार्थकताभवति। यदितयोर्मित्रतास्यात्। अथवा एकतास्यात्तदानायंदोष इत्यर्थसिद्धम्। वसिष्ठः—

यस्याष्टलग्नेतदधीश्वरेवाराशौतदीशेथविलग्नगेवा।
समृत्युमाप्नोतितदामनोजस्त्रिनेत्रभालांबकह्निनेव" इति।

अन्यच्च—

जन्मर्क्षजन्मलग्नाभ्यांरंध्रेशावष्टमौचयौ।
विलग्नसंस्थितानेतांस्तद्राश्यंशानपित्यजेत्" इति॥

चूडामणौ—

लग्नंव्यलिवृषंत्याज्यमष्टमंसर्वकर्मसु ।
तत्राप्येकेशवास्त्येवततस्तन्नैवदोषकृत् ॥
नदोषोष्टमलग्नस्य यदिजन्मेशरंध्रपौ ।
सुहृदौचेत्तदा कार्यंमंगलंमुनयोविदुः" इति ।

चतुर्थद्वादशभवनयोःदोषोनात्रोक्तः । यत्—

चतुर्थद्वादशं लग्नंशस्तंयदिगुणान्वितम् ।" इति

पूर्वाचार्यमतंहृदिधृत्वासगुणमेवांगीकृतम् तत्पुरस्ताद्वक्ष्यति । नचतनुं-पंचेष्टखेटोनितां तनु लग्नमिष्टाश्चतेखेटाश्च इष्टखेटाःपंचचते इष्टखेटा-श्चपंचेष्टखेटाःइष्टग्रहैः पंचभिःशुभदैः इष्टैरूनितंहीनंलग्नंचेद्वेदवर्गोनित-मिति सगुणस्यैवांगीकारात् किंव्यर्थविस्तरेणेतिभावः । अंशशुद्धिमाह। शस्तोंश इति । घटयुग्मभीरुधनुषाम् अंशःशस्तःस्यात् घटस्तुला युग्मंमिथुनं भीरुःकन्या धनुःप्रसिद्धम् एषामंशोनवांशःप्रशस्तःस्यात् । तत्रापिविशेषमाह। विज्ञास्तभांशाविति । विगतः ज्ञोबुधोयेभ्यस्ते विज्ञाःतेचते अस्ताश्चतेषांभांशौ-राशिनवांशौमृतिंवितनुतः । अर्थादस्तमितस्यापिबुधस्य भांशौदोषकरौ नभवतः । तथाचन्द्रापुण्ययुतौ चन्द्रेणपापग्रहेणवायुक्तौ भांशौमृतिंमरणंवित-नुतः कुरुतः वधूवरयोरितिशेषः । हीनौजसोनिर्बलस्यभांशौदैन्यंदीनतां-वितनुतः ॥२०॥

मार्त्तण्डप्रिया—

जन्मराशि और जन्मलग्न से आठवीं राशि या आठवाँ राश्याधिपति अथवा अष्टमस्थग्रह की राशि या नवांश यदि वैवाहिक लग्न में रहे तो मृत्युकारक होता है ।

परिहार—यदि जन्मराशीश और अष्टमराशीश एक ही ग्रह हों या दोनों राशीशों में परस्पर मित्रता हो तो उपरोक्त दोष नहीं लगता है ।

नवांश परिहार—तुला-कन्या-मिथुन-धनु इन राशियों का नवांश यदि लग्न में रहे तो शुभकारक होता है । अर्थात अष्टम होने पर इन राशियों का नवांश अशुभ नहीं होता ।

बुध को छोड़कर अन्य अस्तगंत ग्रहों के नवांश और राशि यदि लग्न में रहे तो मृत्युकारक होता है । बुध के अस्तगंत रहने पर भी उसकी राशि और नवांश शुभकारक होते हैं । चन्द्रमा और पापग्रह से युक्त लग्न-नवांश मृत्युदायक होते हैं । अर्थात लग्न में या लग्नगत नवांश राशि में चन्द्रमा या पापग्रह शुभ नहीं

होता है। यदि बलहीनग्रह की राशि या नवांश लग्न में पड़े तो दारिद्रय बढ़ता है। अतः वैवाहिक लग्न में इसका त्याग करना चाहिए ॥३०॥

विशेष लग्न व नवांश ज्ञान—

नो वर्गोत्तमतो विनांतिमलवं दद्याच्चरर्क्षे चरं
चंद्रे तौलिमृगास्यगे न च तनुं पचेष्टखेटोनिताम् ॥
मेषादिष्वजनक्रतौलिककुलीराद्या नवांशाः क्रमा
दिष्टात्पूर्वनवांशका दशहतास्त्र्याप्ता लवाद्या तनुः ॥३१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथ विशेषांतरमाह। नोवर्गोत्तमत इति। वर्गोत्तमतः वर्गोत्तमेनविना अंतिमलवंचरमनवांशंनोदद्यात् यल्लग्नं स एवनवांशोवर्गोत्तमः तथाचरर्क्षेचरलग्नेचरंनवांशंनोदद्यात् कस्मिन्सति चन्द्रेतौलिमृगास्यगे तुलामकरगेसति एतच्चरत्रययोगंनोदद्यादित्यर्थः। अत्र चरचतुष्टयमध्येचन्द्रेतौलिमृगास्यगे इत्येवोक्तं तन्मेषकर्कटयोर्विवाहनक्षत्राभावात् तथातनुंलग्नंपंचेष्टखेटोनितांनोदद्यात् यत्रलग्नेपंच इष्टग्रहाः नभवन्तितल्लग्नंनदेयमित्यर्थः। अथेष्टनवांशाल्लग्नसाधनमाह। तत्रतावन्मेषादिषु आद्यांशानाह। मेषादिष्विति। मेषादिषु अजनक्रतौलिककुलीराद्यानवांशाः क्रमेणोक्ताः। तद्यथा मेषे अजाद्याः मेषाद्याः वृषेनक्राद्या मकराद्याः मिथुनेतौलिकाद्याः तुलाद्याः कर्कटेकुलीराद्याः कर्कटाद्याः एवंपुनः सिंहेमेषाद्याः कन्यायांमकराद्याः तुलायांतुलाद्याः वृश्चिकेकर्काद्याः पुनर्धनुषिमेषाद्याः मकरेमकराद्याः कुम्भेतुलाद्याः मीनेकर्काद्याः नवांशा उक्ता इत्यर्थः। इष्टादंशात्पूर्वनवांशकाः गतांशाः दशहताः दशगुणिताः त्र्याप्ताः त्रिभिर्हृताः लवाद्याभागाद्याः तनुः लग्नंस्यात्। अत्रोदाहरणम्। इष्टलग्नंमेषः तत्रमेषादिका अंशाःप्रवर्तन्ते इष्टांशः कन्यांशः आद्यात्षष्ठः पूर्वनवांशकः पंच ५ एतेदशहताः ५० त्र्याप्ताः लवादिफलंलब्धम् १६, ४० इष्टलग्नसहितंराश्यादि १६, ४० ॥३१॥

मार्त्तण्डप्रिया—

वर्गोत्तम नवांश को छोड़कर किसी भी राशि का अन्तिम नवांश वैवाहिक लग्न में शुभ नहीं होता है। किसी भी राशि में उसी राशि का नवांश वर्गोत्तम नवांश होता है।

यदि किसी राशि का अन्तिम नवांश ही वर्गोत्तम नवांश हो तो वह अशुभकारक नहीं होता है अर्थात द्विस्वभाव (३–६–९–१२) राशियों के अन्तिम नवांश भी शुभकारक होते हैं।

चन्द्रमा यदि ७ या १० (तु. म.) राशि में हो तो चरलग्न और चरनवांश (वर्गोत्तम्) भी अशुभ होता है। यदि चन्द्रमा ७–१० (तु. म.) को छोड़ अन्य राशि में रहे तो चरलग्न और चरनवांश शुभकारक होता है।

जिस लग्न में ५ शुभकारक ग्रह नहीं हों उसमें विवाह नहीं करना चाहिए। (यहाँ लग्न से तात्पर्य द्वादश भावों से है)।

नवांश ज्ञान—जिस राशि में जिस नवांश का ज्ञान करना हो उस राशि में प्रारम्भ से अभीष्ट नवांश की गत संख्या को १० से गुणा करके ३ से भाग देने पर लब्धि उस राशि का गतांश होता है जैसे—

मेष राशि में तुला नवांश देखना है तो मेष राशि में मेष से ही नवांश की प्रवृत्ति होती होती है अतः मेष से लेकर तुला के पूर्व कन्या तक की संख्या ६ हुई। अब इसमें १० से गुणा कर ३ से भाग दिया तो ६ × १० ÷ ३ = २० गतांश हुआ अर्थात २० अंश तक कन्या का नवांश रहा इसके बाद तुलानवांश ३°।२०° (२३।२०) तक रहेगा। नीचे चक्र में स्पष्ट है।

नवांशचक्र

नवांश खण्ड	मेष	वृष	मिथुन	कर्क	सिंह	कन्या	तुला	वृश्चिक	धनु	मकर	कुम्भ	मीन
प्रथम ३.२०	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म	तु.	क.
द्वितीय ६.४०	वृ	कु.	वृ.	सि.	वृ	कु.	वृ.	सि	वृ.	कु	वृ.	सि
तृतीय १०.०	मि	मी	ध.	क.	मि.	मी	ध.	क.	मी	मी	ध.	क.
चतुर्थ १३.२०	क.	मे.	म.	तु	क	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म	तु.
पंचम १६.४०	सि.	वृ.	कु.	वृ	सि.	वृ.	कु.	वृ.	सि.	वृ.	कु	वृ.
षष्ठ २० ०	क.	मि.	मी.	ध.	क.	मि.	मी.	ध.	क.	मि	मी.	ध.
सप्तम २३ २०	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क.	मे.	म.	तु.	क	मे.	म.
अष्टम २६.४०	वृ.	सि.	वृ.	कु.	वृ	सि	वृ.	कु.	वृ.	सि.	वृ.	कु.
नवम ३०.००	ध.	क.	मि.	मी	ध.	क.	मि	मी.	ध.	क	मि	मी

मेष में मेष वृष में वृष ·········ये वर्गोत्तम नवांश कहलाते हैं।

मेष का नवांश मेष से धनु तक

वृष का नवांश मकर से कन्या तक,
मिथुन का नवांश तुला से मिथुन तक और
कर्क का नवांश कर्क से मीन तक होता है ॥३१॥

उदयास्त शुद्धि और होरा साधन—

लग्नांशौ स्वपदृग्युतौ नृसुखदौ वान्योन्यपाढ्येक्षितौ
ताभ्यां सप्तमकौ तथैव युवतेर्नो चेत्तयोर्मृत्युदौ ॥
द्विघ्नेऽर्कोनविलग्नके रविसितज्ञेन्द्वार्किजीवासृजो
होरेशा द्युपतेः खलेऽह्नि खलजा नेष्टा शुभे मध्यमा ॥३२॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथोदयास्तशुद्धिमाह। लग्नांशाविति। लग्नांशौलग्नवांशौ स्वपदृग्युतौस्वस्वपतिनादृष्टौयुतौवासन्तौ नृसुखदौ वरस्यसुखदौस्याताम्। वा इत्यथवा अन्योन्यपाढ्येक्षितौ अन्योन्यपतिना आढ्यौ ईक्षितौवासन्तौनसुखदौस्याताम्। इत्युदयशुद्धिमुक्त्वा अस्त शुद्धिमाह। ताभ्यांसप्तमकौतथैवेति। ताभ्यांलग्नांशाभ्यांसकाशात्सप्तमकौ-सप्तमलग्नतदंशौ तथैवेति पूर्ववत्स्वपदृग्युतौ युवतेः कन्यायाः सुखदौस्यातां वा इत्यथवा तौसप्तमलग्नसप्तांशकौ अन्योन्यपाढ्येक्षितौयुवतेः सुखदौस्याताम् नोचेत एवंचेत्तन्नस्यात्तदा तयोर्मृत्युदौस्यातांक्रमेण। अथेष्टकालेहोरासाधनमाह। द्विघ्ने इति। अर्कोनविलग्नके द्विघ्नेकृतेसतिद्युपतेः सकाशात्होरेशाभवन्ति। तेषांगणनाक्रममाह। तेकेहोरेशाः रविसितज्ञेंद्वार्किजीवासृजः रविः प्रसिद्धः सितः शुक्रः ज्ञोबुधः इन्दुश्चंद्रः आर्किः शनिः जीवोगुरुः असृङ्मंगलः खलेह्निपापवारेखलजाहोरानेष्टा शुभेमध्यमास्यात्। अर्थाच्छुभहोराशुभ वारे शुभतरा पापवारेमध्यमास्यात् अत्रोदाहरणंगुरुवारे इष्टार्कः १, २५, ८ इष्टंलग्नम् ४, १०, ०, इदम् अर्कोनम् २, १४, ५२ इदंद्विघ्नम् ४; २९, ४४ ऊध्वीकसमानागताहोराश्चतस्रः वर्तमानापंचमीहोरा सागणनाक्रमेणद्युपतेर्गुरोः सकाशाद्गणनीया जीवासृजादिगणनयाबुधहोरावर्तमाना ॥३२॥

मार्त्तण्डप्रिया––

लग्न शुद्धि––लग्न तथा लग्ननवांश यदि स्व स्व स्वामी से युत या दृष्ट हों अथवा लग्न नवांशपति से और नवांश लग्नपति से युत या दृष्ट हो तो वर के लिए सुखप्रद होते हैं।

सप्तम शुद्धि—सप्तमभाव तथा सप्तमभाव का नवांश ये दोनों यदि स्व स्व स्वामी से युत या दृष्ट हों अथवा सप्तमभाव सप्तमभावनवांशाधिपति से और सप्तम भावनवांश सप्तमभावाधिपति से युत या दृष्ट हो तो कन्या के लिए सुखप्रद

होते हैं। इन दोनों स्थितियों से यदि विपरीत स्थिति हो तो वर कन्या के लिए कष्टदायक होते हैं।

होरा साधन—राश्यादि लग्न में राश्यादि सूर्य को घटाकर शेष को दूना करने से राशिसंख्या तुल्य गत होरेश और अग्रिम वर्त्तमान होरेश होता है। सूर्य-शुक्र-बुध-चन्द्र-शनि-गुरु-मंगल ये क्रम से होरेश होते है (एक के बाद उससे छठा दूसरा कालहोरेश होता है)[१]।

होरेश की गणना—रविवार—सू. शु. बु. चं. श. गु. मं.
चन्द्रवार—चं. श गु. मं. सू. शु. बु.
सोमवार—मं. सू. शु. बु चं. श. गु.

इस प्रकार से आगे के वारों में भी समझें। आगे चक्र में स्पष्ट है।

उदाहरण—सू ५।१०।४०।२५　इष्टघटी ४०।१०
लग्न १।२५।१०।५　दिन शनिवार
लग्न में सूर्य को घटाया १।२५।१०। ५
५।१०।४०।२५
८।१४।२९।४०

इसे दूना किया १६।२८।५९।२० हुआ इसमें १६वाँ गतहोरेश और १७वाँ वर्त्तमान होरेश हुआ। यहाँ शनिवार है अतएव "अर्किजीवासृजो" के अनुसार शनि से प्रारम्भ कर गुरु तक १६वीं होरा गत और मंगल की १७वीं होरा वर्त्तमान है।

विशेष—यहाँ होरा या कालहोरा शब्द समय बोधक है। इसमें प्रत्येक का मान ढ़ाई घटी (१ घंटा) के लगभग अर्थात लग्न के आधे के तुल्य होता है। षडवर्ग का होरा दूसरा है। वह भी लग्न के आधे के बराबर ही होता है परन्तु उसमें केवल सूर्य और चन्द्र ही होराधिपति या होरेश होते हैं।

मुहूर्त चिन्तामणि में कालहोरेश का साधन अन्य प्रकार से दिया हुआ है उसमें इष्टघटी के आधार पर दिया गया है। जैसे—इष्टघटी को द्विगुणित कर दो स्थानों में रखें, एक में ५ से भाग देकर जो शेष बचे उसे दूसरे स्थानवाले में घटा दें। घटाने पर जो शेष बचे उसमें १ जोड़कर ७ से भाग देने पर जो शेष बचे वही दिनपति से गिनने पर कालहोरा का अधिपति होता है।

यहाँ उपरोक्त होरेश साधन में शनिवार और
४०।१० इष्टघटी है, अब मुहूर्त्त चिन्तामणि के अनुसार
४०।१०×२=८०।२०　　८०।२० द्विस्थापित किया
=८०।२०÷५=१६।४

१. षष्ठश्च षष्ठश्च पुनः पुनः स्यात्।

५)८०।२०(१६।४
८०
२०
२०
×× शेष कुछ नहीं

१ जोड़ा
८१।२० हुआ
÷७ से भाग दिया
४।२० शेष हुआ अर्थात

४था गत होरेश और ५वाँ वर्त्तमान होरेश हुआ। यहाँ शनि से ५वाँ शुक्र होरेश हुआ जब कि मुहूर्तमार्त्तण्ड के अनुसार मंगल होरेश है।

कालहोरेश चक्र

संख्या	घटी	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
१	२।३०	र.	चं	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
२	५। ०	शु	श	र.	चं.	मं.	बु	बृ.
३	७।३०	बु	बृ.	शु.	श.	र.	चं.	मं.
४	१०। ०	चं.	मं	बु	बृ.	शु	श	र.
५	१२।३०	श	र	चं.	मं.	बु	बृ.	शु.
६	१५। ०	बृ.	शु.	श	र,	चं	मं.	बु.
७	१७।३०	मं	बु.	बृ.	शु.	श.	र.	चं
८	२०। ०	र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
९	२२।३०	शु.	श.	र	चं	मं	बु.	बृ.
१०	२५। ०	बु.	बृ.	शु.	श.	र.	चं.	मं.
११	२७।३०	चं	मं	बु	बृ.	शु.	श	र.
१२	३०। ०	श.	र.	चं	मं	बु.	बृ.	शु.
१३	३२।३०	बृ	शु.	श.	र.	चं	मं.	बु.
१४	३५। ०	मं	बु.	बृ.	शु.	श.	र	चं.
१५	३७।३०	र.	चं	मं	बु.	बृ.	शु.	श.
१६	४०। ०	शु.	श.	र	चं.	मं.	बु.	बृ
१७	४२।३०	बु.	बृ	शु.	श.	र.	चं.	मं.
१८	४५। ०	चं.	मं	बु	बृ	शु.	श.	र.
१९	४७।३०	श.	र	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.
२०	५०। ०	बृ.	शु.	श.	र.	चं.	मं	बु.
२१	५२।३०	मं	बु	बृ.	शु.	श.	र.	चं
२२	५५। ०	र.	चं.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.
२३	५७।३०	शु.	श.	र.	च.	मं.	बु	बृ
२४	६०। ०	बु,	बृ.	शु	श.	र	चं.	मं.

कालहोरा का प्रयोजन—पापवारों में पापग्रहों की होरा अशुभ और शुभग्रहों की होरा मध्यम होती है तथा शुभवारों में शुभग्रहों की होरा शुभ और पापग्रहों की होरा मध्यम होती है ॥३२॥

जामित्र दोष और परिहार—

लग्नेद्वोःस्मरगे शुभखगे स्तश्चाधिमृत्यू ततो-
ऽब्जांगोनात्कृतमौर्विकात्खखयमैर्लब्धं यदाब्धीषवः ॥
सन्स्विष्टोच्चनिजांशभेस्तमखिलं पश्येदरित्र्यायगे
सूर्ये वा खजलाद्य कोणगशुभो वाब्जं प्रपश्येन्न तत् ॥३३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथलग्नेंद्वोः परमजामित्रग्रहज्ञानार्थमुपायमाह। तावत्तस्यफलमाह। लग्नेंद्वोरिती। लग्नेंद्वोः स्मरगेसप्तमगेशुभाशुभखगेसतितदा आधिमृत्युस्तः शुभेसतिआधिर्मनस्तापोस्ति अशुभेसतिमृत्युरस्ति तदाकदा यदाततः स्मरगाद्ग्रहात् अब्जांगोनात्चन्द्रलग्नोनात्चन्द्रात् सप्तमस्थश्चन्द्रोनः लग्नात्सप्तमस्थोलग्नोन इत्यर्थः। तस्मात्कृतमौर्विकात् कृतकलिकात् खखयमैर्द्विशत्यालब्धम् अब्धीषवः चतुः पंचाशत्स्यात् तदैव आधिमृत्यूस्तः अन्यथानेत्यर्थः। तत्रोदाहरणम् पूर्वकल्पितमिदंलग्नं ४, १०, ७ तत्सप्तमगोयंकश्चिद्ग्रहः १०, ११, ७ अयंलग्नोनः २६, १७ अयंकृतमौर्विकः १०, ८, १७ अस्मात् खखयमैः २०० लब्धम् ५४। अथास्यभंगमाह। सन्निति। सन्सद्ग्रहः स्विष्टोच्चनिजांशभेवर्तमानः अस्तंसप्तमभवनमखिलं पूर्णयदिपश्येत्तदातज्जामित्रंनस्यात्। शोभनश्चासौ इष्टश्चस्विष्टः शुभमित्रं स्विष्टश्च उच्चं च निजश्चस्विष्टोच्चनिजाः अंशश्चभंच अंशभं स्विष्टोच्चनिजानामंशभंतस्मिन्स्विष्टोच्चनिजांशभे स्विष्टस्यशुभमित्रस्य अंशेनवांशेभेराशौवावर्तमानः अथवा उच्चस्यांशेभेवावर्तमानः अथवा निजस्यस्वस्य अंशेभेवावर्तमानः अस्तमखिलंपश्येत्तदातन्नेतिषड्भंगा : वा इत्यथवा अर्केरवौ अरित्र्यायगेसतिषष्ठतृतीयैकादशगेसतितन्नेतित्रयोभंगाः। वा इत्यथवा खजलाद्यकोणगः शुभः अब्जंचंद्रमसंपूर्णंयथास्यातथा ईक्षेत् तदातन्न खंदशमं जलं चतुर्थम् आद्यंलग्नंकोणेनवपंचमे एषामन्यतमंगतोन्यतमः शुभग्रहश्चंद्रमसंनिखिलदृष्टया यदिपश्येत्तदाजामित्रंनस्यादित्यर्थः। एतेपंचभंगाः सर्वेमिलिताश्चतुर्दशभंगाः संपद्यन्ते ॥३३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

जामित्र दोष—लग्न से या चन्द्रमा से सप्तम भाव में यदि ग्रह रहें तो जामित्र दोष होता है। जमित्र दोषकारक यदि शुभग्रह हो तो आधि (मनस्ताप)

कारक और यदि पापग्रह हो तो मृत्युकारक होता है परन्तु जामित्र दोष तभी होता है जब कि सप्तमस्थ ग्रह में लग्न या चन्द्रमा को घटाकर शेष को कला बनाकर २०० से भाग देने पर ५४ लब्धि आवे, अन्यथा जामित्र दोष नहीं होता है। अर्थात ५४ से कम या अधिक लब्धि प्राप्त होने पर सातवें में ग्रह के रहते हुए भी जामित्र दोष नहीं होता। तात्पर्य यह कि सप्तमस्थ ग्रह में से लग्न या चन्द्रमा घटाने पर शेष यदि ६ राशि से कम हो तो यह दोष नहीं लगता है। योंकि "बाणाशुगमितलवे" के अनुसार लग्न या चन्द्रमा से ५५वाँ नवांश ही वर्जित है।

लग्न १०।१५।४०।५ और सप्तमस्थग्रह सू. ४।२०।४५।१० है। सप्तमस्थ ग्रह (सूर्य) में लग्न को घटाने पर सू. ४।२०।४५।१०-ल.।१०।१५।४०।५=६।५।५।५ हुआ इसकी कलादि १११०५ में २०० से भाग देने पर ५५ लब्धि प्राप्त हुई अतः जामित्र दोष नहीं होगा।

जामित्र दोष परिहार—कोई भी शुभग्रह किसी शुभग्रह के या मित्र के घर का या स्वोच्च अथवा स्वनवांश या स्वराशि का होकर लग्न या चन्द्र से सप्तम भाव को पूर्ण दृष्टि से देखे तो जामित्र दोष भङ्ग होता है।

अथवा सूर्य, लग्न से या चन्द्रमा से ३।६।११वें भाव में हो अथवा कोई भी शुभग्रह १०।४।१।५।९ भाव में स्थित होकर चन्द्रमा को पूर्णदृष्टि से देखे तो जामित्र दोष भङ्ग होता है। इस तरह लग्न और चन्द्रमा से मिलकर चौदह प्रकार से जामित्र दोष भङ्ग होता है।

इस लग्न चक्र में शनि से पूर्ण जामित्र दोष है। परन्तु चन्द्रमा से सप्तमभाव को शुक्र अपनी उच्चराशि का होकर देख रहा है। शुक्र शुभग्रह है अतएव जामित्र दोष भङ्ग हुआ। सूर्य भी लग्न से तृतीय भाव में है अतः उससे भी दोष भंग हुआ ॥३३॥



ग्रहदृष्टि-षड्वर्ग कथन—

त्र्यश्रे कोणमबायुरंनिगुरुभूपुत्राः क्रमात्पूर्णया
दृष्टचाऽन्ये चरणोत्तरं च सकलाः पश्यंति पूर्णं द्युनम् ॥
भं होरा त्रिलवो नवांशक इनांशास्त्रिंशदंशः क्रमा-
द्वर्गः सन्शुभजः परैस्तु सुहृदो नाऽध्यूनवर्गा तनुः ॥३४॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथदृष्टिलक्षणमाह। त्र्यश्रमिति। त्र्यश्रंतृतीयदशमं कोणंनवपंचमम् अबायुश्चतुर्थाष्टमम् एतद्युग्मत्रयंक्रमेण ऐनिगुरुभूपुत्राःशनिगुरुभौमाः पूर्णयादृष्टयापश्यन्ति। शनिः त्र्यश्रं ३,१० गुरुः कोणं ९,५ भूपुत्रः अबायुः ४,८ एतेपूर्णयादृष्टयापश्यन्ति। तथाचैतद्युग्मत्रयमन्येग्रहाश्चरणोत्तरं यथास्यात्तथापश्यंति। तद्यथा त्र्यश्रम् ३, १० एकपाददृष्टयापश्यंति कोणं ९, ५ द्विपाददृष्ट्या अबायुः ४, ८ त्रिपाददृष्ट्यापश्यंति सकलाग्रहाः द्युनंसप्तमंपूर्णपश्यन्ति। अथषड्वर्गसाधनंविवक्षुस्तावन्नामान्याह। भंहोरेति। भंगृहं होराराश्यर्द्धं त्रिलवोदृक्काणः नवांशकः प्रसिद्धः इनांशोद्वादशांशः त्रिंशदंशः प्रसिद्धः क्रमादेतेवर्गाःप्रोक्ताः। शुभजः शुभग्रहजोवर्गः सन्शुभः प्रोक्तः। परैः आचार्यैः सुहृदोमित्रस्यवर्गः सन्प्रोक्तः। अब्धिवर्गोनकमंगंचतुर्वर्गोनं लग्नंनसत् प्रोक्तम् ॥३४॥

मार्त्तण्डप्रिया—

ग्रहदृष्टि—शनि अपने स्थान से तृतीय-दशम को, बृहस्पति पंचम-नवम को और मंगल चतुर्थ-अष्टम को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। अन्यग्रह सू. चं. बु. शु. तृतीय-दशम को १ पाद से पंचम-नवम को २ पाद से, चतुर्थ-अष्टम को ३ पाद से और सप्तम को पूर्णदृष्टि से देखते हैं।

(१) गृह (२) होरा (३) द्रेष्काण (४) नवमांश(५) द्वादशांश (६) त्रिशांश, ये ६ षडवर्ग कहे जाते हैं। शुभग्रह का वर्ग भी शुभ होता है। किसी आचार्य के मत से मित्रग्रह का वर्ग भी शुभ होता है। अर्थात पापग्रह और शत्रुग्रह का वर्ग अशुभ होता है। इन षडवर्गों में ४ से कम शुभवर्ग लग्न में नहीं होना चाहिए अन्यथा लग्न शुभ नहीं होता।

विशेष—शनि भृत्य, गुरु मन्त्री और मंगल सेनापति ग्रह है।

भृत्य को साहसी और कर्मनिष्ट होना चाहिए अतएव शनि तृतीय (साहस) और दशम (कर्म) को पूर्ण दृष्टि से देखता है। मन्त्री को विद्या बुद्धि से युक्त और धर्मनिष्ठ होना चाहिए अतएव गुरु पंचम (विद्या-बुद्धि) और नवम (धर्म) को पूर्ण दृष्टि से देखता है। सेनापति को सुख सम्पदा और आयु से युक्त होना चाहिए अतएव मंगल चतुर्थ (सुख-संपदा) और अष्टम (आयु) को पूर्ण दृष्टि से देखता है।

सप्तम स्थान स्त्री स्थान है अतएव सभी ग्रह सप्तम को पूर्णदृष्टि (४ पाद) से देखते हैं।

चतुर्थ-अष्टम सुख और आयु स्थान है अतएव सभी ग्रह सुख-आयु को त्रिपाद दृष्टि से देखते हैं।

पंचम-नवम विद्या और भाग्य स्थान है अतएव सभी ग्रह विद्या-भाग्य को द्वि पाद दृष्टि से देखते हैं।

तृतीय-दशम पराक्रम और कर्मस्थान है अतः सभी ग्रह पराक्रम-कर्म को एकपाद दृष्टि से देखते हैं ।।३४।।

षड्वर्गसाधन—

प्रोक्तं प्राग्गृहमोजभेऽर्कशशिनोर्होरे समेऽब्जार्कयो-
र्दृक्केट् प्राक्सुतधर्मपो नवलवः प्रोक्तः स्वतोऽर्कांशकः ।।
शुक्रज्ञेज्ययमासृजां शरमुनीभार्थेषवो युग्मभे
त्रिंशांशा विषमे त एव गदिता व्यस्ताश्च षड्वर्गकाः ।।३५।।

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथैषांसाधनमाह । प्रोक्तमिति । यस्यग्रहस्य यत् गृहं तत् प्राक्प्रोक्तम् । भेशामंशुबुचमित्यादि । अथहोरासाधनमाह । ओजभेविषमराशौ अर्कशशिनोर्होरेक्रमेणभवतः । प्रथमपंचदशभागेषु अर्कस्यहोरा अपरपंचदशभागेषु-शशिनश्चन्द्रस्यहोरा स्यात । अथ समराशौ अब्जार्कयोर्होरेक्रमेण भवतः। प्रथम पंचदश भागेषु चन्द्रस्य होरा अपर पंचदश भागेषु अर्कस्यहोरास्यात् । अथदृक्काणसाधनमाह । दृक्केडिति । दृक्कोदृक्काणः त्रिविधोदशदशभागात्मकः तस्य ईट् ईशः प्राक्सुतधर्मपोज्ञेयः । प्राग्लग्नं सुतः पंचमं धर्मोनवमं तान् पातीतिप्राक्सुतधर्मपः । एतदुक्तंभवति—

प्रथमदृक्काणस्वामीलग्नपतिः द्वितीयदृक्काणस्वामीपंचमपतिः
तृतीयदृक्काणस्वामीनवमपतिः स्यात्" इति ।

नवलवः प्रोक्तः । प्रागेवशस्तोंश इत्यादि । अथद्वादशांशसाधनम् । स्वतोर्कांशकः स्वस्मात् इतिः स्वतः लग्नत इत्यर्थः अर्कांशकोद्वादशांशोज्ञेयः । तद्यथा राशिभागास्त्रिंशत ३० एतेद्वादशभिर्भाजिताः लब्धंसार्द्धभागद्वयम् २½ इदं-द्वादशांशमानं तदेवगणनीयं सार्द्धभागद्वयंलग्नस्यद्वादशांशः तावदेव-तत्पुरस्थस्येति लग्नस्योत्पन्नभागावसानपर्यंतंगणयेत् यस्मिन्राशौविश्रामः तत्स्वामीदशांशनाथः स्यात् । अथत्रिंशांशसाधनम् । शुक्रेति । शुक्रः प्रसिद्धः ज्ञोबुधः ईज्योगुरुः यमः शनिः असृक्मंगलः एषांपंचानांक्रमेण शरमुनीभार्थेषवः स्युः । शराः पंच मुनयः सप्त इभाः अष्टौ अर्थाः पंच इषवः पंच एते-भागाः शुक्रादीनांस्युः एतद्युग्मभेसमराशौज्ञेयम् । एतदपिलग्नोत्पन्नभागा-वसानपर्यंतंगणयेत् यत्र विश्रांतिः सत्रिंशांशनाथः विषमेराशौ त एवगदिता-ग्रहाभागाश्चव्यस्ताविलोमाज्ञेयाः इतिषड्वर्गोनिरूपितः ।।३५।।

मार्त्तण्डप्रिया—

गृह--पहले (विवाह प्रकरण श्लो. ४) इसके विषय में कहा जा चुका है।

होरा—प्रत्येक राशि में १५-१५ अंश की दो होरा होती है। विषम राशि में पहले सूर्य की उसके बाद चन्द्र की, समराशि में पहले चन्द्र की उसके बाद सूर्य की होरा होती है।

द्रेष्काण—प्रत्येक राशि में १०-१० अंश के तीन द्रेष्काण होते हैं। पहला द्रेष्काण उसीराशि का दूसरा उससे पाँचवे का और तीसरा उससे नौवें का होता है।

नवमांश--पहले (विवाह प्रक. श्लो. ३०) कहा जा चुका है।

द्वादशांश—एक राशि में १२ द्वादशांश होते हैं। प्रत्येक द्वादशांश खण्ड ढाई अंश का होता है। राशि के गतांश को द्विगुणित करके ५ से भाग देने पर लब्धि तुल्य गत द्वादशांश खण्ड होते हैं।

जैसे वृषराशि के २१ अंश पर द्वादशांश जानने हेतु २१×२=४२÷५= लब्धि ८ शेष २, वृष से ८वाँ द्वादशांश धनु का गत हुआ और मकर का वर्तमान है।

त्रिशांश—प्रत्येक राशि में ५ त्रिशांश होते हैं। सम राशियों में क्रमशः शुक्र का ५. बुध का ७. गुरु का ८. शनि का ५. और मंगल का ५ अंश त्रिशांश होता है।

विषम राशियों में इसके विपरीत मंगल का ५. शनि का ५. गुरु का ८. बुध का ७. और शुक्र का ५ अंश त्रिशांश होता है।

स्पष्टार्थ प्रत्येक का चक्र देखें ॥३५॥

होराचक्र

मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अं.
५ सू.	४ चं.	५ सू.	४ चं	५ सू.	४ चं.	५ सू.	४ चं.	५ सू.	४ चं.	५ सू.	४ चं.	१ १५
चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	चं. ४	सू. ५	१६ ३०

द्रेष्काणचक्र

मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	कं.	तु.	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अं.
१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ र.	६ बु	७ शु.	८ मं.	९ गु.	१० श.	११ श.	१२ गु.	१ १०
५ र.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	९ गु.	१० श.	११ श.	१२ गु.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	११ २०
९ गु.	१० श.	११ श.	१२ गु.	१ मं.	२ शु.	३ बु.	४ चं.	५ र.	६ बु.	७ शु.	८ मं.	२१ ३०

सप्तमांशचक्र

"ओजे नगांशा: निजराशित: स्यु: युग्मे ततो द्यून गृहाद्भवन्ति"

३० अंश में ७ का भाग देने से अंशादि ४।१७।८ होता है। अत: ४।१७ का एक भाग मानने से सात खण्ड होते हैं। इसमें विषम राशि में प्रथमादि खण्ड

मे.	वृ	मि.	क.	सि.	कं.	तु	वृ.	ध.	म.	कुं.	मी.	अ.
१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	४
मं.	मं.	बु.	श.	र.	गु.	शु.	शु	गु	चं.	श.	बु.	१७
२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	८
शु.	गु.	चं.	श.	बु.	मं.	मं.	बु.	श.	र.	गु.	शु.	३४
३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	१२
बु.	श.	र.	गु.	शु.	शु.	गु.	चं.	श.	बु.	मं.	मं.	५१
४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	१७
चं.	श.	बु.	मं.	मं	बु	श.	र.	गु.	शु.	शु.	बु.	९
५	१२	७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	२१
सू.	गु.	शु.	शु.	गु.	चं.	श	बु.	मं.	मं.	बु.	श	२६
६	१	८	३	१०	५	१२	७	२	९	४	११	२५
बु.	मं.	मं.	बु	श.	र.	गु.	शु.	शु.	गु.	चं.	श.	४३
७	२	९	४	११	६	१	८	३	१०	५	१२	३०
शु.	शु.	गु	चं.	श.	बु.	मं.	मं.	बु.	श.	र.	गु.	०

अपनी ही राशि से और समराशि में अपनी राशि से सातवीं राशि से प्रारम्भ होता है।

सप्तमांश की गणना षड्वर्ग में नहीं अपितु सप्तवर्ग में होती है।

नवमांशचक्र

मे.	वृ.	मि.	क.	सि.	क.	तु.	वृ.	ध.	मं.	कुं.	मी.	अं. कं.
मं.	श.	शु.	चं.	मं	श	शु.	च.	मं.	श.	शु.	चं.	३।२०
शु.	श.	मं	र.	शु.	श.	मं	सू.	शु.	श.	मं.	र.	६।४०
बु.	गु.	गु.	बु.	बु.	गु.	गु	बु.	बु.	गु.	गु.	बु.	१०।०
चं.	मं.	श.	शु	चं	मं	श.	शु.	चं.	मं.	श.	शु.	१३।२०
र	शु	श.	मं.	र	शु.	श.	मं.	र.	शु.	श.	मं.	१६।४
बु	बु.	गु.	गु.	बु.	बु.	गु.	गु.	बु.	बु.	गु.	गु.	२०।०
शु.	चं.	मं.	श.	शु.	चं	मं.	श.	शु.	चं	मं.	श.	२३।२०
मं	र.	श	श	मं.	र.	गु	श	मं.	र.	शु.	श	२६।४०
गु.	बु.	बु.	गु	गु.	बु.	बु.	शु	गु.	बु.	बु.	गु.	३०।०

द्वादशांशचक्र

मे	वृ.	मि.	क.	सि	क	तु.	वृ.	ध.	मं.	कुं.	मी.	अं. कं.
मं.	शु.	बु.	चं.	र.	बु	शु	मं	गु.	श.	श.	गु.	२।३०
शु.	बु.	चं	र.	बु.	शु	मं.	गु.	श	श.	गु.	मं.	५।०
बु	चं	र.	बु.	शु.	मं.	गु.	श	श	गु,	मं.	शु.	७।३०
चं.	र.	बु.	शु.	मं.	गु.	श	श.	गु	मं.	शु.	बु.	१०।०
र.	बु.	शु	मं.	गु	श.	श.	गु.	मं.	शु.	बु	चं.	१२।३०
बु.	शु.	मं.	गु.	श	श.	गु	मं.	शु.	बु.	चं.	र.	१५।०
शु	मं	गु.	श.	श	गु	मं.	शु.	बु.	चं.	र.	बु.	१७।३०
मं.	गु.	श	शु.	गु	मं.	शु	बु.	चं.	र.	बु.	शु.	२०।०
गु.	श	श	गु	मं.	शु.	बु.	चं.	र.	बु.	शु.	मं.	२२।३०
श.	श	गु.	मं.	शु.	बु	चं.	र.	बु	शु	मं.	गु.	२५।०
श	गु.	मं.	शु.	बु.	चं.	र.	बु	शु.	मं.	गु.	श.	२७।३०
गु	म.	शु.	बु.	चं.	र.	वु	शु.	मं.	गु	श	श.	३०।०

त्रिशांशचक्र

मे.	वृ.	मि.	कं.	सि.	कं	तु.	वृ.	ध	म.	कुं.	मी.	रा.
५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	अं.
मं.	शु	मं.	शु	मं	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	मं.	शु.	स्वामी
५	७	५	७	५	७	५	७	५	७	५	७	अं.
श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु	स्वामी
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	८	अं.
गु.	गु	गु.	गु	गु	गु.	गु	गु	गु.	गु.	गु.	गु	स्वामी
७	५	५	५	७	५	७	७	७	५	७	५	अं.
बु.	श.	बु	श.	बु.	श.	बु.	श.	बु.	श	बु.	श.	स्वामी
५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	अं.
शु	मं.	शु.	मं	शु	मं.	शु.	मं	शु	मं.	शु.	मं	स्वामी

तात्कालिक सूर्य-इष्टकाल साधन--

संक्रांत्यंतरहोहृताद्दिनगणादाप्तं भपूर्वो रवि-
र्मेषाद्यातभयुग्युतोऽयनलवै रात्रौ सषड्भः स च ।
तद्भोग्यांशनिजोदयाहृति खरामाप्तंतथैवागतो
भुक्तांशाकलितेन युग्विवरगैः कालः स्फुटो भोदयैः ॥३६॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथेष्टकालसाधनंविवक्षुस्तावत्सूर्यसाधनमाह। संक्रांत्यंतरिति। अंतः अंतरालं तत्र अहानिदिनानिसंक्रांतेरंतरहानिसंक्रांत्यंतरहानि तैर्ह्रतोभागितः एवंविधोदिनगणः संक्रान्तेः सकाशात् इष्टदिनसमूहः तस्माद्यदाप्तंलब्धं सभ-पूर्वोराशिभागकलादिकोरविः स्यात्। किंभूतोरविः मेषात्सकाशात्यातभयुक् गतराशियुक् सूर्यभुक्तराशियुगित्यर्थः। सतात्कालिकोरविः स्यादित्यर्थः। अत्रोदाहरणम् तुलावृश्चिकसंक्रांत्योरंतरदिनानि अयनलवैर्युक्तः कार्यः। अयनांशाः ग्रंथांतरेप्रसिद्धाः--

कृताब्धयब्ध्यूनितेशाकेषष्टयाप्ता अयनांशकाः" इति।

सः अयनलवयुतोरविः रात्रौरात्रीष्टकालसाधनविषयेसषड्भः कार्यः। षड्राशियुक्तः कार्यः। तद्भोग्यांशनिजोदयाहृतिः खरामाप्तं कालः स्यात्। तस्यसायनांशस्यरवेः भोग्यांशाः तद्भोग्यांशाश्चनिजोदयाश्चतेषामाहृतिः गुणनंतस्याः सकाशात्खरामाप्तंत्रिंशताभक्तंलब्धं सूर्यस्यभोग्यकालः स्यात्। निजोदयाः स्वदेशीयराश्युदयाः तेब्रह्मतुल्यादिभ्योवगंतव्याः। कथंभूतः कालः तथैवांगतोभुक्तांशाकलितेनयुक् तथैवसूर्यस्यभोग्यकालसाधनरीत्या अंगतः लग्नात् भुक्तांशाकलितेनभुक्तांशेर्भुक्तभागैः आकलितेनकालेनयुक्युक्तः। एतदुक्तंभवति। इष्टलग्नम् अयनलवयुक्तं कृत्वातद्भुक्तांशैः निजोदयागुण-नीयाः त्रिंशताभाज्याः लब्धंलग्नं भुक्तकालः तेनकालेन स रविभुक्तः कालोयुक्तः कार्य इत्यर्थः। पुनः कथंभूतः। विवरगैः भोदयैः युक् विवरं सूर्यलग्नांतरालं तत्रगतैर्भोदयैः राश्युदयैः युक्युक्तः सपलमयः कालः स्फुटः स्पष्टः इष्टकालः स्यात्। षष्टिभक्तोघटिकात्मकः स्यादित्यवगन्तव्यम् ॥३६॥

मार्त्तण्डप्रिया—

स्पष्ट सूर्य साधन--

सर्वप्रथम इष्टकाल का साधन करेंगे। अब सूर्य की गत संक्रान्ति से इष्टकालिक दिन घट्यादि तक में, गत और गम्य संक्रान्तियों के मध्यवर्ती दिन संख्या से भाग देने पर जो अंशादि लब्धि आवे उसको गतसंक्रान्ति की राशिसंख्या में जोड़ने से राश्यादि स्पष्ट सूर्य होता है।

इष्टकाल साधन—स्पष्ट सूर्य और स्पष्ट लग्न में अयनांश जोड़कर सायन सूर्य और सायनलग्न बना लेंगे। यदि रात का इष्टकाल लाना हो तो सायन सूर्य में ६ राशि जोड़ देंगे। अब स्पष्ट सूर्य के भोग्यांश को उसराशि के उदयमान से गुणाकर ३० का भाग देने पर जो लब्धि हो उसको और लग्न के भुक्तांश को उसके राश्यु-दय मान से गुणाकर ३० का भाग देने पर जो लब्धिहो उसको, इन दोनों लब्धियों का

योग करके योगफल को लग्न और सूर्य के मध्यवर्ती राशियों के उदयमानों के योग में जोड़कर ६० का भाग देने पर लब्धि घट्यादिक इष्टकाल होता है।

स्पष्ट सूर्य का उदाहरण—वृष की संक्रान्ति चल रही है। और बुधवार को १५।१० इष्टकाल पर सूर्य का साधन करना है। यहाँ वृष की संक्रान्ति शुक्रवार को हुई थी। अब शुक्रवार से बुधवार तक ५।१५।१० दिनादि इष्टघटी हुई। इसमें वृष और मिथुन की संक्रान्तियों के मध्यगत दिनादि ३०।५।० से भाग देने पर ५।१५।१० ÷ ३०।५।०=५।१४।१८ अंशादि हुआ इसे वर्त्तमान संक्रान्ति (वृष) से गत संक्रान्ति (मेष) की संख्या में जोड़ा तो १।५।१४।१८ तात्कालिक स्पष्ट सूर्य हुआ।
इष्टकाल का उदाहरण—मान लिया कि मीन लग्न में तुला के नवांश में कोई कार्य करना है तो वह कब लगेगा। यहाँ सूर्य–१०।१५।२०।३०

लग्न ११।१०।१२।५

अयनांश २४।१०।१५ अब सायन सूर्य और सायन लग्न

सायन सू. ११।९।३०।४५ सायन ल. ०।४।२२।२०

सूर्य के भोग्यांश २०।२९।१५ को मीन के उदयमान

२१८ से गुणा कर ३० से भाग दिया

२०।२९।१५ × २१८ = ४४६६।१६।३० ÷ ३० = १४९ पल हुआ यह सूर्य का भोग्य पल हुआ।

अब लग्न के भुक्तांश ४।२२।२० को मेष के उदयमान २१८ से गुणा कर ३० से भाग देने पर —

४।२२।२० × २१८ = ९५३।८।४० ÷ ३० = ३२ पल हुआ यह लग्न का भुक्त पल हुआ।

अब सूर्य का भोग्यपल और लग्न का भुक्तपल इन दोनों का योग १४९ + ३२ = १८१ हुआ।

अब सायनसूर्य मीन और सायन लग्न मेष है अतएव दोनों के मध्य में और कोई राशि नहीं है अत: दोनों के भोग्य-भुक्त पलों का योग १८१ में ६० से भाग देने पर लब्धि ३।१ घटयादि इष्टकाल हुआ। अर्थात कल्पित नवांश उस दिन सूर्योदय से ३।१ घटयादि पर होगा ॥३६॥

इष्टकाल साधन में विशेष—

लग्नार्कौ यदि चैकभेंऽशविवरात्स्वीयोदयघ्नाद्वियत्-
त्र्याप्तिः काल इनात्तनुर्यदि तनुः सूर्योदयात्प्रागसौ।
कुंडेंऽभः परिपूरितेसुघटिकामर्द्धोदयाऽस्ते न्यसेत्-
स्तुत्वाग्नित्रयवायुगा न शुभदा पूर्णाग्निपंचस्वथ ॥३७॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथेष्टकालसाधनेविशेषमाह। लग्नार्काविति। लग्नार्कौलग्नसूर्यौयदि एकभेस्तः तदा अंशविवरात्लग्नार्कयोर्भागांतरात् स्वीयोदयघ्नात् निजराश्युदयगुणितात् या वियत्त्र्याप्तिः त्रिंशतालब्धिः सकालः स्यात् इष्टकालः स्यात्। तत्रापिविशेषमाह। इनात्तनुरिति। इनात्सूर्यात्तनुर्लग्नंयदितनुः लघुः स्यात्तदासौ इष्टकालः सूर्योदयात्प्राक्पूर्वंस्यात्। सोपिषष्टयाभक्तोघटिकात्मकः स्यादित्यवगन्तव्यम्। अथज्ञातंकालंयन्त्रैर्विनासाधितुंनशक्यते अतोयन्त्राणांमध्येमुख्यस्यघटीयन्त्रस्यस्थापनमाह। कुंडे इति। अंभः परिपूरिते उदकपूर्णेकुण्डेपात्रेघटिकामज्जनक्षमे। कुण्डग्रहणमुत्तानपात्रव्युदासार्थम्। तस्मात्कुण्डरूपपात्रे उदकपूरितेसुघटिकांषष्टिपलशुद्धांन्यसेत्निक्षिपेत्। कस्मिन्सति अर्द्धोदये अर्द्धास्तेच जातेसति। किंकृत्वास्तुत्वा। प्रार्थनाग्रन्थांतरे उक्ता—

यन्त्राणांमुख्यरूपासिब्रह्मणानिर्मितेघटि
दंपत्योः शुभकालाप्तिहेतवेभवशोभने" इति।

प्रतिष्ठितायांघटिकायांतद्गमनफलमाह। साप्रतिष्ठिताघटी अग्नित्रयवायुगानशुभदास्यात्। अग्नित्रयम् आग्नेयादिप्रदक्षिणक्रमेणदिशात्रयं वायुर्वायव्यदिशा इतिदिक्चतुष्टयंप्रतिगतानशुभदा अर्थादन्यदिग्गतातत्रैवस्थितावाशुभदास्यात्। तथाचोक्तंग्रंथांतरे—

संस्तुतैवंघटीतोयेयांदिशंप्रतिगच्छति
पूर्वाशादिफलंकुर्यात् स्थितामध्येधनप्रदा।
सौभाग्यंनिर्धनंनार्या अपमृत्युरुजान्विताः
भर्तृप्रियाचवेश्याचमान्याचित्तसुतान्वित" इति।

एवं गमनफलमुक्त्वापूर्णताफलमाह पूर्णाग्निपंचसु आग्नेयादिपंचसुदिक्षुपूर्णाघटीनशुभदा। अर्थादन्यदिक्षुपूर्णाशुभदास्यात् उक्तंच—

उत्तरेशानपूर्वासुघटीपूर्णाशुभप्रदा।
दिक्षुशेषासुकन्यायामग्रेवैधव्यदायिनी ॥३७॥

मार्त्तण्डप्रिया--

यदि लग्न और सूर्य एक ही राशि में हों तो दोनों के अन्तरांश को उसराशि के उदयमान से गुणाकर ३० का भाग देने पर लब्धि तुल्य इष्टकाल होता है। यदि सूर्य से लग्न अल्प रहे तो सूर्योदय से पूर्व का इण्टकाल होता है अर्थात रात्रि शेष का इष्टकाल होता है।

घटिका यन्त्र स्थापन––प्रातः में जब आधा सूर्यबिम्ब उदित हो और सायं में जब आधा सूर्यबिम्ब अस्त हो उस समय १ घटी में डूब जाने वाले शुद्ध घटीयन्त्र को जल से भरे कुण्ड में अथवा किसी पात्र में रखना चाहिए। उस कुण्ड या पात्र में घटीयन्त्र यदि अग्नि-दक्षिण-नैऋत्य या वायव्य दिशा में जाय तो शुभ नहीं होता है और यदि अग्नि-दक्षिण नैऋत्य-पश्चिम और वायव्य दिशा में जल से भर जाय तो भी अशुभ कारक होता है।

उत्तर-ईशान और पूर्वदिशा में जाने और जल से भर जाने पर शुभ समझना चाहिए। जिस समय अशुभ लक्षण हो उस समय में विवाहादि शुभकार्य नहीं करना चाहिए।

इष्टकाल का उदाहरण—

यदि लग्न ११।१०।१२।५ और सूर्य ११।५।२।० रहे तो दोनों का अन्तर ५। १०।५ अंशादि को मीन के उदयमान से गुणा कर ३० का भाग देने से—

५।१०।५ × २१८ = ११२६।३८।१० हुआ इसमें ३० से भाग दिया तो ११२६। ३८।१० ÷ ३० = ३८ पल इष्टकाल हुआ। अर्थात् सूर्योदय के पश्चात ०।३८ इष्टकाल पर ११।१०।१२।५ लग्न होगा।

एवं यदि सूर्य ११।१०।१२।५ और लग्न ११।५।२।० रहे तो सूर्योदय से ३८ पल पहले का इष्टकाल अर्थात पहले दिन के सूर्योदय से ५९।२२ घट्यादि के पश्चात इतना लग्न होगा ॥३७॥

गोधूलि लग्न कथन--

गोधूलं पव्जादिके शुभकरं पंचांगशुद्धौ रवे-
रर्द्धास्तात्परपूर्वतोऽर्धघटिकं तत्रेन्दुमष्टारिगम् ॥
सोग्रांगं कुजमष्टमं गुरुयमाहः पातमर्कक्रमं
जह्यात्हिप्रमुखेऽतिसंकट इदं सद्यौवनाढ्ये क्वचित् ॥३८॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथगोधूलिलग्नमाह । गोधूलमिति । गोधूलंलग्नं सायंकाललग्नंपदजादिकेहीनजातौशुभकरंप्रोक्तम् न पूर्ववर्णानां क्व पंचांगशुद्धौ विवाहोक्तपंचांगे अत्रपंचांगशुद्धिर्मुख्या । तत्रकालप्रमाणंविशेषणद्वारेणाह । कथंभूतंगोधूलं रवेः अर्धास्तात्सकाशात्प्राक्परतोर्द्धघटिकम् अर्द्धघटिकायस्मिन्नित्यर्द्धघटिकं प्राक्पंचदशपलानि परतः पंचदशपलानि एवमर्द्धनाडिकमित्यर्थः। अत्रत्याज्यमाह। इहास्मिन्गोधूललग्ने षष्ठाष्टगमिन्दुचंद्रंजह्यात्त्यजेत् ।

पुनः किंकिजह्यादित्याह । सोग्रांगमुग्रहसहितंलग्नंकुजं भौममष्टमं गुरुयमाहः गुरुशनिदिनम् पातंमहापातंसिद्धांतगम्यम् अर्कक्रमंसूर्यसंक्रांति जह्यात् अन्ये- दोषानत्याज्या इत्यर्थः । अत्रगुरुयमाहस्त्यक्तं तद्दोषोपलंभाद्गुरुदिनेसूर्या- स्तात्प्राग्यामार्द्धंपरतोयमघंटः । शनिदिने अस्तमयात्प्राक्परतश्चकुलिकौ ।

"मार्तंडोदयतः स्मृतादिनपतेर्यामार्द्धनाथाग्रहा-
मार्तंडात्मजभोग उत्तरलवस्तज्ज्ञैःशुभेकर्मणि ।
त्याज्योसौकुलिकोथसूर्यदिवसोदानैश्चशक्रार्कदिग्-
वस्वांगाब्धियमैः स्मृतः कुरहितै रात्रौतुतिथ्यंशकैः" इति ।

त्याज्योसौकुलिक इत्यनेनशनौ अस्तात्प्राक्कुलिकोभवति । इनादौ कुलिकंदिवेत्यादिदिव्येकंतन्निशिन्यायेन अस्तात्परतोपिकुलिकोभवति । इतिहे- तोर्गुरुशनिवारौनिंदितौ । अथविप्रादीनामपिक्वचित्कार्यविशेषेणगोरजप्रवृत्ति- माह । विप्रमुखेतिसंकट इदंसद्यौवनाद्ये क्वचिदिति । यौवनाद्ये अतिसंकटे- प्राप्तेसतिक्वचिल्लग्नशुद्धचभावे इदंगोधूलं विप्रमुखेविप्रप्रभृतिवर्णत्रयेसत् शुभं- स्यात् अन्यथानेत्यर्थसिद्धम् । तदुक्तंज्योतिर्निबंधे—

"घटीलग्नंयदानास्तितदागोधूलिकंस्मृतम्
शूद्रादीनांबुधाः प्राहुर्नद्विजानां कदाचन ।
लग्नशुद्धिर्यदानस्याद्यौवनेसमुपस्थिते
तदातैः सर्ववर्णानांलग्नं गोधूलिकं स्मृतम्" इति ॥३८॥

मार्त्तण्डप्रिया–

सूर्य बिम्ब के अर्धास्त से पूर्व १५ पला और पश्चात के १५ पला को मिलाकर ३० पला (आधी घटी) का गोधूलि लग्न होता है। यह विवाह में शुभ होता है। यह गोधूलि लग्न सभी वर्णों के लिए पंचाङ्ग शुद्धि रहने पर शुभप्रद होता है। कुछ आचार्यों के मत से इसमें पंचेष्ट शुद्धि भी आवश्यक नहीं होता।

गोधूलि लग्न में षष्ठस्थ और अष्टमस्थ चन्द्रमा, पापग्रह युक्त लग्न, अष्टमस्थ मंगल, गुरुवार-शनिवार,[1] महापात दोष (व्यतिपात-वैधृति) और सूर्य की संक्रान्ति इन सबका त्याग करना चाहिए।

जब कन्या युवावस्था को प्राप्त हो गई हो ऐसे में ब्राह्मण-क्षत्रिय आदि के लिए भी शुभ लग्न के अभाव में गोधूलि लग्न प्रशस्त होता है ॥३८॥

---

१. गुरुवार के दिन सूर्यास्त के पूर्व में यामार्द्ध और पश्चात में यमघंट होता है और शनिवार के दिन सूर्यास्त के पूर्व में कुलिक और पश्चात में भी कुलिक ही होता है।

विवाहवेदी व अङ्ग मुहूर्त —

वेदी प्राक्प्रवणा चतुर्वरकरा हस्तोच्छ्रिताग्रयस्य दो-
र्जादेर्द्वित्रियुगांगुलैरपचिता सोक्ता बहिर्वामतः ।
यस्यांगं यददोऽङ्गिनो गदितभे कुर्यादिहेंदोर्बलं
नालोक्यं तु विवाहतस्त्र्यरिनवाह्नि प्राङ्न कुर्यादिदम् ॥३९॥

मार्त्तण्डवल्लभा —

अथोद्वाहवेदिकालक्षणमाह । वेदीति । प्राक्प्रवणापूर्वनिम्ना चतुर्वरकरा चतुर्भिर्वरकरैःप्रमिता वरोवैवाह्यः हस्तोच्छ्रिताहस्तप्रमाणेनोन्नता इयमग्रय-स्यब्राह्मणस्यप्रोक्ता सावेदीदोर्जादेः क्षत्रियादेः क्रमेणद्वित्रियुगांगुलैः अपचिता-हीना क्षत्रियस्यद्व्यंगुलन्यूना वैश्यस्यत्र्यंगुलोना शूद्रस्यचतुरंगुलोनाच । साक्व-कार्येत्याह । बहिर्वामत इति । गृहाद्बहिर्वामभागे । अंगुलप्रमाणंमार्कण्डेय-पुराणे उक्तं—

"परमाणुः परंसूक्ष्मंत्रसरेणुर्महीरजः
बालाग्रंचैवलिक्षाचयूकाचाथयवोदरम् ।
क्रमादष्टगुणानाहुर्यवानामष्टतोंगुलम्
षडंगुलंपदंतच्चवितस्तिर्द्विपदंस्मृता ।
द्विवितस्तीतथाहस्तोमार्कण्डेयमुनीरितः"

आगमांतरेपि—

"कर्तुर्दक्षिणहस्तस्यमध्यगांगुलिपर्वणः ।
मध्यमादैर्घ्यमानेनमात्रांगुलमितीरितम्" इति ॥

अन्यत्रोक्तं—

"यत्किंचित्पौरुषायामंविभज्यदशधापुनः
एकंद्वादशभागंतुकृत्वातेष्वेकमंगुलम् ।
देहलब्धांगुलंनामजानीयात्तस्यतत्पुनः
महामानांगुलिरितिमात्रांगुलिरिहोदिता ।
प्रासादादीनितेनैवकुर्यान्मानांतरेणवा
वेदिकादीनिशिबिकारथादीनांविधिपुनः" इत्यादि ।

अत्रवरकरग्रहणंतस्यहोमकर्तृत्वात् । ननुकन्याया अपिलाजाहुतौकर्तृत्व-मस्तितत्करप्रमाणंकिन्नोक्तम् । सत्यम् । अल्पावकाशस्थलेकन्याकरप्रमाण-मप्यंगीक्रियते तथाचोक्तंदेवयजनदीपिकायाम्—

"स्वल्पावकाशनिलयेहीनमानंसमाश्रयेत्" इति ।

अयनानाविधकर्मणामंगंकस्मिन्नक्षत्रेकर्तव्यमित्याह । यस्यांगमिति । यस्यकर्मणः यत् अंगमद इदमंगमंगिनोमुख्यस्यगदितभे उक्तनक्षत्रेकुर्यात् । इहास्मिन्नंगभूतकर्मणि इंदोर्बलंनालोक्यंनविचारणीयम् । तत्रविशेषमाह । विवाहतः । विवाहदिनात्प्राक्त्र्यरिनवाह्नितृतीयषष्ठनवमेह्नि इदमंगंविवाहांगंनकुर्यात् । विवाहांगानि यथा—

"दलनंकंडनंचैवव्यंजनंमोदकादिच ।
यवारमंडपोवेदीकुंकुमंवर्णकं तथा" इति ॥३९॥

मार्त्तण्डप्रिया––

विवाह मण्डप के बाहरी भाग में बायें तरफ पूर्व दिशा को ढलुआँ, वर के हाथ से ४ हाथ लम्बी ४ हाथ चौड़ी और १ हाथ ऊँची वेदी ब्राह्मण के लिए प्रशस्त होती है । क्षत्रिय-वैश्य और शूद्रादि वर्णों के लिए इससे क्रमशः २, ३ और ४ अंगुल छोटी वेदी (लम्बाई-चौड़ाई-ऊँचाई) प्रशस्त होती है ।

वैवाहिक कर्म के जो अङ्गीभूत (मंडप-वेदी-हरिद्रा) कर्म हैं वे प्रधानकर्म (विवाह) के विहित नक्षत्रादिकों में शुभ होते हैं । उन अङ्गीभूत कार्यों में चन्द्रबल विचारने की आवश्यकता नहीं पड़ती । ये अङ्गीभूत कर्म विवाह दिन से पूर्व में ३-६-९ वें दिनों में नहीं करना चाहिए ॥३९॥

वधूप्रवेश मुहूर्त —

लग्नादष्टिदिनांततःसममुनीष्वंकद्युषूर्ध्वं त्वयु-
ग्घस्रे मास्यपि हायने शरमिताद्वर्षात्परं स्वेच्छया ।
वैफामार्गसिते जगुःश्रुतियुगोद्वाहर्क्षचित्राश्विनी-
ज्यक्षैश्रानवमंदिरे निशि वधूसंवेशमंगे स्थिरे ॥४०॥

मार्त्तण्डवल्लभा —

अथक्रमप्राप्तंवधूप्रवेशमाह । लग्नादिति । लग्नाद्विवाहतः सकाशात् अष्टिदिनांततः षोडशदिनमध्ये सममुनीष्वंकेषुद्युषुघस्रेषु समाः समसंख्याकाः मुनिः सप्तमः इषुः पंचमः अंकोनवमः एषुद्युषुदिवसेषु अत ऊर्ध्वंषोडशदिनादूर्ध्वम् अयुग्घस्रेविषमदिने मास्यपि विषमेहायनेवर्षे वधूसंप्रवेशंजगुरूचुः । एतदुक्तं भवति । षोडशदिनमध्येसमादिषुदिनेषुकर्तव्यः षोडशदिनातिक्रमेमासपर्यंतंविषमदिनेवधूप्रवेशः कार्यः । प्रथममासातिक्रमेवर्षपर्यन्तंविषमेमासिकर्तव्यः तदाविषमदिननियमोनास्ति । एवं प्रथमे वर्षे अतिक्रान्ते पंचमवर्षपर्यन्तं विषमे वर्षे कर्तव्यः तदा विषम मास नियमो नास्ति । अथविलंबितं

वधूप्रवेशनंकस्मिन्मासपक्षेकर्तव्यमित्याह । वैफामार्गसिते वैवैशाखः फाफाल्गुनः मार्गोमार्गशीर्षः एषांसितः शुक्लपक्षः तस्मिन् । कैः श्रुतियुगोद्वाहर्क्षचित्राश्विनीज्यर्क्षैः श्रुतियुगं श्रवणधनिष्ठे उद्वाहर्क्षाणिविवाहनक्षत्राणि-पूर्वोक्तानि चित्राश्विनीप्रसिद्धे ईज्यर्क्षं पुष्यः तैः । अनवमन्दिरेजीर्णगृहे—

"नवीनमन्दिरेकन्यांनवोढांनप्रवेशयेत्"

इतिनिषेधादनवमन्दिर इत्युक्तम् । उक्तं च—

वधूप्रवेशनंकार्यंपंचमेसप्तमेदिने
नवमेचशुभेवारेसुलग्नेशशिनो बले" इति ।

नारदः—

आरभ्योद्वाहदिवसात्षष्ठे वाप्यष्टमेदिने ।
वधूप्रवेशः संपत्त्यै दशमेऽथसमेदिने[1] इति" ।

संग्रहे—

विवाहमारभ्यवधूप्रवेशोयुग्मेतथाषोडशवासरांतात् ।
तदूर्ध्वमब्देयुजिपंचमांतादतःपरस्तान्नियमोनचास्ति ॥

वृद्धनारदः—

समे वर्षे समे मासियदिनारीगृहंविशेत् ॥
आयुष्यंहरतेभर्तुः सानारीमरणंव्रजेत् ।

भास्करव्यवहारे—

रात्रौविवाहभेशस्तः सन्मुहूर्तेस्थिरोदये
वधूप्रवेशोनैवात्रप्रतिशुद्धाद्भयं विदुः ।
ऋक्षैर्वैवाहिकैः शुद्धैर्दम्पत्योश्चशुभप्रदम्
वधूप्रवेशनंकार्यंपंचमेह्यकृतंयदि ।
मार्गफाल्गुनवैशाखेशुक्लपक्षेशुभेदिने
मूलपुष्यमृदुस्वातीस्थिराश्विश्रुतिवासरे ।
पितृभेचकरेनारीप्रविष्टापुत्रिणीभवेत्" इति ॥४०॥

मार्त्तण्डप्रिया—

वधूप्रवेश

विवाह के दिन से १६ दिनों के भीतर सम दिनों और ५-७-९ वें दिनों में वधू-प्रवेश को आचार्यों ने शुभप्रद माना है।

१६ दिनों के पश्चात २९वें दिन (मासाभ्यन्तर) तक विषम दिनों (१७-१९-२१ आदि) में शुभप्रद होता है।

---

१. नारद संहिता—अ० २७ श्लो० १६२–६३ ।

१ मास के बाद एक वर्ष (वर्षाभ्यन्तर) तक विषम मासों (३-५-७ आदि) में शुभप्रद होता है। इसमें सम विषम दिन का विचार नहीं करना चाहिए।

१ वर्ष के पश्चात विषम वर्षों में करना शुभप्रद होता है इसमें विषम मास का विचार नहीं होता।

५ वर्षों के पश्चात कभी भी पंचाङ्ग शुद्धि देखकर वधूप्रवेश करना चाहिए।

एक वर्ष के पश्चात जो वधूप्रवेश होता है वह "विलम्बित वधूप्रवेश" कहलाता है। उसमें मास शुद्धि देखी जाती है। अर्थात वह विलम्बित वधूप्रवेश वैशाख-फाल्गुन मार्गशीर्ष मासों के शुक्लपक्षों में ही होता है।

वधूप्रवेश के नक्षत्र—श्रव धनि. चि. अश्वि. पुष्य. मृग. हस्त. मूल. अनु. मघा. रोहि. रेवती उ. फा. उ. षा. उ. भा. और स्वाती इन १६ नक्षत्रों में, पुराने घर में और रात्रिकाल में।

वधू प्रवेश के लग्न—वृष-सिंह-वृश्चिक-कुम्भ।

विशेष—एक वर्ष के भीतर (वर्षाभ्यन्तर) में जो वधूप्रवेश होता है उसमें शुक्रशुद्धि का विचार नहीं किया जाता है, परन्तु एक वर्ष के बाद में होने वाले वधूप्रवेश में शुक्रशुद्धि का विचार करना चाहिए ॥४०॥

प्रथम आषाढ़ादि मास में बधू का पतिगृह में वासफल—

उद्वाहात्प्रथमे शुचौ यदि वसेद्भर्तुर्गृहे कन्यका
हन्यात्तज्जननीं क्षये निजतनुं ज्येष्ठे पतिज्येष्ठकम् ॥
पौषे च श्वशुरं पतिं च मलिने चैत्रे स्वपित्रालये
तिष्ठन्ती पितरं निहंति न भयं तेषामभावे भवेत् ॥४१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

इदानींप्रथमाषाढादौभर्त्रादिगृहेवासनिषेधमाह उद्वाहादिति। उद्वाहाद्विवाहादुपरि प्रथमेशुचौ आषाढेकन्यायदिभर्तृगृहेवसेत्तदा तज्जननींतस्यभर्तृजननींहन्यात् इत्यादिसुगमम् ॥४१॥

मार्त्तण्डप्रिया—

विवाह के पश्चात नववधू अपने पतिगृह में यदि प्रथम आषाढ़मास में रहे तो सास के लिए, प्रथम क्षयमास में स्वयं के लिए, प्रथम ज्येष्ठ में पति के बड़े भाई के लिए, प्रथम पौष में श्वसुर के लिए और प्रथम अधिमास में पति के लिए हानिकर होती है। श्वसुर-ज्येष्ठ-सास आदि के नहीं रहने पर किसी प्रकार का दोष नहीं होता। यदि रहें तो उपरोक्त मासों में कन्या को पति गृह में नहीं रहना चाहिए ॥४१॥

पुनर्भू विवाह मुहूर्त—

शूद्रांत्येषु पुनर्भुवापरिणयः प्रोक्तो विवाहोक्तभै-
र्नालोक्यं तिथिमासवेधभृगुजेज्यास्तादि तत्रार्कभात् ।।
त्रित्र्यृक्षेषु मृतिर्धनं मृतिमृती पुत्रा मृतिर्दुर्भगं
श्रीरौन्नत्यमथो धृतीश कृत तत्त्वर्क्षेऽत्ययःसाभिजित् ।।४२।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथपुनर्भू विवाहमाह । शूद्रांत्येष्विति । शूद्राःप्रसिद्धाः अन्त्याः रजकादयः तेषुपुनर्भवापरिणयः प्रोक्तः । कैर्विवाहोक्तभैः स्पष्टम् । तत्रपुनर्भवापरिणये तिथिमासवेधगुरुशुक्रास्तादि न आलोक्यं स्पष्टम् । तथाचोक्तं ज्योतिर्निबन्धे---

नशुक्रास्तादिकंचित्यंशुद्धिवेधादिकं तथा
पुनर्भवासंवरणेनमासतिथिशोधनम्" इति ।

अथब्रह्मपट्टनक्षत्रशुद्धिमाह । अर्कभात्सूर्यनक्षत्रात् त्रित्र्यर्क्षेषु त्रिषुनक्षत्रेषु क्रमेण मृतिर्मरणंप्रथमेत्रिके द्वितीये त्रिकेधनं तृतीयेमृतिः चतुर्थे मृतिः पंचमे-पुत्राः पष्ठेत्रिकेमृतिः सप्तमेदुर्भगम् अष्टमे लक्ष्मीः नवमेत्रिके औन्नत्यंप्रोक्तम् । अथरुद्रपट्टशुद्धिमाह । अर्कभादित्यनुवर्तते धृतीशकृततत्त्वर्क्षे धृतिरष्टादशम् ईश एकादशं कृतश्चतुर्थम् तत्त्वंपंचविंशम् एतन्मितेनक्षत्रे अर्कभात् एतन्मिते इत्यर्थः । तत्रचतुष्टयेसाभिजित्गणिते अत्ययोमृत्युः स्यात् । अर्थादन्येषु शुभं प्रोक्तमिति ।।४२।।

मार्त्तण्डप्रिया—

शूद्र-अन्त्यज (नीच) जाति के स्त्रियों का पुनर्विवाह होता है। पुनर्विवाह भी वैवाहिक नक्षत्रों में ही करना चाहिए। इसमें मास की तिथि की शुद्धि गुरू-शुक्र के उदय-अस्त का विचार नहीं होता है।

पुनर्विवाह में नक्षत्र शुद्धि दो प्रकार से देखी जाती है। एक ब्रह्मपट चक्र से दूसरा रुद्रपट चक्र से। इसमें सूर्य के वर्त्तमान नक्षत्र से चान्द्र नक्षत्र तक गणना करनी चाहिए और फलाफल के अनुसार वैवाहिक कार्य को करना चाहिए।

ब्रह्मपटचक्र

सूर्य के	नक्षत्र से	३	चान्द्रनक्षत्र	तक	मृत्यु
,,	,,	६	,,	,,	धनप्राप्ति
,,	,,	९	,,	,,	मृत्यु
,,	,,	१२	,,	,,	,,

सूर्य के नक्षत्र से		१२	चान्द्रनक्षत्र तक	मृत्यु
,,	,,	१५	,,	पुत्रप्राप्ति
,,	,,	१८	,,	मृत्यु
,,	,,	२१	,,	दरिद्रता
,,	,,	२४	,,	लक्ष्मीप्राप्ति
,,	,,	२७	,,	उन्नति

इसमें अभिजित को छोड़कर २७ नक्षत्रों की ही गणना होती है।

रुद्रपट चक्र—

सूर्य के नक्षत्र से	१८वें	चान्द्रनक्षत्र में	मृत्यु
,,	११	,,	,,
,,	४	,,	,,
,,	२५	,,	,,

इसमें साभिजित २८ नक्षत्रों की गणना होती है ॥४२॥

संस्कारों में विविध विचार—

भुक्तायैव सुतामुपोषितनरो दद्याच्च सावित्रिका-
मारब्धोत्सवके यदा जनिमृती स्यातां स्वगोत्रे क्वचित्।
सांगं तं विदधीत वाजमपरेऽस्मादारभेत्पूर्वतो
यज्ञोद्वाहनचौलमौञ्जिकमहः सु स्वर्गदिक्त्रित्रिषु ॥४३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथनानाविधशास्त्रार्थानाह—भुक्तायेत्यादिना। उपोषितनरः भुक्ताय-कृतभोजनायैव सुतांदद्यात्। परमुपोषितनरः भुक्तायैवबटवेसावित्रिकांगाय-त्रींदद्यात्। तदुक्तं ज्योतिर्निबन्धे—

भुक्त्वासमुद्वहेत्कन्यां सावित्रीग्रहणंतथा
उपोषितः सुतांदद्यादागतायवरायच" इति।
आरब्धोत्सवकेयदाजनिमृती स्यातांस्वगोत्रेक्वचित्
सांगंतंविदधीतवाजमपरं.........." इति।

वाजमन्नम् अपरे असगोत्रिणोविदधीरन्—

वाजमन्नंगरुद्वाजो वाजंपीयूषमुच्यते"

इत्यनेकार्थध्वनिमंजर्याम्। शेषंसुगमम्। उक्तंच—

विवाहोत्सवयज्ञादावारब्धेसूतकं यदि
सांगंतत्कर्मकुर्वीत अन्नदानादिकंपरैः" इति।

९ मु० मा०

अस्मादारभेत्पूर्वतोयज्ञोद्वाहनचौलमौंजिकमहः सुस्वर्गदिक्त्रित्रिष्विति अस्मान्निश्चितदिनात्पूर्वतः प्रथमतः यज्ञोद्वाहनचौलमौंजिकमित्येतत्कर्म चतुष्टयंक्रमात्स्वर्ग २१ दिक् १० त्रि ३ त्रिषु ३ अहः सु आरभेत् यज्ञ एकविंशतिदिनेषु उद्वाहनंविवाहः दिक्षुदशदिनेषु चौलंत्रिषुदिनेषु मौंजिकंत्रिषुदिनेष्विति । उक्तंच--

एकविंशत्यहर्यज्ञे विवाहेदशवासराः ।
त्र्यहेचूडोपनयने नांदीश्राद्धंविधीयते" ॥

आरंभलक्षणम्—

आरम्भोवरणंयज्ञे संकल्पोव्रतसत्रयोः ।
नांदीश्राद्धंविवाहादौ श्राद्धेपाकपरिक्रिया" इति ॥४३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

कन्यादाता को स्वयं अभुक्त (उपवास) रहकर भोजन किए हुए वर को कन्यादान करना चाहिए। इसी प्रकार आचार्य को भी स्वयं अभुक्त (उपवास) रहकर भोजन किए हुए वटु को (उपनयन में) सावित्री (मन्त्र) देना चाहिए। बिना भोजन किए हुए वर को पत्नी का ग्रहण और वटु को सावित्री (मन्त्र) का ग्रहण नहीं करना चाहिए।

उपनयन-विवाह आदि उत्सव के प्रारम्भ हो जाने पर कुल गोत्र में यदि किसी का जन्म या मृत्यु होवे तो प्रारम्भ हुए उत्सव को विधिवत् सम्पन्न करना चाहिए। परन्तु उसमें अन्नादि का पाककर्म भिन्नगोत्र वालों से कराना चाहिए। इस प्रकार अशौच का दोष नहीं लगता। उत्सवों का प्रारम्भकाल निम्नलिखित है–

जो दिन निश्चित हो उससे २१ दिन पूर्व में यज्ञका प्रारम्भ
१० ,, विवाह का प्रारम्भ
३ ,, चूड़ाकरण-उपनयन का प्रारम्भ

यज्ञ में आचार्य ऋत्विक् आदि का वरण, उपनयन विवाहादि में नान्दीश्राद्ध और श्राद्ध में पाकारम्भ को ही कार्यारम्भ कहा जाता है ॥४३॥

विवाह के पश्चात वर्ज्य—

नो श्राद्धं क्षयदर्शनैत्यिकमधीति शीतलाप्स्वाप्लुतिं
सीमासिन्ध्वतिपातमेककुलजाः सव्यातिपातं क्वचित् ।
उत्थापावधि मंडपस्य स शरागाह्नोर्विषष्ठेसमेऽ-
ह्नयु द्वास्यो न गृहोद्वहौ सहजयोस्तुल्या क्रियाऽब्दान्ततः ॥४४॥

मार्त्तण्डवल्लभा –

क्षयदर्शनैत्यकंश्राद्धं अधीतिपठनं शीतलाप्सुशीतलोदकेषु आप्लुतिस्नानं सीमासिध्वतिपातं सीमाप्रसिद्धा सिंधुर्महानदी –

सिन्धुर्नदीसमुद्रयोरित्यभिधानात्"

तयोरपिपातः उल्लंघनं सव्यातिपातम् अपसव्यमित्येतत् एककुलजाः सगोत्रिणः क्वचिन्नोकुर्युः। किमवधिमंडपस्य उत्थापनावधि यावन्मंडपोत्थापनंस्यात्तावन्नकुर्यादित्यर्थः। उक्तंच--

दर्शश्राद्धंक्षयश्राद्धं शीताद्भिः स्नानमेवच।
प्राचीनावीतिकरणं नदीसीमातिपातनम्॥

अन्यच्च—

नित्यश्राद्धमधीतिंचस्नानंचशिशिरैर्जलैः।
सपिंडानैवकुर्वीरन् मंडपोत्थापनावधि॥

अथसमंडपोत्थापः कदाकार्य इत्याह। सशरागाह्नोरिति। शराःपंच अगः सप्त तन्मिताह्नोर्दिनयोः पंचमेसप्तमे विषष्ठेसमे षष्ठरहितेसमेह्निसमदिने उत्थाप्यः। उक्तंच—

मंडपोत्थापनंकार्यं समेतुदिवसेबुधैः।
षष्ठंचविषमंनेष्टं मुक्त्वापंचमसप्तमौ" इति।

अब्दांतवर्षमध्येगृहोद्वाहौ न कर्तव्यौ। सहजयोः एकमातृजयोः पुरुषयोः पुरुषस्त्रियोः समानक्रियासमानंकर्म न कुर्यादित्यर्थः। भिन्नमातृजयोर्नदोष इत्यर्थात्सिद्धम्। अर्थात्भिन्नमातृजयोस्तथा सहोद्वाहादिकरणमागतं तद्भिन्नकर्तृत्वेभिन्नगृहेसतिवेदितव्यं कर्तृत्वमत्रश्राद्धाधिकारिणः पितुरेवनतु-विवाहहोमंकर्तुर्वरस्य। तथाचोक्तम्—

एकमातृजयोरेकवत्सरेपुरुषस्त्रियोः।
नसमानक्रियांकुर्यान्मातृभेदेविधीयते" इति।

पुरुषौपुरुषस्त्रियौ पृथक्द्वित्वविवक्षयाबहुत्वासंभवान्नबहुत्वम् यद्वापुरुषश्चस्त्रीचतथातयोर्द्वयोः पुरुषयोः स्त्रियोर्वा पुरुषस्त्रियोर्वा। कन्यापुरुषयोर्विवाहविशेषश्चोक्तः—

सोदर्ययोः कन्यकयोः सुतयोरेकवत्सरे।
विवाहोनस्मृतस्तज्ज्ञैः कन्यकासुतयोःस्मृतः" इति।

अत्रसंवत्सरमानंमनुजमानेन चैत्रादिफाल्गुनांतंवेद्यम्। समानक्रियेति द्वयोश्चौलेद्वयोर्व्रतबन्धौद्वयोर्विवाहौवासहजयोरित्यनेनैव एकमातृत्वंसंभवति। उक्तंच--

नैकस्मिन्वत्सरे कार्यौ गृहोद्वाहौकदाचन॥४४॥

मार्त्तण्डप्रिया—

विवाह के पश्चात मण्डपोत्थापन कालतक एक कुल-गोत्र वालों को क्षयश्राद्ध-दर्शश्राद्ध-नित्यश्राद्ध-वेदाध्ययन-शीतल जल से स्नान, ग्राम-नगर-महानदी व समुद्र का सीमोलंघन नहीं करना चाहिए।

मण्डपोत्थापन कार्य को विवाह के दिन से ५वें या ७वें दिन अथवा ६वें दिन को छोड़कर अन्य सम दिनों में करना चहिए। अर्थात ५-७-८-१०-१२······ दिन शुभ होते हैं।

वर्षाभ्यन्तर में एक परिवार में दो विवाह नहीं करना चाहिए। सहोदर दो भाई या बहन का समानकर्म (मुण्डन-उपनयन-विवाह) नहीं करना चाहिए। अगर दो मातायें हों या एकभाई और एकबहन हो तो समानकर्म वर्षाभ्यन्तर में किया जा सकता है। यहाँ वर्ष की गणना चैत्र से फाल्गुन तक समझना चाहिए ॥४४॥

विशेष कथन--

उद्वाहव्रतचूडकेऽब्ददलतत्खंडं तिलैस्तर्पणं
श्राद्धं पिंडयुतं महालयगयापित्र्यं विना नाचरेत्।
पूर्वं सप्तपदी विधेरधिगते दोषे वरे वा मृते
देयाऽन्यत्र विवाहिताऽपि च बलाद्या विद्धयोनिर्न चेत् ॥४५॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

वर्जान्तिराण्याह—उद्वाहव्रतचूडके क्रमेण अब्ददलतत्खंडम् उद्वाहेविवाहे कृतेसति अब्दंवर्षपर्यन्तं व्रतेव्रतबन्धेकृतेसतिदलम् अर्द्धाब्दंषण्मासपर्यन्त-मित्यर्थः। चूडकेचौलकर्मकृते सति तत्खंडं तस्यदलस्यापिखण्डं त्रिमासपर्यन्त-मित्यर्थः। तिलैस्तर्पणंपिंडयुतंश्राद्धंचनाचरेत्। किंविना। महालयगया-पित्र्यंविना महालयः भाद्रपदापरपक्षः गयाप्रसिद्धा पित्र्यंमातापितृक्षयदिनं तत्रयत्श्राद्धंक्रियतेतन्महालयगयापित्र्यंतद्विना। उक्तंच—

विवाहव्रतचूडासु वर्षमर्द्धंतदर्द्धकम्
अतिलंतर्पणंकुर्याच्छ्राद्धंकुर्यादपिंडकम् ।
महालयेगयाश्राद्धे माता पित्रोःक्षयेहनि
कृतोद्वाहोपिकुर्वीतपिंडदानंयथाविधि" इति।

पूर्वमिति। सप्तपदीविधेः पूर्वंप्रथमतोदोषे अन्धमूकादिके अवगतेज्ञातेसति वा इत्यथवा वरेमृतेसति कन्या अन्यत्रदेया। अपिच याकन्याबलाद्विवाहिता सापि अन्यत्रदेया। तर्हिकथंचेद्यदिविद्धयोनिर्नस्यात् विद्धायोनिर्यस्याःसातथा पुरुषभुक्तेत्यर्थः। उक्तं च याज्ञवल्क्येन--

महादोषे सुविज्ञाते पूर्वसप्तपदीविधेः
मरणादौसमुत्पन्ने देयान्यस्मैनदोषभाक्।
बलादुद्वाहिता कन्यादातव्यान्यवरायच" इति।

अन्यच्च—

बलादुद्वाहिताकन्यामन्त्रैर्यदिनसंस्कृता
अन्यस्मैविधिवद्देयायथाकन्यातथैवसा" इति।

महादोषाःकारिकानिबन्धे उक्ताः--

अंधोमूकःक्रियाहीनश्चापस्मारीनपुंसकः
दूरस्थः पतितः कुष्ठीदीर्घरोगीवरोनसन्।

अन्येपिदोषा उक्ताः—

मूर्खनिर्धनदूरस्थशूरमोक्षाभिलाषिणाम्
त्रिगुणाधिकवर्षाणां नदेयाजातुकन्यकाः" इति।

पुरुषनपुंसकलक्षणं--

यस्याप्सुप्लवतेबीजं ह्लादिमूत्रंचफेनिलम्
पुमान् स्याल्लक्षणैरेतैर्विपरीतैस्तुषंढकः।

अपरीक्ष्यदानेदोषः--

अपरीक्ष्यवरंकन्यां निर्गुणाय प्रयच्छति
कुलंतस्यैवतच्छोकसंतप्तोविनिकृंतति" इति ॥४५॥

मार्त्तण्डप्रिया--

विवाह के पश्चात १ वर्ष तक, उपनयन से ६ मास तक और चौल-मुण्डन से ३ मास तक तिल से तर्पण और पिण्डयुक्त श्राद्ध नहीं करना चाहिए, परन्तु पितृपक्ष-श्राद्ध (महालय), गयाश्राद्ध तथा माता-पिता का क्षयाहश्राद्ध करने में दोष नही होता।

वैवाहिक कर्म में सप्तपदी से पूर्व यदि वर में किसी तरह के दोष (अन्ध-वधिर-मूकादि) का पता लगे अथवा वर की ही मृत्यु हो जाय तो उस कन्या को विधिपूर्वक दूसरे वर को दे देना चाहिए इसमें दोष नहीं लगता, परन्तु सप्तपदी के पश्चात वर के दोष को जान लेने या मृत्यु हो जाने के पश्चात भी कन्या को दूसरे वर को नहीं देना चाहिए।

जो कन्या बलात ब्याही गई हो और यदि पुरुषसङ्ग से बची हो तो वह दूसरे वर को दान की जा सकती है, परन्तु यदि पुरुष संग से नही बची हो तो वह दूसरे वर को नही दी जा सकती ॥४५॥

विना स्त्री वालों का धार्मिक कार्यों में कर्त्तव्य, विषकन्या योग--

अस्त्रीकैः कुशहेमरौप्यरचिता ताम्री च विप्रादिभि-
र्भार्या वा निखिलैः सुवर्णरचिता धर्माय धार्या बुधैः ।
मंदारार्कदिनेऽबुपाग्निफणिभं भद्रातिथिश्चेदिहोद्-
भूता सा विषकन्यकाऽपि तनुगौ सौम्यौ रिपुक्षेत्रगौ ॥४६॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथस्त्रीरहितानांविधिमाह अस्त्रीकैः स्त्रीरहितैः विप्रादिभिः विप्रक्षत्रियविट्शूद्रैः क्रमेणकुशहेमरौप्यरचिताताम्रीचभार्याधर्मायधार्या । अयमर्थः । विप्रेणकुशरचिताभार्याधर्मायधार्या क्षत्रियेणहेमरचिता वैश्येनरौप्यरचिता शूद्रेणताम्रीताम्ररचिताभार्या धार्या । कथंभूतैर्विप्रादिभिः बुधैः स्वस्वधर्मनिरतैः वा इत्यथवा निखिलैः सर्वैर्विप्रादिभिः सुवर्णरचिता भार्याधार्या यतस्तयाविनागृहस्थधर्मसाधनं न स्यात् । तथाचोक्तम्--

अपत्नीकैस्तुधर्मार्थं कौशीहैमीचराजती
ताम्रीविप्रादिभिर्भार्याधार्याहैमीतथाखिलैः" इति ।

अथविषकन्यालक्षणमाह । मंदेति । मन्दारार्कदिने शन्यर्क भौमानामन्यतमस्य वासरे अंबुपाग्निफणिभं शततारकाकृत्तिकाश्लेषाणामन्यतमंनक्षत्रम् भद्रातिथिर्द्वितीयासप्तमी द्वादशी अथसामान्यतमा चेत्स्यात् तदायोगः स्यात् । इहोद्भूता अत्रयोगे या कन्याजातासाविषकन्यका । अथयोगांतरमाह । रिपुक्षेत्रगौसौम्यौतनुगौलग्नगतौचेत्स्याताम् ॥४६॥

मार्त्तण्डप्रिया--

यदि ब्राह्मण को स्त्री नही हो तो वह धार्मिक कृत्यों के लिए कुशा की पत्नी बनावे, क्षत्रिय स्वर्ण की, वैश्य चाँदी की और शूद्र ताँबे की स्त्री प्रतिमा बनवाये अथवा सभी वर्णवालों को सुवर्ण की ही प्रतिमा से धार्मिक कृत्य सम्पन्न करना चाहिए ।

विषकन्या—शनि-भौम-रवि इनमें से कोई भी वार हो, शतभिषा-कृत्तिका-श्लेषा इनमें से कोई भी नक्षत्र हो और २-७-१२ इनमें से कोई भी तिथि हो तो विष योग होता है ।

विषकन्या योग

शनि	भौम	रवि
शत.	कृत्ति	श्ले.
२	७	१२

अर्थात वार-नक्षत्र-तिथि इन तीनों का योग होने पर विषयोग होता है। इस योग में जन्म लेने वाली कन्या विषकन्या होती है।

यदि शत्रुराशिस्थ होकर दो शुभग्रह और एक पापग्रह लग्न में रहें तो भी विषकन्या योग होता है। वैवाहिक विचार में कन्या के लिए विषकन्या योग का होना अशुभ माना जाता है ॥४६॥

विषकन्यायोग-उसका फल और मूलादि नक्षत्रों का फल—

एकःक्रूर इहोद्भवाऽप्यथ तनौ सौरी रविःपुत्रगो
धर्मस्थो धरणीसुतोऽयमपरो योगोऽपि तज्जा विषा।
मूलाद्यत्रिपदोद्भवा श्वशुरमह्यन्त्यत्रये तत्स्त्रियं
ज्येष्ठांत्ये पतिपूर्वजं द्विपचतुर्थे देवरं हंति च ॥४७॥

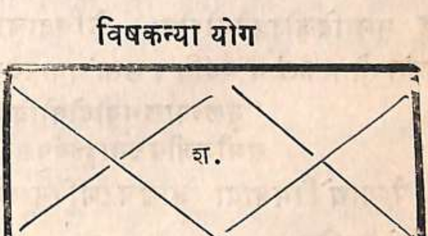
मार्त्तण्डवल्लभा—

अथयोगांतरमाह--एकः क्रूर इति। एकः क्रूरः रिपुक्षेत्रगः तनुगश्चेत्स्यात् इमौद्वौ योगौ इहोद्भवापिविषकन्यकास्यात्। तनौलग्नेसौरिः शनिः स्यात्। रविःसूर्यःपुत्रगःपंचमगः स्यात् धरणीसुतोभौमोधर्मस्थोनवमस्थो यदास्यात् तदा अयमपरोयोगः स्यात्। तज्जापिकन्याविषं स्यात्। विषमितियाविषस्वीकारात् मृत्युर्भवतीतिफलंसूचितं तस्मात्परित्याज्येतिभावः। अथमूलजादीनांफलमाह। मूलेति। मूलस्य आद्यत्रिपदोद्भवा प्रथमचरणत्रयेजाताकन्याश्वशुरंहंतिमारयति। अह्यन्त्यत्रये अहिराश्लेषातस्य अंत्यत्रये अंत्यचरणत्रयेजातातत्स्त्रियंश्वश्रूंहन्तीत्यर्थः। ज्येष्ठांत्ये ज्येष्ठायाः चतुर्थचरणेजातापतिपूर्वजं ज्येष्ठंहंति। द्विपचतुर्थे द्वौपौपतीयस्यतत् द्विपं विशाखा तस्यचतुर्थचरणेजातादेवरंहन्ति अर्थादन्यचरणजाशुभा ॥४७॥

मार्त्तण्डप्रिया—

विषकन्या योग

यदि शनि लग्न में सूर्य पंचम में और भौम नवम में रहे तो भी विषकन्या योग होता है। जैसे विष के संसर्ग से क्षय होता है वैसे ही विषकन्या के संसर्ग से पुरुष का भी क्षय होता है। यदि पुरुष में भी वैसा ही योग हो या उसका परिहार रहे तो शुभद होता है।



मूल नक्षत्र के प्रथम-द्वितीय-तृतीयचरण में जन्म लेनेवाली कन्या अपने श्वसुर के लिए अनिष्टकर होती है परन्तु मूल के चतुर्थचरण वाली शुभ होती है। तथा श्लेषा के प्रथमचरण की कन्या शुभ होती है परन्तु द्वितीय-तृतीय-चतुर्थचरण की अपने सास के लिए अनिष्टकर होती है। ज्येष्ठा के चतुर्थचरण की अपने पति के ज्येष्ठ भ्राता के लिए और विशाखा के चतुर्थ चरण वाली अपने पति के छोटे भाई (देवर) के लिए अनिष्टकर होती है। ज्येष्ठा और विशाखा के शेष १–२–३ चरण की कन्या शुभ होती है ।।४७।।

पुरुषों के लिए मूलादि नक्षत्रों का फल--

एवं ना युवतेरभाव इह नो दोषो नुरेतत्फलं
मौंज्यूर्ध्वं न वदंति केचिदपि पैत्र्याद्ये फलं मूलवत् ।
नोद्वाहौ सहजातयोस्त्र्यृतुषु नोद्वाहाद्व्रतं नो पुमु-
द्वाहात्स्त्र्युद्वहनं न मंगलविधेर्मुण्डं त्रिशुभ्येषु न ।।४८।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

एवमुक्तनक्षत्रचरणजातोनानरःयुवतेःस्त्रियः श्वशुरादीन्हंति । तथा-चगर्गः--

"मूलजाश्वशुरंहंतिसार्पजाचतदंगनाम्
ज्येष्ठजातुपतिज्येष्ठंदेवरंतुद्विदैवते" इति।

तथाचकश्यपपटले--

"मूलांत्यपादजौश्रेष्ठौतथाश्लेषाद्यपादजौ
द्वीशांत्यपादजौदुष्टौतथाज्येष्ठांत्यपादजौ' इति।

अस्यापवादः। अभाव ईहनोदोष इति। अभावेतेषांश्वशुरादीनामभावेसति इह मूलादिजोद्वहनेनोदोषः। केचिदाचार्याः नुःनरस्य मौंज्यूर्ध्वंमौञ्जीबंध-नानंतरमेतत्फलं न वदंति। उक्तंचनारदेन--

"मूलव्यालभवोदोषोविवाहे य उदाहृतः
समौञ्जीबंधनादूर्ध्वंपुंसां नैवेतिकेचन" इति।

पैत्र्याद्येपिमघाया आद्यचरणेपिमूलवत्फलंस्यादितिकेचिद्वदन्ति। तथा चोक्तं नारदेन--

"पैत्र्यगंडोद्भवाकन्याश्वशुरघ्नीचकेचन" इति।

अथऋतुत्रयमध्येकिंकिंनकर्तव्यमित्याह। नोद्वाहाविति। सहजातयोःएको-दरसमुत्पन्नयोः पुत्रयोःकन्ययोः कन्यापुत्रयोर्वा उद्वाहौविवाहौ त्र्यृतुषुत्र-

यश्चतेऋतवश्च ऋ्यृतवः तेषुनकार्यौ षण्मासाभ्यंतरेनकार्यावित्यर्थः । उक्तं-चनारदेन--

"विवाहश्चैकजन्यानां षण्मासाभ्यांतरे यदि
असंशयं त्रिभिर्वर्षैस्तत्रैका विधवा भवेत्"[1] इति ।

नोद्वाहाद्व्रतमिति । उद्वाहात्र्यृतुषुव्रतंमौंजीनकार्या । तथाचोक्तंनारदेन--

"पुत्रोद्वाहात्परं पुत्रीविवाहो न ऋतुत्रये
न तयोर्व्रतमुद्वाहान्मंगले नान्यमंगलम्"[2] इति ।

नोपुमुद्वाहात्स्त्र्युद्वहनमिति । पुमुद्वाहात्पुरुषविवाहात्त्र्यृतुषुस्त्र्युद्वहनं-कन्याविवाहः नोकार्यः । तथाचकात्यायनः--

"पुत्रोद्वाहात्परंपुत्रीविवाहोनऋतुत्रये" इति ।

नमंगलविधेर्मुण्डमिति । मंगलविधेः विवाहात्त्र्यृतुषुमुण्डनंचौलंव्रतंवान-कार्यम् । अत्र कात्यायनः--

"कूलेऋतुत्रयादर्वाङ्मंडनान्नतुमुंडनम्" इति ।

त्रिशुभ्येषुनेति । एषुत्र्यृतुषुत्रिशुभीनकार्या त्रयाणांशुभानंसमाहारस्त्रि-शुभी मंगलत्रयमितियावत् "नकुर्यान्मंगलत्रयम्" इतिवचनात् ॥४८॥

मार्त्तण्डप्रिया—

मूल के प्रथम-द्वितीय-तृतीय चरणका वर अपने श्वसुर के लिए श्लेषा के द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ चरणका अपनी सास के लिए अनिष्टकर होता है। ज्येष्ठा के चतुर्थ चरणवाला अपने ज्येष्ठशाले और विशाखा के चतुर्थ चरणवाला अपने छोटे शाले के लिए अनिष्टकर होता है। यदि इनका (सास-श्वसुर-शाला) अभाव हो तो दोष नहीं लगता है।

किसी-किसी आचार्य के मत से वर के लिए मूल-श्लेषा-ज्येष्ठा-विशाखा इन नक्षत्रों का दोष उपनयन के पश्चात नहीं लगता है। अर्थात यज्ञोपवीत धारण करनेवाले वर के विवाह में नक्षत्रदोष का विचार करने की आवश्यकता नहीं होती।

मघा नक्षत्र के प्रथमचरण में भी मूल की तरह ही फल होता है। अर्थात प्रथमचरण में उत्पन्न वर या कन्या अपने श्वसुर के लिए अनिष्टकर होते हैं।

दो सहोदरों का अर्थात दो भाईयों या दो बहनों का विवाह ६ महीने के भीतर नहीं करना चाहिए। विवाह के पश्चात ६ मास तक उपनयन भी नहीं

१. नारद सं.--अ. २९ श्लो. १५१।
२. नारद सं.--अ. २९ श्लो. १५०।

करें। लड़के के विवाह से ६ मास तक लड़की का विवाह और वैवाहिक कार्य के बाद ६ मास तक चूड़ाकरण और व्रतबन्ध भी नहीं करना चाहिए। ६ मास के भीतर कोई भी तीन मंगल कार्य करना उत्तम नहीं होता है ॥४८॥

मूल-श्लेषादि नक्षत्रजनन फल

कन्या

नक्षत्र	१ चरण	२ चरण	३ चरण	४ चरण
मूल	श्वसुर	श्वसुर	श्वसुर	शुभ
श्लेषा	शुभ	सास	सास	सास
ज्येष्ठा	,,	शुभ	शुभ	ज्येष्ठ को
विशाखा	,,	,,	,,	देवर

वर

नक्षत्र	१ चरण	२ चरण	३ चरण	४ चरण
मूल	श्वसुर	श्वसुर	श्वसुर	शुभ
श्लेषा	शुभ	सास	सास	सास
ज्येष्ठा	,,	शुभ	शुभ	ज्येष्ठ शाला
विशाखा	,,	,,	,,	छोटा शाला

संस्कारों के विषय में विशेष कथन—

नो ज्येष्ठाल्लघु कालरुद्धत ऋते कात्यायनो मुंडनं
चौलं प्राह न मेखलेत्युभयतःकार्या विवाहादियम्।
भेदेऽब्दस्य च संकटे वितनुयात्पूर्वोदितं मंगलं
वेदाहांतरिते दिनव्यवहिते नद्या नगेनापि वा ॥४९॥

मार्त्तण्डवल्लभा---

नोज्येष्ठाल्लघ्विति । ज्येष्ठात्मंगलात्विवाहादेस्त्र्यृतुषुलघुमंगलंनोकार्यम् । यद्बहिः शालायामुक्तं तज्ज्येष्ठमंगलम् अन्यल्लघुमंगलम् । ज्येष्ठलघुलक्षणं सारसमुचये—

"चूडाकेशांतसीमंतविवाहोपनयान्बुधाः
गुरुमंगलमित्याहुस्तदन्यल्लघुमंगलम्" इति।

तन्नकार्यमित्यर्थः । कस्मादृतेकालरुद्धतःऋते कालेनरुद्धंगर्भाधानपुंसवनादितस्मादृते तेनविनेत्यर्थः । तथाचकात्यायनः—

"मातृयज्ञक्रियापूर्वंज्येष्ठंकृत्वातुमंगलम्
ऋतुत्रयं पुनर्यावन्नकुर्याल्लघुमंगलम् ।
लघुवागुरुवाकार्यंकार्यंनैमित्तिकंयदि" इति ।

लघुगुरुमंगलयोर्भिन्नकर्तृत्वेनदोषः । कात्यायनोमुनिःइतिप्राह इतीतिकिं व्रतंमुंडनंन चौलमेवमुंडनं मौञ्जीविवाहात् उभयतःकार्येति । तथाचतद्वाक्यं—

"मुंडनंचौलमित्युक्तंव्रतोद्वाहौ तु मंगलम्
चौलंमुंडनमेवोक्तंवर्जयेद्वरणात्परम् ।
मौञ्जीचोभयतः कार्यायतो मौञ्जीन मुंडनम्" इति ।

अथसंकटेप्रवृत्तिमाह । भेदेऽब्दस्येति । संकटेदेशकालभयादौ अब्दस्यसंवत्सरस्यभेदेपूर्वोदितंमंगलंवितनुयात् विस्तारयेत्कुर्यादित्यर्थः । तथाचोक्तंसंहितासारावल्यां—

"फाल्गुनेचैत्रमासेतुपुत्रोद्वाहोपनायने
भेदादब्दस्यकुर्वीतनऋतुत्रयलंघनम्" इति ।

अथवा वेदाहांतरितेचतुर्दिनांतरितेकालेमंगलंवितनुयात् । तथाचस्मृतिसारावल्यां—

"पुत्रीपरिणयादूर्ध्वंयावद्दिनचतुष्टयम्
पुत्र्यंतरस्यकुर्वीतनोद्वाहमिति सूरयः" इति ।

अथवा दिनव्यवहिते एकदिनांतरितेकालेमंगलंकुर्वीत । तथाचोक्तम्--

"एकोदरप्रसूतानामेकस्मिन्वासरेनरः
विवाहंनैवकुर्वीतमंडनोपरिमुंडनम्" इति ।

अथवा एकाहेपिनद्यानगेनपर्वतेन अंतरितेदेशेमंगलंवितनुयात् । ज्योतिर्विवरणे—

"एकोदरयोरेकदिनोद्वाहतोभवेन्नाशः
नद्यन्तर एकदिनेकेप्याहुः संकटेचशुभम्" इति ।

शार्ङ्गधरोपि—

"नद्यंतरेपिशुभदंपृथक्शैलस्यरोधतः" इति ॥४९॥

मार्त्तण्डप्रिया--

कालनियन्त्रित संस्कार अर्थात गर्भाधान से अन्नप्रशाशन तक को छोड़कर गुरु-मंगलकृत्य (बृहत मांगलिक कार्य) के पश्चात ६ मास तक लघुमंगल कार्य नही करना चाहिए। गर्भाधान से लेकर अन्नप्राशन तक के संस्कार ६ मास के भीतर भी किये जा सकते हैं।

कात्यायन मुनि मुण्डनसंस्कार को ही चूड़ाकरणसंस्कार कहते हैं, मौञ्जी-कर्म नही। उनके मतानुसार मुण्डन और मौञ्जी दो संस्कार हैं, क्योंकि मुण्डन विवाह से पहले ही किया जाता है परन्तु मौञ्जीकर्म विवाह के पूर्व या पश्चात कभी भी किया जा सकता है।

आवश्यकता में संवत्सर के बदल जाने पर ६ मास के भीतर भी मंगल कार्य किये जा सकते हैं। यदि उससे भी अधिक आवश्यकता हो तो ४ दिन के बाद दूसरा मंगल कार्य करना चाहिए। उससे भी अधिक आवश्यकता में १ दिन का अन्तर करके करना चाहिए। यदि एक दिन में ही करना हो तो किसी नदी या पर्वत को व्यवधान (इसपार-उसपार) करके करना चाहिए। अर्थात एक मांगलिक कृत्य इसपार और दूसरा उसपार करना चाहिए।

विशेष—जो जो माङ्गलिक कृत्य नये मण्डप में किए जाते हैं वे ज्येष्ठ (गुरु) मंगल है और जो सामान्य रुप से किये जाते हैं वे लघु मंगल हैं। जैसे—

चूड़ाकेशान्त-सीमन्त-विवाह-उपनयन बुधाः।

ज्येष्ठमङ्गलमित्याहुस्तदन्यल्लघु मङ्गलम्। (सारसमुच्चय)॥४९॥

प्रत्युद्वाह विचार--

एकाहेऽपि जनाश्रयांतर इहेदं तारतम्याद्बुधै-
र्योज्यं नो यमयोर्निषिद्धमनयोरेकत्र कार्यं जगुः।
नैकस्मै दुहितृद्वयं सहजयोर्नैकोद्भवे कन्यके
दद्यादुद्वहनं मिथो न तनुयात्कुर्यादसंपद्यदः ॥५०॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

एकाहेपीति। अथवा एकाहेपिजनाश्रयांतरेमंडपांतरेमंगलंवितनुयात्--

"मंडपोऽस्त्रीजनाश्रयः"[१] इत्यमरः।

उक्तंचज्योतिर्विवरणे--

"नप्रतिषिद्धंलग्नंसंप्राप्तेसंकटेमहति
एकोदरसंभवयोरेकाहेभिन्नमंडपेकार्यम्" इति।

---

१. अमरकोषः—द्वि. का. पुर वर्ग श्लोक ९.

अथैषांपक्षाणांनिर्णयमाह । इहेदमिति । इहास्मिन्विवाहादिविषये इदं-भेदेऽब्दस्येत्याद्युक्तंबुधैस्तारतम्याद्योज्यम् संकटानुरूपंयोज्यमित्यर्थः । अथय-मलयोर्विशेषमाह । नोयमयोरिति । यमयोर्मलयोः इदंनोनिषिद्धम् अनयो-र्यमलयोर्मङ्गलमेकत्र एकवत्सरे एकवारे एकमण्डपेकार्यमितिमुनयोजगुः । उक्तंच—

एकस्मिन्वत्सरेचैववासरेमण्डपेतथा
कर्तव्यंमंगलंस्वस्रोर्भ्रात्रोर्यमलजातयोः'' इति ।

स्त्र्यादीनांस्त्रीणांपुरुषाणांवायमलजातानामप्येवं तुल्यन्यायत्वात् । यम-लयोर्मध्ये एकस्यांस्त्रियामेकस्मिन्पुरुषेसतिस्त्रीविवाहंसमाप्यपुरुषविवाहंकुर्यात् स्त्रीपुरुषयोः सहविवाहकरणस्याघटमानत्वात् । अथप्रत्युद्वाहनिषेधमाह । नैकस्मै इति । एकस्मैवरायदुहितृद्वयमेकोद्भवकन्याद्वयंनदद्यात् । सहजयोः एकोदरसंभवयोर्भ्रात्रोः एकोद्भवेकन्यकेनदद्यात् । तथामिथः परस्परमुद्वहनं-नतनुयात् । अत्रापिसंकटेप्रवृत्तिमाह—कुर्यादिति । अदः नैकस्मै इत्याद्युक्तम-कर्तव्यमसंपदि अन्यवधूवरालाभेसतिकुर्यात् । तथाचनारदः—

प्रत्युद्वाहो नैव कार्यो नैकस्मिन्दुहितृद्वयम्
नचैकजन्ययोः पुंसोरेकजन्ये तु कन्यके''[1] इत्यादि ॥५०॥

मार्त्तण्डप्रिया—

यदि कोई नदी या पर्वत भी व्यवधान नही हो सके तो पृथक पृथक मण्डप में ही मङ्गलकार्य करना चाहिए । इन पूर्वोक्त कार्योंमें पण्डितों (विद्वानों) को आवश्य-कतानुसार समय-काल का विचार करना चाहिए ।

यमल (जुड़वाँ) वरों या कन्याओं के लिए यह निषेध नहीं है । इनका एक ही वर्ष में-वार में–समय में और स्थान में विवाहादि माङ्गलिक कार्य करने को मुनियों ने कहा है । परन्तु यमल में यदि एकपुत्र और एकपुत्री रहे तो पहले पुत्री का विवाह करके तत्पश्चात पुत्र का विवाह करना चाहिए ।

प्रत्युद्वाह विचार—दो सहोदर कन्यायों का विवाह एक वर से नहीं करना चाहिए । दो सहोदर भाइयों का विवाह दो सहोदर बहनों से नहीं करना चाहिए । परस्पर विवाह भी नही करना चाहिए अर्थात इसकी लड़की से उसके लड़के का और उसकी लड़की से इसके लड़के का विवाह करना अच्छा नही होता है । इसे कुछ स्थानों पर ''गोलावट विवाह'' के नाम से भी जाना जाता है ।

---

१. नारद संहिता—अ. २९ श्लोक १५२ ।

यदि दो कन्याओं की शादी करनी है और एक ही वर है, तथा दूसरे वर का अभाव है तो ऐसी स्थिति में दोनों सहोदर कन्याओं का विवाह एक ही वर से कर देना चाहिए ऐसी स्थिति में दोष नही लगता है ।।५०।।

विवाह निश्चित हो जाने पर सूतक विचार--

नोद्वाहं सति निश्चयेऽपि जगदुः पित्रोः सपित्रोः स्त्रियाः
सूनोर्भ्रातुरनूढितस्वसुरसूत्क्रांतौ पितृव्यस्य च ।
अन्ये स्वान्वयजात्ययेऽपि जनकांबास्त्रीसुतान्यात्यये-
ऽब्दार्द्धार्द्धार्द्धदलांतरे विदधते हेरंबशांत्या क्वचित् ।।५१।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथप्रतिकूलनिर्णयमाह—नोद्वाहमिति । निश्चयेपिसतिबुधाः उद्वाहं न जगदुः । कस्यांसत्यां पित्रोः असूत्क्रांतौसत्यां माताचपिताचपितरौ तयोः असूनां-प्राणानां उत्क्रांतिः उत्क्रमणं तस्यां सत्यामित्यर्थः । कथंभूतयोः पित्रोः सपित्रोः पितरौचपितरौचपितरः मातुः पितरौ पितुः पितरौ इत्यर्थः । तौः सहवर्त्तमानौसपितरौ तयोः सपित्रोः पुनः कस्यांसत्यां स्त्रियाः असूत्क्रांतौसत्याम् इदंद्वितीयविवाहादौज्ञेयम् । एवंसूनोःपुत्रस्य भ्रातुः सहजस्य अनूढितस्वसुः अपरिणीतभगिन्याः पितृव्यस्यपितृभ्रातुः असूत्क्रांतौसत्याम् । एतदुक्तंभवति" पित्रादीनामुक्तानांमध्ये अन्यतमेमृतेसतिविवाहंनकुर्यादित्यर्थः । तथाचवृद्धशौनकः—

वरवध्वोःपितामातापितृव्यश्चसहोदरः
एतेषांप्रतिकूलंचेन्महाविघ्नप्रदंभवेत् ।

अन्यच्च—

पितापितामहश्चैवमाता चैवपितामही
पितृव्यः स्त्रीसुतोभ्राताभगिनीचाविवाहिता ।
एभिरेवविपन्नैश्चप्रतिकूलंबुधैःस्मृतम्
अन्यैरपिविपन्नैश्चकेचिदूचुर्नतद्भवेत्'' इति ।

अथान्येषांमतमाह । अन्य इति । अन्येबुधाः स्वान्वयजात्ययेपि स्वकुलजातमर्त्यनाशेपि उद्वाहंनविदधुः । तथाचभृगुः—

वाग्दानानंतरंयत्रकुलयोःकस्यचिन्मृतिः
तदोद्वाहोनैवकार्यःस्वपक्षक्षयदोषतः" इति ।

अथसंकटेप्रवृत्तिमाह । जनकांबास्त्रीति । जनकश्च अंबाचस्त्रीचसुतश्च अन्यश्च अन्यःकुलजःप्रतिकूलाधिकारी एषामत्ययोनाशः मरणमितियावत्

तस्मिन्सति अब्दार्द्धार्द्धार्द्धदलांतरे हेरंबशांत्यागणेशशांत्या क्वचित्संकटेविदधतेबुधा इत्यध्याहारः। एतदुक्तंभवति, वरस्यवध्वावापितृनाशे अब्दांतरेवर्षांतरे मातृनाशे अर्द्धान्तरेषण्मासांतरे स्त्रीनाशे अर्द्धार्द्धान्तरे त्रिमासांतरे। एतद्द्वीतीयादिविवाहेज्ञेयम्। तथापुत्रनाशे अर्द्धान्तरेसार्द्धमासांतरे अन्यनाशे पितृमातृस्त्रीत्यादिभ्योन्यस्य कुलजस्यनाशे दलांतरेसार्द्धमासस्यार्द्धान्तरे त्रयोविंशतिदिनांतरेविदधते इत्यर्थः ॥५१॥

मार्त्तण्डप्रिया––

वर-कन्या के विवाह की तिथि निश्चित हो जाने पर यदि वर या कन्या के माता-पिता, दादा-दादी, नाना-नानी, स्त्री-पुत्र,[1] भाई-बहन (अविवाहित) और चाचा इनमें से किसी की मृत्यु हो जाय तो विवाह नही करना चाहिए। ऐसा मुनियों का वचन है। भृगु आदि अन्य मुनियों का यह मत है कि अपने कुल में भी किसी की मृत्यु हो जाने पर वैवाहिक कार्य नहीं करना चाहिए क्योंकि उसमें मरणाशौच लगता है। व्यक्ति भेद से मरणाशौच—

पिता के मरण में	१	वर्ष का सूतक
माता ,, ,,	६	मास का सूतक
पुत्र ,, ,,	१½	,, ,,
कुल में किसी के मरण में	२३	दिन का सूतक।

यदि अत्यावश्यक हो तो श्राद्धादि कर्म के पश्चात गणेशशान्ति करके वैवाहिक क्रिया करनी चाहिए। ऐसी स्थिति में उपरोक्त सूतक की अवधिकाल का दोष नहीं लगता है ॥५१॥

सूतक में विशेष विचार––

भ्रातुश्चात्मजवद्व्ययेऽतिसमये पित्रोर्मृतेः संशये
नान्येषां प्रतिकूलमामयिविरक्तारादगतानामपि।
आतुर्यान्मृतनृक्रियानभिभवे नांदीमुखं नाचरे-
न्नोकुर्याज्ज्वरितस्य मंगलमतिव्याध्युद्भवे निश्चयम् ॥५२॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अन्यमध्येभ्रातुर्विशेषमाह—भ्रातुश्चात्मजवदिति। भ्रातुर्नाशेपुत्रवत्पुत्रनाशोक्तवज्ज्ञेयं सार्द्धमासांतरेकर्तव्यमित्यर्थः। तथाचस्मृतिसारावल्यां—

पितुरब्दमिहाशौचं तदर्द्धंमातुरेवच
मासत्रयंतुभार्ययास्तदर्द्धंभ्रातृपुत्रयोः।

१. पुनर्भूविवाह (द्वितीय विवाह) वाले पुरुष-स्त्री के।

अन्येषांतुसर्पिडानामाशौचंमाससंमितम्
तदातुशांतिकंकृत्वा ततोलग्नंविधीयते" इति ।

स्मृत्यंतरेप्युक्तम्--

संकटेसमनुप्राप्ते याज्ञवल्क्येनयोगिना
शान्तिरुक्तागणेशस्य कृत्वातांशुभमाचरेत् ।
अकृत्वाशान्तिकंयस्तु निषेधसतिदारुणे
नकरोतिशुभंगर्वाद्विघ्नस्तस्यपदेपदे" इति ।

ज्योतिःप्रकाशे--

प्रतिकूलेपिकर्तव्योविवाहोमासमंतरात्
शान्तिंविधायगांदत्त्वावाग्दानादिचरेत्पुनः" ।

इत्येतत्प्रौढायांकन्यकायांपित्रोर्मरणेपिज्ञेयम् । प्रतिकूलेपिप्रतिकूलाभावमाह । भय इत्यादि । भयेदुर्भिक्षराजभये अतिसमये अतिकालेपित्रोर्मातापित्रोर्मृतेःसंशयेसति अन्येषांमातृपितृभ्यामन्येषांमृतानांप्रतिकूलंनास्ति । तथाचोक्तं-ज्योतिःसागरे—

"दुर्भिक्षेराष्ट्रभंगेचपित्रोर्वाप्राणसंशये
प्रौढायामपिकन्यायांनान्यकूलंप्रतीक्षते" इति ।

विशेषांतरमाह आमयिविरक्ताराद्गतानापिप्रतिकूलंनास्ति आमयीरोगी-दीर्घरोगीतियावत् । विरक्तो गृहादिषूदासीनः आराद्गतोदूरगतः देशांतरगत इतियावत् ।

"आराद्दूरसमीपयोः"[१] इत्यमरः ।

एषामपिमृतानांप्रतिकूलंनास्ति । तथाचोक्तंस्मृत्यंतरे—

"दीर्घरोगाभिभूतस्य दूरदेशेस्थितस्यच
उदासवर्तिनश्चैवप्रतिकूलंनविद्यते" इति ।

अथान्यानपिशास्त्रार्थानाह—आतुर्यादिति । तुर्यश्चतुर्थःपुरुषः मूलपुरुषाच्चतुर्थः इत्यर्थः । तंमर्यादीकृत्यमृतस्य नरस्यक्रियाया अनभिभवे अभावेसतिक्वचित्कारणांतरात् क्रियायामकृतायां नांदीमुखंनाचरेत् एतत्स्वगोत्रविषयम् । तथाचमेधातिथिः—

"प्रेतकर्माण्यनिर्वृत्यचरेन्नाभ्युदयक्रियाम्
आचतुर्थंततः पुंसिपंचमेतुशुभंभवेत्" इति ।

नोकुर्यादिति । ज्वरितस्यमंगलं नोकुर्यात् । तथाचगर्गः—

"ज्वरस्योत्पादनं यस्य शुभंतस्य नकारयेत्
दोषनिर्गमनात्पश्चात्स्वस्थोधर्मंसमाचरेत्" इति ।

---

१. अमरकोषः--तृ. का. नानार्थवर्ग श्लोक २४२ ।

अतीति। अतिव्याध्युद्धवेकस्यचित्कुलजस्यशरीरे अतिदारुणज्वरोत्पत्तौ निश्चयंनोकुर्यात्प्रतिकूलभीत्या—

"रोगःपाप्माज्वरोव्याधिर्विकारोदुःखमामये"।

इत्यादिवाग्भट्टेज्वरपर्यायनामानि। तथाचगर्गः—

"केचिदूचुर्गुहस्थस्य कस्यचिद्दारुणोज्वरः
तावन्मंगलकार्यंचनकार्यंनिश्चितंबुधैः" इति ॥५२॥

मार्त्तण्डप्रिया—

भाई की मृत्यु हो जाने पर पुत्रवत (डेढ़ मास) अशौच समझना चाहिए। दुर्भिक्ष में, राजभय में, कालातिक्रमण में (विवाह का समय बीत रहा हो) या माता-पिता (वर या कन्या) के मरण सन्देह में अन्य मनुष्यों के मरने का अशौच नही लगता। ऐसी अवस्था में अपने कुल के मनुष्यों के मरने का भी दोष नहीं होता। अर्थात पूर्वोक्त अशौच अवधि का दोष नही लगता है।

जो दीर्घ रोगी हो, विरक्त (गृहत्यागी) हो अथवा प्रवासी (दूरदेशवासी) हो उसका मरणाशौच नही लगता है।

अपने कुल में यदि किसी की मृत्यु हो गई हो तो जबतक उसका श्राद्धादि कर्म नही हो जाय तबतक उसका नान्दीमुख श्राद्ध नहीं करना चाहिए। अर्थात श्राद्ध के पश्चात ही नान्दीमुख श्राद्ध करना चाहिए पहले नही।

जिसको ज्वर लगता हो उसका वैवाहिक मङ्गलकार्य नही करना चाहिए तथा जिसे महाव्याधि (असाध्य रोग) हो उसका भी वैवाहिक कार्य नहीं करना चाहिए ॥५२॥

जन्मनाशौच और सिंहस्थ गुरु का विचार—

चेत्स्यात्सूतकमुक्तपूर्वसमयेऽनारब्धकार्ये बुधः
कुष्मांडीघृतहोमतोऽपि जननाशौचे क्वचित्कारयेत्।
सिंहेज्ये न शुभं हितं हरिलवोर्ध्वं गौतमीदक्षिणे
जाह्नव्युत्तरतःक्वचिद्धितमजेऽर्केऽन्तोऽस्रभीत्याविषु ॥५३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथमहत्संकटेसतिवृद्धिसूतकेकर्मार्हतामाह—चेत्स्यादिति। उक्तपूर्वसमये यज्ञोद्वाहनचौलमौञ्जिकमित्यत्रोक्तेपूर्वकाले अनारब्धकार्येसतिकर्मणि अनारब्धेसति संकटेचप्राप्तेसति कूष्मांडीघृतहोमतः कूष्मांडीभिर्यद्देवादेवहेडनमित्यादि तिसृभिर्ऋग्भिर्घृतहोमः कूष्मांडीघृतहोमः तेनजननाशौचे दशाहतःजन्मदशाहमध्येकर्म आचरेत् कूष्मांडीघृतहोमं शास्त्रोक्तंसदक्षिणंकृत्वाकर्मकर्तव्यमित्यर्थः। तदुक्तंस्मृत्यंतरे—

"संकटेसमनुप्राप्ते सूतकेसमुपागते
कूष्मांडीभिर्घृतंहुत्वागांदत्वाचपयस्विनीम् ।
चूडोपनयनोद्वाहौप्रतिष्ठादिकमाचरेत्" इति ।

स्मृत्यंतरे—

"अनारब्धविशुद्धचर्थं कूष्मांडैर्जुहुयाद्घृतम्
गांदद्यात्पंचगव्याशी ततःशुद्धचतिसूतकी" इति ।

अथसिंहेगुरौसतिमंगलनिषेधमाह । सिंहेज्ये इति । सिंहेसिंहराशौ ईज्यः सिंहेज्यःतस्मिन्सतिशुभंनित्यव्यतिरिक्तं न हितंस्यात् । इदंतुपूर्वमेवप्रपंचितम् । तथाचकालनिर्णये—

"शांतिकंपौष्टिकंयात्राप्रतिष्ठोद्वाहपूर्वकम्
नकुर्यात्सर्वमांगल्यं सिंहस्थेचबृहस्पतौ"

तथाचमांडव्यः—

"इष्टापूर्तंचचौलादिसंस्कारान्वास्तुकर्मच
अन्यानिशुभकर्माणिनकुर्यात्सिंहगेगुरौ" इति ।

अथसंकटेप्रवृत्तिमाह हरिलवोर्ध्वमिति क्वचित्संकटेदेशकालभयादौ सिंहेज्येपिहरिलवादूर्ध्वंसिंहांशादूर्ध्वं गौतम्याः दक्षिणतः जाह्नव्या उत्तरतः शुभंकर्महितंस्यात् । तथाचज्योतिर्निबंधे—

"सिंहे गुरौसिंहनवांशकोर्ध्वं गोदावरीदक्षिणकूलजातैः ।
उद्वाहकालात्ययदोषभीतैः कार्योविवाहश्च्यवनो ब्रवीति" इति ॥

तथाचगर्गः—

"भागीरथ्युत्तरेतीरे गोदवर्याश्चदक्षिणे ।
व्रतोद्वाहादिकर्माणि सिंहसंस्थेनदुष्यति" इति ।

अर्थाद्गोदावर्याःउत्तरेभागीरथ्याः दक्षिणे एवं द्वयोर्गोदाजाह्नव्योर्मध्ये संकटेपिशुभं न आचरेदितिसिद्धम् । तथाचवसिष्ठः—

"गोदावर्युत्तरेतीरे भागीरथ्याश्चदक्षिणे ।
विवाहादि न कुर्वीत सिंहसंस्थे च वाक्पतौ" इति ।

अत्राप्यतिसंकटेप्रवृत्तिमाह—अजेति । अस्त्रभीत्यादिषुरजोभयादिषुसत्सु अन्तःगोदाजाह्नव्योर्मध्ये हरिलवादूर्ध्वंसिंहेज्येसति अजेमेषे इने सूर्ये सति शुभमाचरेत् अजे इने इत्येतद्विवाह विषयमस्त्रभीत्यादिष्वित्यनेन पदेनलक्ष्यते । तथाचशौनकः—

"मेषस्थेदिवसकरे सिंहस्थे वज्रपाणिसचिवे च
यस्याःपरिणयनमसौसाध्वीसुखसंपदोपेता" इति ।

व्रतबंधस्तु मीनगेसूर्येंसति चैत्रेकर्तव्य इतिग्रंथकृताप्रागेवोक्तम् अनिमिषर-विमधौकार्यमिति । तथा चमौञ्जीपटले--

"जन्मभादष्टगेसिंहेनीचेवाशत्रुगेगुरौ
मौजीबंधःशुभःप्रोक्तश्चैत्रेमीनगतेरवौ" ।

अथवा इने ईज्येनत्पदंमर्वशुभसाधारणविषयम्। तथाचशौनकः--

"सिंहस्थेदेवगुरौमेषस्थो यदिभवेत्सहस्रांशुः
मंगलकार्यंकुर्यादितिनारदपराशरौवदतः" इति ।

अस्त्रमीत्यादिष्वित्यत्रादिशब्देन वृद्धपितृमरणशंकायां कर्त्रन्तराभावाद्य-तिसंकटेज्ञेयम् ॥५३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

पूर्वोक्त समयों (४३ श्लोक) में यदि कार्यारम्भ से पूर्व ही अशौच हो जाय तो शास्त्रोक्त "कुष्माण्डी घृतहोम"[1] करके पण्डितजनों को माङ्गलिक कार्य प्रारम्भ करना चाहिए ।

सिंहस्थ गुरुदोष – जब सिंहस्थ गुरु हो अर्थात सिंहराशि में गुरु रहे तो माङ्गलिक कार्य (विवाहादि) नही करना चाहिए ।

परिहार—यदि आवश्यक हो तो गंगा से उत्तर और गोदावरी (गौतमी) से दक्षिण के प्रदेशों (भागों) में सिंह के नवांश के बाद अर्थात गुरु के ४।१६°४०' से अधिक होने पर मङ्गलकार्य करना चाहिए । परन्तु गंगा और गोदावरी के मध्यवर्ती प्रदेशों में नहीं करना चाहिए ।

सिंहराशि में गुरु के रहने पर जब सूर्य मेषराशि का रहे तो गंगा और गोदावरी के मध्यवर्ती प्रदेशों में (अत्यावश्यक्ता में) मंगलकार्य करना चाहिए ॥५३॥

नामराशि और जन्मराशि से विचारणीय विषय--

देशग्रामगृहज्वरव्यवहृतिद्यूतेषु दाने मनौ
सेवाकाकिणिवर्गसंगरपुनर्भूमेलके नामभम् ।
जन्मर्क्षंपरतो वधूपुरुषयोर्जन्मर्क्षमेकस्य चेज्-
ज्ञातं शुद्धिमितो विलोक्य च तयोर्नामर्क्षयोर्मेलकः ॥५४॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथ नामराशिजन्मराश्योर्निर्णयमाह । देशः प्रसिद्ध ग्रामः प्रसिद्धः गृहं प्रसिद्धम् ज्वरः प्रसिद्धः इत्यादिषुनामराशिः प्रधानंस्यात् । एतदुक्तं भवति

१. कुष्मांडी (ऋग्वेद) ऋचा से घृताहुति ।

देशग्रामगृहेषु प्रवेशाद्यर्थं ज्वरेचंद्राद्यवलोकनार्थं व्यवहृतिर्व्यवहारः द्यूतं प्रसिद्धम् दानंतुलापुरुषादि एषुचन्द्रबलाद्यर्थं मनौमंत्रेमेलनार्थं चन्द्रबलाद्यर्थं च सेवाराजादिसेवा तत्रमेलनाद्यर्थं काकिण्यां काकिण्यवलोकनार्थं वर्ग-शुद्धर्थं संगरेसंग्रामे चन्द्रबलाद्यर्थं पुनर्भूमेलकेपुनर्भूमेलनाय नामराशिरवलो-कनीय इत्यर्थः। परतः एभ्योन्यत्रविवाहयात्रादौ जन्मर्क्षंजन्मराशिः प्रधानं स्यात्। तथाचज्योतिर्निबंधे--

देशेग्रामेगृहेयुद्धे सेवायां व्यवहारके
नामराशेः प्रधानत्वं जन्मराशिंनचिंतयेत्'' इति।
काकिण्यांवर्गशुद्धौच दानेद्यूतेज्वरोदये
मन्त्रे पुनर्भूवरणेनामराशेः प्रधानता'' इति।
विवाहेसर्वमांगल्येयात्रादौ ग्रहगोचरे।
जन्मराशेः प्रधानत्वंनामराशिंनचिन्तयेत्'' इति।

अथवधूवरयोर्मध्ये एकस्यजन्मर्क्षंज्ञातमेकस्य नज्ञातंतदाशुद्धिमेलादिकं कथमवलोकनीयमित्याह वधूपुरुषयोरिति। वधूपुरुषयोर्मध्ये चेद्यदि एकस्य जन्मर्क्षंज्ञातमेकस्यनज्ञातंतदा इतः ज्ञातात् जन्मर्क्षादेकस्यशुद्धिविलोक्यतयोर्व-धूवरयोर्नामर्क्षयोर्मेलकोवर्णवश्यादिकः पूर्वोक्तोविलोक्यः। अर्थाद्द्वयोराश्यज्ञाने नामर्क्षादेवसर्वंविलोक्यम्। तथाचशाङ्र्गधरः--

विवाहघटनंचैव लग्नजंग्रहजंबलम्।
नामभाच्चिन्तयेत्सर्वंजन्मनज्ञायते यदा'' ॥५४॥

मार्त्तण्डप्रिया —

परदेश में, ग्राम में, गृहप्रवेश में, ज्वरादि में, कार्य व्यवहार में, द्यूत में, क्रीड़ा में, दान में, मन्त्रजप या ग्रहण में, नौकरी में, ग्राम की काकिणी विचार में, वर्गशुद्धि में, युद्ध में, और पुनर्विवाह में, इतने कार्यों में नामाक्षर से गणना करनी चाहिए।

व्रतबन्ध में, विवाह में, यात्रा में और गोचरफल के विचार में, इतने कार्यों में जन्माक्षर से गणना करनी चाहिए।

वर और कन्या में से किसी एक का जन्माक्षर ज्ञात हो और दूसरे का ज्ञात नहीं हो तो उस ज्ञात जन्माक्षर से ही केवल गुरु की शुद्धि देखनी चाहिए और गणना आदि का विचार सब कुछ नामाक्षर से करना चाहिए। एक के जन्माक्षर और दूसरे के नामाक्षर से गणना विचार नहीं करना चाहिए। दोनों के जन्माक्षर या दोनों के नामाक्षर से ही गणना विचार उत्तम होता है ॥५४॥

मेलापक हेतु नाम के नक्षत्र का ज्ञान—

भं नामादिमवर्णतोऽवकहडाद्युज्यादिवर्णाद्ववौ
तुल्यावत्र शसौ खषौ यदभिधा बह् वचोऽस्य नामांतिमम् ।
आर्या नृ द्वहने जनुर्भममलं पट्टस्य बंधे जगु-
र्गेहग्रामनृपाभिषेककृषिभौंज्यन्नाशने भूषणे ॥५५॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथमेलकार्थनाम्नो नक्षत्रज्ञानमाह भंनामेति । नामादिमवर्णोनामाद्यक्षरं तस्मात् अवकहडंशतपदंचक्रं यस्मात्चक्रात्चूचेचोलापदेष्वाद्येत्यादयः श्लोकानिबद्धास्तस्माच्चक्रात् भंनक्षत्रंज्ञेयम् । तद्यथा चूडामणीतिनाम्नः आद्याक्षरात् चकारात्चूचेचोला इत्यादिना अश्विनीनक्षत्रंतत्रप्रथमचरण इतिवत्ज्ञेयमित्यर्थः । तथाचदीपिकायाम्—

जन्म न ज्ञायतेयेषांतेषांनामगवेष्यते
चक्रेवकहडेभांशौतन्नाडीकैश्चिदग्निभात्" इति ।

तन्नाडीत्यस्यार्थः । यदानाम्नोनक्षत्रंगवेष्यते तदा अग्निभात्कृत्तिका नक्षत्रात्नाडीविलोक्येतिकैश्चिदुक्तं कैश्चिदितितन्मतमग्राह्यम् तस्मादश्विन्यादित्रिकंव्यस्तमितिन्यायेननाड्यवलोकनंबहुसंमतमितिभावः । अथनामादौ संयोगाक्षरेसतिकिंकर्तव्यमित्यपेक्षायामाह युज्यादिवर्णादिति । युजि युक्तेऽक्षरेसंयुक्ताक्षरेप्रद्युम्नेत्यादिकेनामादौ युक्ताक्षरेसति आदिवर्णात्प्रथम वर्णात्संज्ञेयम् । यथा प्रद्युम्नेनाम्निप्रथमवर्णःप्रःतत्राप्याद्यः पकारस्तस्मात् भंज्ञेयमित्यर्थः । प्रियवचेत्यादौप्रिकार एव द्रुपदेत्यादौद्रुकार एवग्राह्य इत्यादि स्वरशास्त्रे—

संयोगाक्षरजेनाम्निज्ञेयंतत्रादिमाक्षरम्" इति ।

अथ अवकहडचक्रेनामाद्यक्षराभावेसति किंकर्तव्यमित्यपेक्षायामाह बवौतुल्यावत्रशसौखषाविति । अत्रावकहडचक्रेबवौ इतिइमौवर्णौतुल्यौ तथाचखषौशिव इति नाम्निसति अवकहडचक्रेशकारस्याभावात्शकारस्थानेसकारांगीकारात्भंज्ञेयमितिभावः । एवमेवशसौतथाखषौपरस्परवर्णौज्ञात्वाभंज्ञेयम् । तथाचस्वरशास्त्रे—

खषौशसौबवौचैवज्ञेयावितिपरस्परम्" इति ।

अन्यच्च—

नप्रोक्ताङञणावर्णानामादौसंतितेनहि"

चेद्भवंतितथाज्ञेयागजडास्तेयथाक्रमम्'' इति ।
चक्रंशतपदंवक्ष्येऋक्षांशाक्षरसंभवम्'' इति ।

स्वरशास्त्रोक्तमवकहडचक्रंप्रसिद्धम् । अथ यस्यबहूनिनामानिसति तस्य- कस्मान्नाम्नो भंज्ञेयमित्याकांक्षायामाह यदभिधाबह्वोस्य नामांतिममिति । यस्य अभिधानामानि बह्वचोभवंति तस्यांतिमंपश्चाद्भवंनाम ग्राह्यम् । तथा- चस्वरशास्त्रे —

बहूनियस्यनामानि नरस्यस्युः कथंचन ।
तस्यपश्चाद्भवंनामग्राह्यंस्वरविशारदैः'' इति ।

अथजन्मनक्षत्रंयेषुयेषुशस्तंतान्याह आर्या इति । नृद्वहने पुरुषविवाहे जनुर्भंजन्मनक्षत्रममलंनिर्दूषणंजगुः तथापट्टस्यबंधने गेहंगृहकरणप्रवेशनं तथै- वग्रामोग्रामप्रवेशनं नृपाभिषेकोराजाभिषेकः कृषिःप्रसिद्धा मौंजीप्रसिद्धा अन्नाशनं नवान्नप्राशनं भूषणंभूषणधारणम् एषांसमाहारस्तस्मिन्जन्मभंशु- भदंजगुः । तथाच ज्योतिःप्रकाशे —

जन्मभंकृषिनृपाभिषेचने भूषणे नगरगेहकर्मणि
आधिपत्यभुविमौंजिबंधनेपुंविवाह उदितंशुभंबुधैः'' इति ।

राजमार्तंडे—

वसंतसमयेदद्यादब्देगर्भाष्टमेष्टमे ।
मेखलांजन्ममासेपिजन्मभे चतिथावपि'' इति ।

नारदः —

पट्टबंधनचौलान्नप्राशने चोपनायने ।
शुभदं जन्मनक्षत्रमशुभं त्वन्यकर्मणि''[1] । इति ॥५५॥

इति स्वोक्त मुहूर्तमार्तण्ड टीकायां मार्तण्डवल्लभायां विवाह प्रकरणम् ॥४॥

मार्त्तण्डप्रिया—

नाम के प्रथमाक्षर से अवकहडा चक्र के द्वारा नक्षत्र का ज्ञान होता है । जैसे "घनश्याम" का प्रथमाक्षर घ है अत: इसका नक्षत्र आर्द्रा और राशि मिथुन है । संयुक्ताक्षर में प्रथमाक्षर को ही ग्रहण करना चाहिए । जैसे त्रिपुरेश्वर में त्रि के स्थान पर "ति" का नक्षत्र विशाखा हुआ ।

अवकहडा चक्र

नाम अक्षर	चू. चे चो. ला.	ली लू. ले लो	अ.ई. उ.ए.	ओ वा वी.वू	वे वो. का की	कू.घ ङ.छ	के.को. हा ही.	हू हे. हो. डा.	डी.डू. डे डो.
नक्षत्र	अश्वि.	भरणी	कृत्ति.	रोहि.	मृग.	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	आश्ले.

१. नारदसंहिता अ. २२ श्लो. ४ ।

नाम अक्षर	मा.मी. मू. मे.	मो.टा टी. टू	टे. टो पा.पी.	पू. ष. ण.ठ	पे. पो. रा. री	रू. रे. रो.ता.	ती तू. ते.तो.	ना नी नू. ने	नो.या यी. यू.
नक्षत्र	मघा	पू फा.	उ.फा.	हस्त	चित्रा	स्वाती	विशा	अनु	ज्येष्ठा

नाम अक्षर	ये यो. भा.भी.	भू ध. फ.ढ.	भे.भो. जा जी.	खी.खू खे.खो.	गा.गी. गू. गे.	गो सा सी.सू.	से.सो. दा दी.	दू. थ. झ ञ.	दे.दो. चा.ची
नक्षत्र	मूल	पू.षा.	उ.षा.	श्रवण	धनि	शत.	पू.भा.	उभा	रेवती

अबकहडा चक्र में ब–व, श–स, ष–ख, ये अक्षर बराबर होते हैं। जिसके अनेक नाम हों उसका अन्तिम नाम (जो सबसे बाद का रखा गया हो) ग्रहण करना चाहिए।

पुरुष का विवाह, राजा का पट्टबन्धन, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, ग्रामप्रवेश, राज्याभिषेक, कृषिकर्म, उपनयन, अन्नप्राशन और आभूषणधारण इन कार्यों में जन्मनक्षत्र को ही आचार्यों ने शुभ बतलाया है। ये सभी कार्य जन्मतारा से भी किए जाते हैं। परन्तु अन्य कार्यों में जन्मतारा अशुभ होती है ॥५७॥

मुहूर्तमार्त्तण्ड की 'मार्त्तण्डप्रिया'' हिन्दी टीका में विवाह प्रकरण समाप्त–४

अग्न्याधान प्रकरणम्—५

अग्न्याधान मुहूर्त्त—

अग्न्याधानमवादि दारसमये दायाद्यकाले परै-
द्वींशाग्निध्रुवशाक्रपुष्यमृगपौष्णैर्व्यब्जलग्नांशयोः ।
जीवेंद्वर्ककुजैः सुतर्द्धिगुरुकेंद्रस्थैरनस्तंगतैः
स्वोच्चेष्टर्क्षगतैःपरैरुपचयैर्वित्ताद्यशुद्धौ बुधैः ॥१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथाग्न्याधानंवृत्तेनैकेनाह । अग्न्याधानमिति । अग्नेराधानंबहुभिर्बुधैर्दारकाले अवादिकथितम् । चतुर्थीकर्मानंतरंदारकालः परैराचार्यैर्दायाद्यकालेधनविभागकाले अवादि । तथाचवृत्तशते—

अग्न्याधानंदायकालेविधेयं कैश्चित्प्रोक्तंतच्चदायाद्यकाले" इति ।

तथाचकात्यायनगृह्ये—

आवसथ्याधानंदारकालेदायाद्यकाले एकेषाम्" इति ।

एतद्भाष्यकारैरेवंव्यवस्थापितम् अभ्रातृमतोदारकाले भ्रातृमतोदायाद्यकालेप्रोक्तमिति । स्मृतिषु कृतदारस्याग्निनाविनाबहुदोषोदृश्यते । तथाहि—

कृतदारोनैवतिष्ठेत्क्षणमप्यग्निनाविना
तिष्ठन्सचेद्द्विजोव्रात्यस्तथाचपतितोभवेत् ।
पितृपाकोपजीवीस्यात्भ्रातृपाकोपजीवकः
ज्ञानाध्ययननिष्ठोवा नदुष्येताग्निनाविना ।
योनाग्निमुपसेवेतदारान्कामादृतावपि
परदारीसविज्ञेयः स्वस्त्री स्वीकणादपि ।
यथा स्नानं यथा संध्या वेदस्याध्ययनं यथा
तथैवोपासनंदृष्टंनस्थिस्तद्वियोगतः" इत्यादि ।

तस्मात्सूत्रकारैः कात्यायनादिभिः दारकाल एवबाहुल्येनोक्तम् अग्न्याधाननक्षत्राण्याह । कैः द्वीशाग्निध्रुवशाक्रपुष्यमृगपौष्णैः द्वीशंविशाखा अग्निःकृत्तिका ध्रुवाणित्र्युत्तरारोहिण्यः शाक्रं ज्येष्ठा पुष्यमृगौप्रसिद्धौ पौष्णंरेवतीतैः । कयोः व्यब्जलग्नांशयोः विगताः अब्जाः याभ्यांतौव्यब्जौतौचतौलग्नांशौचतयोः । अब्जाः जलचरराशयः मकरस्यपश्चिमार्द्धं कुंभोमीनः कर्कटश्चैतेजलचरराशयः चंद्रोपिजलजः एतैरहितयोर्लग्नवांशयोरित्यर्थः ।

तथाचवृत्तशते—

कर्किनक्रघटमीनविलग्नेवांशकेननुगतेथतदीये
लग्नगेकुमुदिनीदयितेवानाशमेतिजनितोपिहुताशः'' इति ।

कैः जीवेंद्वर्ककुजैः सुतर्द्धिकेंद्रगुरुस्थैः जीवोगुरुः इंदुश्चंद्रः अर्कः सूर्यः कुजोभौमः तैः । सुतःपंचमम् ऋद्धय उपचयभवनानि गुरुर्नवमं केंद्राणि प्रथमचतुर्थसप्तमदशमानि ५, ३, ६, ११, १० ९, १, ४, ७, १० एतत्स्थान-गतैः । कथंभूतैः अनस्तंगतैः सूर्यकिरणैरलुप्तैः । पुनः कथंभूतैः स्वोच्चेष्टर्क्षं-गतैः स्वश्च उच्चानि च इष्टाश्च एषामृक्षाणिराशयस्तद्गतैः स्वराश्युच्च-राशिमित्रराशिगतैरित्यर्थः परैरुक्तेभ्योन्यैर्ग्रहैः उपचयैः त्रिषडेकादशदश-मगैः । कस्यांसत्यां वित्ताद्यशुद्धौ सत्यां वित्तंद्वितीयम् आद्यंलग्नं तयोः शुद्धिः क्रूराहित्यं तस्यां सत्यां शेषंपूर्ववत् प्रायश्चंद्रमित्युक्तमवलोक्यम् । तथाचवृत्तशते—

केंद्रर्क्षोपचयत्रिकोणभगताः सूर्यारजीवेंदवः,
शेषाश्चोपचयस्थिता यदितदाग्न्याधानमुक्तंशुभम् ।
चंद्रेनैधनगेम्रियेतयुवतिर्भौमेपुमानष्टमे,
शेषैर्मृत्युगतैरुजाचसहितोग्न्याधानकर्ताभवेत् ।
नोकुर्याद्धुतभुक्परिग्रहमिहक्ष्मापुत्रजीवेंदुभि-
र्नीचस्थैर्विजितैरिपोर्भवनगैरस्तंगतैर्वाद्विजैः'' इति।

तथाचसंहिसारे ।

अग्न्याधानंनकुर्वीतकर्किनक्रत्रयेविधौ
लग्नगेधनगेपापेतथारंध्रग्रहान्विते'' इति ।।१।।

इतिस्वकृतमुहूर्तमार्तण्डवल्लभायामग्न्याधान प्रकरणम् ।।५।।

मार्त्तण्डप्रिया——

अनेक विद्वानों के मतानुसार चतुर्थी कर्म के पश्चात और किसी अन्य आचार्य के मतानुसार भाईयों के धन के बटवारे के समय में अग्निहोत्र करना चाहिए ।

अग्निहोत्र के नक्षत्र— विशा; कृत्ति; उ. फा , उ. षा., उ. भा , रोहि., ज्येष्ठा, पुष्य, मृग. और रेवती, इन १० नक्षत्रों में ।

,, ,, लग्न —मेष, वृष, मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु और कुम्भ, इन ९ लग्नों में ।

,, के लिए ग्रहस्थिति——गुरु-चन्द्र-सूर्य-मंगल ये चारो ग्रह स्वगृही या स्वोच्च के या मित्रगृही हों, अस्तंगत नहीं हों और लग्न से २-८-१२ इन स्थानों को छोड़कर अन्य स्थानों में हों ।

अन्य ग्रह शनि-शुक्र-बुध लग्न से ३-६-१०-११ स्थानों में हों और लग्न तथा द्वितीय स्थान पापग्रह से रहित हो तो अग्निहोत्र शुभ होता है ।।१।।

मुहूर्तमार्त्तण्ड की ''मार्त्तण्डप्रिया'' हिन्दी टीका में अग्न्याधान प्रकरण समाप्त–५

गृह प्रकरणम्—६

ग्राम का शुभाशुभ विचार—

नामर्क्षाद्विसुतांकदिग्भवगतो ग्रामःशुभोऽन्योऽन्यथा
तत्कोणेंऽत्यभुवां शुभं निवसतां दोषाःपरेषामलम् ।
कन्यार्ककिधनुस्तुलाक्रियघटाःकौर्प्यंडजौ याम्यतो
मध्येऽन्ये न वसंत्यथैंद्रककुभो वर्गाःस्युरोजस्विनः ॥१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथगृहप्रकरणंविवक्षुस्तावद्ग्रामविचारमाह । नामर्क्षादिति । नामर्क्षान्नामराशेःसकाशात् द्विःसुतांकदिक् भव गतोग्रामःशुभः स्यात् । अन्य उक्तविपरीतोग्रामः अन्यथा स्यादशुभः स्यादित्यर्थः । तदुक्तंज्योतिःसागरे—

एकभेसप्तमेग्रामेवैरंहानिस्त्रिषष्ठगे
तुर्याष्टद्वादशेरोगःशेषस्थानेसुखंभवेत्" इति ।

एवंग्रामंशुभाशुभमभिधायेदानींग्रामदिङ्नियममाह । तत्कोण इति । तत्कोणेतस्यग्रामस्यकोणे अंत्यभुवांरजकचर्मकादीनांनिवसतांवसन्तिकुर्वतां शुभंस्यात् ।

रजकश्चर्मकश्चैवनटोबुरुड एव च ।
कैवर्तमेदभिल्लाश्चसप्तैते अंत्यजाः स्मृताः ॥

इत्यादीनांग्रामकोणे शुभंस्यादित्यथः । तत्कोणेनिवसतां परेषांवर्णानामलमत्यर्थंदोषाः स्युः । अशुभानिस्युरित्यर्थः । तथाचज्योतिर्निबंधे—

भवनपुरग्रामाणां येकोणास्तेषुनिवसतांदोषः ।
श्वपचादयोंत्यजाद्यास्तेष्वेवविवृद्धिमायांति ॥

एवंजातीनांशुभाशुभदिग्विभागमुक्त्वा राशिपरत्वेनदिक्षुवसतिमाह । कन्येति । यमाशादितःदक्षिणस्याःसकाशात्क्रमेणाष्टासुदिक्षुकन्यार्कधनुस्तुलादयो राशयोनिवसंति । अन्ये उर्वरितामध्येनिवसंति । एतदुक्तंभवति अभीष्टग्रामंनवभागं परिकल्प्यमध्यभागाद्दक्षिणभागेकन्यावसति कन्याराशिनांदक्षिणभागे गृहंनकार्यमित्यर्थः । तथैवनैॠते कर्कटः पश्चिमे धनुः वायव्ये तुला उत्तरे अजोमेषः ईशान्यां घटःकुंभः पूर्वेकौर्पीवृश्चिकः आग्नेये अंडजोमीनः निवसति । अन्येवृषमिथुनसिंहमकरा मध्यभागे निवसंति । एवंरा-

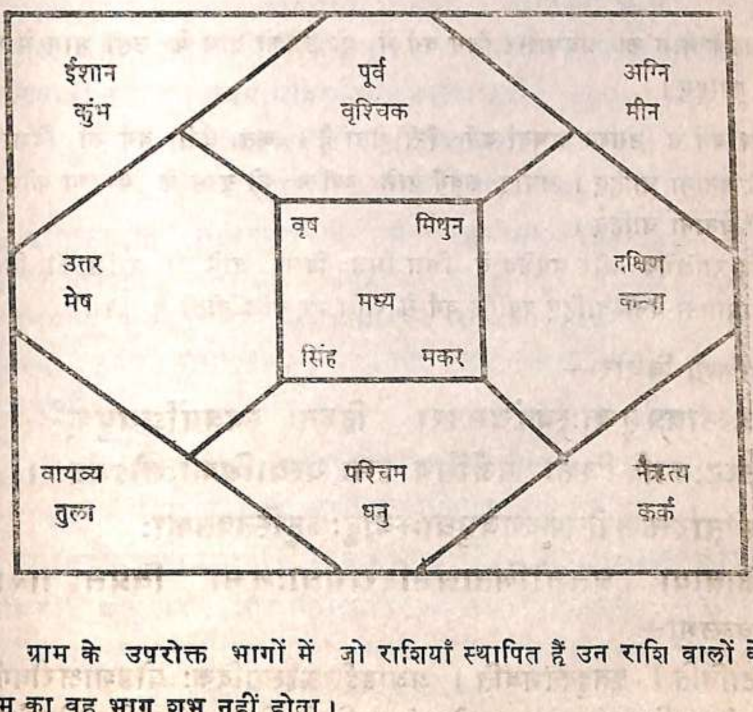
शिपरत्वेनदिङ्नियममुक्त्वा इदानींवर्गपरत्वेनदिङ्नियममाह । अथेति । इंद्र ककुभः सकाशात् अष्टासुदिक्षु अप्रमुखाः अष्टौवर्गाः अकचटतपयशवर्गाः इत्येतेप्रसिद्धाः ओजस्विनोबलवंतःस्युरित्युत्तरश्लोकेनान्वयः ॥१॥

मार्त्तण्डप्रिया—

व्यक्ति के नाम की राशि से ग्राम की राशि यदि २ री, ५वीं, ९वीं, १०वीं या ११वीं हो तो उसके लिए ग्राम शुभकारक अन्यथा अशुभकारक होता है। इस राशि गणना से ग्राम के शुभाशुभ का विचार होता है।

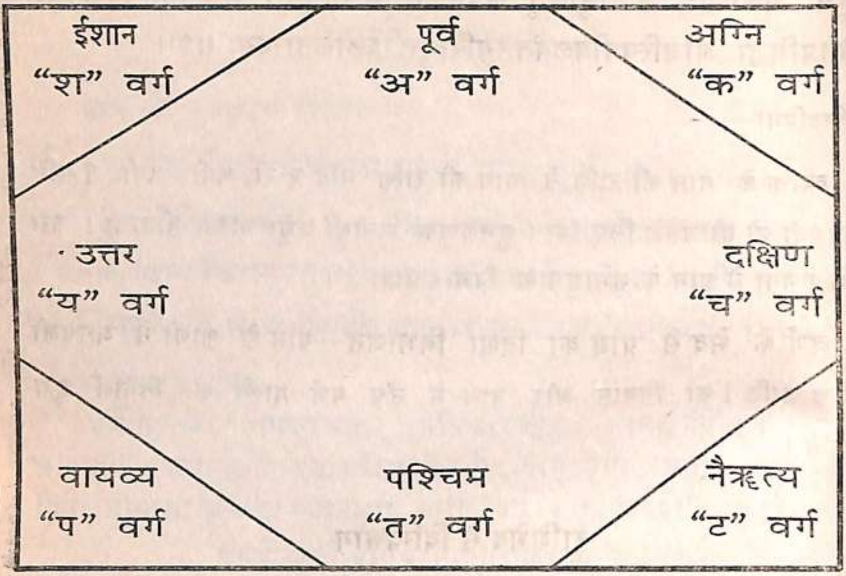
वर्ण के भेद से ग्राम का दिशा विभाजन—ग्राम के कोणों में अन्त्यजों (नीच जाति) का निवास और मध्य में उँच वर्ण वालों का निवास शुभ होता है।

राशिभेद से दिग्विभाग



ग्राम के उपरोक्त भागों में जो राशियाँ स्थापित हैं उन राशि वालों के लिए ग्राम का वह भाग शुभ नहीं होता।

वर्गभेद से दिग्विभाग



जिसके नाम का प्रथमाक्षर जिस वर्ग में हो उसको ग्राम के उसी भाग में घर बनाना चाहिए।

एक वर्ग से उसका पाचवाँ वर्ग वैरी होता है। अतः वैरी वर्ग की दिशा में घर नहीं बनाना चाहिए। अर्थात् कवर्ग वाले व्यक्ति को ग्राम के वायव्य कोण में घर नहीं बनाना चाहिए।

यदि राशिभेद और वर्गभेद से भिन्न भिन्न दिशा आवे तो राशि की दिशा को ही प्रधानता देनी चाहिए क्योंकि वर्ग से राशि ही बलि होती है ॥१॥

काकिणी विचार—

अष्टावप्रमुखाःस्वपंचमपरा द्विघ्नः स्ववर्गोऽन्ययुक्-
तष्टःकाकिणिका गजैर्मिथ इमा यस्याधिकाःसोऽर्थदः ।
श्वेतारक्तकपीतकृष्णवसुधाःस्वादुःकटुस्तिक्तकाः
काषाया घृतशोणितान्नमदिरागंधाःशुभा विप्रतः ॥२॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अष्टाविति। एतदुक्तंभवति। अआइईउऊइत्यादिकः षोडशाक्षरोवर्गः-पूर्वस्यांबली कादिकःपंचाक्षर आग्नेय्यां चादिकोदक्षिणस्यां टादिकोनैर्ऋत्यां

तादिक:पश्चिमायां पादिकोवायव्यां यादिक उत्तरस्यां शादिक ईशान्यांबली । अयमर्थ: स्वनामादिमाक्षरांतवर्गंज्ञात्वास्वस्थाने गृहं कार्यमितिभाव: । यत: स्वस्वस्थानेप्राणिनोबलवंत इतिलोके प्रसिद्धम् । किंलक्षणावर्गा: स्वपंचमपरा: स्वेभ्य:पंचमा:परा:वैरिणो येषां तेतथा यथा अवर्गस्यपंचमस्तवर्ग:सोस्यवैरी कवर्गस्य पंचम: पवर्ग: सोस्यवैरी एवंसर्वेषांवर्गाणांवैरिणोज्ञातव्या: । वैरित्वं हिस्वामिवशेन । एतदुक्तंभूपालबल्लभे—

वर्गेशास्ताक्ष्यमार्जारसिंहा: श्वासर्पमूषकौ
इभैणौपूर्वतस्तेषांस्ववर्गात्पंचमोरिपु:" इति ।

तस्मात्स्ववैरिवर्गस्यदिशिगृहंनकार्यमितिभाव: । अर्थादन्यत्रमध्यमं तत्रापिस्वदिग्वर्गासन्नंशुभम् वैरिदिगासन्नमशुभमितिबुद्धयाज्ञेयम् एवंस्ववर्गग्रामवर्गयोर्मित्रारित्वमवलोक्यवास:कर्तव्य इतिसिद्धम् । तत्रराशिघटितवर्गघटितयोर्मध्ये राशिघटितंबलवत् । एतदुक्तंज्योति:सागरे—

केप्याहुरथवर्गाणांस्वस्थानेशुभदंगृहम्" इति ।

अथवर्गघटितेकाकिणिका आह । द्विघ्नइति । स्ववर्गोग्रामवर्ग:वसतिकर्तुर्वर्गश्चद्विघ्न:द्विगुणित:कार्य:मिथ:अन्ययुक् अन्यवर्गयुक्कार्य: गजैरष्टभिस्तष्ट:शेषित:सन् काकिणिका:स्यु । इमा:काकिणिका:यस्य अधिका: सोर्थदोधनदाता स्यात् । एवंग्रामदिङ्नियममुक्त्वा इदानीं—

निर्माणेपत्तनग्रामक्षेत्रादीनांसमंतत: ।
क्षेत्रमादौपरीक्षेत गंधवर्णरसप्लवै: ॥

इत्युक्तत्वात् तावद्वर्णपरत्वेनभूमेर्वर्णरसगंधात्वृत्तार्द्धेनाह । श्वेतेति । श्वेतारक्तकपीतकृष्णवसुधा: विप्रत: ब्राह्मणात् सकाशात्वर्णानांशुभा: शोभना:स्यु: । श्वेतवसुधापृथ्वीब्राह्मणस्य आरक्तवसुधाक्षत्रियस्य पीतवसुधावैश्यस्य कृष्णवसुधाशूद्रस्य शोभनेति अर्थात्मिश्रजातीनांमिश्राशोभना । तथाचवसिष्ठ:—

श्वेताशस्ताद्विजेंद्राणांरक्ताभूमिर्महीभुजाम् ।
विशांपीताचशूद्राणांकृष्णान्येषांचमिश्रिता" इति ।

एवंवर्णमुक्त्वा इदानींरसमाह । स्वादुरिति । स्वादुर्मधुरावसुधाब्राह्मणस्य शोभना कटुर्मरिचरसाक्षत्रियस्यतिक्तकानिंबरसावैश्यस्य काषायाहारीतकीरसाशूद्रस्यशोभनेति अर्थान्मिश्राणांमिश्राशोभनातथाचनारद:—

मधुरंकटुकं तिक्तंकषायश्चरसा:क्रमात्"

एवंरसानुक्त्वागंधानाह । घृतेति । घृतगंधाब्राह्मणस्य शोणितगंधारक्त-गंधाक्षत्रियस्य अन्नगंधावैश्यस्य मदिरागंधामद्यगंधाशूद्रस्य मिश्राणां-मिश्रगंधाशुभेत्यर्थः । तथाचोक्तंकारिकायाम्--

घृतासृगन्नमदिरागंधाचक्रमशो भवेत्" इति ।

नानाग्रंथेषुरसगंधानांनानात्वंतद्विकल्पतोग्राह्यम् । तथाचनारदः--

मधुपेरान्नपिशितगंधवर्णानुपूर्वकम् ।
मधुरं कटुकं तिक्तं कषायश्च रसाःक्रमात् ॥[1]

पेरगंधाकषायगंधा अन्यत्सुगमम् । तथाचकारिकायाम्—

घृतासृगन्नमद्यानांगंधाचक्रमशो भवेत् ।
मधुरास्यात्कषायाम्लकटुकाचानुपूर्वशः" इति ॥२॥

मार्त्तण्डप्रिया—

आठ वर्ग होते हैं । क्रमशः उनकी संख्या ये है--

(१) अवर्ग	(२) कवर्ग	(३) चवर्ग	(४) टवर्ग
(५) तवर्ग	(६) पवर्ग	(७) यवर्ग	(८) शवर्ग

काकिणी विचार--व्यक्ति के नामाक्षर की वर्ग संख्या को द्विगुणित करके उसमें ग्राम की वर्ग संख्या को जोड़ें और ग्रामाक्षर की वर्ग संख्या को द्विगुणित करके उसमें व्यक्ति की वर्ग संख्या को जोड़े, दोनों में पृथक पृथक ८ से भाग देने पर शेषतुल्य व्यक्ति और ग्राम की अपनी अपनी काकिणी होगी । जिसकी काकिणी अधिक हो वह धनी होता है ।

$$\text{व्यक्ति की काकिणी}—\frac{\text{व्यक्ति की वर्ग संख्या} \times २ + \text{ग्राम की वर्ग संख्या}}{८}$$

=शेष संख्या व्यक्ति की काकिणी

$$\text{ग्राम की काकिणी}--\frac{\text{ग्राम की वर्ग संख्या} \times २ + \text{व्यक्ति की वर्ग संख्या}}{८}$$

=शेष संख्या ग्राम की काकिणी

यदि व्यक्ति की काकिणी अधिक और ग्राम की काकिणी कम हो तो व्यक्ति धनी और ग्राम ऋणी होता है । यदि ग्राम की काकिणी अधिक और व्यक्ति की काकिणी कम हो तो ग्राम धनी और व्यक्ति ऋणी होता है । जो ग्राम ऋणी हो उसमें निवास करना चाहिए । ग्राम के धनी और व्यक्ति के ऋणी होने पर वह ग्राम शुभ नहीं होता है ॥२॥

---

१. नारद संहिता—अ० ३१ श्लो० २–३॥

वर्णानुसार भूमिका प्लव विचार और शल्यज्ञान—

सौम्यादिप्लवभूतले विरचयेद्विप्रादिकोऽग्रचोऽखिले
नान्येषां नियमोऽत्र यत्र निखिलाः कुर्युर्गृहं हृत्स्थिरम् ।
सद्मप्रश्नकृतो मुखात्प्रथमतो वर्गादिवर्णोद्गम-
श्चेत्तद्दिग्गतमादिशेत्तु हृपयैःशल्यं सुधीर्मध्यतः ॥३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

एवंपृथ्वीवर्णादिकमभिधाय इदानींवर्णपरत्वेनभूप्लवत्वमाह । सौम्यादिषु उत्तरादिषुदिक्षु प्लवोनिम्नत्वं यस्यतच्चतद्भूतलंचतस्मिन्विप्रादिकोब्राह्मणादिकः गृहंविरचयेत् । एवंवर्णपरत्वेनभूप्लवत्वमुक्त्वाब्राह्मणस्यविशेषमाह । अग्रचोखिल इति । अग्रचोब्राह्मणः अखिलेसर्वप्लवेगृहंविरचयेत् । तथाचभृगुः—

उदगादिप्लवमिष्टंविप्रादीनांप्रदक्षिणेनैव
विप्रःसर्वत्र वसेदनुवर्णमथेष्टमन्येषाम्" इति ।

अथपक्षांतरमाह । यत्रेति । निखिलाः सर्ववर्णास्तत्र गृहंकुर्युः । तत्रकुत्र यत्रभुविहृत् अंतःकरणंस्थिरंस्यात् । अयमर्थः । यस्यांभूमौ अन्तःकरण प्राशस्त्यंस्यात्तत्रैवगृहंकर्तव्यमित्यर्थः । तथाचवास्तुशास्त्रे—

मनसश्चक्षुषोर्यत्रसंतोषोजायतेभुवि
तस्यांकार्यंगृहं सर्वैरितिगर्गादिसंमतम्" इति ।

अथशल्यज्ञानं वृत्तार्द्धेनाह । सद्मप्रश्नेति । सद्मप्रश्नकृतःअत्र गृहंकर्तव्यमित्यादिगृहप्रश्नकर्तुर्मुखाच्चेद्यदिप्रथमतःवर्गादिवर्णोद्गमःस्यात् । वर्गाणांप्रथमाक्षरोदयःस्यात् । अकचटतपयशानामन्यतमाक्षरोद्गमः स्यात्तदाशल्यंतद्दिग्गतं तस्यवर्णस्यदिग्गतंसुधीरादिशेत् । शल्यमत्रास्तीतिकथयेदित्यर्थः । एतदुक्तंभवति । गृहसंमितांभूमिदक्षिणोत्तररेखाभिः समतयानवधाकृत्वावर्गाद्यक्षरैः अकचटतपयशैरष्टभिःक्रमेणाष्टासुपूर्वादिदिक्षुशल्यमादिशेत् । अकारेप्रश्नाद्यक्षरेसतिपूर्वस्यांदिशिशल्यमादिशेत ककारे आग्नेय्यां चकारेदक्षिणस्याम् इत्याद्यष्टसु दिक्षु अष्टभिरक्षरैरादिशेदित्यर्थः । तुपुनःहृपयैस्त्रिभिरक्षरैर्मध्यतोमध्यकोष्ठेशल्यमादिशेत् हृपयानांत्रयाणामक्षराणामन्यतमे प्रश्नाद्यक्षरेसतिमध्येशल्यमादिशेदित्यर्थः । तथाचोक्तंज्योतिर्निबंधे—

स्मृत्वेष्टदेवतांवक्षंवचनस्याद्यमक्षरम् ।
गृहीत्वातुततःशल्याशल्यंसम्यग्विचार्यते ॥

अकचटतपयशा हपयावर्णा पूर्वादिमध्यांताः ।
शल्यकरा इहनान्येशल्यगृहेनिवसतांनाशः" इति ॥

एतदेवस्पष्टंतत्रैवोक्तम्—

पृच्छयायदि अःप्राच्यांनरशल्यंतदाभवेत् ।
सार्द्धहस्तप्रमाणेन तच्चमानुषमृत्युकृत् ॥
आग्नेय्यांदिशिकः प्रश्नेखरशल्यंकरद्वये ।
राजदंडोभवेत्तत्रभयंनैवनिवर्तते ।
याम्यायांदिशिचः प्रश्नेकुर्यादाकटिसंस्थितम् ॥
नरशल्यंगृहेशस्य मरणंचिररोगतः ।
नैर्ऋत्यांदिशिटः प्रश्नेसार्द्धहस्तादधःस्थले ।
शुनोस्थिजायतेतत्रबालानांजनयेन्मृतिम् ॥
तः प्रश्नेपश्चिमायांतु शिशोः शल्यंप्रजायते ।
सार्द्धहस्तेगृहस्वामी न तिष्ठतिसदागृहे ॥
वायव्यांदिशिपःप्रश्नेतुषांगाराश्चतुष्करे ।
कुर्वन्तिमित्रनाशंचदुःस्वप्नदर्शनंतदा ॥
उदीच्यांदिशियःप्रश्नेविप्रशल्यंकटेरधः ।
तच्छीघ्रं निर्धनत्वायकुबेरसदृशस्यहि ॥
ऐशान्यांदिशिशः प्रश्नेगोशल्यं सार्द्धहस्ततः ।
तद्गोधनस्यनाशायजायतेगृहमेधिनः ॥
हपयामध्यमेकोष्ठेवक्षोगात्रेभवेदधः ।
नृकपालमथोभस्मलोहंतत्कुलनाशकृत्" इति ॥३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

वर्ण भेद से भूमि का प्लव (ढलुआँ) विचार—ब्राह्मण को उत्तर के तरफ प्लव (ढलुआँ) भूमि पर, क्षत्रियों को पूर्व के तरफ, वैश्य को दक्षिण के तरफ और शूद्र को पश्चिम के तरफ प्लव (ढलुआँ) भूमि पर गृहनिर्माण करना चाहिए ।

ब्राह्मण सर्वप्लव भूमि (सभी दिशा में ढलुआँ) पर गृह निर्माण कर सकता है । अन्य वर्ण वालों के लिए यह नियम (भूमि विचार) नहीं है । अथवा प्रत्येक वर्ण के व्यक्ति को अपनी इच्छित भूमि पर गृह निर्माण करना चाहिए । मनः शुद्धि के सम्मुख किसी बात का विचार नहीं किया जाता । शंका उत्पन्न होने पर ही किसी बात का विचार किया जाता है ।

शल्य विचार--गृह निर्माण करने वाले को इच्छित भूमि पर खड़ा करके किसी देव, फल या फूल का नाम पूछना चाहिए । उसके मुख से जो उत्तर निकले उसके प्रथम वर्णानुसार उस दिशा में शल्य का निर्धारण करना चाहिए । स्पष्टार्थ चक्र देखें--

ईशान भाग	पूर्व भाग	आग्नेय भाग
शवर्ग १½ हाथ नीचे गो शल्य	अवर्ग १½ हाथ नीचे नर शल्य	कवर्ग २ हाथ नीचे खर शल्य
(दक्षिण भाग) यवर्ग कमर भर नीचे विप्र शल्य	ह प. य. छाती भर नीचे नरमुण्ड, भस्म कोयला, लोहा आदि	चवर्ग कमर भर नीचे नर शल्य (उत्तर भाग)
पवर्ग ४ हाथ नीचे कोयला-भूसा आदि	तवर्ग १½ हाथ नीचे शिशु शल्य	टवर्ग १½ हाथ नीचे श्वान शल्य
वायव्य भाग	पश्चिम भाग	नैऋत्य भाग

विशेष--भूस्वामी के मुख से जो भी देव, फल या फूल का नाम निकले उसके आदि वर्ण को ही ग्रहण करना चाहिए। जैसे किसी ने सूर्यमुखी (फूल) या सन्तरा (फल) या सरस्वती (देवी) का नाम लिया तो वह "शवर्ग" में आयेगा अतः भूमि के ईशान भाग में डेढ़ हाथ नीचे गोशल्य है ऐसा समझें। सही ज्ञान के लिए भूमि का ९ भाग कर लेना चाहिए जैसे कि उपर चक्र में स्पष्ट है और जो ईशान कोण का भाग (जितना लंबा चौड़ा) हो उतने में ही शल्य समझना चाहिए।

यदि इच्छित भूमि में शल्य हो और दूसरी भूमि का अभाव हो तो शल्योद्धार और भूमि की शान्ति आदि करके उसको पवित्र कर लेना चाहिए ॥३॥

भूमि का शुभाशुभ ज्ञान—

श्वभ्रं हस्तमितं खनेदिह जलं पूर्णं निशास्ये न्यसेत्
प्रातर्दृष्टजलं स्थलं सदजलं मध्यं त्वसत्स्फाटितम्।
ज्ञात्वैवं निखनेद्गृहाधिकभुवं नत्वा जलांतं स्तरो-
यावद्वा पुरुषस्ततःकपिशिरस्तुल्याश्मभिःपूरयेत् ॥४॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

एवंशल्यमभिधायेदानींस्थलस्यशुभाशुभज्ञानस्योपायमाह। श्वभ्रमिति। श्वभ्रंगर्तंहस्तमितंखनेत्। इहास्मिन्श्वभ्रेनिशास्येरात्रिमुखेऽर्द्धसूर्यास्तेजलंपूर्णं न्यसेत् तच्चेद्यदिप्रातः सजलंस्यात्तदातत्स्थलंसच्छुभंस्यात्। वृद्धिकरंस्यात्। यदि अजलंगतजलंस्यात् तदा मध्यमम्। यदास्फाटितंस्फुटितंस्यात्तदा असत् नानाविधहानिकरंस्यादित्यर्थः। तथा चनारदः—

तथानिशादौ तत्कृत्वा पानीयेन प्रपूरयेत्
प्रातर्दृष्टजलेवृद्धिः समं पंके व्रणे क्षयः"[१] इति ।

एवंशुभाशुभस्थललक्षणमभिधायेदानींभूमिशोधनमाह । ज्ञात्वेति । एवमुक्तप्रकारैः स्थानंज्ञात्वागृहाधिकभुवंनखाजलांतंयथाभवतितथाखनेत् गृहादधिकागृहाधिका साचासौभश्चतथातां कल्पितगृहात्किंचिदधिकांभूमिंजलपर्यंतंखनेदित्यर्थः । अधिकखननंशुद्धभूभागेभित्तिरचनार्थम् । वा इत्यथवा स्तरोयावत्तावत्खनेत् पृथ्वीगर्भमृद्भेदानां स्तराःसतितत्रान्यस्तरपर्यंतंखनेदित्यर्थः । अथवा यावत्पुरुषस्तन्मितंवापुरुषमात्रंखनेत् स्तरंतस्यपेक्षयाज्ञातव्यम् । पुरुषप्रमाणंपंचारत्नयः तथाचशुल्वम् —

पंचारत्निर्दशबितस्तिर्विंशतिशतांगुलःपुरुषः" इति ।

पंचारत्न्यादयः पुरुषपर्यायाः । किंकृत्वा नत्वा समःकृत्यखनेदित्यर्थः । ततस्तदनंतरं तत्खातंकपिशिरस्तुल्याश्मभिः वानरशिरप्रमाणैः अश्मभिः पूरयेत्पूर्णंकुर्यात् । तथाचमांडव्यः—

जलांतंप्रस्तरांतंवापुरुषांतमथापिवा
क्षेत्रंसंशोध्यचोद्धृत्यशल्यंसदनमारभेत्" इति ।

तथाचमत्स्यपुराणे—

कपिशीर्षप्रमाणैश्चग्रावंभिःपूरयेदृढम्
खातंतत्रसमंकृत्वाततः प्राचींप्रसाधयेत्" इति ।

खन्यमाने क्षेत्रेयदाप्यते । तस्यफलंकारिकायामुक्तम्—

खन्यमानेयदाक्षेत्रेपाषाणः प्राप्यतेतदा
धनायुश्चिरतास्यस्यादिष्टकासुधनागमः
कपालांगारकेशादौव्याधिनापीडितोभवेत्" इति ॥४॥

मार्त्तण्डप्रिया—

भूमि के शुभाशुभ ज्ञान हेतु उसमें एक हाथ लम्बा एक हाथ चौड़ा और एक हाथ गहरा चतुष्कोण खात (गढ़ा) खोदकर सूर्यास्तकाल में उसमें जल भर देना चाहिए । दूसरे दिन प्रातः काल वह खात यदि जलयुक्त रहे तो भूमि उत्तम कोटि की, जलहीन परन्तु आर्द्र (कीचड़युक्त) रहे तो मध्यमकोटि की और यदि सूखा और दरारयुक्त रहे तो निम्नकोटि की होती है ।

---

१. नारद संहिता—अ० ३१ श्लो० ५–६ ॥

भूमि शोधन की एक और प्रक्रिया है कि जितनी दूरी में गृह निर्माण करना हो उतनी दूरी तक के मिट्टी को एक पुरुष (पोरसाभर) तक या पानी निकलने तक या दूसरे रंग की मिट्टी निकलने तक खोद कर निकाल दें और बन्दर के शिर के बराबर वाले पत्थर के टुकड़ों से उसे पाट देने (भर देने) से भूमि शुद्ध हो जाती है। परन्तु यह विधि आजकल के वातावरण और स्थिति के अनुकूल नहीं है ॥४॥

दिक्साधन और गृहारम्भ मुहूर्त—

प्राक् साध्योज्जयिनीस्थलाद्यमदिशि त्वाष्ट्रानिलाभ्यन्तरात्-
सौम्येऽतोऽग्न्युदयादुदग्ध्रुवमुखाद्दिङ्मूढके स्यान्मृतिः।
गेहं माधवपौषफाल्गुननभो मार्गेषु मृद्वानिलैः
पाश्यर्केज्यवसुध्रुवैः स्थिरतनौ कुर्यात्सुकेन्द्राष्टमे ॥५॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

एवंस्थलशुद्धिमभिधायाधुनादिक्साधनमाह। उज्जयिनीस्थलात् यमदिशिदक्षिणस्यांदिशित्वाष्ट्रानिलाभ्यंतरात् प्राक्साध्या, नरैरित्यध्याहारः। त्वाष्ट्रंचित्रा अनिलं स्वाती अनयोरंतरमध्यंतस्मात्प्राचीसाध्येत्यर्थः। तदेतदुक्तं भवति। संभवेसतिरात्रौप्राङ्मुख उपविश्ययुगमात्रोदितांचित्रांनलिकया विलोकयन् नलिकाग्राल्लंबंभूमिपर्यन्तंमुक्त्वा भूमौचिह्नंकृत्वा तथैवाचलस्तेनैवनेत्रेण स्वातीमवलोकयं तथैवनलिकाग्रात्सकाशाल्लंबं भूमिपर्यंतंमुक्त्वालंबपातंचिह्नंकृत्वानेत्राल्लंबं मुक्त्वातथैवचिह्नंकुर्यात्। एवंचिह्नद्वयंचित्रास्वातीचिह्नयो रज्जुंतन्मितांधृत्वारज्जुप्रांतौ एकीकृत्यमध्येचिह्नंकुर्यात्। पुनस्तत्रतथैव प्रसार्यमध्यचिह्नेशंकुंनिधाय तस्मात्पश्चिमचिह्नपर्यंतंरज्जुंप्रसारयेत् तत्प्राचीसूत्रम्। एवमुज्जयिन्यादक्षिणतःप्राचीसाधनमुक्त्वाऽथानंतरमुत्तरतः प्राचीसाधनमाह। सौम्ये इति। अतःउज्जयिन्याः सौम्ये उत्तरभागे अग्न्युदयात्कृत्तिकोदयात् प्राचीसाध्या। एतदुक्तंभवति। पूर्ववन्नलिकयायुगमात्रोदितांकृत्तिकामालोक्यनलिकामूलाग्राभ्यांलम्बौमुक्त्वाभूमौचिह्नद्वयंकृत्वातयोरुपरिप्राचीसूत्रम्। अथोत्तरसाधनमाह। उदगिति। ध्रुवमुखात् उदग् उत्तरादिक्साध्या इदंसर्वेषांसाधारणम्। अथदिङ्मूढत्वेदोषमाह। दिङ्मूढकेस्यान्मृतिरितिस्पष्टम्। तथाचोक्तं देवयजनदीपिकायाम्—

चित्रास्वात्यंतरे श्रोणाद्दक्षिणापथवासिनाम्
प्राचीतुकृत्तिकाज्ञेया उत्तरापथवासिनाम्" इति।

श्रोणात् उज्जयिन्या। तथाचशुल्वं—

कृत्तिकाश्रवणं पुष्यंचित्रास्वात्योर्यदंतरम्
एतत्प्राच्यादिशोरूपंयुगमात्रोदितेपुरः" इति।

युगप्रमाणंषडशीत्यंगुलानि। तथाचल्वसूत्रम्—

"अंगुलैरथसंमितायाःप्रमाणम्
तत्राष्टाशीतिशतमीषाः चतुःशतमक्षःपक्षः
षडशीतिर्युगम् चत्वारोष्टकाःशस्याः" इति।

तथांच स्फुटकरणे—

ध्रुवलंबकरेखायारेखांतःसौम्ययाम्यहरितौस्तः
तन्मत्स्यपुच्छमुखतः पश्चिमपूर्वाभिधेविद्याद्" इति।

वृद्धनारदः—

प्रासादेसदनेलिंगेद्वारेकुंडेविशेषतः
दिङ्मूढेकुलनाशःस्यात्तस्मात्संसाधयेद्दिशम्" इति।

अथकेषुमासेषुगृहंकर्तव्यमित्याह। गेहमिति। माधवादिषुमासेषुमृद्वादिभिर्नक्षत्रैर्गेहंगृहंकुर्यात् माधवोवैशाखःपौषफाल्गुनौप्रसिद्धौ नभाःश्रावणः मार्गोमार्गशीर्षस्तेष्वित्यर्थः। मृदूनिचित्रानुराधारेवतीमृगाः आनिलंस्वाती पाशीवरुणस्तद्भंशततारा अर्कोहस्तः इज्यःपुष्यः वसुर्धनिष्ठा ध्रुवाणिरोहिणी उतरात्रयंचतैः स्थिरतनौस्थिरलग्ने। किंलक्षणे सुकेंद्राष्टमेशोभनानिपापग्रहरहितानिकेंद्राष्टमानियस्य तत्तथातस्मिन्। स्थिरतनावितिवापाठः। शेषंपूर्ववत् ॥५॥

मार्त्तण्डप्रिया—

दिक् साधन—उज्जैन से दक्षिण के प्रदेशों में अर्थात उज्जैन की पूर्वापर रेखा से दक्षिण के प्रदेशों में चित्रा और स्वाती के मध्य भाग में पूर्वदिशा का साधन करें। अर्थात् रात्रिकाल में नलिकायन्त्र से चित्रा नक्षत्र का वेध करें और नलिका यन्त्र के अग्रभाग से समभूतल पर लम्ब गिरावें। लम्ब जहाँ गिरे वहाँ चिह्न बनावें। फिर उसी तरह उतने ही उन्नतांश पर स्वाती का वेध करके नलिकाग्रभाग से समभूतल पर लम्ब गिराकर दूसरा चिह्न बनावें। अब चित्रा और स्वाती के लम्ब चिह्नों में गई हुई रेखा के मध्य बिन्दु को पूर्व दिशा समझें।

उज्जैन से उत्तर के प्रदेशों में भी इसी तरह कृत्तिका के वेध से पूर्व दिशा का ज्ञान करना चाहिए।

उत्तर दिशा का ज्ञान ध्रुवतारा से करना चाहिए। ध्रुव सबसे उत्तर में है अतएव यह प्रत्येक दिशा में एक सा होता है।

यदि गृह की दिशा ठीक नहीं हो तो गृह बनाने वाले की मृत्यु होती है अतएव गृह निर्माण में दिशा का साधन अवश्य कर लेना चाहिए।

गृहारम्भमुहूर्त--

मास--वैशाख-श्रावण-मार्गशीर्ष-पौष और फाल्गुन, इन ५ मासों में।

नक्षत्र—रो. मृग. पुष्य. उफा. हस्त. चित्रा. स्वा. अनु. उषा. धनि. शत. उभा. और रेवती इन १३ नक्षत्रों में।

लग्न —वृष-सिंह-वृश्चि. कुम्भ इन ४ लग्नों में।

लग्न शुद्धि--जिस लग्न में केन्द्र (१-४-७-१०) स्थान और अष्टम स्थान शुभ (पाप रहित) हो ॥५॥

वृषवास्तु चक्र विचार—

नो पृष्ठाग्रविधौ न रिक्तकतिथौ नार्कारवारांशयो-
रुक्तर्क्षेष्वपि कुंभमीनगविधौ स्तंभोच्छ्रितिं नाचरेत्।
तुर्यात्पंचदशात् त्रिदृक्परिमिताद्वेदाब्धिपंच क्रमा-
न्निन्द्यान्यर्कयुतादि गेहकरणे भानि प्रवेशेऽपि च ॥६॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथोक्तेष्वपिनक्षत्रेषुविशेषमाह। नोपृष्ठाग्र इति। पृष्ठाग्रविधौसतिनो विरचयेत्। एतदुक्तंभवति। कृत्तिकादिनिसप्तनक्षत्राणिपूर्वस्यांमघादिसप्त दक्षिणे इत्यादिसप्तशलाकाचक्रस्थितनक्षत्राणांमध्ये मृद्वानिलादीष्टचंद्र नक्षत्रं यस्मिन्दिग्भागेभवति तद्दिङ्मुखेगृहेसंमुखश्चंद्रोज्ञेयः तत्पृष्ठस्तेपृष्ठतोज्ञेयः एवमग्रगेपृष्ठगेवाचंद्रेसतिगृहंनकर्तव्यमित्यर्थः। तथाचभृगुः—

चक्रेसप्तशलाकाख्येकृत्तिकादीनिविन्यसेत्
ऋक्षंचंद्रस्यवास्तोश्चपुरः पृष्ठेचनो शुभम्" इति।

तथा ब्रह्मशंभुः—

धनलाभः प्रवासः स्यादायुश्चौरभयं क्रमात्
दक्षाग्र वाम पृष्ठस्थे गृह कर्तुर्निशाकरे" इति।

नरिक्तकतिथौस्पष्टम्। नार्कारवारांशयोः अर्कभौमयोर्वारनवांशयोः नकुर्यात्। उक्तर्क्षेष्वपिकुंभमीनगविधौसतिस्तंभोच्छ्रितिंनाचरेत्। अर्थादन्यत्सर्वम् आचरेत्। तथाचमांडव्यः--

पंचकेषुचधिष्ण्येषुनकुर्यात्स्तंभमुच्छ्रयम्
क्षेत्रसूत्रशिलान्यासंप्राकारादिसमाचरेत्" इति।

अथवृषभवास्तुमाह । तुर्यादिति । अर्कयुतादिसूर्यनक्षत्रादितुर्यात्चतुर्थात् पंचदशात् त्रिदृक्परिमितात् त्रयोविंशात्सकाशात् क्रमेणवेदाब्धिपंचभानि नक्षत्राणि गृहस्यकरणेरचनायांप्रवेशेपिनिंद्यानिस्युः । तथाचव्यवहारसारे--

> त्रिवेदाब्धित्रिवेदाब्धिद्वित्रिभेष्वर्कतः शशी
> कुर्याल्लक्ष्मीसमुद्वासंस्थैर्यंलक्ष्मींदरिद्रताम् ।
> धनंव्याधिक्रमान्मृत्युंप्रवेशारंभयोर्वृषे" इति ॥६॥

मार्त्तण्डप्रिया--

ऊपर जो गृहारम्भोक्त नक्षत्र हैं उनमें चन्द्रमा के सम्मुख या पीछे रहने पर गृहारम्भ नहीं करना चाहिए । नक्षत्रों की दिशा का ज्ञान सप्तशलाका चक्र से करना चाहिए । अर्थात रो०मृ० पुष्य०अनु० और उषा० इन ५ नक्षत्रों में पूर्व या पश्चिम मुख का गृह नहीं बनाना चाहिए तथा उफा० ह० चि० स्वा० धनि० शत० उ भा० और रेवती इन ८ नक्षत्रों में उत्तर या दक्षिण मुख का गृह नहीं बनाना चाहिए ।



रिक्ता तिथियों (४-९-१४) में, रवि-भौम वारों में तथा रवि-भौम के नवांश लग्नों (सिंह-मेष-वृश्चिक) में गृहारम्भ नहीं करना चाहिए ।

जब चन्द्रमा कुम्भ और मीन राशि का रहे अर्थात धनिष्ठार्द्ध से रेवती नक्षत्र तक रहे तो पंचक (भदवा) दोष लगता है इसमें तृण काष्ठादि का संचय नहीं करना चाहिए । अन्य कार्य जैसे शिलान्यास गृहारम्भ आदि करने में दोष नहीं लगता ।

गृहारम्भ और गृहप्रवेश में वृषवास्तु चक्र --

सूर्य जिस नक्षत्र में हो उस नक्षत्र से गृहारम्भ या गृहप्रवेश की नक्षत्र संख्या

४-५-६-७वाँ या

१५-१६-१७-१८वाँ या

२३-२४-२५-२६-२७ वाँ हो तो अशुभ होता है ।

विशेष––मुहूर्त्तचिन्तामणि और अन्य ग्रन्थों के वृषवास्तु चक्र में तथा मुहूर्त-मार्त्तण्ड के वृषवास्तु चक्र में कुछ भेद है। मुहूर्तचिन्तामणि में सूर्य के नक्षत्र से ७ नक्षत्र अशुभ पुनः ११ नक्षत्र शुभ और उसके बाद १० नक्षत्र अशुभ होते हैं। और मुहूर्तमार्त्तण्ड के मत से ४ से ७, १५ से १८ और २३ से २७ इतने नक्षत्र अशुभ होते हैं।

मुहूर्तमार्त्तण्ड में गृहारम्भ और गृहप्रवेश दोनों में वृषवास्तु चक्र ही लिया गया है जबकि मुहूर्त्तचिन्तामणि में गृहारम्भ में वृषवास्तु और गृहप्रवेश में कुम्भचक्र का विचार किया गया है। कुम्भचक्र में सूर्यनक्षत्र से १ से ५ और १४ से २१ नक्षत्र अशुभ होते हैं।

वृषवास्तु चक्र (मुहूर्त्तमार्त्तण्डानुसार)

सूर्य के नक्षत्र इनसे चक्र शुद्धि नहीं होती है।

सूर्य नक्षत्र से वास्तु नक्षत्र तक गणना क्रम→

२७	२६	२५	२४	२३	१८	१७	१६	१५	७	६	५	४	वास्तु नक्षत्र
आ.	पुन	पुष्य.	श्ले.	म.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	पू. भा.	उ.भा	रे	अश्वि.	रो.
पुन.	पुष्य.	श्ले.	म.	पू फा	वि	अनु.	ज्ये	मू.	उ.भा.	रे.	अश्वि.	भर.	मृ.
म.	पू.फा.	उ.फा.	ह.	चि.	मू.	पू.षा	उ.षा.	अभि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	पुष्य
चि.	स्वा.	वि	अनु	ज्ये.	श्र	ध	श.	पू भा	आ.	पुन	पुष्य.	श्ले.	उ फा.
स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू	ध.	श	पू भा	उ.भा.	पुन.	पुष्य.	श्ले.	म	ह.
वि.	अनु	ज्ये.	मू.	पू षा.	श	पू भा	उ भा.	रे.	पुष्य.	श्ले	म.	पू.फा.	चि.
अनु.	ज्ये.	मू.	पूषा	उ.षा	पू भा.	उ भा	रे.	अश्वि	श्ले.	म	पू.फा.	उ फा.	स्वा
मू.	पू.षा	उ.षा	अभि.	श्र.	रे.	अश्वि.	भर.	कृ.	पू.फा.	उ.फा.	ह.	चि.	अनु.
श्र	ध.	श.	पू.भा	उ.भा	रो.	मृ.	आ.	पुन.	स्वा.	वि	अनु.	ज्ये.	उ.षा.
पू.भा.	उ.भा.	रे.	अश्वि.	भर.	पुन.	पुष्य	श्ले	म.	ज्ये	मू	पू.षा.	उ षा.	ध.
उ भा.	रे.	अश्वि.	भर.	कृ	पुष्य.	श्ले.	म	पू फा	मू.	पू षा.	उ.षा	अभि.	श.
अश्वि.	भर.	कृ.	रो.	मृ.	म	पू फा.	उ.फा	ह.	उ.षा.	अभि.	श्र.	ध.	उ.भा.
भर.	कृ.	रो.	मृ.	आ.	पूफा	उ.फा.	ह	चि.	अभि	श्र.	ध.	श.	रे.

वृषवास्तु चक्र (मुहूर्त चिन्तामणि के अनुसार)

सूर्य के नक्षत्र, इनसे चक्र शुद्धि नहीं होतीहै ।

←वास्तुनक्षत्र से सूर्यनक्षत्र तक गणनाक्रम

२८	२७	२६	२५	२४	२३	२२	२१	२०	१९	७	६	५	४	३	२	१	वार नक्षत्र
कृ.	भ.	अ.	रे.	उ.भा.	पू.भा.	श	ध.	श्र.	अभि.	म	श्ले	पु.	पुन	आ.	मृ.	रो.	रो
रो.	कृ.	भ.	अश्वि	रे.	उ.भा.	पू.भा.	श	ध.	श्र	पू फा	म	श्ले	पुष्य	पुन.	आ.	मृ.	मृ.
पुन.	आ.	मृ.	रो.	कृ.	भ.	अश्वि.	रे	उ.भा.	पू.भा.	चि	ह.	उ.फा.	पू. फा	म.	श्ले.	पुष्य	पुष्य
पू फा.	म	श्ले.	पुष्य	पुन	आ.	मृ	रो	कृ.	भ.	ज्ये.	अनु	वि.	स्वा.	चि	ह.	उ फा.	उ.फा
उ.फा	पू.फा.	म.	श्ले	पुष्य	पुन.	आ.	मृ	रो	कृ.	मू.	ज्ये.	अनु.	वि.	स्वा.	चि.	ह.	ह.
ह	उ.फा.	पू.फा.	म	श्ले	पुष्य	पुन.	आ.	मृ.	रो	पू.षा.	मू.	ज्ये.	अन	वि	स्वा.	चि.	चि
चि.	ह.	उ.फा.	पू फा.	म.	श्ले.	तुष्य	पुन.	आ.	मृ.	उ.षा.	पू.षा.	मू.	ज्ये.	अनु.	त्रि.	स्वा.	स्वा.
वि.	स्वा.	चि.	ह.	उ फा.	पू.फा	म.	श्ले.	पुष्य.	पुन	श्र.	अभि.	उ षा.	पू षा.	मू.	ज्ये.	अन.	अनु
पू.षा.	मू	ज्ये.	अनु	वि.	स्वा	चि.	ह.	उ.फा.	पू फा	उ भा	पू.भा.	श.	ध.	श्र.	अभि.	उ.षा.	उ षा.
श्रव.	अभि.	उ.षा	पू षा.	मू	ज्ये.	अनु	वि.	स्वा	चि.	भ.	अश्वि.	रे.	उ भा.	पू भा.	श.	ध.	ध
धनि	श्र	अभि.	उ.षा	पू.षा.	मू.	ज्ये.	अनु.	वि.	स्वा.	कृ.	भर.	अश्वि	रे.	उ.भा.	पू.भा	श	श.
पू.भा	श	ध.	श्र.	अभि.	उ.षा.	पू.षा.	मू.	ज्ये	अनु.	मृ	रो	कृ	भ.	अश्वि.	रे.	उ.भा.	उ भा.
उ.भा.	पू.भा.	श.	ध.	श्र.	अभि	उ षा	पू.षा.	मू.	ज्ये.	आ.	मृ.	रो	कृ.	भ.	अश्वि.	रे.	रे.

वृषवास्तु चक्र में अभिजित को मिलाकर २८ नक्षत्रों की गणना होती है । मुहूर्तमार्त्तण्ड के चक्र में सूर्यनक्षत्र से वास्तु नक्षत्र तक गणना होती है । जैसे अश्वि. से ४था रो. तथा आर्द्रा से २७वाँ रो. । मुहूर्तचिन्तामणि के चक्र में वास्तुनक्षत्र से सूर्य नक्षत्र तक गणना होती है । जैसे रो. से १ला रो. तथा रो. से २८वाँ कृत्तिका ।।६।।

गृहद्वार विचार--

शेते भाद्रपदात् त्रिषु त्रिषु सुरःप्रागादिशीर्षोऽत्र हि
प्रोक्तं सद्ममुखं तु गोल्यजधटेष्वर्के यमोदङ्मुखम् ।
हृद्रोगैणकुलीरलेयगरवौ पूर्वापरास्यं गृहं
नान्यस्थे भुजकोटिघात इभहृच्छेषं स्युरायाःक्रमात् ।।७।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथचतुर्धाद्वारनिर्णयमाह। शेते इति। भाद्रपदास्त्रिषुत्रिषुमासेषु सुरो वास्तुपुरुषः प्रागादिशीर्षः शेते इति । एतदुक्तंभवति भाद्रपदादिमासत्रये पूर्वशीर्षः मार्गशीर्षादिमासत्रयेदक्षिणशीर्षः फाल्गुनादिमासत्रयेपश्चिमशीर्षः ज्येष्ठादिमासत्रये उत्तरशीर्षोवास्तु पुरुषः शेते इति । अत्रयस्यांशीर्षंतस्यांदिशायां सद्ममुखंगृहमुखंदक्षिणाभिमुखंप्रोक्तम् । अथसंक्रांतिपरत्वेनमुखनिर्णयमाह। गोल्यजेति। गोल्यजधटेष्वर्केसतियमोदङ्मुखंगृहंकार्यम् गौर्वृषः अलिर्वृश्चिकः अजोमेषः धटस्तुला एषुराशिषु अर्केसूर्येसतियमोदङ्मुखमुत्तराभिमुखं वागृहंकार्यमित्यर्थः । हृद्रोगैणकुलीरलेयगरवौसतिपूर्वापरास्यं पूर्वाभिमुखंपश्चिमाभिमुखंवागृहंकार्यमित्यर्थः । हृद्रोगः कुंभः एणोमकरःकुलीरः कर्कटः लेयः सिंहः एतान्गच्छतिसतथासचासौरविश्चतस्मिन्सतिपूर्वापरास्यं पूर्वपश्चिममुखंवागृहंकार्यम् । अन्यस्थे अन्यराशिस्थेरवौसतिगृहंनकार्यम् । अथायपरत्वेनगृहमुखनिर्णयंविवक्षुस्तावदायसाधनमाह। भुजेति। भुजकोटिघात इभहृच्छेषमायाः स्युः। भुजोगृहदैर्घ्यविस्तारयोरन्यतमस्यनाम तदन्याकोटिः । तथाच लीलावत्याम्—

इष्टो बाहुर्यस्यां तत्स्पर्द्धिन्यां दिशीतरोबाहुः
त्र्यस्रे चतुरस्रे वा साकोटिः कीर्तिता तज्ज्ञैः" इति ।[1]

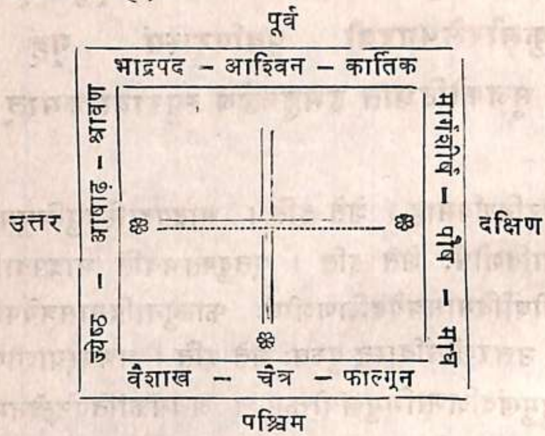
तयोर्घातोगुणनम् इभहृच्छेषंपूर्वादियथास्यात्तथाध्वजादयः आयाः क्रमात्स्युः ।।७।।

---

१. लीलावती क्षेत्रव्यवहार सूत्र १ ।

मार्त्तण्डप्रिया—

भाद्रपद से क्रमशः तीन तीन मास तक पूर्वादि दिशाओं में शिरभाग करके वास्तुपुरुष शयन करते हैं। वास्तुपुरुष का शिरभाग जिस दिशा में रहे उसी दिशा में गृह का द्वार बनाना चाहिए।



संक्रान्ति भेद से द्वारविचार–सूर्य जब मेष-वृष-तुला-वृश्चिक राशि का हो तो दक्षिण या उत्तर द्वार वाला गृह तथा कर्क-सिंह-मकर-कुम्भ राशि का रहे तो पूर्व या पश्चिम द्वार वाला गृह बनाना चाहिए।

विशेष— गृहारम्भ के लिए वै० श्रा० मार्ग० पौ० फा० इन पाँच मासों को ही प्रशस्त माना गया है। परन्तु संक्रान्ति के अनुसार द्वार भेद में आठ मास गिनाए गए हैं। इसके समाधानार्थ गृहारम्भोक्त मासों में ही सूर्य जिसराशि का रहे उस राशि के अनुसार जो दिशा हों उस दिशा में गृह का द्वार बनाना चाहिए। यहाँ त्रैमासिक राहु का भी विचार करना चाहिए। गृहारम्भोक्त मासों के अतिरिक्त अन्य मासों में और जब सूर्य मिथुन-कन्या-धनु-मीन राशि का रहे तो गृह निर्माण नहीं करना चाहिए।

आयविचार––गृह की लम्बाई और चौड़ाई के गुणनफल में ८ का भाग देने पर शेषतुल्य पूर्वादि दिशाओं में क्रमशः ध्वजादि आठ आय होते हैं ॥७॥

आयभेद से गृह का द्वार विचार––

पूर्वादिध्वजधूमसिंहशुनकोक्षाणःखरेभोष्ट्रका
धार्याः स्वस्वपदे ध्वजोऽखिलमुखः प्राग्याम्यवक्त्रो गजः।
प्रागास्यो वृषभो विवारुणमुखःसिंहः प्रशस्ता इमे
धूमोऽग्नेःशुनकोंत्यजस्य खगपस्योष्ट्रोट्टपत्न्याःखरः॥८॥

मार्त्तण्डवल्लभा —

पूर्वादिषुध्वजादयोबलिष्ठा इतिभावः। एतेध्वजादयः स्वस्वपदेस्व-स्वस्थाने ध्वजः पूर्वे धूम आग्नेय्यामित्यादिधार्याः। अयमर्थः। मुख्यगृहा-पेक्षयादिक्षुवक्ष्यमाणगृहेषुधार्या इत्यर्थः। अथवा स्वसदृशवस्तुषु धार्याः। अथवा-स्वसदृशसत्त्वगृहेषुधार्याः अथवाक्रूरकर्मसाधनवस्तुषुपराक्रमिणोधार्याः अथवा स्वसदृशवस्तुसत्त्वोपजीविनांगृहेषुधार्याः अथवास्वानुरूपवस्तुसाध्यहितवस्तु गृहेषुयथायोग्यंधार्याः इत्यर्थ। एतत्स्पष्टमुक्तंवास्तुप्रदीपे—

खेटखर्वटकोटेषुनृपः सिंहोगजःशुभः।
वापीकूपतडागादौ गजोदेयोविचक्षणैः॥
आसनेयोजयेर्त्सिहंशयनेचैवकुंजरम्।
वृषंभोजनपात्रेचदद्याच्छालादिषु ध्वजम्॥
महानसेऽग्निशालायांगृहेचाग्न्युपजीविनम्।
धूमंदद्यात्तथाश्वानंयवनांत्यजयोर्गृहे॥
खरोवेश्यागृहेयोज्योध्वांक्षः पक्षिपतेर्गृहे।
वृषंसिहंगजंदद्यात्प्रासादेपुरमंदिरे॥

तथाचशिल्पशास्त्रे--

वस्त्रजेधर्मशालायांकुंभे स्तंभेध्वजेध्वजः।
गोगजौभूगृहेचैवसाधारणगृहेशुभौ॥
यंत्रेशस्त्रे रथेसिंहोभांडागारे शुभोगजः।
धान्यांबुस्थानेगोश्वेभाः शालायांवृषभः शुभः॥
नाटयभागोद्वाहवेद्यां गजसिंहवृषाः शुभाः" इत्यादि।

एवमायसाधनमुक्त्वेदानींतेषांमुखान्याह। ध्वजोऽखिलमुखः सर्वदिग्द्वारः प्राग्याम्यवक्त्रोगजः सुगमम् प्रागास्योवृषभः आस्यंमुखं प्राङ्मुखो वृषभः स्पष्टम् विवारुणमुखः सिंहः वरुणस्यायंवारुणोदिग्विभागः पश्चिमदिक्विगतः वारुणोयेभ्यस्तत्रमुखंयस्यसतथा पश्चिमदिशंविनासर्वदिग्द्वार इत्यर्थः। योयो-यद्दिङ्मुख आयस्तत्संभूतगृहस्यतत्तद्दिशिसुखंकर्तव्यमित्यर्थः। एवमायपरत्वेन गृहमुखमुक्त्वा प्रसंगेन आयानांशुभत्वमाह। प्रशस्ता इमे इति। इमे चत्वारः आयाः प्रशस्ताः सर्वेषांशुभाः अर्थादन्येचत्वारः समा आया अप्रशस्ताः। तथाचगर्गः--

कीर्त्तिः शोकोजयोवैरंधनंनिर्धनतासुखम्।
रोगश्चेतिगृहारंभेध्वजादीनांफलंक्रमात्" इति॥

अथदुष्टेपिसमये विशेषमाह। धूमोग्नेरिति। अग्नेर्गृहेधूमोधूमायः प्रशस्तः अंत्यजस्यशुनकः प्रशस्तः खगपस्यपक्षिपालकस्य उष्ट्रः प्रशस्तः अट्टपत्न्यावेश्यायाः गृहेखरः खरायः प्रशस्तः ॥८॥

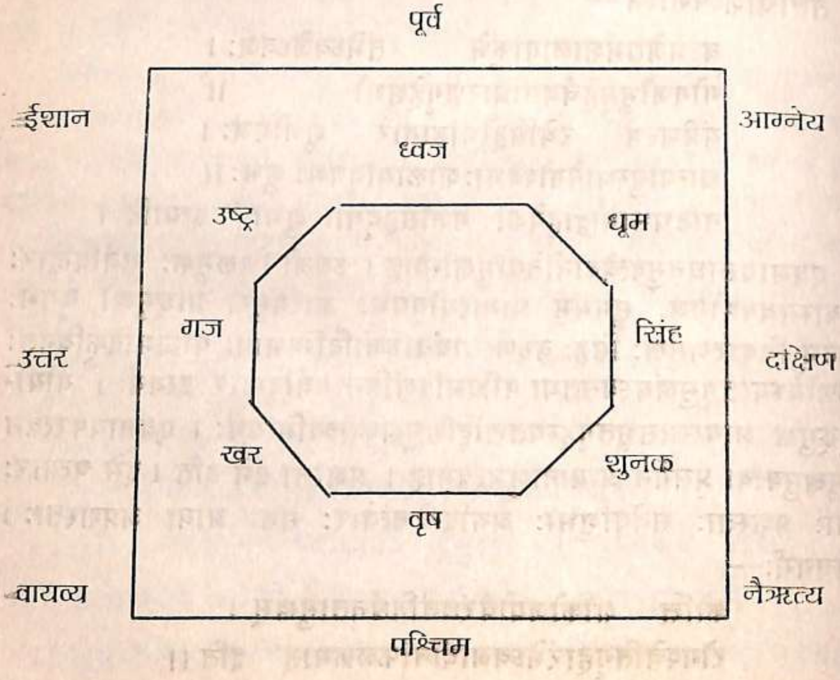
मार्त्तण्डप्रिया—

गृह के दैर्घ्य विस्तार (लम्बाई-चौड़ाई) के गुणनफल में ८ का भाग देने पर यदि १ शेष हो तो ध्वज, २ हो तो धूम, ३ सिंह, ४ शुनक, ५ वृष, ६ खर, ७ गज ८ में उष्ट्र, ये आठ आय होते हैं। ये क्रमशः पूर्वादि दिशाओं में बली होते हैं। जो आय जिस दिशा में बली होता है उस आय में उसी दिशा का घर बनाना चाहिए।

$\frac{\text{गृह की लम्बाई} \times \text{चौड़ाई}}{८}$ = शेष तुल्य आय संख्या,

शेष संख्या	आय नाम	शेष संख्या	आय नाम
१	ध्वज	५	वृष
२	धूम	६	खर
३	सिंह	७	गज
४	शुनक	८	उष्ट्र

आयों के दिग्बल



आयों की विशेषता––

आय नाम	गृह निर्माण दिशा	वर्जित दिशा
ध्वज	सभी दिशा में	×
गज	पूर्व दक्षिण में	उत्तर-पश्चिम
वृष	पूर्व में	दक्षिण-पश्चिम-उत्तर
सिंह	पूर्व-दक्षिण-उत्तर	पश्चिम

ये चारो आय सभी वर्ण वालों के लिए शुभ होते हैं। इनके लिए वर्ण भेद नही है। अन्य चार आय (धूम-शुनक-खर-उष्ट्र) इतने प्रशस्त नहीं होते हैं। परन्तु कुछ स्थानों में ये चारो भी शुभ होते हैं। जो निम्नलिखित है।

आय नाम	स्थान
धूम––	अग्निस्थान में (रसोईघर-अग्निहोत्रस्थान आदि)
शुनक––	अन्त्यजों के गृह में (सूअर आदि पालने वालों के लिए)
उष्ट्र—	पक्षिपालकों के गृह में
खर––	वेश्याओं के गृह में

विशेष––आठवाँ संख्यक उष्ट्र नामक आय जो कि इस ग्रन्थ में बतलाया गया है वह अन्य ग्रन्थों में "ध्वांक्ष" नाम से प्रसिद्ध है। ध्वांक्ष का अर्थ कौवा होता है जो पक्षी है। उष्ट्र चौपाया जानवर है। "उष्ट्रः कश्चित् पक्षिविशेष" के भ्रम में आचार्य ने पक्षिवाचक ध्वांक्ष के जगह 'उष्ट्र' को रखा और उसे पक्षिपालको के लिए शुभ बतलाया। अतः "खरे भोष्ट्रका" के स्थान पर "खरे भाण्डजा" ऐसा पाठ को समझना चाहिए ॥८॥

आयों का विवरण चक्र

आयों के नाम	ध्वज	धूम	सिंह	शुनक	वृष	खर	गज	ध्वांक्ष
आयों की दिशा	पूर्व	अग्नि	दक्षि.	नैऋ.	पश्चि.	वाय.	उत्तर	ईशान
आयों की विशिष्ट दिशा	सभी दिशा	×	उत्तर-पूर्व दक्षिण	×	पूर्व	×	पूर्व दक्षिण	×
आयों की शुभता	सभी के लिए	रसोई घर अग्निहोत्र के लिए	सभी वर्णों के लिए	नीच वर्णों के लिए	सभी के लिए	वेश्या के लिए	सभी के लिए	पक्षी वालों के लिए

राशिभेद से गृहद्वार विचार—

प्राहुः प्राङ्मुखमंत्यवृश्चिककुलीराणां प्रचेतोमुखं
जूकोपांत्यगवां यमास्यमबलायुग्मैणकानां हितम् ।
सौम्यास्यं गृहमाद्यसिंहधनुषामत्रेष्टकाष्ठाननं
कृत्वाऽऽप्तान्यककुब्गवाक्षवदनं तत्कार्यमास्यं न सत् ॥९॥

—मार्त्तण्डवल्लभा—

एवमायपरत्वेनगृहमुखमुक्त्वाधुनाराशिपरत्वेनाह । अंत्यवृश्चिककुलीराणांप्राङ्मुखं गृहंहितंप्राहुः । अन्त्योमीनः वृश्चिकः प्रसिद्धः कुलीरः कर्कः एषामित्यर्थः । जूकोपांत्यगवांप्रचेतोमुखंपश्चिमाभिमुखम् जूकः तुला उपांत्यः कुंभः गौर्वृषः एषामित्यर्थः । अबलायुग्मैणकानां यमास्यंदक्षिणामुखम् अबला कन्या युग्मंमिथुनमेणो मकरः एषामित्यर्थः । आद्यसिंहधनुषांसौम्यास्यम् आद्योमेषः सिंहधनुषीप्रसिद्धे एषांसौम्यास्यमुत्तरामुखंगृहंहितं प्राहुराचार्याः । एवंचतुर्धागृहमुखमभिधायेदानींतन्निर्णयमाह । अत्रेष्टकाष्ठाननमितिगृह मुखपक्षेषु शोभावकाशानुरूपमिष्टकाष्ठाननमिष्टदिङ्मुखंकृत्वा तद्गृहमाप्तान्यककुब्गवाक्षवदनंकार्यम् । आप्ताश्चता अन्यककुभश्चतासुगवाक्ष एववदनानियस्यतत्तथा उर्वरितपक्षत्रयप्राप्तदिक्षुगवाक्षाः कार्या इत्यर्थः । तथाचवास्तुशास्त्रे—

द्वारंचतुर्विधंप्रोक्तं वास्तुसंक्रांतिभावजम् ।
कृत्वाचान्यतमंमुख्यंगवाक्षाद्यैः पराणिच" इति ।

आस्यमिति । आस्यंगृहस्यमुखंकोणस्तंभादिभिर्विद्धंनसत्स्यात् ॥९॥

मार्त्तण्डप्रिया—

राशि विशेष से भी गृह की दिशाओं का विचार किया जाता है । इसमें भिन्न-भिन्न राशि वालों के लिए भिन्न-भिन्न दिशा वाले गृह शुभ माने जाते हैं । जैसे-

राशि	गृह
मीन-वृश्चिक-कर्क	पूर्वाभिमुख द्वार वाला
तुला-कुम्भ-वृष	पश्चिमाभिमुख ,,
कन्या-मिथुन-मकर	दक्षिणाभिमुख ,,
मेष-सिंह-धनु	उत्तराभिमुख ,,

इस तरह ४ प्रकार से गृह के द्वार का विचार होता है। जैसे—
१–मास भेद से, २–संक्रान्ति भेद से
३–आय भेद से और ४–राशि भेद से।

इन चारो प्रकार से साधित दिशाओं में जिस दिशा में गृह की शोभा और वायु-प्रकाश आदि का आवागमन सुन्दर हो उसी दिशा में गृह का मुख्य द्वार बनाकर अन्य तीन प्रकार से आगत दिशाओं में खिड़की आदि का निर्माण करना चाहिए ॥९॥

गृहमुख का वेध और उसका परिहार—

कोणाध्वभ्रमकूपकर्दमतरुद्वाः स्तंभदेवेक्षितं
सद्मौच्चयद्विगुणाधिकांतरभवे वेधे न दोषः किल।
अष्टघ्नेगृहभूफले भविहृते शेषं गृहर्क्षं भवे-
दृक्षे सर्पहृते व्ययो गृहमसत्स्वल्पायभूरिव्ययम् ॥१०॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

एवंगृहमुखनिर्णयमुक्त्वाधुनाकोणादिविद्धमुखस्यदोषंतदपवादंचाह । कोणाध्वेति । कोणोभित्तिकोणः अध्वामार्गः भ्रमोभ्रमयंत्रं घरदृम् कुलाल चक्रादि कूपः प्रसिद्धः कर्दमः स्नानादिजनितोनिरंतरस्थायी तरुर्वृक्षः द्वाः द्वारांतरं स्तंभः प्रसिद्धः देवः स्थावरः एभिर्विद्धेमुखंनसत्स्यादित्यर्थः । अथास्यापवादमाह । सद्मौच्चयेति । सद्मौच्चयद्विगुणाधिकांतरभवेवेधेनदोषः सद्मनोगृहस्य औच्चयंतस्यापेक्षयाद्विगुणाधिकांतरभवेद्विगुणाधिकांतरेजातेवेधे-कोणादिवेधेनदोषः अर्थान्न्यूनेदोषः किलेत्यागमेनिश्चयेवा । तथाचागमांतरे उक्तम्—

मार्गतरुकोणकूपभ्रमविद्धमशुभदंद्वारम्
सद्मोच्छ्रायाद्विगुणांत्यक्त्वाभूमिनदोषाय" इति ।

कात्यायनगृह्यकारिकायामप्युक्तम्—

विद्धंकूपतरुस्तंभंपथपंकैः सदैवतैः
तद्द्वारमशुभंप्रोक्तमत्युच्चंनीचमेवच" इति ।

अथग्रहनक्षत्रानयनंव्ययानयनंचाह । अष्टघ्न इति । गृहभूफलेगृहक्षेत्रफले अष्टघ्ने अष्टगुणितेभविहृतेसप्तविंशतिहृतेसतिशेषंगृहर्क्षंगृहनक्षत्रंभवेत् । ऋक्षेसर्पहृते अष्टहृतेसतिशेषंव्ययोभवेत् । एवमायव्ययावभिधायाधुनातत्फलं विशेषणद्वाराह । गृहमसदिति । स्वल्पायभूरिव्ययंगृहम् असत् अशुभंस्यात् । स्वल्पायश्चभूरिव्ययश्चतो अर्थाद्बह्वायाल्पव्ययंशुभम् ॥१०॥

मार्त्तण्डप्रिया--

गृह के द्वार के सम्मुख दूसरे की दीवाल का कोण भाग, रास्ता, गन्दे पानी का निकास मार्ग (नाली), कूप, कीचड़, पेड़, दूसरे के गृह का द्वार, गृह का स्तम्भ और कोई स्थापित देवता, इनके होने से उस गृह के द्वार का वेध होता हैं अतः ऐसा द्वार शुभद नहीं होता। यदि गृह की ऊँचाई के दुगुने से अधिक अन्तर पर वेध हो तो कोई दोष नहीं होता। अर्थात गृह की ऊँचाई यदि १५ फीट हो और वेध योग्य वस्तु ३० फीट की दूरी से अधिक पर रहे तो वेध नहीं होता है परन्तु यदि ३० फीट की दूरी या इससे कम पर रहे तो वेध होता है।

गृह का नक्षत्र और व्यय--गृह की लम्बाई और चौड़ाई के गुणनफल को ८ से गुणित कर २७ का भाग देने पर शेषसंख्या उस गृह का नक्षत्र होता है। नक्षत्र में ८ का भाग देने पर शेष संख्या उस गृह का व्यय होता है। व्ययसंख्या से आय संख्या अधिक रहने पर गृह शुभदायक होता है अन्यथा आय से व्यय की संख्या अधिक रहने पर अशुभदायक होता है। अर्थात् कम आय और अधिक व्यय होने पर गृह शुभ नहीं होता क्योंकि गृह में आय की अपेक्षा व्यय को अल्प होना चाहिए।

आय-नक्षत्र-व्यय का साधन—

$$\frac{\text{गृह की लम्बाई} \times \text{चौड़ाई}}{८} = \text{शेष संख्यातुल्य गृह का आय,}$$

$$\frac{\text{गृह की लम्बाई} \times \text{चौड़ाई} \times ८}{२७} = \text{शेष संख्यातुल्य गृह का नक्षत्र,}$$

$$\frac{\text{गृह की नक्षत्र संख्या}}{८} = \text{शेष संख्यातुल्य गृह का व्यय ॥१०॥}$$

नक्षत्र से राशि का ज्ञान—

मेषेऽश्विवत्रितयं हरौ त्रिपितृभं मूलत्रयं धन्विनि
द्वे द्वे भे परतो गृहेशघटितं प्राग्वत्तु नाड्यन्यथा ॥
एकादिद्विगुणोत्तरा गृहमुखाद्दिक्ष्वंकका: स्युः क्रमा-
च्छालाशांकयुतिः कुयुग्ध्रुवमुखान्योकांसि सन्ति स्फुटम् ॥११॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

नक्षत्रेज्ञातेराशिनिर्णयमाह। अश्विवत्रितयंमेषेज्ञेयम् त्रिपितृभंमघात्रयंहरौ सिंहेज्ञेयम् मूलत्रयंधनुषिज्ञेयम् अन्येषुराशिषुद्वे द्वे भेज्ञेये। तथाचगर्गः—

अश्विन्यादित्रयंमेषे सिंहे प्रोक्तंमघात्रयम्
मूलादित्रितयंचापेशेषभेषुद्वयंद्वयम्" इति ।

अथगृहतत्स्वामिनोर्घटितमाह । गृहेशेति । गृहंप्रसिद्धम् ईशः स्वामी तयोर्घटितंप्राग्वत्विवाहवत्योज्यम् । तत्र विशेषमाह । नाड्यन्यथेति । नाडी एकनाडी अन्यथायोज्या विवाहवत्नयोज्येत्यर्थः अत्र एकनाड्येवप्रशस्तेति भावः । तथाचवृद्धगर्गः—

प्रभुः पण्यांगनामित्र देशंग्रामंपुरंगृहम्
एकनाडीस्थितंभाव्यंविरुद्धंवेधवर्जितम् " इति ।

तथाचज्योतिः सागरे—

सेव्यसेवकयोश्चैवगृहतत्स्वामिनोरपि
परस्परंमित्रयोश्च एकनाडीप्रशस्यते" इति ।

अथांशसाधनार्थं गृहाणितन्नामाक्षरसंख्यांचाह । एकादीति । गृहमुखात् सकाशात् क्रमात्प्रदक्षिणक्रमात् दिक्षुचतसृषुदिक्षु एकादिद्विगुणोत्तरा अंकाः स्युः । एतदुक्तंभवति द्वारदिशि एकः तस्माद्द्वितीयदिशिद्वौ तृतीयदिशि चत्वारः चतुर्थदिशि अष्टौ एवंभवंतीत्यर्थः । शालाशांकयुतिः शालदिगंकयोर्योगः कार्यः कुयुक् एकयुक्तासती ध्रुवमुखानिध्रुवादिकानिशास्त्रोदितानि गृहाणिस्फुटंसंभवंति । तानियथा—

ध्रुवंधन्यंजयंनंदंखरंकान्तंमनोरमम् ।
सुमुखंदुर्मुखंक्रूरंसुपक्षंधनदंक्षयम् ॥
आक्रंदंविपुलंचैवविजयंचेतिषोडशम्" इति ॥११॥

मार्त्तण्डप्रिया——

मेष राशि में अश्विनी-भरणी और कृत्तिका नक्षत्र, सिंह राशि में मघा–पू.फा और उ.फा नक्षत्र तथा धनु राशि में मूल–पू. षा और उ. षा नक्षत्र ।

इन तीन राशियों में ३, ३ नक्षत्र होते हैं । अर्थात् इन तीन राशियों में दो पूर्ण (४ पाद) नक्षत्र और तीसरे का भी एकपाद जुड़ा रहने के कारण उसकी भी गणना हो जाती है । फलस्वरूप बाकी के ९ राशियों में दो-दो नक्षत्र आते हैं । स्पष्टार्थ चक्र देखें——

नक्षत्र-राशि ज्ञापक चक्र

राशि	मेष			वृष		मिथुन			कर्क
नक्षत्रपाद	चू चे चो ला	ली लू ले लो	अ ई उ ए	ओ वा वी वू	वे वो का की	कू घ ङ छ	के को हा ही	हू हे हो डा	डी डू डे डो
नक्षत्र	अश्विनी	भरणी	कृत्तिका	रोहिणी	मृगशिरा	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	श्लेषा

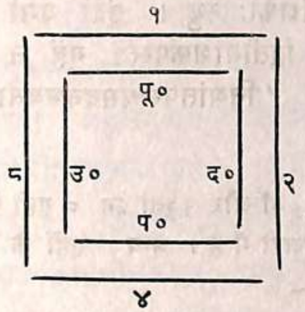
राशि	सिंह		कन्या			तुला			वृश्चिक
नक्षत्रपाद	मा मी मू मे	मो टा टी टू	टे टो पा पी	पू ष ण ठ	पे पो रा री	रू रे रो ता	ती तू ते तो	ना नी नू ने	नो या यी यू
नक्षत्र	मघा	पूर्वाफाल्गुनी	उत्तराफाल्गुनी	हस्त	चित्रा	स्वाती	विशाखा	अनुराधा	ज्येष्ठा

राशि	धनु			मकर		कुम्भ			मीन
नक्षत्रपाद	ये यो भा भी	भू ध फ ढ	भे भो जा जी	खी खू खे खो	गा गी गू गे	गो सा सी सू	से सो दा दी	दू थ झ ञ	दे दो चा ची
नक्षत्र	मूल	पूर्वाषाढ	उत्तराषाढ	श्रवण	धनिष्ठा	शतभिषा	पूर्वाभाद्रपदा	उत्तराभाद्रपदा	रेवती

गृह का नक्षत्र (लं × चौ×८ ÷ २७=शेष संख्या तुल्य नक्षत्र) और शतपद चक्रानुसार गृहस्वामी के नक्षत्र का, दोनों का मेलापक वैवाहिक गणनानुसार विचारना चाहिए। यहाँ नाड़ी का विचार विपरीत होता है, जैसे विवाह में एक नाड़ी होना अशुभ माना जाता है परन्तु गृह में एक नाड़ी का होना शुभ होता है। नाड़ी भेद होने पर यदि ग्रह मैत्री रहे तो शुभ माना जाता है।

शालादिगङ्क-गृह के द्वार दिशा से प्रदक्षिणक्रम से चारों दिशाओं में १-२-४-८ ये शालादिगङ्क होते हैं। शाला[1] दिगङ्क में १ जोड़ने पर प्राप्त संख्या तुल्य ध्रुवादि १६ गृह होते हैं।

शालादिगङ्क चक्र



ध्रुवादि १६ गृहों के नाम क्रमशः इस प्रकार हैं--

१. ध्रुव	५. खर	९. दुर्मुख	१३. क्षय
२. धान्य	६. कान्त	१०. क्रूर	१४. आक्रन्द
३. जय	७. मनोरम	११. सुपक्ष	१५. विपुल
४. नन्द	८. सुमुख	१२. धनद	१६. विजय

इनके फल भी नामानुसार ही समझना चाहिए। खर-दुर्मुख-क्रूर-क्षय और आक्रन्द नामक गृह अर्थात् ५-९-१०-१३-१४ संख्यक गृह अशुभ होते हैं। गृह निर्माण में इनका त्याग करना चाहिए। जैसे पूर्वमुख के गृह में यदि उत्तर तरफ (उत्तर मुख) ओसारा बनानी हो तो पूर्व दिशा से गिनने पर क्रमशः उत्तर के शालादिगङ्क ८ में १ जोड़ने पर ९ संख्यक दुर्मुख नामक गृह हुआ, अतः उत्तर तरफ ओसारा शुभ नहीं होगा ॥११॥

गृह की नामाक्षर संख्या और उसका फल—

आषष्ठाद्दशमं त्रयोदशमिमे द्व्यर्णाः परे त्र्यक्षराः
षष्ठांत्यं चतुरक्षरं खलु गृहं स्युः षोडशैवं गृहाः।
गेहक्ष्माफलयुग्ध्वयोगृहभवैर्नामाक्षरैः संयुत-
स्तष्टो वह्निभिरंशका न शुभदं पस्त्यं द्वितीयांशकम् ॥१२॥

१. शाला अर्थात् अलिन्द यानि घर का ओसारा।

मार्त्तण्डवल्लभा—

नामाक्षरसंख्यामाह। आषष्ठादिति। षष्ठंमर्यादींकृत्येत्याषष्ठं तस्मात् प्रथमद्वितीयतृतीयचतुर्थपंचमषष्ठानिदशमंत्रयोदशमिमे अष्टगृहाः द्वचर्णाः द्वचक्षराः षष्ठांत्यंसप्तमं गृहं चतुरक्षरंचत्वारि अक्षराणियस्मिंस्तत्तथा अन्येगृहाः त्र्यक्षराः एवंषोडशगृहाः स्युः।

गृहाः पुंसि च भूम्न्येव निकाय्यनिलयाऽलयाः"[१] इत्यमरः।

अथांशकसाधनमाह। गेहक्ष्मेति। गेहक्ष्माफलयुग् व्ययः गृहक्षेत्रफलयुक्तः पूर्वानीतोव्ययः गृहभवैर्नामाक्षरैः संयुतः वह्निभिस्त्रिभिस्तष्टः शेषितः सन् अंशकाः स्युः। इंद्रो यमो राजेति तन्नामानि ग्रंथान्तरे उक्तानि तत्त द्वितीयांशकंपस्त्यं गृहं न शुभदं अर्थात् प्रथम तृतीयांशकंशुभदमित्यर्थः। "निशांतपस्त्यसदनंभवनागारमंदिरम्"[२] इत्यमरः ॥१२॥

मार्त्तण्डप्रिया—

प्रथम से षष्ठ तथा १०वाँ और १३वाँ इन ८ गृहों के नाम दो-दो अक्षरों में है। ७वें गृह का नाम ४ अक्षरों में है। अन्य ७ गृहों के नाम तीन-तीन अक्षरों में है। नीचे चक्र में स्पष्ट है—

गृहसंख्या	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
गृहनाम	ध्रुव	धान्य	जय	नंद	खर	कान्त	मनोरम	सुमुख	दुर्मुख	क्रूर	सपक्ष	धनद	क्षय	आक्रन्द	विपुल	विजय
अक्षर	२	२	२	२	[illegible]	२	४	३	३	२	३	३	२	३	३	३

गृह अंश का ज्ञान—

$$\frac{\text{गृह का क्षेत्रफल} \times ८}{२७} = \text{शेष नक्षत्र हुआ।}$$

नक्षत्र संख्या ÷ ८ = शेष व्यय हुआ।

गृह की व्यय संख्या में गृह का क्षेत्रफल तथा गृह का नामाक्षर जोड़ने पर जो संख्या हो उसमें ३ से भाग देने पर यदि १ शेष हो तो इन्द्र २ हो तो यम और ३ हो तो राज अंश होता है। इन्द्र और राज अंश वाला गृह शुभ होता है। यम अंश वाला गृह अशुभ होता है।

$$\frac{\text{गृह क्षेत्रफल} + \text{गृह की व्यय संख्या} + \text{गृह नामाक्षर}}{३}$$

= शेष १ में इन्द्र, २ में यम ३ में राज ॥१२॥

१. अमरकोष–द्वि. का. पुरवर्ग श्लो ५ ॥
२. „　„　„　॥

गृह का गुणविचार--

यावद्भूरिगुणं हृदि स्फुरति तत्ताबद्विचार्यं करै-
श्चेत्तैर्नो तनुयादिहांगुलमुखं क्षिप्त्वा विहायाथ वा ।
श्रीगोपीपतिमेंगह्मालुगिमुखैरायासविच्छित्तये
स्त्रेष्टायर्क्षफलं निबद्धमिह तज्ज्ञात्वा स्थलं साधयेत् ॥१३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथगुणविचारणावधिमाह। यावत्पर्यन्तंकरैःहस्तैःकृत्वाभूरिगुणंबहुगुणं गृहंहृदि अंतःकरणेस्फुरति तत्तावद्विचार्यम्। चेद्यदितैः केवलैःकरैःहस्तैः कृत्वाबहुगुणंनस्फुरतितदा अंगुलमुखमंगुलादिकंकरेषुक्षिप्त्वाथवाविहायतनुयात् कुर्यात्। अथोपायांतरसूचनामाह। श्रीगोपीपतीति। गोपीपतिर्गोपीराजः मेंगःमेंगनाथदैवज्ञः ह्मालुगिर्ह्मालुगिदैवज्ञः एतन्मुखैर्ज्योतिर्विद्भिः आयासविच्छित्तयेस्वेष्टायर्क्षफलंनिबद्धम्। तदिहास्मिन्गृहाणां विषयेज्ञात्वा स्थलंस्वाभीष्टस्थलंसाधयेत्। तथाचगोपीराजः--

विष्णुंव्येकायगोभू हतिभयुजिफलंगोपिराजोभ शेषात्
सायंवाहाष्टिदृग्घ्ने ष्टयुतमहि हतादृक् प्रकृत्याख्य विश्वे।
बाणः सिद्धाष्टि नागोडु विधृति गिरिश त्र्या कृतींद्रर्तु तत्त्वा
त्यष्टचंक क्षमा नखे नार्णव विकृति दिना द्र्यु त्कृती धृत्यथाशाः" इति ॥

अस्यार्थःगोपीराजः विष्णुंविष्णुनामानंशिष्यंप्रत्याहेत्यन्वयः। किमाह। हेविष्णोव्येकायगोभू १९ हतिभयुजिभ २७ शेषात् अहि ८ हतादृक् २ प्रकृत्यादयःफलं स्याद् विगतःएकोयस्मात्सव्येकः सचासौ आयश्चव्येकायः व्येकायश्चगोभूश्च अनयोर्हतिर्गुणनं व्येकायगोभूहतिश्चभंचव्येकायगोभूहतिभे तयोर्युक्योगःतस्यां भशेषात् सप्तविंशतिहृच्छेषात् एकादिषुसप्तविंशति पर्यन्तेषु अहिहृता अष्टहतादृक्प्रकृत्यादयः फलंक्षेत्रफलंस्यादित्यर्थः। कथंभूतंफलं सायमायेनसहवर्तमानंसायमिष्टायसहितमित्यर्थः। एतत्स्वेष्टायनक्षत्रजं फलंभवति। न्यासः वा इत्यथवातत्सायंफलमिष्टाष्टिदृ २१६ घ्न्यायुतंसत्फलंस्यात्। इष्टश्च अष्टिदृक्च ईष्टाष्टिदृक् तयोर्घ्निर्हतिः तयायुतमित्यर्थः।

इदमपि स्वेष्टायनक्षत्रजंफलंभवतीति। अत्रांकन्यास एवव्याख्यानम्। तथाचमेंगनाथदैवज्ञस्यसूत्रम्--

इष्टभात्यष्टिघातेय आयस्तेनोनितेष्टकः।
त्रिहृल्लब्धहतागाश्वि २७ युतेचेष्टायभंभवेत्" इति ॥

अस्यार्थः इष्टभात्यष्टिघाते इष्टभं च अत्यष्टिश्चतयोर्घातोगुणनंतस्मिन्पृथक् स्थापिते यः आयस्तेन ऊनितेष्टकःयदि ऊनोनभवति। तदा अष्टौ प्रक्षिप्यस्फोटनीयः ऊनितेष्टायःत्रिहृल्लब्धहृतागाश्वियुते लब्धेन आहताश्चते अगाश्विनश्चतैः पृथक्स्थापिते इष्टभैरत्यष्टिघातेयुतेसति इष्टायभंक्षेत्रफलंभवेत् आयश्चभं च आयभे इष्टे आयभेयस्मिस्तत्तथा अत्रयदित्रिभिर्निःशेषोभागोनगच्छति तदातत्रतावत् अष्टौक्षेप्याः यावस्त्रिभिर्भागो गच्छति। तथाचह्मालुगिदैवज्ञस्यसूत्रम्--

व्येकेष्टर्क्षहताद्विबाणशशिनो १५२ त्यष्ट्यायुता १७ स्तेपिच
व्येकेष्टायहतैकनाग ८१ सहिताः षण्मूर्च्छनाभि २१६ हृताः।
शेषंक्षेत्रफलंभवेदभिमतस्वेष्टायनक्षत्रजं
स्याद्दैर्घ्यंतदभीष्टविस्तृतिहृतंदैर्घ्योद्धृतिर्विस्तृतिः" इति ॥

स्पष्टार्थोयंश्लोकः। इत्यादिविचारणया इष्टंक्षेत्रफलमवकाशानुरूपंहृदि धृत्वास्थलं साधयेदित्यर्थः ॥१३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

अपने मनोनुकूल माप (लम्बाई-चौड़ाई) वाले गृह में यदि अधिक गुण मिले तो उसे ग्रहण करना चाहिए अन्यथा कुछ अंगुलादि जोड़ या घटाकर जिस प्रकार अधिक गुण मिले वैसा ही करना चाहिए।

श्री गोपीपति–मेङ्ग–ह्मालुगि आदि दैवज्ञों ने गुण साधन में सरलता के लिए जो गृहपिण्ड बनाया है उसका प्रयोग यहाँ करना चाहिए।

गोपीराज की विधि—अभीष्ट आय में (जो मन में हो) १ घटाकर १९ से गुणा कर गुणनफल में इष्टनक्षत्र संख्या को जोड़कर २७ का भाग देने पर जो शेष बचे उतने संख्यक पिण्डाङ्क को ८ से गुणने पर जो संख्या हो उसे अभीष्ट आय में जोड़ने पर क्षेत्रफल होता है।

$$\frac{\text{आय संख्या}-१\times१९+\text{इष्ट नक्षत्र संख्या}}{२७}=\text{शेष}।$$

शेष संख्यक पिण्डाङ्क×८ = गुणनफल।

गुणनफल + आयसंख्या = गृहपिण्ड अर्थात् गृह का क्षेत्रफल।

पिण्डाङ्क चक्र

शेषसं	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
पिण्डाङ्क	२	२१	१३	५	२४	१६	८	२७	१९	११	३	२२	१४	६
शेषसं	१५	१६	१७	१८	१९	२०	२१	२२	२३	२४	२५	२६	२७	
पिण्डाङ्क	२५	१७	९	१	२०	१२	४	२३	१५	७	२६	१८	१०	

ह्मालुगि दैवज्ञ की विधि––इष्ट नक्षत्र की संख्या में १ घटाकर १५२ का गुणा करके १७ जोड़ें। इष्ट आय में १ घटाकर ८१ से गुणा करके जो हो उसे पूर्व के योग में जोड़कर २१६ का भाग देने पर जो शेष बचे वही गृहपिण्ड (क्षेत्रफल) होता है। उस गृहपिण्ड में अभीष्ट लम्बाई से भाग देने पर लब्धितुल्य चौड़ाई होगी या अभीष्ट चौड़ाई से भाग देने पर लब्धि तुल्य लम्बाई होगी।

इष्टनक्षत्र संख्या–१ × १५२ + १७ = योगफल,

इष्ट आय संख्या–१×८१ = गुणनफल + योगफल ÷ २१६

= शेष गृह का पिण्ड अर्थात गृह का क्षेत्रफल।

मुहूर्त्त चिन्तामणि की विधि––(रुपोनितेष्टर्क्ष हता[1])

इष्टनक्षत्र संख्या में १ घटाकर १५२ से गुणा करें। इष्ट आयसंख्या में १ घटाकर ८१ से गुणा करके गुणनफल को पूर्व गुणनफल में जोड़ें। योगफल में १७ जोड़कर २१६ का भाग देने पर जो शेष बचे वहीं गृहपिण्ड (क्षेत्रफल) होता है। गृहपिण्ड में इष्ट लम्बाई से भाग देने पर चौड़ाई और चौड़ाई से भाग देने पर लम्बाई होती है।

इष्ट नक्षत्रसंख्या–१ × १५२ = गुणनफल

इष्ट आय संख्या–१ × ८१ = गुणनफल + गुणनफल = योगफल

योगफल + १७ ÷ २१६ = शेष गृहपिण्ड अर्थात क्षेत्रफल।

उदाहरण––वैवाहिक गणनानुसार घनश्याम (आर्द्रा) का मृगशीर्ष नक्षत्र से ३३ गुण मिलते हैं अतः मृगशीर्ष नक्षत्र और विषम आय गज (७) की कल्पना करके पिण्ड बनाते हैं। इष्ट नक्षत्र संख्या = ५

इष्ट आय संख्या = ७

गोपीराज की विधि के अनुसार––

$$\frac{७-१ \times १९ + ५}{२७} = \frac{११९}{२७} = \text{शेष } ११$$

१—मुहूर्तचिन्तामणि- वास्तु प्रकरण श्लोक ३ ॥

अब ११ संख्यक पिण्डांक है ३ अतः

३×८=२४+७=३१ गृहपिण्ड (क्षेत्रफल)।

झालुगि की विधि=५-१×१५२+१७=६२५

७-१×८१=४८६+६२५=१११९

११११÷२१६=शेष ३१ गृहपिण्ड (क्षेत्रफल)।

मुहूर्त्त चिन्तामणि की विधि—

५-१×१५२=६०८

७-१×८१=४८६+६०८=१०९४

१०९४+१७=११११÷२१६=शेष ३१ गृहपिण्ड अर्थात् (क्षेत्रफल)।

तीनों प्रकार से गृह पिण्ड ३१ ही आया। अब इसमें मनोनुकूल दैर्घ्य-विस्तार (लम्बाई-चौड़ाई) की कल्पना करनी चाहिए। लम्बाई से पिण्ड में भाग देने पर चौड़ाई होगी और चौड़ाई से भाग देने पर लम्बाई होगी।

उपरोक्त प्रकार से आये हुए पिण्ड में यदि कर्त्ता के अभीष्ट की सिद्धि नहीं होती हो अर्थात् उससे भी बड़ा घर बनाना हो तो प्राप्त गृहपिण्ड में २१६ को एकादि गुणित करके जोड़ना चाहिए। जैसे उपरोक्त गृह पिण्ड ३१ में २१६ जोड़नेपर २४७ हुआ, ४३२ जोड़ने पर ४६३ हुआ, ६४८ जोड़ने पर ६७९ हुआ। अब इतना गृह पिण्ड समझकर दैर्ध्य विस्तार की कल्पना करनी चाहिए।

"आर्द्रादिति गुरुश्चैव सार्पश्चैव पिता भगम्।
शत भं पूर्वयुग्मे च नवेष्ट गृहतारकाः" ज्यौतिष सागर॥

इस वचन के अनुसार आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, श्लेषा, मघा, पूफाल्गुनी, शतभिषा, पूभाद्र और उभाद्र इन ९ नक्षत्रों में गृहपिण्ड बनाना शुभ होता है। अर्थात् गृह निर्माण करने वाले के नाम के साथ इन ९ नक्षत्रों में किसी से गणना बैठती हो तो ठीक है अन्यथा जिस किसी नक्षत्र के साथ बैठे वही इष्ट नक्षत्र मानना चाहिए। इसी तरह इष्ट आय में भी विषम (१-३-५-७) आय की ही कल्पना करनी चाहिए। क्योंकि सम आय के फल अच्छे नहीं होते। इससे सम्बन्धित गर्ग मुनि का यह वचन मिलता है—

"कीर्तिः शोको जयो वैरं धनं निर्धनता सुखम।
१ २ ३ ४ ५ ६ ७
रोगश्चेति गृहारम्भे ध्वजादीनां फलं क्रमात् ॥१३॥
८

स्थल साधन—

द्विघ्नायाममितं द्विपाशमजरत्सूत्रं विधायांकयेत्
त्र्यायामांघ्रिमिते च विस्तृतिदले तौकर्षकोणाभिधौ ।
पाशौ क्षेत्रविरामशंकुनिहितौ कृत्वाऽऽद्यमाकर्षयेत्
कोणे शंकुरितीतरो विनिमयाद्रज्ज्वन्तयोश्चापरौ ॥१४॥

मार्त्तण्डवल्लभा --

अथस्थलसाधनायसूत्रमोटनलक्षणमाह। अजरत्सूत्रंनूतनसूत्रं द्विघ्नायाम मितंद्विपाशं च विधाय अंतात् एकस्मात्सूत्रांतात् अंकयेदित्यन्वयः द्विघ्ना श्चासौ आयामश्चद्विघ्नायामः आयामोदैर्घ्यम् तेनमितंद्विगुणितदैर्घ्यसमान-मित्यर्थः। द्विपाशंद्वौपाशौयस्मिन्तद्विपाशम् एवंविधंसूत्रंविधायकृत्वा अंतात् सकाशात् अंकयेत्चिह्नयेत् एतदुक्तंभवति। पूर्वकल्पितक्षेत्रस्यदैर्घ्यंमितं सूत्रंद्विगुणंविधायतदंतयोःपाशंकृत्वा अंकयेत्। कुत्रकुत्रांकयेदित्याह। आयामांघ्रिमिते च परंविस्तृतिदले अंकयेत् त्रयश्चते आयामांघ्रयश्चतेतथा तैर्मितंतस्मिन् एतदुक्तंभवति। क्षेत्रदैर्घ्यंचतुर्भिर्भक्तालब्धमंघ्रिप्रमाणमेकस्मा-दंतात् अंघ्रित्रयंहित्वा चिह्नयेत् विस्तृतिदलेक्षेत्रस्यविस्तारार्धमिते अंकयेत् तौ अंकौकर्षकोणाभिधौस्तः अंघ्रित्रयेकृतः कर्षाख्यः विस्तृतिदलेकृतोंकः कोणाख्यः। एवंसूत्रमोटनमुक्त्वा। स्थलसाधनमाह। पाशाविति। पाशौक्षेत्र-विरामशंकुनिहितौकृत्वा आद्यमंकमाकर्षयेदित्यन्वयः। क्षेत्रस्यविरामौ अंतौतयोः शंकुनिहितौनिक्षिप्तौकृत्वा आद्यमंकंकर्षाख्यं आकर्षयेत्। एतदुक्तं भवति। क्षेत्रस्यमध्यभागेसाधितदिकसूत्रोपरि इष्टदैर्घ्यमितांसूत्रंप्रसार्यतदंतयोः शंकुनिखातयोः शंक्वोः मोटितसूत्रांतपाशौनिधायकर्षाख्यंचिह्नंधृत्वा एकस्यां दिशि आकर्षयेत् यथोभयशंकुगतारज्जुः समाना आकृष्टास्यात्तथा आकर्षये दित्यर्थः। कोणेशंकुरिति। कोणेकोणचिह्ने यत्रकोणचिह्नमागतं तत्रभुवि-शंकुं निखायेत्यध्याहारः। इत्यमुनाप्रकारेण इतरः शंकुर्निखेयः। एतदुक्तं-भवंति। तदेवकर्षचिह्नमन्यस्यांदिशि आकृष्यकोणेशंकुर्निखेयः। एवं कोणद्वय-साधनमभिधाय अन्यकोणद्वयसाधनमाह। विनिमयादिति रज्ज्वंतयोर्विनि-मयात्विपरीतधारणात् अपरौकोणशंकूनिखेयौ। एतदुक्तंभवति! रज्ज्वन्तौ विपरीतौधृत्वापूर्ववत्कर्षाकर्षणंकृत्वाकोणयोः शंकूनिखेयौ ॥१४॥

मार्त्तंडप्रिया—

गृह की जितनी लम्बाई अभीष्ट हो उसके दूने के बराबर मजबूत नवीन सूत्र लेकर उसके दोनों छोर पर कील बाँध लें। सूत्र के एक छोर से लम्बाई के त्रिगुण-

चौथाई (पौन ¾) पर एक चिह्न बनावें वह कर्ष होगा। पुनः सूत्र के उसी छोर से गृह की चौड़ाई के आधे के बराबर पर एक दूसरा चिह्न बनावें वह कोण होगा।

अब गृह के लिए साधित दिक्सूत्र पर गृह के प्रथमपार्श्व की लम्बाई के दोनों छोर पर गड़े हुए कीलों में उस सूत्र के दोनों छोर के कीलों को फँसाकर "कर्ष" चिह्न को पकड़कर ऐसे खीचें कि दोनों शंकुओं में लगा हुआ सूत्र अच्छी तरह से खीचा जा सके। इस प्रकार खीचने पर "कोण" बिन्दु जहाँ लगे वहाँ एक कील गाड़े। इस प्रकार एक पार्श्व में दो कोण होगें। पुनः उस सूत्र को दूसरे पार्श्व के लम्बाई सूचक कीलों में फसाकर उसी तरह से उस पार्श्व में भी दो कोण बनावें। इस तरह गृह के चार कोण हो जायेगें ॥१४॥

गृहसूत्र साधन—

आग्नेयादि दृढ प्रदक्षिणगतं सूत्रं समासादयेत्
मध्ये वामकपार्श्वसुप्तपुरुषं ध्यात्वा तमुत्तानकम् ।
अष्टाश्व्यंशमगेंदु संमितलवान्पुच्छाद्विहायाग्रगो
भागो नाभिरितः खनेल्लवमितं वामेऽश्मभिः पूरयेत् ॥१५॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

एवंक्षेत्रसाधनमुक्त्वासूत्रन्यासमाह। आग्नेयादिति। आग्नेयादिदृढंप्रदक्षिणगतंसूत्रम् आसादयेत् मध्येक्षत्रमध्येवामकपार्श्व सुप्तंपुरुषंप्रागुदकशिरस्कंध्यात्वातंध्यातंपुरुषमुत्तानकंध्यायेत्। कथंभूतम् पार्श्व स्थंलघुमध्यगुरोः परंस्याद्यथोपरितथैवपूरयेत् पश्चिमंच गुरुभिः पुनः पुनः सर्वमेवलघुरित्येवं विधिरिति। कथंभूतम् अष्टाश्व्यंशमष्टाश्विनोंशा भागा यस्मिन्सतथातम्। अयमर्थः। क्षेत्रप्रमाणंकृकलासरूपंवास्तुपुरुषंप्रकल्प्यततोष्टाविंशतिधाकुर्यात् एवमष्टाश्व्यंशंप्रकल्प्यपुच्छात्सकाशात् अगेन्दुसंमितलवान्सप्तदशभागान्विहायत्यक्त्वा अग्रगस्तदग्रगोभागोनाभिः इतोनाभेः सकाशात्वामेवामभागेलवसंमितंखनेत् अनंतरं चाश्मभिः पूरयेत्। तथाच ब्रह्मशंभुः—

"सूत्राभित्तिशिलान्यासस्तंभस्यारोपणं तथा।
पूर्वदक्षिणयोर्मध्येकुर्यादित्याह काश्यपः ॥"

इति नारदः—

"नभस्यादिषु मासेषु त्रिषु त्रिषु यथाक्रमम्।
पूर्वादिदिक्शिरावामपार्श्वशायीप्रदक्षिणम् ॥"

इति । तयाचशिल्पशास्त्रे—

"वास्तोः शिरसिपुच्छेचयाम्यकुक्षौचपृष्ठतः ।
आयुष्कामः खनेन्नैववामकुक्षौखनिःशुभाः ॥
वास्तुक्षेत्रप्रमाणंचकल्पयित्वास्यवामके ।
कुक्षौ खातं विधायादौग्रावभिः पूरयेतत्तः" इति ॥

तथाचलल्लः—

"त्यजेद्दशशिरोभागोह्यग्रेसप्तदशांशकान् ।
मध्येनाभिविजानीयात्तत्रशंकुंप्रतिष्ठयेत् ॥
अस्थिरस्यशिरोयत्रवास्तोस्तद्गणयत्करैः ।
दैर्घ्यं वाविस्तृतिंचैवकृत्वाष्टाश्विमितांशकान्" इति ॥१५॥

मार्त्तण्डप्रिया—

उपरोक्त प्रकार से गृहक्षेत्र का साधन करके अग्निकोण से प्रारम्भ कर दक्षिण-क्रम से चारो तरफ मजबूत सूत्र को फैलाना चाहिए । गृहक्षेत्र के मध्य भाग में गृह की लम्बाई के तुल्य बायें करवट (श्लोक ६ के अनुसार उक्त दिशा में शिर करके) लेटे हुए वास्तु पुरुष का ध्यान करना चाहिए। पुनः उसी वास्तुपुरुष को उत्तान (चित्त) सोते हुए ध्यान करके उसका २८ भाग करें। अब पैर से १७ भाग को छोड़कर उससे आगे के १८वें भाग को नाभि समझना चाहिए। उस नाभि से वाम पार्श्व में १ भाग (२८वें भाग में से) के बराबर खात खोदकर उसे प्रस्तरखण्ड से भर देना चाहिए । इसी को नींव देना कहते हैं ॥१५॥

शङ्कु-शिलान्यास कथन--

ना कालेऽत्र निधेय उक्ततरुजोऽग्रचात्सिद्ध विशाष्टचहः
कृत् संख्यांगुलकस्त्रिभागचतुरस्राष्टास्त्रकानस्त्रकः ।
कं वक्षस्थलमूरुपादयुगलं संस्पृश्य विप्रादिको
रेखां सूत्रवदग्निजेन रचयेत्तद्वच्च भित्तेः शिलाः ॥१६॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथशंकुन्यासमाह । नाकाले इति । अत्रकुक्षिस्थलेनानरः शंकुः काले मुहूर्तसमये निधेयः । सकियत्प्रमाण इत्यपेक्षायांनृमानमाह । अग्रचात्विप्रात् सकाशात्वर्णपरत्वेन सिद्ध २४ विशा २० ष्टच १६ हःकृत् १२ संख्यांगुलकः निधेयः प्रतिष्ठापनीयः । एतदुक्त भवति । विप्रेणसिद्धसंख्यांगुलकश्चतुर्विशां-

गुलोनिधेयः क्षत्रियेणर्विशांगुलः वैश्येन अष्टचंगुलः षोडशांगुलः शूद्रेणाहः कृतसंख्यांगुलोद्वादशांगुलोनिधेय इत्यर्थः। किंलक्षणो ना उक्ततरुजः शास्त्रोक्त वृक्षोद्भवः। पुनः किंलक्षणः त्रिभागचतुरस्राष्टास्रकानस्रकः त्रिभागेषुचतुरस्राष्टास्रकानस्रकाणियस्मिन्सतथा। एतदुक्तंभवति। यथाप्रमाणंशंकुंत्रिधाविभज्य अद्यांशंचतुरस्रं द्वितीयांशमष्टास्रं तृतीयांशमनस्रंवर्तुलंकुर्यादि तिभावः। तथाचोक्तंग्रंथातरे—

'स्याच्चतुर्विंशर्विशाष्टद्वादशांगुलकैःक्रमात्।
विप्रादीनांशंकुमानंस्वर्णवस्त्राद्यलंकृतम् ॥
खदिरार्जुनशालोत्थंयुगदत्रतरुद्भवम् ।
रक्तचंदनपालाशरक्तशालकिलालजम् ॥
निंबकारंजकुटजंवैणवंबिल्ववृक्षजम् ।
शंकुंत्रिधाविभज्याद्यंचतुरस्रंततः परम्॥
अष्टास्रंचतृतीयांशमनस्रमृजुमव्रणम् ।
एवंलक्षणसंयुक्तंपरिकल्प्यशुभेदिने'' इति ॥

अथरेखाकरणमाह। कमिति। अग्निजेनसुवर्णनब्राह्मणादिकः कादिसंस्पृश्यसूत्रवद्रेखांरचयेत्। सूत्रवदिति आग्नेय्यादिगृहंप्रदक्षिणंकुर्यादित्यर्थः। एतदुक्तंभवति। ब्राह्मणः कंशिरः स्पृष्ट्वातर्जन्यावाकृत्वा आग्नेयादिप्रदक्षिणंसूत्रानुगतांरेखांकुर्यात्। तथैवक्षत्रियोवक्षःस्थलं स्पृष्ट्वारेखांकुर्यात्। वैश्यः ऊरुयुगलंस्पृष्ट्वारेखांकुर्यात्। शूद्रः पादयुगलंस्पृष्ट्वारेखांकुर्यात्। तथाचलल्लः—

''कृत्वासूत्रनिपातंमध्यांगुल्याथवाप्रदेशिन्या।
अंगुष्ठेनह्यथवाकनकाक्षतरजतमुक्ताभिः ॥ रेखांकुर्यात्'' इत्यादि।

तथाचभृगुः—

''विप्रः शीर्षंनृपोवक्षोवैश्यश्चोरूपरः पदे।
स्पृष्ट्वारेखांगृहारंभेकुर्यादग्नेःप्रदक्षिणम्'' इति ॥

अग्नेरित्याग्नेय्याः। तथाचकारिकायाम्—

''अंगुष्ठकेनदेशिन्यारेखांकुर्वीत सूत्रतः ।
स्वर्णेनमणिनारूप्यमुक्तादधिफलाक्षतैः ॥
कुसुमैर्वानशस्त्रेणनलोहेननभस्मना ।
काष्ठादिभिर्नापसव्यां नवक्रांदोषदर्शनात्॥
शस्त्रेणशस्त्रमृत्युःस्यादित्यादिस्पष्टमीरितम्''ति। इ

तथाचबृहद्वास्तुपद्धतौ—

"शस्त्रेणशस्त्रमृत्युर्बंधोलोहेनभस्मनाग्निभयम् ।
तस्करभयंतृणेनचलिखिताकाष्ठेनराजभयम् ॥
वक्राचपादलिखितारिपुभयदाक्लेशदाविरूपाच ।
चर्मांगारास्थिकृतादंतेनचकर्तुरशुभाय ॥
वैरमपसव्यलिखिताप्रदक्षिणासंपदोविनिर्देश्या" इति ।

अथशिलान्यसमाह । भित्तेःशिला अपिसूत्रवदाचरेयुः आग्नेयादिप्रदक्षिणं स्थापयेयुरित्यर्थः । तथाचवराहः—

"दक्षिणपूर्वेकोणे कृत्वापूजांशिलांन्यसेत्प्रथमम् ।
शेषाः प्रदक्षिणेनस्तंभाश्च वंप्रतिष्ठाप्याः" इति ॥१६॥

मार्त्तण्डप्रिया—

गृहारम्भ के नक्षत्र में ही शंकुस्थापन करना चाहिए। ब्राह्मण आदि वर्णों के लिए जो शास्त्रोक्त[1] वृक्ष हैं उनके काष्ठ का शंकु बनाना चाहिए। ब्राह्मण २४ अङ्गुल का, क्षत्रिय २० अङ्गुल का, वैश्य १६ अङ्गुल का और शूद्र १२ अङ्गुल का शंकु बनाकर उसे ३ भाग करके प्रथम भाग को चतुष्कोण, द्वितीय को अष्टकोण और तृतीय को वृत्ताकार बनाकर वास्तुपुरुष के वामकुक्षि भाग में स्थापित करना चाहिए। इसके पश्चात हाथ में सुवर्ण लेकर वास्तुपुरुष के अङ्गों का स्पर्श करना चाहिए। ब्राह्मण हो तो वास्तुपुरुष का मस्तक, क्षत्रिय हो तो हृदय, वैश्य हो तो दोनों जंघा और शूद्र हो तो दोनों पावों का स्पर्श करे। अंगस्पर्श के पश्चात सूत्र की भाँति (अग्नि कोण से दक्षिण क्रम) रेखा खींचनी चाहिए और रेखानुसार ही भित्ति शिला (दीवाल) का स्थापन करना चाहिए ॥१६॥

गृह द्वार का विचार—

पूर्वादौ त्रिषडर्थपंचमलवे द्वाःसव्यतोऽङ्कोद्धृते
दैर्घ्ये द्व्यंशसमुच्छ्रिताब्धिलवके सर्वासु दिक्षूदिता ।
स्तंभोऽग्नेर्दिशि पूजितःसुसमये स्थाप्यः शिरश्छत्रभाग्
विस्ताराष्टिलवान्वितैः कृतकरैस्तुल्यं गृहोच्चं विदुः ॥१७॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथभित्तिप्रसंगेनद्वारमाह । दैर्घ्येगृहदैर्घ्ये अंकाप्तेनवभिर्भाजितेसति पूर्वादौदिशिक्रमेणसव्यतोवामभागात्त्रिषडर्थपंचमवेद्वाः द्वारमुक्तंमुनिभिरिति

---

१. खादिरार्जुन शालोत्थं युगपत्रतरुद्भवम् ।

शेषः । त्रयश्चषट्च अर्थाश्च पंचचत्रिषडर्थंपंच एतेषांसंख्यापूरकात्रिषडर्थपंचमास्तेचतेलवाश्चतेषांसमाहारस्तस्मिन् एतदुक्तंभवति। गृहदैर्घ्यंनवभागंकृत्वा पूर्वाभिमुखेगृहेक्रियमाणेवामभागात् अंशद्वयंत्यक्त्वातृतीयांशेद्वारंकर्तव्यम् । दक्षिणाभिमुखेतथैवांशपंचकंत्यक्त्वाषष्ठेंशेकार्यम् । पश्चिमाभिमुखेतथैवांशचतुष्कंत्यक्त्वापंचमांशेकार्यम् । उदङ्मुखेपश्चिमांशे एवद्वारंकर्तव्यम् । सर्वासु दिक्षु अब्धिलवकेचतुर्भागेद्वारुदिता । किंलक्षणाद्वाः द्व्यंशसमुच्छ्रिता द्विभागोच्चा । तथाचवराहः—

"दैर्घ्येनवांशाःपदमत्रसव्याद् द्वारंशुभंप्राक्त्रिचतुर्थभागे ।
चतुर्थषष्ठेदिशिदक्षिणस्यांपश्चाच्चतुष्पंचमकेतथोदक्" इति ।

तथाचच्यवनः—

"मानाधिकोनदिग्भागे द्वारे नीचसुखक्षयः" इति ।

अथनिष्पन्नासुभित्तिषुस्तंभप्रतिष्ठामाह । स्तंभोग्नेर्दिशीति । अग्नेर्दिशि आग्नेयांसुसमयेपूर्वोदितेस्तंभः स्थाप्यः । अत्राऽप्युक्ततरु इत्यनुवर्तते । किंलक्षणस्तंभः पूजितःस्रक्चंदनार्चितः पुनः किंलक्षणः शिरश्छत्रभाक्शिरसिछत्रंभजते इतितथा छत्रंतु काकादिपक्ष्युपवेशनभयात्स्तंभोपरिक्रियते । तथाचवराहः—

"छत्रस्रग्बंधयुतकृतधूपविलेपनः समुत्थाप्यः ।
स्तंभस्तथैवकार्योद्वारोच्छ्रायः प्रयत्नेन" इति ।

तथाचोत्पलः—

स्तंभोपरियदोलूककाकगृध्रादिपक्षिणः ।
व्यालादयश्चतिष्ठंतितदाकर्तुर्नशोभनम् ॥
तस्मात्स्तंभोपरिच्छत्रं शाखांफलवतींतुवा ।
धारयेदथवावस्त्रं बुधैरत्नादिनिक्षिपेत्" इति ।

गुर्जरदेशेक्वचित्कालसर्पमवलोक्यतच्छून्यदिशि प्रथमंस्तंभप्रतिष्ठां कुर्वन्ति । तदसत् । यतस्तदलोकनंविवाहवेद्यांकोणेषु श्रृंगारार्थंस्तंभान्रोपयंतितद्विषयम् । तदप्येकदेशीयम् न बहुसंमतम् । कालसर्पस्तुयथा—

ईशानतःसर्पतिकालसर्पोविहायसृष्टिंगणयेद्विदिक्षु ।
पश्चादगतिस्तन्मुखमध्यपुच्छं त्रिकंत्रिकंवैवृषसंक्रमादेः ॥
अहेःफणायांमरणंवरस्य मध्ये कुमार्याःस्वजनस्यपुच्छे ।
विधेयमेकंकिलशून्यदेशे विवाहवेद्यांनिखनेच्चकीलम्" इति ॥

वृषादित्रिषुराशिषुरवौ आग्नेय्यांस्तंभारोपणंकार्यम् । सिंहादिषु ईशान्यां वृश्चिकादित्रिषु वायव्यां घटादित्रिषुनैर्ऋत्यां कर्तव्यमिति । एतद्विवाह एव गृहेसिंहादवलोकनीयं वृषाद्व्याम् । तथाच—

वृषाद्द्व्यांगृहेसिंहान्मीनात्त्रीणिसुरालये ।
मुखंमध्यंतथापुच्छं हित्वास्तंभंनियोजयेत्" इति ।

अन्यच्चगृहस्तंभप्रतिष्ठापनंबहुभिर्ग्रन्थकारैराग्नेय्यांवाभिहितम् । तथाच ब्रह्मशंभुः—

सूत्रभित्तिशिलान्यासं स्तंभस्यारोपणंतथा ।
पूर्वदक्षिणयोर्मध्येकुर्यादित्याहकश्यपः" इति ।

तथा च शार्ङ्गधरः—

"प्रासादेषु च हर्म्येषु गृहेष्वन्येषु सर्वदा ।
आग्नेय्यां प्रथमं स्तम्भं स्थापयेत्तद्विधानतः" इति ।

तथाचवराहमिहिराचार्याः—

दक्षिणपूर्वेकोणेकृत्वापूजां शिलांन्यसेत्प्रथमाम् ।
शेषाःप्रदक्षिणेनस्तंभाश्चैवंप्रतिष्ठाप्याः" इति ।

कात्यायनगृह्यकारिकायामप्युक्तम्—

एकैकमुच्छ्रयेत्स्तंभंमन्त्रैरेतैः शिलातले ।
श्रियोवसान इत्यंतैरिमामित्यादिभिर्गृही ।
आग्नेय्यादिषुकोणेषुमंत्रैरेतैः शिलांन्यसेत्" इति ।

गृह्ये हरिहरभाष्येशालापद्धतिष्वप्येवमेवोक्तम् । इत्यलमतिप्रसंगेन । उक्ततरुज इत्युक्तत्वाच्छास्त्रांतरात्काष्ठान्यवगंतव्यानि । तथाचवास्तुशास्त्रे—

श्रीपर्णीरोहिणीशाकसर्जाश्चसरलाःशुभाः ।
पतंगलोध्रशालाख्यास्तालार्जुनकशिंशपाः ॥
चन्दनाशोकबदरीमधूकाश्चकदंबकाः ।
प्रशस्ताश्चशमीनिंबबिल्ववर्जंगृहांतिके ॥
गृहेकाष्ठंसमंश्रेष्ठमलिन्देविषमंशुभम्" इति ।

नारदः—

प्लक्षोदुंबरचूताख्या निंबस्नु हिविभीतकाः ।
दग्धाःकंटकिनोवृक्षा वटाश्वत्थकपित्थकाः ॥
अगस्तिशिग्रुतालाख्यास्तिन्तिडीकाश्चनिंदिताः ।
अन्येचगृहनिर्माणे योजनीयाः सदाद्रुमाः"[१] इति ।

तथाच वराहः—

पितृवनमार्गसुरालयवल्मीकोद्यानतापसाश्रमजाः ।
चैत्यसरित्संगमभवाश्चघटतोयीसक्ताश्च ॥

---

१. नारद संहिता—अ० ३१ श्लो० ५३-५४ ।

कुंजानुजातवल्लीनिपीडितावज्रमारुतोपहताः ।
स्वपतितहस्तिनिपीडितशुष्काग्निप्लुष्टदुष्टमधुनिलयाः ॥
तरवोवर्जयितव्याः शुभदाःस्युःस्निग्धपत्रकुसुमफलाः ।
सुरदारुचंदनसमामधुकरतरवः शुभाद्विजातीनाम् ।
क्षत्रस्यारिष्टाश्वत्थखदिरविल्वावृद्धिकराः ।
वैश्यानां जीवखादिरकर्सिदूरकस्यंदनाश्चशुभफलदाः ॥
तिंदुककेतकसरलार्जुनोत्थसालाश्चशूद्राणाम् ।
सर्वेषांवाशस्ताःसर्ववृक्षाश्चनिंदिता नोचेत्'' इति ।

व्यासोपि—
अन्यवेश्मस्थितंदारुनैवान्यस्मिन्प्रयोजयेत् ।
नतत्रवसतेःकर्त्ता वसेत्तत्रनजीवति'' इति ।

समरंगणे—
इष्टकालोष्टपाषाणमृत्तिकाजीर्णमायसम् ।
तृणंपर्णंबुधैः प्रोक्तं दारुनूत्नंगृहायवै'' इति ।

शार्ङ्गधरेपि—
नूतनेनूतनंकाष्ठं जीर्णेजीर्णं प्रशस्यते ।
जीर्णेचनूतनंश्रेष्ठं नोजीर्णंनूतनेशुभम्'' इति ।

वृक्षच्छेदनप्रार्थना ग्रथांतरे उक्ता—
यानीहभूतानिवसंतितानि बलिंगृहीत्वाविधिवत्प्रयुक्तम् ।
अन्यत्रवासंपरिकल्पयंतुक्षमंतुतान्यद्यनमोऽस्तुतेभ्यः'' इति ।

अथस्तंभप्रसंगेनगृहोच्चतामाह । विस्तारेति । विस्तारस्यगृहविस्तारस्य अष्टिलवः षोडशांशस्तेन अन्वितैर्युक्तैः कृतकरैश्चतुर्हस्तैस्तुल्यं समानंगृहोच्चंविदुर्मुनय इत्यध्याहारः । तथाचरत्नकोशे—
विस्तारषोडशांशश्चतुर्हस्तोभवेद्गृहोच्छ्रायः'' इति ।

तथाचलल्लः—
नात्युच्छ्रितंनातिनीचंकुडयोत्सेधंयथारुचि'' इति ॥१७॥

मार्त्तण्डप्रिया—

गृह की लम्बाई (दैर्घ्यमान) को ९ भाग करके यदि पूर्वाभिमुख घर बनाना हो तो बायें से २ भाग छोड़कर तीसरे भाग में द्वार बनाना चाहिए । दक्षिणमुख के घर में बायें से ५ भाग छोड़कर छठे में, पश्चिममुख में ४ भाग छोड़कर ५वें में और उत्तरमुख में भी ४ भाग छोड़कर पाचवें भाग में द्वार बनाना चाहिए । गृह की लम्बाई के ९वें भाग का जितना मान हो उसके दूने के बराबर द्वार की ऊँचाई रखनी चाहिए ।

गृह के द्वार निर्माण में साधारण नियम यह है कि चाहे किसी भी दिशा में द्वार बनानी हो तो उसके बायें से ३ भाग छोड़कर ४ थे भाग में द्वार बनाना शुभ होता है। दाहिने में ५ भाग छोड़ना शुभकर माना जाता हैं।

स्तम्भरोपण--सभी वर्णों के लिए जो शास्त्रोक्त काष्ठ हैं उनके स्तम्भों का शुभमुहूर्त्त में पूजन करके गृह के अग्निकोण में स्थापित करना चाहिए स्तम्भ के शीर्ष पर छत्र बना देना चाहिए ताकि पक्षी वगैरह उसपर नहीं बैठें।

गृह की ऊँचाई--गृह की चौड़ाई (विस्तार) के १६वें भाग को ४ में जोड़ने पर जो हो उतनी ही घर की ऊँचाई रखनी चाहिए। जैसे--

$$\frac{\text{गृह की चौड़ाई}}{१६} + ४$$

यदि गृह की चौड़ाई ३२ हो तो

$$\frac{३२}{१६}+४=२+४=६ \text{ गृह की ऊँचाई।}$$

यदि ३२ हाथ चौड़ाई हो तो ६ हाथ ऊँचाई हो या यदि ३२ फीट हो तो ६ फीट ऊँचाई रहें। परन्तु आजकल ऐसा प्रचलन नहीं है क्योंकि महानगरों में शहरों में जिसको जितनी भूमि प्राप्त होती है उतने में ही अपना भवन निर्माण करता है। अतः यहाँ पर गृह की ऊँचाई का शास्त्रोक्त नियम उचित नहीं ॥१७॥

गृह में स्नान-भोजनादि स्थान का विचार—

स्नानाग्निस्वपिवस्त्रभोजनपशुद्रव्यामरौकः स्थितिं
पूर्वादौ जलमीशितुर्दिशि परं वायोरपाङ्मूत्रकम्।
अल्प्येशक्तिभुवोर्यथारुचि परे गेहस्य दक्षे घर-
ट्टांबूलूखलचुल्लिकापितृपदप्रक्षालनान्यूचिरे ॥१८॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथमुख्यगृहात्कस्यगृहंकस्यांदिशिकर्तव्यंतदाह। स्नानेति। स्नानंप्रसिद्धम् अग्निः प्रसिद्धः स्वपिःशयनं वस्त्राणिप्रसिद्धानि भोजनंप्रसिद्धं पशवोगवादयः द्रव्याणिसुवर्णादीनि अमरादेवाः एषामोकांसिगृहाणि तेषांस्थितिःस्थापनं पूर्वादौदिशिक्रमेणकार्यमित्यध्याहारः। तथाचनारदः--

स्नानागारं दिशिप्राच्यामाग्नेय्यांअग्निमंदिरम्।
याम्यायां शयनागारं नैर्ऋत्यां वस्त्रमन्दिरम्॥

प्रतीच्यांभोजनागारंवायव्यांपशुमन्दिरम् ।
भांडकोशं तूत्तरस्यामीशान्यांदेवमन्दिरम्"[१] इति ॥

अथजलस्थानमाह । ईशितुरीशानस्यदिशिजलं कार्यंनान्यत्र । तथाचलल्लः-

प्राच्यादिदिक्स्थेसलिलेसुतहानिः शिखिभयंरिपुभयंच ।
स्त्रीकलहंस्त्रीदौष्टचंनैष्ठचंचितात्मजविवृद्धिःस्यात्" इति ।

अथान्यदप्याह । परमिति । परमनूक्तंपदार्थजातंवायोर्दिशिकार्यम् । अन्यानिमारुत्यामितिलल्लोक्तत्वात् । अपांग्दक्षिणस्यांदिशिमूत्रकंकार्यम् । स्थलसंकोचेसति एतद्यत्प्रोक्तंतद्गृहमध्येबाह्यतश्चस्वस्थानेतारतम्येनयोज्यम् । अथशक्तिभुवोःसंकोचेसतिकर्तव्यमाह । अल्पे इति । शक्तिभुवोरल्पे सतियथारुचिकार्यम् । गेहस्यदक्षेपरे आचार्याःघरट्टादिकमूचिरे । घरट्टःपिष्ट यन्त्रम् अंबु उदकम् उलूखलादिकंप्रसिद्धम् । तथाचोक्तंग्रंथांतरे—

उलूखलंपिष्टयंत्रमग्निस्थानजलाश्रयम् ।
वेश्मनोदक्षिणेपार्श्वेपितृणांपादशौचनम्" इति ॥१८॥

मार्त्तण्डप्रिया—

गृह के पूर्व भाग में स्नानागार, अग्निकोण में पाकस्थान (किचन), दक्षिण में शयनागार, नैऋत्य में वस्त्रादि रखने का, पश्चिम में भोजन का, वायव्य में पशुओं का, उत्तर में भण्डार गृह और ईशान में देवगृह बनाना चाहिए। जल का स्थान (नल-पाइप कुँआ) ईशान कोण में शुभ होता है। मल-मूत्र त्याग करने का स्थान (पेशाब-पाखाना घर) गृह के दक्षिण भाग में बाहर के तरफ से बनाना चाहिए। अन्य अनुपयोगी वस्तुओं के रखने का स्थान वायव्य में बनाना चाहिए।

	ईशान	पूर्व	अग्नि	
नल पाईप आदि	देवगृह	स्नानगृह	पाकगृह (किचन) रसोई	
उत्तर	भण्डार गृह	आँगन या हाल, प्रधानगृ.	शयनगृह	दक्षिण
	पशुगृह	भोजनगृह	वस्त्रगृह	मलमूत्रगृह
	वायव्य	पश्चिम	नैऋत्य	

१. नारदसंहिता--अ० ३१ श्लो० ५०।

उपरोक्त विधि के अनुसार गृहनिर्माण करना उसी से सम्भव है जो सामर्थ्यवान हो और पर्याप्त भूमिवाला हो अतः सामर्थ्य और भूमि की कमी वाले व्यक्ति को जैसा सम्भव हो वैसा करना चाहिए।

कुछ आचार्यों ने तो जाँता-जलस्थान-ओखली-चूल्हा-श्राद्धस्थान आदि इन सबको भी गृह के दक्षिण भाग में ही बनाने का निर्देश किया है ॥१८॥

आय आदि का विचार किस गृह में करना चाहिए--

द्वात्रिंशाधिकहस्तमब्धिवदनं ताणं त्वलिन्दादिकं
नैष्वायादिकमीरितं तृणगृहं सर्वेषु मास्सूदितम् ।
छन्नं वश्यकपाटमर्चिततमं वेश्मोक्तरीत्या विशे-
दारंभोदितमास्सु नारदमतान्माघोर्जशुक्रेषु तु ॥१९॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अकेषुकेषुगृहेषु आयादिकंभाव्यंकेषुनभाव्यमित्याह। द्वात्रिंशेभ्यःअधिकाः हस्ताःयस्मिनगृहेप्रमाणंतत्द्वात्रिंशाधिकहस्तमब्धिवदनंचतुर्मुखं ताणंतृणगृहम् अलिंदादिकम् अलिंदंपट्टिशालेतिलोकेप्रसिद्धम्। आदिशब्देननिर्व्यूहादि गृहभूषणंगृह्यते एषु आयादिकं न ईरितंनोक्तम्। तथाचदैवज्ञवल्लभे--

अलिंदनिर्व्यूहविनिर्गमाद्याश्चतुर्दिशंयेगृहभूषणाय ।
आयादिकंतेषुनचिंतनीयंयतोनतेवास्तुपरिग्रहेस्युः" इति ।

तथाचचिंतामणौ--

यत्रदैर्घ्यंग्रहादीनांद्वात्रिंशद्धस्ततोधिकम्
नतत्रचिंतयेद्धीमान्गणनायव्ययादिकम्" इति ।

तथाचराजमार्तण्डे—

आयव्ययोमासशुद्धिंचितयेन्नतृणालये" इति ।

तथाचवसिष्ठः—

एकादशेयवादूर्ध्वंयावद्द्वात्रिंशहस्तकम् ।
तावदायादिकं चिंत्यंतदूर्ध्वंनैवचिंतयेत्" इति ।

अथतृणगृहेविशेषमाह। तृणगृहंसर्वेषुमास्सु उदितम् सर्वमासेषुकर्तव्यमित्यर्थः। अथनिष्पन्ने गृहेप्रवेशमाह। छन्नमिति। आरंभोदितमासेषुशास्त्ररीत्यावेश्मगृहंविशेत् आरंभाय उदिताः प्रोक्तास्तेचतेमासाश्चतेषुशास्त्ररीत्या सूत्राद्युक्तविधिनागृहंप्रविशेत्स्वामीत्यर्थः। कथंभूतंवेश्म छन्नकुड्यैराच्छादि-

तम् । पुनःकिंलक्षणं वश्यकपाटंवश्यमधीनंकपाटंयस्यतत्तथातत्वश्यमिति लापित उद्घाटितेवातथैवस्थिरंभवति । पुनः किंलक्षणम् अर्चिततमं तोरण-मालाद्यलंकृतम् । तथाचनारदः—

अकपाटमनाच्छन्नमदत्तबलिभोजनम्
गृहं न प्रविशेदेव विपदामाकरं हि तत्"[1] इति ।

तथाचच्यवनः—

स्वयमुद्घाटितेरोगोऽपिहितेचकुलक्षयः
नानाधिकोनदिग्भागेद्वारेनीचेसुखक्षयः" इति ।

अथ प्रवेशेमासविशेषमाहनारदमतात्—

माघोर्जशुक्रेषुमासेषुगृहंप्रविशेत्" इति ।

माघः प्रसिद्धः ऊर्जः कार्तिकः शुक्रोज्येष्ठः एषुगृहंप्रविशेदित्यर्थं । आरम्भो-दितमास्स्वित्यनेनतृणगृहस्य सर्वमासेषुविहितत्वात् प्रवेशोपिसर्वमासेषु विहितः । तथाचनारदः—

प्रवेशोमध्यमोज्ञेयः सौम्यकार्तिकमासयोः
माघफाल्गुनवैशाखज्येष्ठमासेषुशोभनः"[2] इति ।

तथाच ज्योतिःप्रकाशे—

गृहारंभोदितैर्मासैर्धिष्ण्यैर्वारैर्विशेद्गृहम्" इति ।

तथाचग्रन्थांतरे—

विशेत्सौम्यायनेहर्म्यंतृणागारंतुसर्वदा" इति ।

तथाच व्यवहारसारतत्त्वे—

सौम्यायने श्रावणमार्गपौषेजन्मर्क्षलग्नोपचयंदशांशे ।
वामंगतेर्केगृहवास्तुपूजांकृत्वाविशेद्वेश्मभकूटशुद्धम्" इति ॥१९॥

मार्त्तण्डप्रिया—

जिस गृह की लम्बाई ३२ हाथ से अधिक हो, जो चतुर्मुख द्वार वाला हो, जो तृण काष्ठादि का हो और जो ओसारायुक्त पलानी की तरह बनाया गया हो तो इस प्रकार के गृहों में आय-व्यय-पिण्ड आदि का विचार नहीं किया जाता ।

तृण-काष्ठ के गृह में मास दोष नहीं लगता है अर्थात इसका निर्माण सभी मासों में हो सकता है ।

---

१. नारदसंहिता—अ० ३२ श्लो० २० ।
२. नारदसंहिता—अ० ३४ श्लो० ३ पाठभेद ।

गृह के चारों तरफ से घेरा (बाउन्ड्री) देकर, उसके दरवाजों में पल्ला आदि लगवाकर, गृह को माला तोरण ध्वजा पताकादि से सजाकर, उस गृह का विधिवत पूजन करके, शास्त्रीय विधि के अनुसार गृहपति को गृह में प्रवेश करना चाहिए।

गृह प्रवेश में प्रशस्तमास—गृहारम्भ के लिए जो पाँच प्रशस्त मास (वै. श्रा. मार्ग. पौ. फा.) कहे गये हैं उन मासों में ही गृह प्रवेश करना चाहिए।

नारद जी के मतानुसार माघ-कार्तिक और ज्येष्ठ मास भी गृह प्रवेश में प्रशस्त होते हैं ॥१९॥

गृह में अपूर्व सपूर्वादि प्रवेश--

प्रारंभोदितभैःप्रवेश उदितोऽपूर्वः सपूर्वःस्थिरै-
मैंत्रैश्चाच्युतमूलदस्र सहितैरारंभभैद्वर्चात्मकः।
कृत्यं वेश्मभवं दिवैव विहितं रात्रौ प्रवेशः क्वचित्
सूर्यर्क्षादिभपंचकं मनुमितादष्ट प्रवेशे न सत् ॥२०॥

मार्तण्डवल्लभा--

इदानीमपूर्वादिप्रवेशानाह। प्रारंभेति। प्रारंभोदितभैः गृहप्रारंभोदित नक्षत्रैरपूर्वः प्रवेशः उदितःमुनीन्द्रैरित्यध्याहारः। अप्रारंभोदितभैः इत्युपलक्षणम् तेनप्रारंभोदिततिथिभादिकंसर्वंग्राह्यम्। अपूर्वोनामनूतनगृहेप्रथमः प्रवेश उच्यते। स्थिरैर्मित्रैश्चनक्षत्रैः सपूर्वःप्रवेश उदितः सपूर्वोनामयात्रावसानेयःक्रियते। अथ अच्युतमूलदस्रसहितैरारंभभैद्वर्चात्मकः प्रवेशः उदितः द्वचात्मकोनाम अग्न्यादिनानष्टगृहे पुनर्यःक्रियते। तथाचज्योतिःप्रकाशे--

अपूर्वःप्रवेशोगृहारंभधिष्ण्यैर्विधेयःकरोमध्यमोत्रेतिकेचित्।
सपूर्वःस्थिरैर्मिश्रभैरेवशुद्धैस्तोन्योश्विमूलाच्युतारंभधिष्ण्यैः॥

वसिष्ठः--

अपूर्वसंज्ञंप्रथमंप्रवेशंयात्रावसानेचसपूर्वसंज्ञम्
द्वन्द्वाह्वयंचाग्निभयादिजातंगृहप्रवेशंत्रिविधंवदंति॥

अथगृहकृत्यविषयेदिनरात्रिविशेष निर्णयमाह। कृत्यंवेश्मभवमिति। वेश्मभवंगृहभवंयत्किंचित्कृत्यंतद्दिवैवविहितंनरात्रौ क्वचिद्दिवामुहूर्ताभावेसति रात्रौप्रवेशोविहितः नान्यत्। तथाचवसिष्ठः—

दिवाप्रवेशःशुभदः सपुत्रपौत्रादिवृद्धयैनिशिभास्करेंद्वोः।
बलेनमत्स्यध्वजवासरस्यरात्रिंविनासूर्यतिथिश्चरात्रिम्" इति।

अथकलशवास्तुनक्षत्रशुद्धिमाह । सूर्यर्क्षादिति । सूर्यनक्षत्रादिभपंचकंनक्षत्रपंचकंतथासूर्यर्क्षादिमनुमिताच्चतुर्दशमितान्नक्षत्रादष्टकंप्रवेशेनसत् । नशुभंस्यात् अन्यानिशुभानीत्यर्थात्सिद्धम् । अत्रपूर्वोक्तानांनक्षत्राणांशुभाशुभत्वंज्ञातव्यम् ॥२०॥

मार्त्तण्डप्रिया--

गृहप्रवेश तीन प्रकार का होता है—

१—**अपूर्व प्रवेश**—नवीन गृह में प्रथम बार प्रवेश,

२--**सपूर्व प्रवेश**--यात्रा से लौटकर गृह में प्रवेश,

३--**द्वन्द प्रवेश**--देश-काल या राजभय से दूसरे गृह में प्रवेश,

तीनों प्रकार के गृहप्रवेश का मुहूर्त्त—

१--**अपूर्व प्रवेश**—मृ., चि., रे., अनु , स्वा., श. ह., पुष्य., ध., उ फा., उ षा., उ भा., और रोहिणी इन १३ नक्षत्रों में ।

सपूर्व प्रवेश—स्थिरसंज्ञक-मैत्रसंज्ञक अर्थात उ फा., उ षा., उ भा , रो., मृ., रे., चि., और अनुराधा इन ८ नक्षत्रों में ।

३. **द्वन्द प्रवेश**—श्रवण, मूल और अश्विनी सहित अपूर्व प्रवेश के १३ नक्षत्रों में अर्थात ३+१३=१६ नक्षत्रों में द्वन्द प्रवेश शुभ होता है ।

गृह सम्बन्धी सभी कार्य (आरम्भ से प्रवेश तक) दिन में ही प्रशस्त होते हैं परन्तु अत्यावश्यक होने पर अथवा दिन में शुभ मुहूर्त का अभाव रहने पर रात्रि में भी प्रवेश शुभ होता है ।

कुम्भ चक्र—सूर्यनक्षत्र से चान्द्रनक्षत्र[1] तक गिनने पर १ से ५ और १४ से २१ तक के नक्षत्र अशुभ होते हैं अर्थात सूर्यनक्षत्र से चान्द्रनक्षत्र तक गिनने पर ६ से १३ (८ नक्षत्र) और २२ से २७ (६ नक्षत्र) शुभ होते हैं । गृहप्रवेश के जो नक्षत्र हैं उनकी शुद्धि इस कुम्भ चक्रद्वारा देखकर हीं गृहप्रवेश का निर्णय करना चाहिए ।

---

१. कुम्भचक्र में अभिजित को छोडकर २७ नक्षत्रों की ही गणना होती है ।

कुम्भ चक्र

सूर्य नक्षत्र जिनसे कुम्भ चक्र नहीं बनता है ↓

सूर्य नक्षत्र से चान्द्र नक्षत्र गणनाक्रम→													गृ.प्र.
२१	२०	१९	१८	१७	१६	१५	१४	५	४	३	२	१	नक्षत्र
पू.फा.	उ.फा.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	रे.	अ.	भ.	कृ.	रो.	रो.
उ.फा	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अ.	ज्ये.	मू.	अ.	भ.	कृ.	रो.	मृ.	मृ.
स्वा.	वि.	अनु.	ज्ये.	मू.	पू.षा.	उ.षा.	श्र.	रो.	मृ.	आ.	पुन.	पुष्य	पुष्य.
मू.	पू.षा.	उ.षा.	श्र.	ध.	श.	पू.भा.	उ.भा.	पुष्य.	श्ले.	म.	पू.फा	उ.फा.	उ.फा
पू.षा.	उ.षा	श्र.	ध	श.	पू.भा	उ.भा.	रे.	श्ले.	म.	पू.फा.	उ फा.	ह.	ह
उ.षा.	श्र.	ध.	श.	पू.भा.	उ भा	रे	अश्वि.	म.	पू.फा.	उ फा.	ह.	चि.	चि
श्र.	ध.	श.	पू भा	उ.भा.	रे.	अश्वि.	भ.	पू.फा.	उ.फा	ह.	चि.	स्वा.	स्वा.
श.	पू.भा.	उ.भा.	रे.	अ.	भ	कृ.	रो.	ह.	चि.	स्वा.	वि.	अनु.	अनु
अश्वि	भर.	कृ	रो.	मृ.	आ.	पुन.	पुष्य	अनु.	ज्ये.	मू.	पू.षा.	उ.षा.	उ षा
कृ.	रो.	मृ.	आ	पुन.	पुष्य	श्ले	म.	मू.	पू.षा.	उ षा.	श्र.	ध.	धनि
रो.	मृ.	आ.	पुन.	पुष्य	श्ले.	म	पू.फा.	पू.षा.	उ.षा.	श्र	ध.	श.	शत
आ	पुन.	पुष्य.	श्ले.	म.	पू फा	उ.फा.	ह.	श्र.	ध.	श	पू.भा	उ.भा.	उ भा
पुन	पुष्य.	श्ले.	म.	पू.फा	उ.फा.	ह	चि.	ध.	श.	पू भा.	उ.भा	रे.	रे

सूर्य के नक्षत्र से गृहप्रवेश के नक्षत्र तक गणना करके चक्रशुद्धि का विचार करना चाहिए। इसके फल के विषय में मुहूर्त्तचिन्तामणि का श्लोक निम्नलिखित है—

"वक्त्रे भू रविभात्प्रवेशसमये कुम्भेऽग्निदाहः कृता
प्राच्यामुद्वसनं कृता यमगता लाभः कृताः पश्चिमे।
श्रीर्वेदाः कलि रूत्तरे युगमिता गर्भे विनाशो गुदे
रामाः स्थैर्यमतः स्थिरत्वमनलाः कण्ठे भवेत्सर्वदा[1]।

१, मुहूर्त्तचिन्तामणि-गृह प्रवेश प्र० श्लो-६।

इसका भावार्थ इस चक्र द्वारा स्पष्ट किया गया है—

सूर्य नक्षत्र से	१ से ५ तक		६ से १३ तक		१४ से २१ तक		२२ से २७ तक	
चान्द्रनक्षत्र	१	४	४	४	४	४	३	३
कुंभमें स्थान	मुखमें	पूर्वमें	दक्षिणमें	पश्चिमसे	उत्तरमें	मध्य में	नीचे में	कण्ठ में
फल	अग्निदाह	पलायन	लाभ	यश	कलह	नाश	स्थैर्य	स्थैर्य
विशेष	अशुभ		शुभ		अशुभ		शुभ	

गृहप्रवेश में लग्नशुद्धि और वामरवि विचार—

लग्ने चोपचयस्थिरे रविमुखैःप्रारंभवत्संस्थितैः
सूर्ये वामगते स्वदिग्वदनभैर्वेश्मप्रवेशः शुभः ।
रंध्रेषुद्विभवेभ्य आसुतगतः सूर्यो यदा स्यात्तदा
पूर्वाद्याननमालयं प्रविशतां स्याद्वामगोऽसौक्रमात् ॥२१॥

इति श्रीनारायणदैवज्ञविरचितेमुहूर्तमार्त्तण्डेवास्तुप्रकरणं समाप्तम् ॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथप्रवेशेलग्नशुद्धिमाह । लग्नेशः शुभः स्यात् । रविमुखैःसूर्याद्यैः प्रारंभवत्संस्थितैः गृहारंभार्थमुक्तंतद्वत्संस्थितैरित्यर्थः । कस्मिन्सति सूर्यवामगते सति । पुनः कैः स्वदिग्वदनभैः यद्दिङ्मुखंगृहंतद्दिङ्मुखैः प्रवेशोदितैर्नक्षत्रैरित्यर्थः । अथवामसूर्यलक्षणमाह । रंध्र इति । रंध्रे ८ षु ५ द्वि २ भवे ११ भ्यः लग्नादि अष्टमपंचमद्वितीयैकादशेभ्यः सकाशात् आसुतगतः आपंचमगतः सूर्योयदास्यात्तदापूर्वाद्याननमालयंपूर्वादिमुखं गृहंप्रविशतांमनुष्याणामसौसूर्यः क्रमाद्वामगतः स्यात् एतदुक्तं भवति । अष्टमात्पंचसुवर्तमानोर्कः पूर्वमुखगृहेप्रविशतांवामोभवति । पंचमात्पंचसुगतोदक्षिणमुखेगृहेप्रविशतांवामो भवतीत्यर्थः ॥२१॥

इतिस्वोक्तमुहूर्त्तमार्त्तण्डटीकायांमार्त्तण्डवल्लभायांवास्तुप्रकरणंसमाप्तम् ॥

मार्त्तण्डप्रिया---

गृहस्वामी के जन्मराशि या जन्मलग्न से या दोनों से उपचय (३-६-१०-११) राशिवाले स्थिरलग्न हो सूर्यादिग्रह गृहारम्भोक्त प्रशस्त स्थानों में (श्लोक ५) रहें, लग्न से वाम रवि हो और गृह के द्वार की दिशा का नक्षत्र जो कि गृहप्रवेश और कुम्भचक्र से शुद्ध हो तो उसमें गृहप्रवेश शुभ होता है ।

वामरवि का विचार—

पूर्वाभिमुख गृह में लग्न से ८-९-१०-११-१२ स्थानों में
दक्षिण मुख गृह में ,, ५-६-७-८-९ स्थानों में
पश्चिममुख गृह में ,, २-३-४-५-६ स्थानों में
और उत्तर मुख गृह में ,, ११-१२-१-२-३ स्थानों में-
सूर्य के रहने पर वामरवि होता है जो गृहप्रवेश में अति शुभ होता है। विशेष आगे चक्र से स्पष्ट है—

वामरवि विचार

पूर्वमुखघर में वामरवि	दक्षिणमुखघर में वाम रवि	पश्चिममुखघर में वाम रवि	उत्तरमुख घर में वाम रवि
लग्न से ८ वें ९ ,, १० ,, ११ ,, १२ ,, स्थान में सूर्य के रहने पर	लग्न से ५ वें ६ ठे ७ वें ८ ,, ९ ,, स्थान में सूर्य के रहने पर	लग्न से २ रे ३ ,, ४ थे ५ वें ६ ठे स्थान में सूर्य के रहने पर	लग्न से ११ वें १२ ,, १ ले २ रे ३ ,, स्थान में सूर्य के रहने पर
५-१०-१५ (पूर्णा) तिथि में प्रवेश शुभ	१-६-११ (नन्दा) तिथि में प्रवेश शुभ	२-७-१२ (भद्रा) तिथि में प्रवेश शुभ	३-८-१३ (जया) तिथि में प्रवेश शुभ

मुहूर्तमार्त्तण्ड की "मार्त्तण्डप्रिया" हिन्दी टीका में गृह प्रकरण समाप्त-६

यात्रा प्रकरणम्–७

यात्रा काल का ज्ञान—

वारे चोपचयावहस्य सुदशास्विष्टप्रयाणं जगुः
कर्णान्त्यादितिभद्विकेषु मृगमैत्रार्केषु नो जन्मभे ।
सार्पार्द्राग्नियमाजपादपितृषु त्वाष्ट्रत्रये चाशुभं
रिक्ता पर्व गुहाष्टमी हरि सितास्येषु ज्ञशुक्रोन्मुखम् ॥१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथयात्राप्रकरणंव्याख्यायते, तत्रादौ यस्मिन्कालेयात्राकर्तव्येत्याह। सुदशासुशोभना दशांतर्दशाविदशोपदशासु उपचयावहस्यग्रहस्यवारेगोचराष्टकवर्गादौ शुभफलग्रहस्यवारेप्रयाणमिष्टंशुभंजगुराचार्याः। केषु कर्णान्त्यादितिभद्विकेषु कर्णः श्रवणः अंत्यंरेवती अदितिभंपुनर्वसुः एषांद्विकाः श्रवण धनिष्ठे रेवत्यश्विन्यौपुनर्वसुपुष्यौ एष्वित्यर्थः। पुनः केषु मृगमैत्रार्केषु मृगः प्रसिद्धः मैत्रमनुराधा अर्कोहस्तः एषुनवनक्षत्रेषुप्रयाणंशुभमित्यर्थः। तत्र विशेषमाह। नोजन्मभ इति। जन्मभेजन्मनक्षत्रेश्रवणाद्यन्यतमेपियानंशुभं नोजगुः। अथ येषु अशुभंतान्याह। सार्पेति। सार्पमाश्लेषा आर्द्राप्रसिद्धा अग्निः कृत्तिका यमोभरणी अजैकपादः पूर्वाभाद्रपदा पितरोमघा त्वाष्ट्रत्रये चित्रात्रयेच एषुनवनक्षत्रेषुयानमशुभंजगुः। अन्यानिनवनक्षत्राणिमध्यमानीत्यर्थतः सिद्धम्। अथयासुतिथिषु अशुभंतदाह। रिक्तेति। चतुर्थीनवमीचतुर्दश्यः पर्वणीपूर्णिमामावास्ये गुहः षष्ठी अष्टमीप्रसिद्धा हरिर्द्वादशी सितास्यंशुक्लप्रतिपत् तेषु प्रयाणंयानमशुभंजगुः अर्थादन्यासुतिथिषुशुभम्। अन्यदुष्टमाह। ज्ञेति। ज्ञोबुधः शुक्रः प्रसिद्धः तयोरुन्मुखंसंमुखयानमुक्तेष्वपि तिथिनक्षत्रादिषुयानमशुभंजगुः। बुधशुक्रसंमुखंगमनंनकर्तव्यमित्यर्थः ॥१॥

मार्त्तण्डप्रिया—

मनुष्य के जन्मकालिक शुभग्रह की दशा-अन्तर्दशा या प्रत्यन्तर्दशा आने पर शुभग्रह के दिन में यात्रा करना शुभ होता है।

यात्रा के नक्षत्र—श्र., धनि., रे., अश्वि, पुन., पुष्य, मृग., अनु. और हस्त ये ९ नक्षत्र यात्रा में प्रशस्त होते हैं। जन्म-नक्षत्र में यात्रा शुभप्रद नहीं होती है अतः इन ९ नक्षत्रों में से यदि कोई जन्मनक्षत्र हो तो उस नक्षत्र में यात्रा नहीं करनी चाहिए।

त्याज्यनक्षत्र—श्ले, आर्द्रा, कृ, भर., पूभा, मघा, चि, स्वा, और विशाखा इन ९ नक्षत्रों में यात्रा नहीं करनी चाहिए।

त्याज्यतिथि—रिक्ता (४–९–१४) तिथि, पर्व (पूर्णि. अमा०), षष्ठी-अष्टमी द्वादशी और शुक्ल प्रतिपदा ये ९ तिथियाँ यात्रा में प्रशस्त नहीं होती हैं।

त्याज्यदिशा—बुध-शुक्र जिस दिशा में उदित हों उस दिशा में यात्रा नहीं करनी चाहिए। प्रशस्त तिथि-वार-नक्षत्रादि के रहने पर भी बुध-शुक्र के सम्मुख यात्रा नहीं करनी चाहिए।

	यात्रा में प्रशस्त	यात्रा में त्याज्य
नक्षत्र	अश्वि मृ. पुन. पु. ह. अनु. श्र. ध. रे.	भर. कृ. आ. श्ले. म चि. स्वा वि. पू भा.
तिथि	२. ३. ५. ७. १०. ११. १३. कृष्ण १	४. ६. ८. ९. १२. १४. १५. ३०. शुक्ल १.

वार-नक्षत्र तिथियों के दिक्शूल—

प्राक् चंद्रासितशक्रभं वसुपरार्द्धात्पंचभेज्यानपाक्
पश्चात्कार्कसितानुदक्कुजबुधार्यम्णस्त्यजेच्छूलकान्।
त्रिशाष्टौ नवभूमयोऽग्निगिरिशा विश्वेषवोऽर्काब्धयः
षट्शक्रास्तिथिपर्वता दशदृशोऽप्येतांस्तिथीनीशतः॥२॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथशूलानाह। प्रागिति। प्राक्पूर्वस्यांदिशिचंद्रासितशक्रभंत्यजेत् चंद्रः सोमवारः असितः शनिवारः शक्रभंज्येष्ठा एतत्त्रयंपूर्वदिशित्यजेदित्यर्थः। अपाक्दक्षिणस्यां वसुपरार्द्धात् धनिष्ठोत्तरार्द्धात्पंचनक्षत्राणि ईज्योबृहस्पति वारः एतान्दक्षिणस्यांत्यजेत्। पश्चात्पश्चिमायांदिशिकार्कसितान्त्यजेत् कःरोहिणी अर्कोरविः सितःशुक्रः एतान्पश्चिमायांत्यजेदित्यर्थः। उदक् उत्तरस्यांदिशि कुजबुधार्यम्णस्त्यजेत् कुजोमंगलवारः बुधः प्रसिद्धः अर्यमा-नामोत्तराफाल्गुनी एतान्शूलकान् उत्तरस्यांत्यजेत्। शूलपदस्यप्रत्येकंसंबंधः। अथयोगिनीमाह। त्रिशाष्टाविति। एतान्प्रत्येकपदगतान् तिथीन् ईशतः

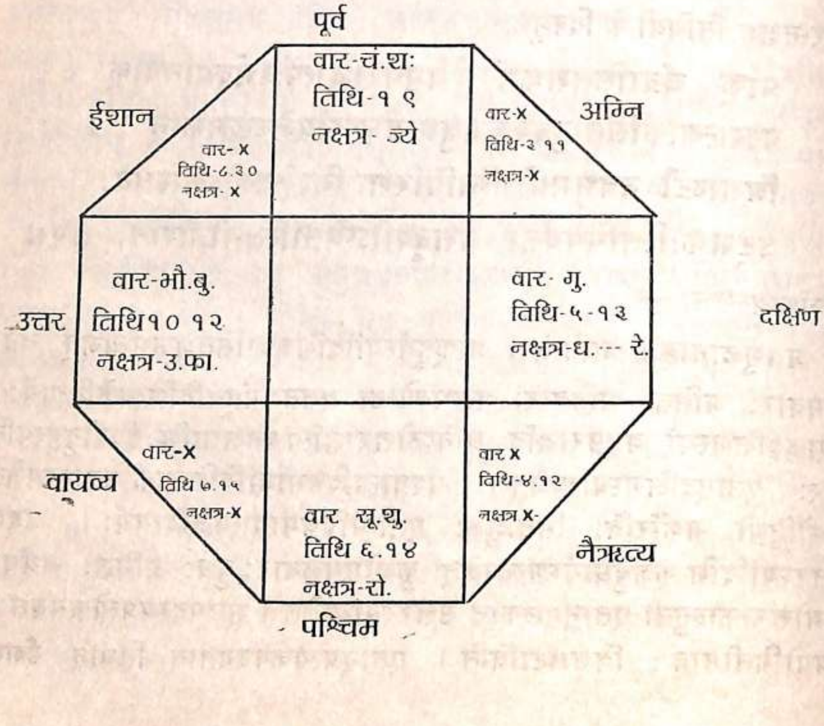
ईशान्याः सकाशात्प्रदक्षिणक्रमेणजह्यु: एतांस्तिथीन्त्यजेत् । एतेके त्रिंशा ३० ष्ठौ ८ ईशान्यांनव ९ भूमयः १ प्राच्याम् अग्निः ३ गिरिशाः ११ आग्नेय्यां विश्वे १३ षवः ५ दक्षिणस्याम् अर्का १२ ब्धयः ४ नैर्ऋत्यांषट् ६ शक्राः १४ पश्चिमायां तिथि १५ पर्वताः ७ वायव्यां दश १० दृशः २ उत्तरस्यां अत्रांकन्यास एवव्याख्यानम् ॥२॥

मार्त्तण्डप्रिया—

वार एवं नक्षत्रशूल—सोमवार-शनिवार और ज्येष्ठा नक्षत्र में पूर्वदिशा में, गुरुवार और ध. श. पू भा. उ भा. रे. नक्षत्रों में दक्षिण दिशा में, रविवार-शुक्रवार और रोहिणी नक्षत्र में पश्चिम दिशा में, तथा मंगलवार-बुधवार और उ.फा नक्षत्र में उत्तर दिशा में शूल होता है अतएव यात्रा में इनका त्याग करना चाहिए।

तिथि शूल अर्थात् योगिनी—

शूल बोधक चक्र—



अमावास्या-अष्टमी को ईशान कोण में,
प्रतिपद-नवमी को पूर्व दिशा में,
तृतीया-एकादशी को अग्निकोण में,
त्रयोदशी-पंचमी को दक्षिण दिशा में,
द्वादशी-चतुर्थी को नैऋत्य कोण में,
षष्ठी-चतुर्दशी को पश्चिम दिशा में,
पूर्णिमा-सप्तमी को वायव्य कोण में और
दशमी-द्वितीया को उत्तर दिशा में शूल होता है।

इस तिथिशूल को योगिनी भी कहा जाता है। यात्रा में इसका भी परित्याग करना चाहिए ॥२॥

दिग्द्वारनक्षत्र-परिघदण्ड-सर्वदिग्गमननक्षत्र और परिघ का परिहार—

ऐन्द्रचाद्यग्निभसप्तसप्तभगणो वाय्वग्निकाष्ठास्थितो
नोल्लंघ्यः परिघस्त्वपाग्वरुणभैःप्राच्यैरुदङ्नोव्रजेत् ।
सर्वाशासु रवीज्यमित्रतुरगैर्यायादथावश्यके
हित्वा शूलमनिष्टभैर्यदि निजाशेष्टांगलब्धिर्व्रजेत् ॥३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

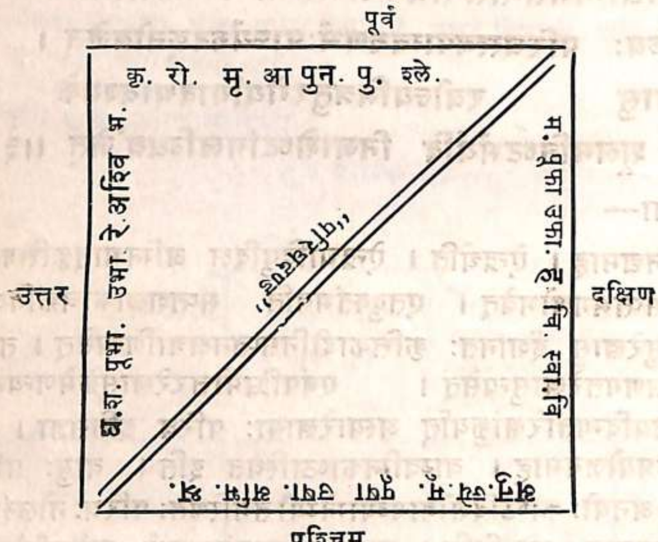
अथान्यन्निद्यमाह। ऐन्द्रचेति। ऐन्द्रयादिषुदिक्षु अग्निभात्कृत्तिकायाः सकाशात्सप्तसप्तभगणोभवेत्। एतदुक्तंभवति सप्तशलाकाचक्रंनिष्पाद्य पूर्वगतासुसप्तसुरेखासु ईशानतः कृत्तिकादीनिसप्तनक्षत्राणिन्यसेत्। तत्पुरः स्थानिसप्तदक्षिणगतरेखासुन्यसेत्। एवंपश्चिमोत्तररेखासुक्रमेणन्यसेत्। ततोवायव्याग्नेयदिग्गतांरेखांकुर्यात् अस्यारेखायाः परिघ इतिसंज्ञा। एवं-निष्पादितेचक्रेप्रयोजनमाह। वाय्वग्निकाष्ठास्थित इति। वायुः प्रसिद्धः अग्निः प्रसिद्धः अनयोः काष्ठेदिशौवायव्याग्नेय्यौ तत्रस्थितः परिघः नोल्लंघ्यः। अथान्यत्प्रयोजनमाह। अपागिति। अपाग् दक्षिस्यांवरुणभैः प्रतीच्यैर्नक्षत्रैर्न-व्रजेत्। प्राच्यैर्नक्षत्रैः उदक् उत्तरस्यांदिशिनव्रजेत् न गच्छेत्। तत्तद्दिक्स्था-पितनक्षत्रैस्तत्तद्दिग्गमनं सिद्धमेव। सर्वासुसर्वदिक्षुरवीज्यमित्रतुरगैर्यायात् रविर्हस्तः ईज्यः पुष्यः मित्रमनुराधा तुरगोश्विनी एभिर्नक्षत्रैः सर्वासुदिक्षुगमनं शुभमित्यर्थः। अथावश्यकेकृत्ये अस्यापवादमाह। अथावश्यकेति। आवश्यके कृत्येसतिनिन्द्यैः अनिष्टभैः यद्दिक्षुयानिनिन्द्यानितैः पूर्वोक्तैर्नक्षत्रैस्तस्यांदिशित-दाव्रजेत्। तदाकदा यदानिजाशेष्टांगलब्धिर्भवेत् निजाशायांनिजगमनदिशा-यांमिष्टांगलब्धिः इष्टलग्नलाभः स्यात्। इष्टलग्नंवक्ष्यमाणलक्षणं तद्यथोक्त

गुणसंपन्नंयदास्यात्तदागच्छेदित्यर्थः । नोचेन्नेत्यर्थात्सिद्धम् । किंकृत्वा शूलभं हित्वा पूर्वोक्तशूलनक्षत्रंत्यक्त्वा शूलनक्षत्रेसति निजाशेष्टांगलब्धावपिन-गच्छेदित्यर्थः ॥३॥

मार्तण्डप्रिया—

दिग्द्वार नक्षत्र और परिघदण्ड--पूर्वादि क्रम से चारों दिशाओं में कृत्तिका से ७–७ नक्षत्रों का स्थापन करके वायव्यकोण से अग्निकोण तक एक रेखा खीचें यहीं रेखा परिघदण्ड कहलाता है । यह दो भागों में १४–१४ नक्षत्रों को बाँटता है । पूर्व उतर के नक्षत्रों में पश्चिम-दक्षिण नहीं जाना चाहिए और पश्चिम दक्षिण के नक्षत्रों में पूर्व-उत्तर नहीं जाना चाहिए । पश्चिम के नक्षत्रों में दक्षिण तथा पूर्व के नक्षत्रों में उत्तर नहीं जाना चाहिए अर्थात अपनी अपनी दिशा के नक्षत्रों में ही उस दिशा में यात्रा करनी चाहिए ।

परिघदण्ड चक्र



सर्वदिग्गमन नक्षत्र—हस्त-पुष्य-अनुराधा और अश्विनी इन चार नक्षत्रों में सभी दिशाओं में यात्रा प्रशस्त होती है ।

परिहार—यात्रा में परिघदण्ड का उल्लंघन नहीं करना चाहिए । यात्रा के जो नक्षत्र हैं वे जिस दिशा में (परिघदण्ड चक्र में) हो उसी दिशा में उस नक्षत्र में यात्रा करनी चाहिए । अर्थात मृग. पुन. पुष्य में पूर्व दिशा में, हस्त में दक्षिण दिशा में, अनु. श्रवण में पश्चिम दिशा में और धनि. रे. अश्विनी में उत्तर दिशा में यात्रा करनी चाहिए । परन्तु लोकाचार-लोकव्यवहार में इतनी वर्जना असम्भव है अतएव

यात्रा के इन नक्षत्रों में से कुछ सर्वदिग्गमन नक्षत्र भी माने गये हैं। इन नक्षत्रों में किसी भी दिशा में यात्रा की जा सकती है, केवल दिक्शूल को बचाकर इन नक्षत्रों में चारों दिशाओं या कोणों में यात्रा प्रशस्त होती है।

यात्रा यदि आवश्यक हो और दिग्द्वारनक्षत्र आदि की शुद्धि नहीं हो तो गन्तव्य दिशा के दिक्शूल को बचाकर और शुभलग्न का विचारकर यात्रा करनी चाहिए इसमें परिघदण्ड का दोष नहीं लगता है। परिघदण्ड का परिहार हो जाता है परन्तु दिक्शूल का परिहार नहीं होता। अतः दिक्शूल वाले वारों में नक्षत्रों में यात्रा नहीं करनी चाहिए। किसी भी दिशा की यात्रा करनी हो तो उसमें दिग् लग्न की शुद्धि आवश्यक होती है ॥३॥

यात्रा में काल भेद से निन्दित नक्षत्र और अभिजित का मान—

मिश्राख्यैर्ध्रुवभैर्दिनादिमलवे तीक्ष्णैर्द्वितीयेऽन्तिमे
क्षिप्रैर्न क्रमशो मृदूग्रचरभै रात्रित्रिभागेष्वियात् ॥
श्रुत्यर्केज्यमृगेष्वयं न नियमोवैश्वांत्यपादश्रव
स्तिथ्यंशस्त्वभिजिद्गमे सफलदो याम्यीं विनापि क्षणः ॥४॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथान्यदाह। मिश्राख्यैरिति। दिनादिमलवेत्रिधाभक्तस्यदिनस्याद्यंशं मिश्राख्यैः साधारणैर्नक्षत्रैः ध्रुवभैश्च न इयात् नगच्छेत्। द्वितीयभागेतीक्ष्णैः अंतिमेतृतीयभागे क्षिप्रैर्नक्षत्रैर्नेयात्। अथरात्रित्रिभागेषुक्रमशोमृदूग्रचरभैर्नेयात् रात्रेः प्रथमेभागेमृदूभिः द्वितीयेभागे उग्रैः तृतीयेभागेचरभैर्नेयात्। अथविशेषमाह। श्रुतीति। श्रुत्यर्केज्यमृगेषु। अयंनियमोन। श्रुतिः श्रवणः अर्कोहस्तः ईज्यः पुष्यः मृगः प्रसिद्धः एभिर्नक्षत्रैः सर्वभागेषु गंतव्यमितिभावः। अथाभिजिल्लक्षणंतत्फलंचाह। वैश्वेति। वैश्वमुत्तराषाढातस्यांत्यपादश्चतुर्थचरणः श्रवणस्य आद्यस्तिथ्यंशः प्रथमः पंचदशांशः एतत्प्रमाणोऽभिजित्स्यात् सोभिजिद्याम्यींदक्षिणांदिशंविनासर्वदिक्षुफलदः क्षणोमुहूर्तोपि अभिजिद्याम्यीं विनाफलदः यातॄणामभीष्टफलदोभवतीत्यर्थः ॥४॥

मार्त्तण्डप्रिया—

दिनमान का तीनभाग करने पर जो भाग होता है उसे त्रिभाग कहते हैं।

दिन के प्रथम त्रिभाग (पूर्वाह्ण) में ध्रुव-मिश्र संज्ञक नक्षत्रों में
(कृ. रो. उफा. उषा. उभा.)

" द्वितीय त्रिभाग (मध्याह्न) में तीक्ष्ण संज्ञक नक्षत्रों में
(आर्द्रा-श्ले. ज्ये. मू.)

दिन के तृतीय त्रिभाग (अपराह्ण) में क्षिप्रसंज्ञक नक्षत्रों में-
(अश्वि. पुष्य. हस्त. अभि.)

यात्रा नहीं करनी चाहिए। इसी प्रकार रात्रि के त्रिभाग में भी—

रात्रि के प्रथम त्रिभाग में मृदुसंज्ञक नक्षत्रों में
(मृग चि. अनु. रे)

" द्वितीय त्रिभाग में उग्रसंज्ञक नक्षत्रों में
(भर. मघा. पूफा. पूषा. पूभा.)

" तृतीय त्रिभाग में चरसंज्ञक नक्षत्रों में-
(पुन. स्वा. श्रव. ध. श)

यात्रा नहीं करनी चाहिए।

सार्वकालिक शुभ नक्षत्र--मृगशिरा-पुष्य-हस्त-श्रवण इन चार नक्षत्रों में कोई दोष नहीं लगता है। क्योंकि ये चार नक्षत्र सर्वदा शुभ होते हैं। दिन या रात्रि के किसी भी त्रिभाग में इन नक्षत्रों में यात्रा की जा सकती है। यात्रा के अन्य नक्षत्रों में भी निन्दित काल को छोड़कर ही यात्रा करनी चाहिए।

अभिजित नक्षत्र और मुहूर्त--उत्तराषाढा का चतुर्थ चरण (१५ घटी के लगभग) और श्रवण का १५वाँ भाग (४ घटी के लगभग) प्रारम्भ का मिलाकर अभिजित नक्षत्र (१९ घटी के आसन्न) का मान होता है। दक्षिण दिशा को छोड़कर अन्य दिशा में यात्रा करने वाले को अभिजित नक्षत्र अभीष्ट फल देता है।

अभिजित मुहूर्त[1] (दिन का ८वाँ मुहूर्त) भी दक्षिण दिशा को छोड़ अन्य दिशाओं में अभीष्ट फल देता है। अर्थात अभिजित नक्षत्र और अभिजित मुहूर्त दोनों ही दक्षिण दिशा की यात्रा में त्याज्य हैं ॥४॥

यात्रा में अयन विचार और आडल विडल योग—

एकार्केन्द्वयनानुकूलमनिशं भेदे दिवारात्रयो-
र्भौमे प्राक्शनिचंद्रयोर्गतमपावपश्चाज्ज्ञगुर्वोर्हितम् ।
भृग्वर्काह्न्युदगर्कभाद्युभमगैस्तष्टं द्विसप्ताडल-
स्त्र्यंगाभ्यां विडलोऽनयोर्न गमनं श्रीदेवलोक्त्या हितम् ॥५॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथान्यदाह। एकार्केंद्वयनानुकूलमिति। अर्कश्च इन्दुश्चयोरयनमर्केन्द्वयनम् एकंचतदर्केद्वयनंचतत्तथा तस्यानुकूलंगतंगमनमनिशमहर्निशंहितंस्यात्।

१. दिन के १६वें भाग के बराबर का समय। सूर्योदय से ८वाँ भाग।

भेदैसतिदिवारात्रयोः क्रमेणशस्तंस्यात्। अयमर्थः। सूर्योदिनस्वामी चन्द्रोरात्रिस्वामी द्वौचेदुत्तरायणेस्यातां तदाहर्निशमुदग्गमनंशस्तं द्वौचेद्दक्षिणायने भवतस्तदा अहर्निशंदक्षिणगमनंशस्तं रात्रौ चंद्रायनदिशं प्रति गमनंशस्तं स्यात्। अर्थात् अन्यथानशस्तंस्यात्। अत्रप्राची ·उत्तरसंबन्धिनीज्ञेया तस्माद्यदा उदग्गमनंशस्तंतदाप्राग्गमनमपिशस्तंभवति। प्रतीचीदक्षिण संबंधिनीज्ञेया तेनयदादक्षिणदिग्गमनंशस्तंतदाप्रतीचीगमनमपिशस्तंस्यात्। तथाचरत्नकोशे—

"दिनकरकरप्रतप्तामकरादावुत्तरांचपूर्वांच।
यायाच्चकर्कटादौयाम्याशास्यंप्रतीचींच" ॥

अथान्यदाह। भौमे इति। भौमेप्राक्पूर्वदिशिगतंगमनंहितंस्यात्। शनिचंद्रयोरपाक्दक्षिणस्यां ज्ञगुर्वोः बुधगुर्वोः पश्चात्पश्चिमायां भृग्वर्काह्नि शुक्ररविदिने उदगुत्तरस्यांगतंहितंस्यात्। अथाडलंविडलंचाह। अर्कभादिति। सूर्यनक्षत्रात् द्यु भं दिननक्षत्रं अगैः सप्तभिस्तष्टं शेषितंसत् द्विसप्त द्वौवासप्तवायदाभवंतितदाडलः स्यात्। त्र्यंगाभ्यांत्रिषट्संख्याकाभ्यां विडलः स्यात्। अनयोराडलविडलयोर्गमनंश्रीदेवलोक्त्यादेवलर्षिवचनेनहितं स्यात् ॥५॥

मार्त्तण्डप्रिया—

सूर्य और चन्द्र यदि एक ही अयन में हों तो उस दिशा की यात्रा दिन या रात्रि किसी भी समय में शुभद होती है। यदि दोनों का अयन भिन्न हो तो सूर्य की अयनदिशा में दिन की यात्रा और चन्द्र की अयनदिशा में रात्रि की यात्रा प्रशस्त होती है।

अयन दिक व्यवस्था में उत्तर-पूर्व की एक दिशा और दक्षिण-पश्चिम की एक दिशा होती है। अतः उत्तरायण में उत्तर-पूर्व की यात्रा और दक्षिणायन में दक्षिण-पश्चिम की यात्रा शुभद होती है।

यात्रा में प्रशस्तवार—पूर्व दिशा में मंगल को, दक्षिण में सोम-शनि को पश्चिम में बुध-गुरु को तथा उत्तर में शुक्र-रवि को यात्रा प्रशस्त होती है। इससे भिन्न वारों में दिक्शूल-कालशूल आदि का संशय रहता है।

आडल विडलयोग—सूर्य के नक्षत्र से चन्द्र के नक्षत्र तक की संख्या में ७ से भाग देने पर २ या ० शेष बचे तो **आडलयोग** और ३ या ६ शेष बचे तो **विडलयोग** होता है। "देवल" आचार्य के मतानुसार ये दोनों आडल-विडलयोग यात्रा में शुभद नहीं होते हैं।

सूर्यनक्षत्र से चन्द्रनक्षत्र की संख्या ÷ ७
=शेष २ या ० में आडल, शेष ३ या ६ में विडलयोग ।।५।।

वारशूल दिशाशूल नाशक--

आज्यं दुग्धगुडौ तिलान्दधियवान्माषानिनात्प्राश्य नो
शूले यानमनिष्टमिन्द्रककुभोऽथाज्यं तिलान्नं तिमीन् ।
दुग्धं प्राश्य च हस्त्य नोहयनरैर्यानं सुयानं तयो-
र्ध्यानाद्वा भवति ब्रुवेऽथ हरिजं तिथ्यादि लक्षाधिकम् ।।६।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथवारशूलदोहदमाह । सुगमम् । इनात्सूर्यवारात्सकाशात् आज्यादीनि-प्राश्य अशयित्वाशूलेवारशूलेयानंप्रयाणमनर्थकृन्नोभवति । अथदिग्दोहदमाह । आज्यमिति । घृतादिकंप्राश्य ऐंद्रयादिषुपूर्वादिषुहस्त्यादिभिर्यानंसुयानंभवति । हस्तीप्रसिद्धः अनः शकटः हयो अश्वः नरः शिबिकावाहकः । एतदुक्तंभवति घृतंप्राश्यहस्तिनाप्रागगमनात्सिद्धिः तिलान्नंतिलौदनंप्राश्यरथेनदक्षिणगमना-त्सिद्धिः मत्स्यान्प्राश्य अश्वेनपश्चिमगमनात्सिद्धिः दुग्धं प्राश्य नरैरुदग्गमनात्-सिद्धिः स्यादित्यर्थः । असतिसंभवे अभक्ष्येच निर्णयमाह । तयोर्भक्षवाहनयो-र्ध्यानाद्वायानंसुयानंभवति । अथलग्नशुद्धिसहेतुकामाह । ब्रुवेऽथहरीजमिति । अथहरिजंलग्नंब्रुवेवच्मि । कथंभूतं तिथ्यादिलक्षाधिकंतिथ्यादिभ्योलक्षाधिकं बलिष्ठमित्यर्थः ।।६।।

मार्त्तण्डप्रिया—

दिक्शूल दोष नाशक—रविवार को घृत, सोमवार को दुग्ध, मंगल को गुड़, बुध को तिल, गुरु को दधि, शुक्र को यव और शनिवार को उड़द, इन पदार्थों को थोड़ा सा खाकर यात्रा करने से दिक्शूल का दोष नहीं लगता है ।

दिशाओं के लिए प्रशस्त—घृत खाकर हाथी से पूर्व दिशा की यात्रा, तिलान्न खाकर गाड़ी से दक्षिण दिशा में, मछली खाकर घोड़े से पश्चिम दिशा में और दुग्ध पीकर पालकी से उत्तर दिशा में यात्रा करने पर कार्य की सिद्धि होती है । यदि भक्ष्य वस्तु और वाहन का अभाव हो तो उनका स्मरण करके ही यात्रा करनी चाहिए ।

तिथि-वार-नक्षत्रादि की शुद्धि से लक्षगुणित बलिष्ठ लग्न की शुद्धि होती है । अतः यात्रा में सर्वाधिक विचार लग्नशुद्धि की ही करनी चाहिए ।।६।।

यात्रा में त्याज्य और दिशाओं के स्वामी--

स्वर्क्षानर्द्धिघटास्त भानृजुगृहान्षष्ठं रिपोर्भादनु
स्वर्क्षाङ्गेशरिपुं खलं जनिबलत्यक्तं तथा सांप्रतम् ।
यात्रालग्नगतं त्यजेदथ दिशामीशोऽर्कशुक्रौ कुजो
राहुर्मंदशशांङ्कसौम्यगुरवः केन्द्रे दिगीशे व्रजेत् ।।७।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

स्वर्क्षेस्वर्क्षानर्द्धिघटादिकंयात्रालग्नगतंत्यजेत् स्वर्क्षंस्वराशिः अनर्द्धिः स्वराशेरनुपचयभवनं घटःकुंभः अस्तभमस्तगतग्रहस्यराशिः अनृजुगृहंवक्र ग्रहस्यराशिः एतान् रिपोर्भात्वैरिराशेःषष्ठम् अनुपृष्ठोदयम् । तथाच-बृहज्जातके—

"गोजाश्विकर्किमिथुनाःसमृगा निशाख्याः ।
पृष्ठोदयाविमिथुनाःकथितास्त एव" इति ।।

वृषमेषधनकर्कमकराः पृष्ठोदयाः । स्वर्क्षाङ्गेशरिपुमृक्षंच अंगमृक्षांगेत-योरीशः स्वामीतस्यरिपुः तं खलःप्रसिद्धः जनिबलत्यक्तंजन्मनिबलहीनंग्रहं तथासांप्रतंप्रस्तुतंबलत्यक्तमित्युक्तंसर्वंयात्रालग्नगतं त्यजेत् । अथदिक्पती-नाह् । दिशामिति । दिशांपूर्वादीनामीशाः स्वामिनः अर्कशुक्रादयः पाठक्रमा-त्स्युः । केन्द्रेदिगीशे १, ४, ७, १० सतिव्रजेद्गच्छेत् । यस्मिन्केन्द्रेलालाटगत्वं भवति । तत्केन्द्रं वर्जयित्वा अन्यकेन्द्रेदिगीशेसतिव्रजेत् । इदमग्रिमश्लोके-वक्ष्यति ।।७।।

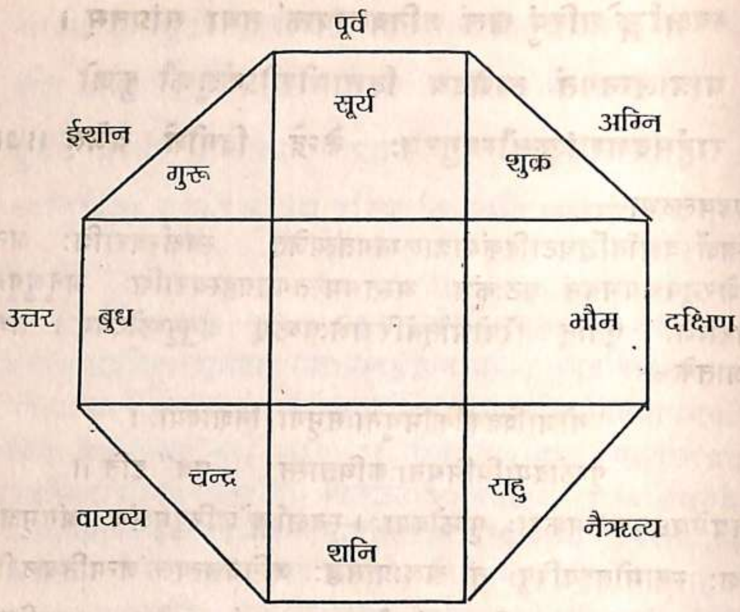
मार्त्तण्डप्रिया—

यात्रा में त्याज्य—अपनी जन्मराशि से अनुपचय (१-२-४-५-७-८-९-१२) राशि, अस्तग्रह की राशि, शत्रुग्रह की राशि, शत्रु की जन्मराशि से छठी राशि (युद्ध-मुकदमा), पृष्ठोदयराशि (मे. वृष. कर्क. ध. म.), अपने राशीश और यात्राकालिक निर्बल ग्रह इन सबों का यात्रालग्न के विचार में त्याग करना चाहिए। तात्पर्य यह कि इनमें से कोई भी योग यात्राकालिक लग्न में पड़े तो यात्रा का निषेध करना चाहिए।

दिशाओं के स्वामी—पूर्व का सूर्य, अग्निकोण का शुक्र, दक्षिण का भौम, नैऋत्य का राहु, पश्चिम का शनि, वायव्य का चन्द्र, उत्तर का बुध और ईशान

का गुरु स्वामी होता है। दिशा का स्वामीग्रह जब यात्रा लग्न के केन्द्रस्थान में हो तो यात्रा करनी चाहिए ॥७॥

दिक्स्वामी बोधक चक्र



ललाटयोग का फल और लक्षण—

दिक्पे न प्रवसेल्ललाटग इनः प्राच्यां तनौ भालगः
स्यात्पश्चान्मदनेऽर्कजोम्बुगबुधःसौम्यां खगोऽपाक्कुजः।
ऐश्यां द्वित्रिगतो गुरुर्ज्वलनदिश्याय व्ययस्थोभृगु-
र्वायौ षट्सुतगो विधुर्निऋ‍ृतिदिश्यष्टांकसंस्थं तमः ॥८॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथदिक्पतौलालाटगत्वंतद्दिग्गमननिषेधंलालाटक्षणंचाह। दिक्पेलालाटगे सतिन प्रवसेत् प्रवासंनकुर्यात्। तनौलग्नेवर्तमान इनःसूर्यः प्राक्प्राच्यांदिशि भालगःललाटस्थितः स्यात्। मदनेसप्तमेवर्तमानोर्कजःशनिः पश्चिमायां ललाटस्थितःस्यात्। अंबुगबुधः चतुर्थगतोबुधः सौम्यामुत्तरस्यांललाटस्थितः स्यात्। खंदशमंतद्गतःकुजोभौमः अपाक्दक्षिणस्यांललाटस्थितःस्यात्।

द्वित्रिगतोगुरुः ऐश्यामीशान्यांललाटस्थितः स्यात् । आयव्ययस्थः भृगुः कविः ज्वलनदिशि आग्नेय्यांललाटगः स्यात् । षट्सुतगोविधुश्चंद्रः वायौवायव्यां ललाटस्थितः स्यात् । अष्टांकसंस्थंतमः अष्टमनवमस्थानस्थोराहुः निर्ऋ ति दिशिललाटसंस्थः स्यादिति ॥८॥

मार्त्तण्डप्रिया—

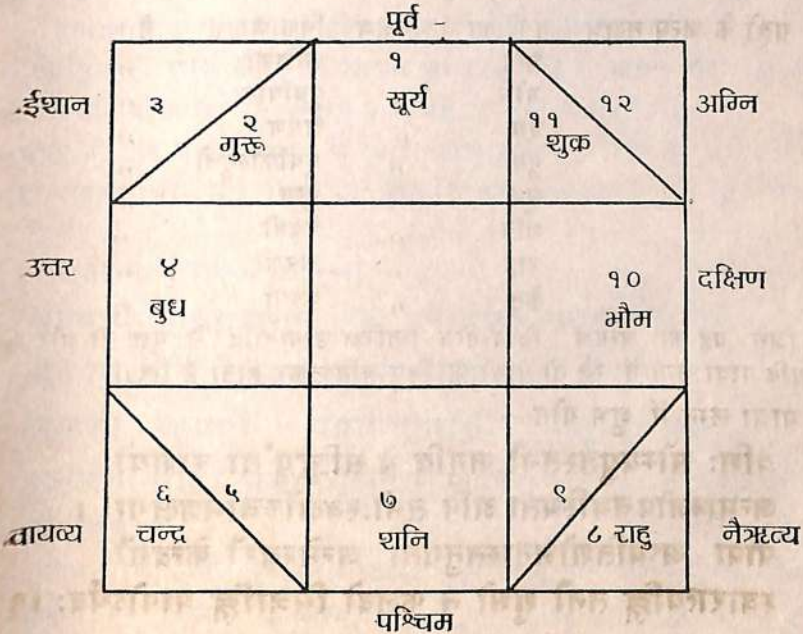
दिशा का स्वामी यदि **ललाट योग** में रहे तो यात्रा नहीं करनी चाहिए।

ललाट योग—सूर्यलग्न में हो तो पूर्व में ललाट योग हो,

शनि	सप्तम भाव में हो तो	पश्चिम में ललाट योग हो,			
बुध	चतुर्थ	,,	उत्तर	,,	,,
भौम	दशम	,,	दक्षिण	,,	,,
गुरु	२–३	,,	ईशान	,,	,,
शुक्र	११–१२	,,	अग्नि	,,	,,
चन्द्र	५–६	,,	वायव्य	,,	,,
राहु	८–९	,,	नैऋत्य	,,	,,

यात्रा लग्न में यदि दिगीश उसी दिशा में रहे तो ललाट योग ओता है। इस ललाट योग में युद्ध हेतु यात्रा नहीं करनी चाहिए ॥८॥

ललाटयोग बोधक चक्र



यात्रा में हानिकर योग और ग्रहों के जन्मनक्षत्र—

वक्री केन्द्रगतस्तदीयदिवसो लग्नेऽस्य वर्गो भवेद्
यातुर्नाशकरः शुभोऽपि तनुगो जन्मर्क्षलग्नेड्रिपुः ।
द्वीशाग्न्यंबुवजभाग्यभानि गुरुभं पौष्णांतके सार्पभं
जन्मर्क्षाणि रवेरुपप्लवगतं खेटस्तनौ हानिकृत् ॥९॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

वक्रीति । वक्रीग्रहः केन्द्रगतः सन् यातुर्गमनकतुर्नाशकरः स्यात् । तदीयदिवसोपि वक्रग्रहस्यदिवसोपियातुर्नाशकरः स्यात् । लग्नस्यवर्गोपिनाशकरः स्यात् । जन्मर्क्षलग्नेड्रिपुः शुभोपितनुगोयातुर्नाशकरः स्यात् । जन्मराशि जन्मलग्नेतयोः ईशौतयोः रिपुः । अथसूर्यादीनांजन्मनक्षत्रमाह । द्वीशेति । रवेः अर्कतः ग्रहाणांद्वीशादीनिजन्मर्क्षाणिजन्मनक्षत्राणिस्युः । द्वीशंविशाखा सूर्यस्य अग्निः कृत्तिकाचन्द्रस्य अंबुपूर्वाषाढाभौमस्य अजः श्रवणोबुधस्य भाग्यभंपूर्वाफाल्गुनीगुरोः गुरुःपुष्यःशुक्रस्य पौष्णं रेवतीशनेः याम्यंभरणीराहोः सार्पमाश्लेषाकेतोः । उपप्लव इति उपप्लवगतोनाम यदीयभं यस्यग्रहस्यभं जन्मनक्षत्रंहतंत्रिविधोत्पातहतंस्यात् । असौग्रहोलग्नेस्थितोहानिकृत्स्यात् ॥९॥

मार्त्तण्डप्रिया—

यात्रालग्न से केन्द्रस्थान में वक्री ग्रह रहे अथवा वक्री ग्रह का दिन हो या लग्न में वक्री ग्रह का षडवर्ग (गृ हो.द्रे.""") रहे तो यात्रा करने वाले का अनिष्ट होता है ।

ग्रहों के जन्म नक्षत्र—सूर्य	का जन्मनक्षत्र		विशाखा	है ।
	चन्द्र	,,	कृत्तिका	,,
	भौम	,,	पूर्वाषाढा	,,
	बुध	,,	श्रवण	,,
	गुरु	,,	पूर्वाफाल्गुनी	,,
	शुक्र	,,	पुष्य	,,
	शनि	,,	रेवती	,,
	राहु	,,	भरणी	,,
	केतु	,,	श्लेषा	,,

जिस ग्रह का जन्मर्क्ष दिव्य-भौम-अन्तरिक्ष उत्पातादि से युक्त हो और वह ग्रह यदि यात्रा लग्न में रहे तो यात्री के लिए अनिष्टकर होता है ॥९॥

यात्रा लग्न में शुभ योग—

वेशिः सौम्ययुतस्तनौ जनुषि ये सद्भिर्युता राशयो
जन्माब्जोपचयस्थिता अपि तनोःस्वर्क्षोच्चमित्रर्क्षगाः ।
पापा अप्यतिशोभनास्तनुगता जन्मेश्वरौ केन्द्रगौ
स्वारात्यह्नि तनौ शुभो न फलदो मित्राह्नि पापोऽर्थदः ॥१०॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

वेशिरिति । सूर्याद्वितीयोराशिर्वेशिःससौम्ययुतः सन् अंगगोलग्नगोऽतिशोभनःस्यात् । जनुषिजन्मकालेसद्भिर्ग्रहैर्युतायेराशयःतनुगताःअतिशोभनाः स्युः । जन्माब्जोपचयस्थिताः जन्माब्जोजन्मचंद्रः तस्मादुपचयानित्रिषडेकादशतमानि तेषु स्थिताग्रहास्तेतनुगता अतिशोभनाः तनोरपिजन्मलग्नादप्युपचयस्थलग्नगता अतिशोभनाःस्युः । स्वर्क्षोच्च मित्रर्क्षगाः जन्मनियेस्वर्क्षगाः उच्चगाः मित्रर्क्षगास्ते अपिशोभनाःस्युः । जन्मेश्वरौजन्मराशिजन्मलग्न स्वामिनौकेंद्रगौ अतिशोभनौस्याताम् । स्वारात्यह्निस्ववैरिवारे शुभःशुभग्रहः तनौलग्नेवर्तमानोनफलदोभवति । मित्राह्निपापःतनौवर्तमानोऽर्थदःस्यात् । तथाचयवनः—

"रक्षकावर्द्धकाश्चैवयेस्युर्जन्मनिनायकाः ।
तान्पापानपिनिःशंकोयात्रा लग्नेनियोजयेत्" इत्यादि ॥१०॥

मार्त्तण्डप्रिया—

जन्माङ्ग में जो वेशि राशि (सूर्य से दूसरी राशि) होती है। वह यात्रा लग्न में यदि शुभग्रह से युक्त रहे तो शुभकर होती है।

जो राशि जन्माङ्ग में शुभग्रह से युक्त रहे अथवा जो राशि जन्मलग्न और जन्मराशि से उपचय(३-६-१०-११) स्थानों में रहे वह राशि यात्रा लग्न में शुभकर होती है।

यात्राकालिक लग्न में पापग्रह भी यदि अपनी राशि में या अपने उच्च में या अपने मित्र की राशि में रहे तो अत्यन्त शुभद होता है। जन्मराशीश और जन्मलग्नेश यदि यात्रा लग्न से केन्द्रस्थान में रहें तो अत्यन्त शुभद होते हैं।

शुभग्रह भी यदि अपने शत्रुग्रह के वार को यात्रालग्न में रहे तो अशुभ होता है और पापग्रह भी यदि मित्र ग्रह के वार को यात्रालग्न में रहे तो शुभ होता है ॥ १० ॥

यात्रा में शुभाशुभ ग्रह—

त्र्यायार्यन्यगताःखलाः ख इनजोऽब्जोंऽत्याद्यषष्ठाऽष्टगो
भूयःसोऽपचितोऽस्तखांबुसुतगःशुक्रोऽस्त ईज्यो मृतौ ।
नष्टज्ञो व्ययगो ग्रहान्वितशशी यातुर्महाविघ्नदा
अन्यस्थानगता जयार्थसुखदास्त्याज्यं पुरोक्तं न चेत् ॥११॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथ यात्रालग्ने इष्टानिष्टांश्चश्लोकेनैकेनाह । त्र्यायार्यन्यगताःखलाः त्र्या३या ११ रिभ्यः ६ अन्यानि १, २, ४, ५, ७, ८, ९, १० १२ तत्रगताः

खलाःपापग्रहाःखेदशमे इनजःशनिः । त्र्यायार्यन्यगताःखला इत्यनेनैवसिद्धोपि विशेषदुष्टफलज्ञापनार्थंख इनज इत्युक्तम् । अंत्या१२द्य १ षष्ठा ६ ष्ट ८ गोब्जश्चंद्रः भूयःपुनःसचंद्रःअपचितःक्षीणचंन्द्रः कृष्णपक्षचंद्रः अस्तः ७ खां १० बु ४ सुत ५ गःअस्तः७शुक्रःईज्योगुरुर्मृतौ ८ नष्टज्ञोस्तमितबुधोव्यय१२ गतःग्रहान्वितःशशीयेनकेनापिग्रहेण ग्रहाभ्यामपिग्रहैर्वायुक्तश्चंद्रमाः एते प्रत्येकंयातुर्महाविघ्नदाःस्युः नानाप्रकारेणमरणभंगादीन्ददंतीत्यर्थः । अन्य-स्थानगताःउक्तेभ्योऽन्यस्थानगता संतस्तदाजयार्थसुखदाः । तदाकदा चेद्यदिपु-रोक्तंत्याज्यंनस्यात् ॥११॥

मार्त्तण्डप्रिया—

यात्रा कालिक लग्न से १-२-४-५-७-८-९-१०-१२ में पाप[1] ग्रह हो

,,	१० में शनि[2]	,,
,,	१-६-८-१२ में क्षीण चन्द्र	,,
,,	४-५-७-१० में शुक्र	,,
,,	७ में गुरु	,,
,,	८ में अस्तंगत बुध	,,
,,	१० में किसी ग्रह के साथ चन्द्रमा	,,

तो ये सब दुर्योग यात्राकाल में महाविघ्न और महाभय उपस्थित करते हैं।

यदि उपरोक्त दुर्योग नहीं रहें तो यात्रा में यात्री को सुख प्राप्ति और अर्थलाभ दोनों होता है ॥ ११ ॥

सम्मुख बुध-शुक्र का परिहार—

स्वग्रामैकपुरात्मसद्मसु चतुर्वक्त्रे चतुःशालके
तूद्वाहेषु वधूप्रवेशनृपभीदुर्भिक्षपीडासु च ।
तीर्थस्वामिनि देशयोर्भृगुवसिष्ठात्र्यंगिरः काश्यपे
भारद्वाजवात्स्ययोर्हितकरं यानं सितज्ञोन्मुखम् ॥१२॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथप्रतिबुधशुक्रापवादमाह । स्वग्रामेति । स्वग्रामः प्रसिद्धः एकपुरं प्रसिद्धम् आत्मसद्म आत्मगृहं चतुर्वक्त्रे चतुर्मुखे चतुःशालकंप्रसिद्धं उद्वाहाः विवाहाः ब्राह्मादयःविवाहाः तेषुवधूप्रवेशः नृपभीराजभयं दुर्भिक्षपीडाः

१ सू. मं. श. रा. के. क्षीण चन्द्र ।
२ विशेष अशुभ होने से दो बार कहा गया है ।

प्रसिद्धाः तासुतीर्थस्वामिनिदेशयोः तीर्थंतीर्थंगमनं स्वामिनिदेशः स्वाम्याज्ञा तयोः भृगुवसिष्ठात्र्यंगिरःकाश्यपे भृग्वादिगोत्रसमूहे भारद्वाजजवात्स्ययोर्गोत्रयोः एषूक्तेषुसितज्ञोन्मुखं शुक्रबुधसंमुखंयानंगमनंहितंस्यात्। अत्रवधूप्रवेशेप्रतिशुक्रदोषोनोक्तः तत्तुभर्त्रासहगमनविषयं भर्त्राविनागमने दोषोदृश्यते नवोढायास्तुवंध्यात्वमिति। तथाचभीपराक्रमे--

"स्वामिनानीयमानायांप्रतिशुक्रोनविद्यते" इति।

तथाचमतान्तरे--

"नवोढायास्तुवंध्यात्वंयदुक्तंसंमुखेभृगौ
तदत्रविबुधैर्ज्ञेयंकेवलंतुद्विरागमे" इति।

तथाचलल्लः--

"स्वभवनपुरप्रवेशेदेशानांविग्रहेतथोद्वाहे
नववध्वागृहगमनेप्रतिशुक्रविचारणानास्ति" इति।

तथाचमत्स्यपुराणे--

"चतुःशालं चतुर्द्वारमलिंदैःसर्वतोयुतम्।
नाम्नातत्सर्वतोभद्रं न तत्रप्रतिशुक्रता"[1] इति।

तथाचवसिष्ठः--

"काश्यपेषुवसिष्ठेषुभृग्वत्र्यांगिरसेषुच।
भारद्वाजेषुवात्स्येषुप्रतिशुक्रोनविद्यते" इति॥१२॥

मार्त्तण्डप्रिया—

किसी दूसरे स्थान से आकर अपने ग्राम में प्रवेश करने में,
एक ग्राम में ही स्थान परिवर्तन करने में,
अपने घर में प्रवेश करने में,
चतुर्मुख या चौमंजिला मकान में प्रवेश करने में,
नववधू के पति गृह (विवाह में) जाने में,
वधूप्रवेश (१ वर्ष के भीतर) करने में,
तीर्थयात्रा में, राजभय में,

दुर्भिक्ष में तथा स्वामी की आज्ञा से कहीं भी यात्रा करने में
इन सब कार्यों में सम्मुख शुक्र या बुध का दोष नहीं होता।

भृगु-वशिष्ठ-अत्रि-अंगिरा-कश्यप-भरद्वाज और वत्स गोत्र वालों को सम्मुख बुध-शुक्र का दोष नहीं लगता है॥१२॥

---

१. मत्स्यपुराण--अ. २५४ श्लो. १–२।

प्रकारान्तर से सम्मुख शुक्र का परिहार और यात्रा के नियम--

चंद्रे पूषभमेषगे सति सितोऽन्धःस्यात्तदा संमुखं
यानं सत्परपूर्वयोःसितविपर्यासात्सदाऽऽवश्यके ।
राजातर्पितवह्निभूसुरसुहृत्स्नेहानुवृत्ति त्यजन्
तृप्तःकार्यमना व्रजेत्त्रिदिवसैरेकाब्धिषट्क्रोशकान् ॥१३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथान्यंचापवादमाह । चंद्रे इति । चंद्रेपूषभमेषगेसतिसितःशक्रःअंधः स्यात् । तदा संमुखंयानंसत् शुभंस्यात् । तथाचगर्गः--

"पौष्णादिवह्निभाद्यंध्रौयावत्तिष्ठतिचंद्रमाः
तावदंधोभवेच्छुक्रःप्रवेशेनिर्गमेशुभः" इति ।

अथ आवश्यकेप्रवृत्तिमाह । परपूर्वयोरिति परपूर्वयोःपश्चिमपूर्वयोः सित विपर्यासात्शुक्रविपर्यासात् आवश्यकेकृत्येसति यानंसत्स्यात् । एतदुक्तं भवति । शुक्रेपूर्वकपालगतेसतिपश्चिमांगच्छेत् पश्चिमकपालंगतेसति पूर्वां गच्छेत् । तथाचज्योतिष्प्रकाशे—

"अत्युत्सुकेषुयावत्प्राक्कपालस्थोभृगुर्भवेत् ।
तावत्पाशिदिशंगच्छेत्प्राचींप्रत्यक्स्थितस्तथा" इति ।

अथप्रयाणविधिमाह । राजेति । राजात्रिदिसैरेकाब्धिषट्क्रोशकान्व्रजेत् । एतदुक्तंभवति । प्रथमदिनेक्रोशंगच्छेत् । द्वितीयदिनेचतुष्क्रोशान् तृतीयेषट्-क्रोशान् अर्थात्परतोयथेच्छंगच्छेत् । कथंभूतोराजा तर्पितवह्निभूसुरसुहृत् वह्निरग्निः भूसुराब्राह्मणाः सुहृदोबांधवाः तेतर्पिताः वह्निभूसुरसुहृदोयेन-सतथा । अत्रायंभावः समिच्चरुतिलादिनावह्नितर्पयित्वा दक्षिणान्नादि-भिर्भूसुरांस्तर्पयित्वा वस्त्रालंकरणादिभिःसुहृदः कलत्रादींस्तर्पयित्वाव्रजे-दिति । किंकुर्वन् स्नेहानुवृत्तित्यजन्सन् स्नेहेन अनुवृत्तिः पुनर्गृहागमनम् । अयंभावः यात्रार्थंबहिर्गत्वापुत्रादिस्नेहवशात्तदवलोकनार्थंगृहंनागच्छेदिति । कथंभूतोराजा तृप्तःबुभुक्षितोनगच्छेदितिभावः । पुनः किंलक्षणः कार्यमनाः कार्याय उत्कंठितांतःकरणः । तथाचरत्नावल्याम्—

"स्वनिकेतास्सुरभवनात्प्रधानादाश्रमाद्गुरुगृहाद्वापि ।
यायात्कृताग्निकार्यःप्राश्यहविष्यंद्विजानु मतम्" इति ।

तथाचबृहस्पतिः—

"दैवज्ञंपूजयित्वातृविदुषंःपूज्यशक्तितः
प्रदक्षिणमिमान्कृत्वातिष्ठन्ध्यायेदुमापतिम्" इति ।

तथाचज्योतिष्प्रकाशे--

"संतोष्यस्वांगनांविप्राञ्जह्यात्प्रतिरथादिकम्
शुचिःशुक्लांबरोष्णीषोनत्वेष्टंसुमनाव्रजेत्" इति ।

तथाचकश्यपः —

"यात्रासमयेवृद्धानुपरागेग्रहस्यवैषम्ये
गोभूहिरण्यवस्त्रैःसंपूज्यश्रद्धयाचदैवज्ञम्" इति ।

बृहद्यात्रायाम्--

स्नातोभुक्तोनुलिप्तश्चसर्वालंकारभूषितः
शुक्लांबरधरःश्रीमानध्वगःसुखमेधते" इति ।

भूपालवल्लभे--

"ब्राह्मणान्नावमन्येतकोपयेन्ननिजांगनाम्
यात्रांकृत्वागृहंनैवसिद्धिकामोविशेद्गृहम्" इति ।

लल्लः--

',यात्रायांप्रस्थितोयश्चब्राह्मणानवमन्यते
तदंतंजीवितंतस्यनासौप्रतिनिवर्तते" इति ।

बृहद्यात्रायाम्--

"यस्तुसंप्रस्थितोयात्रांस्वभार्यांनाभिनंदति
भार्यावानाभिनंदेतनास्यप्रतिनिवर्तनम्" इति ।

तथाचरत्नावल्याम्—

"क्रोशंवायदिवाप्यर्धं प्रथमेहनिशस्यते
द्वितीयेयोजनंगत्वानिवसेच्चमहीपतिः ।
तृतीयेयोजनंसार्द्धंवसेदाक्रम्यदूरतः
ततः परंयथेष्टंतुयायान्मार्गं महीश्वरः" इति ॥१३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

सम्मुख शुक्र का परिहार– रेवतीनक्षत्र से कृत्तिकानक्षत्र के प्रथम चरण तक जब चन्द्रमा रहता है तब शुक्र अन्धा रहता है। शुक्र में जबतक अन्धत्व रहता है तब तक शुक्रसम्मुख यात्रा का दोष नहीं लगता। शुक्र के पूर्व दिशा में रहने पश्चिम-दक्षिण की यात्रा और पश्चिम में रहने पर पूर्व-उत्तर की यात्रा करनी चाहिए इसमें शुक्र अन्धत्व देखने की आवश्यकता नहीं होती।

यात्राविधि—यात्रा करने के समय होमाहुति से अग्नि को, भोजन तथा दक्षिणा से ब्राह्मणों को और वस्त्रादि से मित्र परिजनों को सन्तुष्ट करके, स्वयं भी भोजनादि से तृप्त होकर कार्य सिद्धि की भावना से ओत-प्रोत होकर प्रस्थान

करना चाहिए। पुत्र-पौत्रादि के स्नेहवश पुनः गृह में लौटने की भावना का परित्याग कर देना चाहिए। प्रस्थान[1] करने के दिन १ कोस चले दूसरे दिन ४ कोस और तीसरे दिन ६ कोस चलकर चौथे दिन से जितना चाहें उतना चलें ।।१३।।

यात्रा में त्याज्य--

क्रोधक्षौररतिश्रमामिषगुडद्यूताश्रुदुग्धासव-
क्षाराभ्यंगभयासितांबरवमिस्तैलं कटूज्झेद्गमे ।
क्षीरक्षौररती: क्रमात्त्रिशरसप्ताहं परं तद्दिने
रोगं स्त्र्यार्तवकं सितान्यतिलकं प्रस्थानकेऽपीति च ।।१४।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथयातृकस्यनियमानाह। क्रोधःप्रसिद्धः क्षौरंप्रसिद्धं रतिर्मैथुनं श्रमः क्लेशः आमिषंमांसं गुडःप्रसिद्धः द्यूतंद्यूतवरणम् अश्रु अश्रुमोचनं दुग्धं प्रसिद्धम् आसवोमद्यं क्षारं क्षारधान्यंमाषादि अभ्यंगस्तैलाभ्यंगः भयंशंका रिपुभयमित्यर्थः। असितांबराणि अशुभ्रवस्त्राणि रक्तकृष्णादीनि वमिर्वमनं तैलंप्रसिद्धं कटुमरिचादि इत्येतद्गमे गमने उज्झेत् त्यजेत्। अथ उक्तेषु किंकिकतिदिनंत्यजेदित्याह। क्षीरेति। क्षीरक्षौररतीः क्रमात् त्रि ३ शर ५ सप्ताहं ७ त्यजेत् क्षीरंदुग्धंत्र्यहं ३ क्षौरंशराहंपंचाहं ५ रतिं सप्ताहंत्यजेदित्यर्थः। परमुर्वरितंतद्दिनेप्रयाणदिनेत्यजेत् रोगंव्याधियावद्बाधंत्यजेत् स्त्र्यार्तवंबीजदानपर्यंतंत्यजेत् सितान्यतिलकं श्वेतव्यतिरिक्तंतिलकं पीतकौंकुमादिकंतद्दिनेत्यजेत् प्रस्थानकेपि इत्येतत् त्यजेत् प्रस्थानकंनाममुहूर्तसमयेकिंचिदभीष्टवस्तुचालनम्। तदुक्तंरत्नमालायाम्—

"छत्रायुधाद्यं मनसस्त्वभीष्टंप्रचालयेद्वैजयिकंजयार्थी" इति।

एतत्तुकार्यवशात्क्रियते प्रस्थानेसंपूर्णफलंनास्ति। तथाचरत्नकोशे

"कार्यं वशात्स्वयमगमेभूभर्तुः केचिदाचार्याः
छत्रायुधाद्यभीष्टंवैजयिकंनिर्गमेकुर्युः" इति।

तथाचगर्गः—

"स्वशरीरेणयःकश्चिन्निर्गच्छेच्छूद्धयान्वितः
तस्ययात्राफलंसर्वंसंपूर्णपथिसिद्धयति" इति।

---

१. प्राचीन काल में राजाओं के युद्ध यात्रा आदि के लिए ये सब प्रमाण दिए गये हैं। आज के परिप्रेक्ष्य में ये सब सम्भव नहीं है।

तच्चालनावधिर्ग्रंथांतरात्—

"गृहाद्गृहांतरंगर्ग आहसीमांतरंभृगुः ।
शरक्षेपाद्भरद्वाजोवसिष्ठोनगराद्बहिः" इति ।

एवंप्रस्थानेकृतेपिस्वयमन्यस्मिन्सुदिने गच्छेत् । तथाचज्योतिष्प्रकाशे—

"प्रस्थानेपिकृतेनेयान्महादोषान्वितेदिने
गर्भयोगं विनाकालवृष्टयादौचाप्लुते यथा" इति ।

रत्नमालायाम्—

"वसेन्नचैकत्रदशक्षितीशो दिनानिनोसप्तचमांडलीकः
यः प्राकृतःसोपिचपंचरात्रंभद्रेणयात्रापरतः प्रयोज्या" इति ।

एवंविधेप्रस्थानेपिक्रोधक्षौररत्यादीन्वर्जयेदित्यर्थः । गर्गः—

"क्रोधंक्षौरंतथावांतितैलाभ्यंगाश्रुमोक्षणम्
द्यूतंमांसंगुडंतैलंयानंमद्यं परित्यजेत्" इति ।

रत्नकोशे—

"कालीयकंहिंगुलकः कुंकुमंरक्तचंदनम्
पीतंरक्तंचवसनंयातुर्नष्टानितत्क्षणात्" इति ।

बृहद्यात्रायाम्—

"कटुतैलगुडक्षौरपक्वमांसाशनंतथा
भुक्त्वायोयातिमोहेनव्याधितः सनिवर्तते" इति ।

लल्लः—

"प्रमत्तो व्याधितोभीतःशांतः क्रुद्धोबुभुक्षितः
अध्वानंनप्रपद्येतक्लीबवेषस्तथैवच" इति ।

रत्नावल्याम्—

"स्वकीयांपरकीयांवास्त्रियंपुरुषमेववा
ताडयित्वातुयोगच्छेत्तदंतंतस्यजीवितम्" इति ।

भृगुः—

"त्रिरात्रंवर्जयेत्क्षीरंपंचाहंक्षुरकर्मच
तदहश्चावशेषाणिसप्ताहंमैथुनंत्यजेत्" इति ।

यात्रायांगमनलक्षणंगर्गोक्तं ज्ञेयम्—

"मुहूर्त्तसमयेप्राप्तेहंसचारांघ्रिणाव्रजेत्
दैवज्ञामात्यविप्राद्यपुरोगैःस्वजनैर्वृतः ।
पूर्वंदक्षिणमुद्धृत्यपादंयात्रांनराधिपः
द्वात्रिंशतंपदंगत्वायानमारुह्यसंव्रजेत् ।

ततोनिरीक्षयेत्सम्यक्शकुनांश्चशुभाशुभान्
तथैवसदसच्छब्दान्निमित्तानिचसंव्रजेत्" इति ॥१४॥

मार्त्तण्डप्रिया—

यात्रा में त्याज्य--क्रोध करना, हजामत (क्षौर) बनवाना, रतिक्रिया, अधिक परिश्रम, मत्स्य-माँस का भक्षण, गुड़ खाना, जुआ खेलना, आखों से अश्रुपात करना, दूध पीना, मद्य पीना, उड़द आदि क्षार अन्न का भक्षण करना, उबटन लगाना, शत्रुओं से भयभीत होना, मलीन या रंगीन वस्त्र धारण करना, वमन करना, तेल लगाना या खाना और कटु तीक्ष्ण पदार्थों का सेवन करना, इन सबका यात्राकाल में त्याग कर देना चाहिए। इनमें विशेष करके दुग्ध सेवन यात्रा से ३ दिन पूर्व, क्षौर करना ५ दिन पूर्व और रतिक्रिया ६ दिन पूर्व से ही त्याग देना चाहिए। अन्य कार्यों का त्याग यात्रा के दिन ही करना चाहिए। यात्रा करने वाला व्यक्ति जब तक रोग ग्रस्त रहे तब तक यात्रा नहीं करे। यात्रा करने वाले की स्त्री यदि रजस्वला हो तो उसकी शुद्धि तक यात्रा नहीं करे और शुद्धि हो जाने पर गर्भाधान करके यात्रा करे। यात्रा के दिन श्वेत चन्दन के अतिरिक्त रक्त या पीत चन्दन नहीं लगाना चाहिए। अर्थात् यात्रा में श्वेत चन्दन ही शुभकर होता है।

यात्रा करने वाला यदि किसी कारणवश यात्रा के मुहूर्त्त में नहीं जा सके तो उसे अपने प्रिय वस्तु को ही घर से प्रस्थान करा देना चाहिए। इसी का नाम "**प्रस्थान**" है। इस प्रस्थान में भी उपरोक्त सभी निन्दित कार्यों का परित्याग करना चाहिए ॥१४॥

यात्रा में शुभ शकुन—

वस्त्रालंकरणानिपूर्णकलशस्तौर्यध्वनिः पुत्रवान्
शंखादर्शनृपाश्वदन्तिसुरभिस्त्रीपुष्पधान्यादिच ।
दोलादीपविधूमवह्निसुरभिद्रव्याणि शुभ्रो वृषो ।
वेश्याच्छत्रवितानचामरकुमार्यो मीनगोरोचने ॥१५॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

इदानींशकुनानाह। वस्त्रेति। वस्त्राणिश्वेतवस्त्राणि अन्यान्यपशकुन मध्येपठितानि अलंकरणानि सुवर्णादिनिर्मितानि भूषणानीत्यर्थः। पूर्णकलशः प्रसिद्धः तौर्यध्वनिः वाद्यध्वनिः पुत्रवान्वर्द्धमानः पुरुषः शंखः प्रसिद्ध आदर्शो-मुकुरः नृपोराजा अश्वः प्रसिद्धः दंती हस्ती सुरभिर्गौः स्त्रीसौभाग्यवती पुष्पाणिश्वेतानि धान्यानि अकृष्णानि कृष्णानित्वपशकुनमध्येपठितानि

आदिशब्देनसुवर्णादिधातवः दोलाप्रसिद्धः दीपः सिद्धः विधूमवह्निः धूमरहितोग्निः सुरभिद्रव्याणि सुगन्धद्रव्याणि कर्पूरचन्दनादीनि शुभ्रोवृषः श्वेत वृषभः वेश्याप्रसिद्धा छत्रंप्रसिद्धम् वितानंवस्त्रनिर्मितंप्रसिद्धम् चामरंप्रसिद्धम् कुमारीप्रसिद्धा मीनोमत्स्यः जलादुद्धृतः गोरोचनंप्रसिद्धम् ॥१५॥

मार्त्तण्डप्रिया—

यात्रा में शुभशकुन—श्वेत वस्त्र, सोने-चाँदी के आभूषण, पूर्ण कलश, तुरही बाजे की ध्वनि, पुत्रवान पुरुष, शङ्ख, दर्पण, राजा, घोड़ा, हाथी, गाय, सौभाग्यवती स्त्री, श्वेत पुष्प, कृष्णवर्ण के अन्न को छोड़ अन्यवर्ण के अन्न, बच्चे का पालना प्रज्वलित दीप, प्रज्वलित अग्नि, सुगन्धित वस्तु, श्वेत वृषभ, वेश्या, छात्रा, टेन्ट शामियाना आदि, चँवर, कुमारी कन्या, मछली और गोरोचन ये सभी वस्तुयें यात्राकाल में दीख पड़ें तो यात्रा शुभकर होती है ॥१५॥

और शुभशकुन—

यद्यत्स्वांतनितांततोषकरणं कोरुद्धतं गोमयं
मृच्चांभोऽर्थघटान्वितः सहचरो धौतांबरो मौत्रकः।
दूर्वादर्भरथाः पलास्त्रमदिरा वर्णी गुरुर्दैववि-
द्विप्रौ मित्रमृगावरोदनशवं सिद्धार्थदुग्धादि च ॥१६॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथसंकोचेनाह। यद्यदिति। यद्यद्वस्तुस्वांतनितांततोषकरणं स्वांतमंतःकरणंतस्यनितांतमतिशयेनतोषकरणंसंतोषजनकतत् किंबहुनोक्तेन एवंसंकोचनोक्त्वेदानींयेषुसंतोषाभावस्तानिपूर्वाचार्यैः शकुनमध्येपठितान्याह। कोरुद्धतंगोमयं कोःपृथिव्या उद्धृतंगोमयं मृच्चपृथिव्याः उद्धृतामृत्तिका अंभोर्थघटान्वितः सहचरः उदकार्थंकुंभयुक्तोजनः सन्सहचरः सहचरतीति सहचरः—

"जलार्थीरिक्तकुंभस्तुपथिकेनसहव्रजेत्
निवर्ततियथापूर्णःकृतार्थःपथिकस्तथा"।

इत्युक्तत्वात्। धौतांबरोमौत्रकः धूतवस्त्ररजकः दूर्वाप्रसिद्धा दर्भः प्रसिद्धः दूर्वादभौंतृणे अपिशुभे अपशकुनमध्येयत्तृणंपठितंतदेतद्व्यतिरिक्तं रथः प्रसिद्धः पलंमांसम् अस्त्रंरक्तं मदिरामद्यं वर्णीब्रह्मचारी गुरुःप्रसिद्धः दैवविज्ज्योतिषी विप्रौद्वौब्राह्मणौ मित्रमिष्टः मृगःप्रसिद्धः अरोदनशवंरोदनरहितंप्रेतं सिद्धार्थागौरसर्षपाः दुग्धातिदुग्धदध्याज्यं ननुयद्यत्स्वांतनितांत

तोषकरणमित्यनेन दुग्धग्रहणत्वात्सिद्धं पुनः किमुक्तं दुग्धमिति । सत्यम् । दुग्धंभक्षणेनिषेधितं तत्संदेहनिवृत्त्यर्थं दुग्धपठनमित्यदोषः एवमेवात्रविचारणीयम् । तथाचवसंतः ।

"दध्याज्यदूर्वाक्षतपूर्णकुंभसिद्धान्नसिद्धार्थकचंदनानि
आदर्शशंखामिषमीनमद्यगोरोचनागोमयमुद्धृतंगोः" इति ॥

भारद्वाजः—

"राजाविप्रौसुहृद्वेश्यासपुत्रास्त्रीकुमारिका
अभिरूपोनरोस्त्रींवागजोवाजीवृषः सितः ।
रज्ज्वाधृतान्यवर्णेगौः सवत्साचविशेषतः
उद्धृतंगोमयंनीतंमृत्तिकाचोद्धृतातथा ।
रजकोधौतवस्त्रश्चवेश्यातौर्यत्रिकध्वनिः
जयमंगलशब्दश्चशांतिपाठः सदीपकः ।
दीपोवाप्रज्वलद्वह्निः पूर्णकुंभोनृपासनम्
मद्यंमांसंचरुधिरंभक्ष्याणिविविधानिच ।
इक्षवोमधुतांबूलंवस्त्रालंकरणानिच
रौप्यंताम्रंमणिस्वर्णंद्रव्यंदर्पणमक्षताः ।
वितानंचामरंछत्रंदूर्वादर्भतृणध्वजाः
दोलाचारुरथोवृद्धः पुत्रपौत्रार्थयुक्शुचिः ।
चंदनानिसुगंधीनितथापुष्पाणिरोचना
घृतंदधिपयः प्रेयान्सिद्धमन्नंवचः शुभम् ।
दैवज्ञः सगुरुर्देवश्चित्तोत्साहकराणिच
दृष्ट्वैतानिनरोयायात्सर्वार्थंलभतेतुसः" इति ॥१६॥

मार्त्तण्डप्रिया—

जिस वस्तु को देखने से स्वयं को सुखद अनुभूति होती हो उन वस्तुओं को देखने से यात्रा शुभदायक होती है।

विशिष्ट शकुन—किसी पात्र में उठाया हुआ गोबर, खोदी हुई मिट्टी, पानी के लिए घड़ा लेकर जाता हुआ मनुष्य, धुला हुआ वस्त्र लिए धोबी, दुर्वा, कुशा, रथ, मांस, रक्त, शराब, ब्रह्मचारी, गुरु, ज्योतिषी, दो ब्राह्मण, अपना मित्र, मृग, रुदन रहित शव, श्वेत सरसों, दूध, दही और घी ये सब यात्राकाल में दृष्टिगोचर हों तो यात्रा शुभकर होती है ॥१६॥

यात्रा में अशुभशकुन—

कुर्वन्दक्षिणतः सदेतदितरद्वामे प्रकुर्वन्व्रजे-
द्भस्मास्थीन्धनविट्तुषाश्मलवणोपानत्तृणायस्कराः ।
पिण्याकौषधकृष्णधान्यरुदनं तक्रं सधूमानलः
कार्पासारुणपुष्पचर्म च गुडस्तैलायसी कर्दमः ।।१७।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथाशुभान्याह । कुर्वन्निति । एतत् अनंतरोक्तं सत्शुभं दक्षिणतः दक्षिण-भागेकुर्वन् सन् इतरत् अशुभंवक्ष्यमाणंवामेकुर्वन्सन्व्रजेत्गच्छेत् । भस्मेति । भस्मप्रसिद्धम् अस्थिप्रसिद्धः इंधनंप्रसिद्धम् विट्विष्ठा तुषंधान्यादीनां त्वक्फल्गु अश्मापाषाणः लवणंसामुद्रिकं उपानहौप्रसिद्धौ तृणंप्रसिद्धम् अयस्क-रोलोहकारः । पिण्याकंमर्दिततिलाः औषधंप्रसिद्धम् कृष्णधान्यं माषादि रुदनंरोदनादि तक्रंप्रसिद्धम् सधूमानलः धूमसहितोऽग्निः कार्पासःप्रसिद्धः अरुणपुष्पं जपादि चर्मप्रसिद्धम् गुडः प्रसिद्धः तैलंप्रसिद्धम् अयोलोहं कर्दमःपंकः ।।१७।।

मार्त्तण्डप्रिया—

उपरोक्त जो शुभ शकुन हैं उन्हें यात्राकाल में दक्षिणभाग में करके चलना चाहिए क्योंकि वामभाग में शुभशकुन भी पूर्णफल नहीं देते ।

अशुभशकुन—राख (भस्म),अस्थि (हड्डी), जलावन, विष्ठा, भूसा, पत्थर, नमक, जूता चप्पल, घास, लुहार, धोया हुआ या कुटा हुआ तिल, कृष्णवर्ण का अन्न, रुदनस्वर, तक्र (मठ्ठा), धूमयुक्त अग्नि, रुई, लालफूल, चमड़ा, गुड़, तेल, लोहा और पंक (कीचड़)ये सब यात्राकाल में अशुभ होते हैं । इन्हें देखने पर यात्रा अशुभकर होती है ।।१७।।

अशुभ शकुन—

मत्तोवांतबुभुक्षितांतकखला मुंडी जटी व्याधितः,
खंजव्यंगदिगंबरा यतिररिःकाषायिमुक्तालकौ ।
चौराभ्यक्तमलाविलाश्च पतितःपाश्यर्गली गुर्विणी,
वंध्या कृष्णवृषाहिभेकसरठा गोधा वराहःशशः ।।१८।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

मत्तइति । मत्तःउन्मत्तः वांतःवमितः बुभुक्षितः प्रसिद्धिः अंतकःप्राणि-हिंसकः खलोदुर्जनः मुंडीमुंडितः जटीजटिलः व्याधितोरोगी खंजः पादेनखंजः

व्यंगोंऽगहीनः दिगंबरोनग्नः यतिःसंन्यासी अरिर्वैरी काषायीगैरिकरंजित वस्त्रः मुक्तालकोमुक्तकेशः चोरः प्रसिद्धः अभ्यक्तःतैलाभ्यक्तः मलाविलोमलिनः पतितोजातिभ्रष्टः पाशीप्राणिबंधनार्थंपाशवान् अर्गली अर्गलावान् गुर्विणी-सगर्भा वंध्यानिरपत्या कृष्णवृषःकृष्णोनड्वान् अहिः सर्पः भेकोमंडूकः सरठःप्रसिद्धः गोधाप्रसिद्धः वराहःप्रसिद्धः शशःप्रसिद्धः ॥१८॥

मार्त्तण्डप्रिया—

पागल व्यक्ति, वमन (कय), भूखा (क्षुधित), व्याध या कसाई, दुर्जन (दुष्ट), जो माथ मुड़ाया हो (मुण्डित), जटाजूट, रोगी, पंगु, अङ्गहीन, नङ्गा (वस्त्रहीन), संन्यासी, अपना शत्रु, गेरुआ वस्त्रवाला, खुले केशवाला, चौर, तैल मर्दन किया हुआ व्यक्ति, मैला कुचैला व्यक्ति, पतित मनुष्य (जातिभ्रष्ट), जीव हिंसा के लिए जाल लिया हुआ व्यक्ति, अर्गला (सिटकिनी आदि) लिया हुआ व्यक्ति, गर्भिणी स्त्री, बन्ध्या स्त्री, कृष्णवर्ण का बैल, सर्प, मेढक, गिरगिट, गोह, सूअर, सियार और खरगोश ये सब यात्राकाल में अशुभसूचक होते हैं। यदि ये सब दीख पड़ें तो इन्हें बायें भाग में करके प्रस्थान[1] करना चाहिए ॥१८॥

अशुभ शकुन—

जाहौतू महिषःखरोष्ट्रमहिषारूढाश्च रिक्तो घट-
श्छिक्का प्राणिशिरोंऽगकंपपदवीबंधाःकुवागाहवौ।
पातो यानपलायनं श्वकलहःषंढं क्षुतं गोर्ज्वल-
द्वेश्मेति प्रतिबंधकाःकुशकुनाश्छिक्कादिका मृत्युदाः ॥१९॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

जाह इति। जाहः मंडली लोकेसेहलीतिप्रसिद्धा "जाहकोगात्रसंकोची मंडलीचबुधैः स्मृतः" इतिहलायुधः। ओतुर्मार्जारः महिषः प्रसिद्धःखरोष्ट्र महिषारूढाःप्रसिद्धाःरिक्तो घटःप्रसिद्धःछिक्काक्षुत् प्राणिशिरोंगकंपः प्राणिनां गोऽश्वादीनांप्राणिनांशिरोझाटनम् अंगझाटनंवा पदवीबंधोमार्गबंधः ऊर्णनाभादिभिर्मार्गोबध्यते कुवाक्कुत्सितवाक्यश्रवणम् आहवःसंग्रामः बिडाल महिषादीनां पातःपतनं वस्त्रादीनांस्खलनं यानमश्वादि तस्य पलायनं श्वकलहः शुनांकलहः षंढंनपुंसकं गोक्षुतंप्रसिद्धं ज्वलद्वेश्मज्वलद्गृहदर्शनम्

१. शुभ शकुन को दायें और अशुभ शकुन को बायें करके प्रस्थान शुभ होता है।

इत्येतेऽपशकुनाःप्रतिबंधकाःकार्यप्रतिबंधकाःस्युः छिक्कादिकाः अपशकुना मृत्युदाः स्युः । तथोक्तमागमांतरे---

"तृणतैलादिकार्पासभस्मचर्मतुषौषधम् ।
सामुद्रंगुडपंकाहि मत्तंवांतंबुभुक्षितम्" इत्यादि ।।१९।।

मार्त्तण्डप्रिया—

जोंक-केंचुआ आदि (गात्र संकोची जीव), बिडाल, भैंस, गधा, ऊँट, भैंसपर सवार व्यक्ति, खालीघड़ा, छींक का शब्द, चतुष्पदों का शिर या पैर झटकारना, मकड़ी के सूत्र या जाले से रास्ते का अवरुद्ध होना, कुवाक्य (गाली-शाप) सुनना, बिडाल या भैंसा आदि का युद्ध, स्वयं का या वस्त्रादि का गिरना, वाहन का छूट जाना, कुत्तों का युद्ध, नपुंसक, गाय की छींक और जलता हुआ घर ये सब यात्रा में प्रतिबन्धक होते हैं । यात्रा के प्रस्थान समय में यदि ये सब दीख पड़ें तो यात्रा सिद्धिदायक नहीं होती है । छिक्का आदि अपशकुन यात्रा में मृत्युतुल्य कष्ट उत्पन्न करते हैं ।।१९।।

प्रकारान्तर से शुभ अशुभ शकुन—

भृंगाल्युष्ट्रपठच्छुकाश्च नखिनःस्त्रीसंज्ञका वामतः
काली कुक्कुटपुंप्रथाश्च सुरभिर्दक्षे मनोऽभीष्टदाः ।
भारद्वाजशिखंडिचाषनकुला हंसोऽज एते दृशं
याता इष्टफलाःस्युरासभरवोवामेऽपि पृष्ठेऽर्थदः ।।२०।।

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथशकुनांतरमाह । भृंगोभ्रमरः अलिर्वृश्चिकः उष्ट्रःप्रसिद्धः पठच्छुकाः शब्दंकुर्वाणाराजशुकाः नखिनःश्वादयः स्त्रीसंज्ञकाः चटकादयः एतेवामतः मनोभीष्टदाः स्युः । कालीमहिषी कुक्कुटःप्रसिद्धः पुंप्रथाः पुरुषसंज्ञकाः काकादयः सुरभिर्गौः एतेदक्षे मनोभीष्टदाःस्यु । भारद्वाजः शिखंडीमयूरः चाषःप्रसिद्धः नकुलोबभ्रुः हंसःप्रसिद्धःअजो बस्तः एतेभारद्वाजादयः दृशंयाताः संतः इष्टफलाःस्युः । अयमर्थः । भारद्वाजादयो वामेवादक्षिणेवाग्रेवादृष्टमात्रा इष्टफलाः अभीष्टफलदाभवंतीत्यर्थः । रासभरवोगर्दभध्वनिर्वामेपृष्ठेपि अर्थदः अभीष्टार्थदोभवति ।।२०।।

मार्त्तण्डप्रिया—

यात्राकाल में भ्रमर, विच्छू, ऊँट, शब्दोच्चार करता हुआ सुग्गा, नखवाले जानवर और स्त्रीवाचकपक्षी (कोकिल-मैना आदि) यदि यात्री के वामभाग में रहें तो यात्री को मनोवांछित कार्य की सिद्धि होती है ।

भैंस, मुर्गी, पुरुषवाचक पक्षी (काक-चील-गोद्धादि) और गाय ये सब यदि यात्री के दक्षिण (दाहिने) भाग में रहें तो भी यात्री को मनोवांछित फल की प्राप्ति होती है।

ये सब लक्षण यदि विपरीत भाग में रहें अर्थात दाहिने का बायें और बायें का दाहिने हो तो शुभफल नहीं होता है।

खंजन (खंड़रिच), मोर, चाहापक्षी, नेवला, हंस और बकरा इन सबका आगे या पीछे, दाहिने या बायें कहीं भी दर्शन होना शुभकर होता है। गधे की आवाज पीछे और बायें भाग में शुभद होती है। परन्तु आगे और दाहिने भाग में अशुभ होती है ॥२०॥

अशुभ शकुनों में शुभता और कर्तव्य—

नद्युत्तारभयप्रवेशसमरद्यूतेषु नष्टेक्षणे
व्याधौ स्युःशुभदा विलोमशकुना नाड्या इडाया भरे।
आद्ये दुःशकुने निवृत्य च शुचिर्भूत्वाऽष्टधाऽस्वायमं
कृत्वेयादपरेऽष्टिवारमपरे दत्त्वा सुवर्णं व्रजेत् ॥२१॥

इतियात्राप्रकरणम् ॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथयेषुयेषुकृत्येषुविपरीतशकुनाः शुभाश्वतानाह। नद्युत्तार इति। नद्युत्तारोनद्युतरणं भयंनृपादीनां प्रवेशोग्रामादिप्रवेशःसमरःसंग्रामःद्यूतंप्रसिद्धं नष्टेक्षणंनष्टवस्तुनोऽवलोकनम्व्याधौरोगोपचारे एषुविलोमशकुनाविपरीत शकुनाःशुभदाःस्युः। अयमर्थः। गमने येऽपशकुनास्तेनद्युत्तारादिषुशुभदाः स्युरित्यर्थः। तथा इडायानाड्याभरेपूर्णतायांविलोमशकुनाःशुभदाःस्युः। तथाचवसंतः—

"भवेदिडायांपरिपूरितायांसर्वोपिवामः शकुनः प्रशस्तः।
स्यात्पिगलायांपरिपूरितायांसर्वेपिसव्याः शकुनाः प्रशस्ताः ॥
संगेरणेकर्मणिचप्रवेशेशुक्लेग्रहेनष्टविलोकनेच
व्याधौसरिद्दुर्गवनादिकेषुशस्तः प्रयाणाद्विपरीतभावः" इति।

अन्यच्च—

"नद्युत्तारेभयेयुद्धेप्रवेशेनष्टवीक्षणे
शकुनाव्यस्तगाः शस्ता नृपालोकेप्रयाणवत्" इति।

अथप्रथमे अपशकुनेजातेसतिकिंकर्तव्यमाह। आद्ये इति। आद्येप्रथमेदुःशकुनेजातेसतिनिवृत्यनिवर्तनंकृत्वातत्रशुचौदेशे उपविश्य शुचिःप्रक्षालितपा

णिपादः आचांतः कृताचमनः असवःप्राणास्तेषां आयमःप्राणायामः अष्टधा अष्टवारंकृत्वा इयात्गच्छेत्। चेद्यदिपुनः दुःशकुनः स्यात्तदानिवृत्त्यशुचिराचांतोऽष्टिवारंषोडशवारमसून्नियम्येयात् अपरेतृतीयेदुःशकुनेजातेसतिसुवर्णं दत्त्वा इयात्। एतदावश्यकंगमनविषयम्। प्राणायामानधिकारीतावत्कालंस्थित्वाव्रजेत्। तथाचज्योतिर्निबंधे--

"विरुद्धेशकुनेपूर्वंप्राणायामाष्टकं चरेत्
द्वितीयेद्विगुणान्कृत्वातृतीयेचव्रजेत्क्वचित्" इति।

तथाचवसंतराजः—

"जाते विरुद्धेशकुनेऽध्वनीनोव्यावृत्यकृत्याकरपादशौचम्
आचम्यचक्षीरतरोरधस्तात्तिष्ठन्प्रपश्येच्छकुनांतराणि" इति।

तथाच आर्ष्टिषेणिः—

यदापशकुनंपश्येद्विपरीतमुपस्थितम्
सघृतंकांचनंदत्त्वानिर्विशंकःसुखंव्रजेत्" इति ॥२१॥

इति स्वोक्तमुहूर्त्तमार्त्तण्डटीकायांयात्राप्रकरणंसमाप्तम् ॥

मार्त्तण्डप्रिया—

नदी पार करने में, राजभय से कहीं भागने में, गृहप्रवेश में, युद्ध हेतु यात्रा में, जुआ खेलने में, भूली वस्तु खोजने में और रोग का उपचार कराने में पूर्वोक्त सभी अपशकुन शुभ होते हैं तथा नासिका से जब बायीं श्वास चल रही हो उस समय भी अशुभ शकुन शुभद होते हैं।

अपशकुन में कर्त्तव्य—यात्रा के प्रस्थान काल में यदि अपशकुन हो जाय तो लौटकर आचमन करके आठ बार प्राणयाम करके फिर प्रस्थान करना चाहिए। दूसरे बार भी यदि अपशकुन हो तो लौटकर सोलह बार प्राणायाम करके जाना चाहिए। यदि तीसरे बार भी अपशकुन हो जाय तो लौटकर प्राणायाम और स्वर्णदान करके जाना चाहिए। परन्तु तीसरे बार के अपशकुन के बाद यदि परमावश्यक हो तभी यात्रा करे अन्यथा यात्रा स्थगित कर देनी चाहिए ॥२१॥

मुहूर्तमार्त्तण्ड की "मार्त्तण्डप्रिया" हिन्दी टीका में यात्रा प्रकरण समाप्त—७

मिश्र प्रकरणम्—८

राज्याभिषेक और सुरप्रतिष्ठा मुहूर्त—

जन्मांगर्क्षदशेशसद्ग्रहकुजैः सार्कैर्बलिष्ठैर्मृदु
क्षिप्रेन्द्रध्रुवभैःस्थिरर्द्धिनृतनौ व्यारान्हि भूपस्थितिः।
स्वस्वर्क्षैः समृदुध्रुवर्क्षचरभैः क्षिप्रैः सुरस्थापनं
प्रोचुर्माघयुगे च राधयुगले व्यारान्हि पूर्वाह्णके ॥१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथमिश्रप्रकरणंविवक्षुरादौराजाभिषेकंवृत्तार्द्धेनाह । जन्मेति । जन्मांगर्क्षदशेशादिभिर्बलिष्ठैः तथामृद्वादिभिः स्थिरर्द्धिनृतनौव्यारान्हिभूपस्थितिः शस्ता स्यादित्यध्याहारः। अंगंचऋक्षंच अंगर्क्षेजन्मनि अंगर्क्षेजन्माङ्गर्क्षे जन्मलग्नजन्मराशी तेचदशाचजन्माङ्गर्क्षदशाः दशावर्तमानातस्या ईशाः तेंच सद्ग्रहाश्चकुजश्चसूर्यश्चतेचतैः सार्कैः अर्कोरविः तेनसहबलिष्ठैः स्थानादिबलसमृद्धैः सद्भिः तथा मृदुक्षिप्रेन्द्रध्रुवभैः स्पष्टम् । स्थिरर्द्धिनृतनौ ऋद्धिंगतनृतनुः स्थिराचासौऋद्धिनृतनुश्चसातथातस्यां जन्मराशिजन्मलग्नाभ्यांस्थिरोपचयनृलग्ने व्यारान्हिभौमरहितदिने भूपस्थितिः राजप्रतिष्ठाशुभास्यादित्यर्थः लग्नबलंप्राग्वत् । प्रायश्चन्द्रंत्यजेत्याद्यवलोकनीयम् । अथदेवस्थापनमुत्तरार्द्धेनाह । स्वस्वर्क्षैरिति स्वस्वर्क्षैः यस्यदेवस्यप्रतिष्ठा क्रियतेतस्यनक्षत्रैः समृदुध्रुवर्क्षचरभक्षिप्रैः । शेषं स्पष्टम् माघयुगे माघफाल्गुनयोः तथाराधयुगलेराधोवैशाखः तस्माद्युगलंतस्मिन् वैशाखज्येष्ठयोरित्यर्थः । तथा व्यारान्हि विगत आरो यस्मात् एवंविध महस्तस्मिन् भौमरहितेदिन इत्यर्थः । पूर्वाह्णके अत्रदिनस्यद्वौभागौपूर्वभागः पूर्वाह्णः तस्मिन् आचार्याः सुरस्थापनं प्रोचुः । शेषंस्पष्टम् । सर्वामरस्थापनमितिशेषः लग्नबलं प्राग्वत् ॥१॥

मार्त्तण्डप्रिया—

राज्याभिषेक मुहूर्त्त—जन्म के लग्नाधिपति और राश्याधिपति, वर्तमान दशाधिपति, शुभग्रह, मंगल और सूर्य ये सभी जब बली रहें तो मृदुसंज्ञक (मृ.रे.चि. अनु.) क्षिप्रसंज्ञक(ह.अश्वि पुष्य.अभि.)ज्येष्ठा और ध्रुवसंज्ञक (उफा.उषा उभा.रो.) इन १३ नक्षत्रों में, जन्मराशि तथा जन्मलग्न से उपचय (३–६–१०–११)

स्थानवाले स्थिर और ध्रुव लग्न में, मंगलवार को छोड़ कर अन्यवारों में राजा का अभिषेक शुभ होता है।

सुरप्रतिष्ठा—जिस देवता की प्रतिष्ठा करनी हो तो उसी के नक्षत्र[1] में मृदुसंज्ञक (मृग. रे. चि. अनु) ध्रुवसंज्ञक (उफा. उषा. उभा. रो.) चरसंज्ञक (स्वा. पुन. श्र. ध. श.) और क्षिप्रसंज्ञक (ह. अश्वि. पुष्य. अभि.), इन १७ नक्षत्रों में माघ-फाल्गुन-वैशाख-ज्येष्ठ इन ४ मासों में, भौमवार को छोड़ अन्यवारों के पूर्वाह्ण में देव प्रतिष्ठा शुभकर होती है ॥१॥

वस्त्रधारण व प्रक्षालन-दग्धवस्त्र का फल और स्त्रियों का वस्त्रादि धारण—

धार्यं वस्वदितीनपंचगुरुभाश्व्यंत्यध्रुवैर्ज्ञत्रये ।
ज्ञोने क्षाल्यमिहाखुभक्षितमसन्मध्यत्रिभागेऽम्बरम् ॥
स्त्री रक्तांबरभूषणेऽत्रविभ्याद्व्यादित्यपुष्यध्रुवे ।
श्वेतेऽब्जोऽरुणरुक्मयोःकुजरवी कृष्णे शनिःशस्यते ॥२॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथवस्त्रपरिधानंतस्यक्षालनमुंदुरादिभक्षितफलंचाह। धार्यमिति। वसुर्धनिष्ठा अदितिः पुनर्वसुः इनपंचकंहस्तपंचकं गुरुभंपुष्यः अश्वि अश्विनी अंत्यंरेवती ध्रुवाणिपूर्वोक्तानि एतैर्नक्षत्रैः ज्ञत्रये बुधगुरुशुक्रवारे अम्बरंवस्त्रं-धार्यं नान्यत्र। यत उक्तम्—

"रवौजीर्णंविधौस्तोकं जलार्द्रं दुःखदं कुजे
बुधे धनं गुरौ ज्ञानं शुक्रे सौख्यं शनौ मलम्" इति।

लग्नबलं प्राग्वत्। अथक्षालनमाह। इहास्मिन्वस्त्रधारणेनक्षत्रादौक्षाल्यं प्रक्षालनीयम् कथंभूते ज्ञोने बुधवाररहिते। उक्तंच—

"वस्त्रहेमाद्यलंकारधारणोक्तैश्चभादिभिः
तत्संहृतिश्चनिर्माणंविदध्यात्क्षालनादिकम्" इति।

यद्यपि यस्यांगंयदर्दोगिनोगदितभेकुर्यादितिपूर्वमेव अंगभूतंकर्मोक्तं तथापि क्षालनेबुधवर्जनार्थं ज्ञोने इहक्षाल्यमित्युक्तं बुधनिषेधश्रवणात्। उक्तंच—

शनौसोमसुतेश्राद्धेषष्ठ्यमावास्ययोस्तथा
वस्त्राणांक्षालनंचैवदहत्यासप्तमंकुलम्" इति।

अथोन्दुरादिभक्षितफलमाह। आखुभक्षितमिति। आखुः उन्दुरः तेन अम्बरंमध्यत्रिभागेभक्षितमसत् दुष्टफलंस्यात्। एतदुक्तंभवति वस्त्रंत्रिगुणं

१. मुहूर्तमार्तण्ड अ. २. श्लो १.

कृत्वायदिभक्षितभागोमध्यत्रिभागेपतितदातद्दुष्टमित्यर्थः । आखुरित्युपलक्षणं तेनाग्निदग्धंगवादिभक्षितंमष्यादिलिप्तंज्ञेयम् । तथाचोक्तंवृत्तशते—

"दग्धंवास्फुटितंचगोमयमषीपंकैर्विलिप्तंतदा-,
दष्टंमूषकपूर्वकैरशुभदंमध्यत्रिभागेऽशुकम्" इति ।

अथस्त्रियारक्तवस्त्रधारणंभूषणधारणमनुक्तग्रहाणांकुत्रकुत्रप्राशस्त्यंतदुत्तरार्द्धेनाह । स्त्रीति । स्त्री अत्र उक्तेवस्त्रधारणभादौ अम्बरंभूषणंसुवर्णादिभूषणं बिभृयात् धारयेत् कथंभूतेऽयादित्यपुष्यध्रुवे विगतानि आदित्यपुष्यध्रुवाणियस्मात्तत्तथातस्मिन् । यतोत्रस्त्रियारक्तवस्त्रभूषणधारणे दोषोदृश्यते । तथाचोक्तं—

"पुष्यादित्यध्रुवैर्धिष्ण्यैःस्वर्णरक्तांबरादिकम्
नवीनंभूषणंधार्यंनार्यादयितुरायुषे" इति ।

लग्नबलंप्राग्वत् । अथचन्द्रादीनांप्राशस्त्यमाह । श्वेतेवस्तुनिरौप्यमुक्ताफलादिके अब्जश्चंद्रोहितः सोमवारेश्वेतवस्तुधार्यमित्यर्थः । कुजरवी अरुणरुक्मयोःशस्येते शनिःकृष्णेवस्तुनि नीलवस्त्रादिकेशस्यते शनौतद्धार्यमितिभावः । ज्ञत्रयेतुसर्वंधार्यमितिपुरैवोक्तम् ॥२॥

मार्त्तण्डप्रिया—

वस्त्रधारणमुहूर्त्त—ध. पुन. ह. चि. स्वा. विशा. अनु. पुष्य. अश्वि. रेवती और ध्रुवसंज्ञक अर्थात उफा. उषा. उभा. रो. इन १४ नक्षत्रों में, बुध-गुरु और शुक्रवार को नववस्त्र धारण करना शुभ होता है ।

वस्त्रप्रक्षालन—बुधवार को छोड़कर वस्त्रधारण के अन्य वारों-नक्षत्रों में वस्त्र प्रक्षालन शुभ होता है ।

वस्त्र के फटने या जलने का फल—नवीन वस्त्र के त्रिभाग का जो मध्यभाग हो उसके त्रिभाग में यदि चूहा काट दे या जल जाय या फट जाय तो अशुभ होता है । अन्य भागों में ऐसा हो तो दोष नहीं लगता ।

स्त्रियों का वस्त्र या आभूषण धारण—पुन. पुष्य और ध्रुवसंज्ञक (उफा. उषा. उभा. रो.) इन ६ नक्षत्रों को छोड़कर वस्त्रधारण के अन्य नक्षत्रों में सौभाग्यवती स्त्रियों को रक्तवस्त्र या सोने-चाँदी के आभूषणधारण करने चाहिए ।

सोमवार को श्वेत, मंगलवार को लाल-पीला और शनिवार को काले रंग का वस्त्र या रत्नादि का धारण शुभ होता है ॥२॥

पुरुषों का आभूषण धारण-क्रयविक्रय मुहूर्त—

वस्त्रोक्तैर्व्यनिलद्वयाश्विभिरगेऽङ्गे नुर्विभूषा हिता
विप्राज्ञोत्सवलब्धिषूदितमनुक्तेऽपीष्टकृद्धारणम् ।
मैत्रार्कानिलमूलदस्त्रहरिभेन्द्वीज्याजपादोत्तरे
पण्यानां क्रयविक्रयौ घटपरर्द्धचऽङ्गे स्वशुद्धौ तनु ॥३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथनराणांभूषणधारणंवृत्तचरणेनाह । वस्त्रोक्तैरिति । वस्त्रोक्तैर्भादिभिर्वस्वदितीत्यत्रोक्तैः अगेंगे स्थिरलग्नेनुःनरस्य अलंकृतिरलंकरणं हितंस्यात् । किंलक्षणैर्वस्त्रोक्तैः व्यनिलद्वयाश्विभिः अनिलद्वयंस्वातीयुगंस्वाती विशाखेति अश्विनीप्रसिद्धा विगते अनिलद्वयेश्विन्यौयेभ्यस्तानितथातैः स्वातीविशाखाश्विनीरहितैरित्यर्थः । लग्नबलंप्राग्वत् । अथ द्वितीयचरणेनविशेषमाह । विप्राज्ञेति । विप्राज्ञाब्राह्मणाज्ञा उत्सवोविवाहादिकः लब्धिर्लाभः आसुसत्सु अनुक्तेपिभादौधारणंवस्त्रादिधारणमिष्टकृत्स्यात् । तथाचोक्तंव्यासेन—

"लब्धंराजप्रसादेनविप्रादेशात्करग्रहे
प्रीत्यादत्तोत्सवेवस्त्रंधार्यंनिद्येपिभादिके" इति ।

अथोत्तरादर्धेनपण्यानांक्रयविक्रयावाह । मैत्रेति । मैत्रमनुराधा शेषं सुगमम् । घटपरद्धर्चङ्गे घटःकुंभस्तस्मात्परमन्यतमंतच्चतत्ऋद्धचंगं च ऋद्धचंगमुपचयलग्नंतस्मिन्कुंभव्यरिक्तोपचयलग्ने पण्यानां पूगफलखर्जूरादीनांक्रयविक्रयौ तनुविस्तारय कुर्वीत्यर्थः । कस्यांसत्यां स्वशुद्धौसत्यां स्वंधनभावः तस्यशुद्धिःपापराहित्यं तस्यांसत्यां शेषंप्राग्वत् । तथाचोक्तं ।

"दशमैकादशेलग्नेवित्तकेंद्रत्रिकोणगैः
शुभैः पुण्यस्यकर्मोक्तांवर्जयित्वाघटोदयम्" इति ॥३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

स्वा. वि. अश्वि. इन ३ नक्षत्रों को छोड़कर वस्त्रधारण के अन्य नक्षत्रों में और स्थिर लग्न में पुरुषों का वस्त्र आभूषणादि धारण करना शुभ होता है ।

ब्राह्मण की आज्ञा से, उत्सव में (उपनयन विधाहादि) और लाभ में (राजा आदि के प्रदान करने पर) विना मुहूर्त के भी वस्त्रधारण करना चाहिए ।

क्रयविक्रय—अनु. ह. स्वा. मू, अश्वि. श्र. मृ. पुष्य. पूभा. उफा. उषा. और उभा. इन १२ नक्षत्रों में, कुंभलग्न को छोड़कर जन्मराशि से उपचय (३-६-१०-११) स्थान वाले लग्नों में व्यापारिक वस्तुओं का क्रय-विक्रय करना शुभ कर होता है ॥३॥

पंचक में वर्ज्यकर्म और सेवा-संन्यास का मुहूर्त्त —

प्रेतज्वालनशय्यकावितनने स्तंभोच्छ्रयं याम्यदिग्
यानं काष्ठतृणोच्चयं परिहरेत्कुंभद्वयस्थे विधौ ॥
सेवेष्टा ध्रुववारुणांत्यवसुभैःखाये रवौ वा कुजे
सन्यासःस्थिरभे खलैर्गतबलैःषष्ठांत्यगे भार्गवे ॥४॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथवृत्तार्द्धेनधनिष्ठापंचकेवर्ज्यमाह। प्रेतेति। कुंभद्वयस्थेविधौसति कुंभमीनगेचंद्रेसति परिहरेत् सर्वथानाचरेत् स्पष्टम्। अथोत्तरार्द्धचरणेन-सेवामाह। सेवेति। ध्रुवादिभिर्नक्षत्रैः सेवा इष्टास्यात्। सुगमम्। कस्मि-न्सति खायेरवौसति वा इत्यथवाकुजेसति खंदशमम् आयमेकादशम् अनयो-रन्यतमे रविभौमयोरन्यतमेसतीत्यर्थः। यस्मिंल्लग्नेसेवा क्रियतेतस्माल्लग्ना-द्दशमे एकादशेवाररवौभौमेवासतिसेवा इष्टाहितकरास्यादित्यर्थः। शेषं प्राग्वत्। अथचतुर्थचरणेनसंन्यासमाह। संन्यास इति। स्थिरनक्षत्रेस्थिर-लग्नेचसंन्यास इष्टः स्यात्। कैः खलैः गतबलैः पापग्रहैर्हीनबलैरित्यर्थः। सप्तम्यर्थेतृतीया कस्मिन्सति भार्गवे शुक्रेषष्ठयांत्यगे सति। शेषंलग्नबलं-प्राग्वत्। उक्तंच—

"त्रिषडेकादशे सौरिर्व्ययेषष्ठेचभार्गवः।
सबलेधर्मपेजीवेकेन्द्रेदीक्षाविरक्तिकृत्" इति ॥४॥

मार्त्तण्डप्रिया—

कुंभ और मीन (पंचकदोष) राशि में जब तक चन्द्रमा रहे तब तक शवदाह, शय्या निर्माणादि, गृह में स्तम्भरोपण, दक्षिण दिशा की यात्रा, तृणकाष्ठादि का संचय, ये सब कार्य सर्वथा त्याज्य हैं।

सेवा मुहूर्त्त—ध्रुवसंज्ञक (उफा. उषा. उभा. रो.) शत. रे. और धनिष्ठा इन ७ नक्षत्रों में, लग्न से १० या ११वें स्थान में सूर्य या भौम रहे तो सेवा (नौकरी) कार्य प्रारम्भ करना शुभ होता है।

सन्यासमुहूर्त्त—स्थिर संज्ञक (उफा. उषा. उभा. रो.) नक्षत्रों में, सभी पापग्रह निर्बल हों और शुक्र षष्ठ या द्वादश स्थान में हो तो सन्यास ग्रहण शुभ होता है ॥४॥

कृषिकर्म का मुहूर्त—

उद्वाहर्क्षचरद्विपेन्द्रलघुभत्वाष्ट्रैः शुभा स्यात्कृषि-
र्व्यार्किज्ञारखगाह्नि युग्मझषगोकन्याविलग्ने तिथौ ॥
व्यंकौजे सदिशि प्रणम्य खगभूमुख्यान्सिताच्छादनः
स्वर्णोद्घृष्टहलं समुष्कसुवृषैः सौमीं पटुस्त्रिर्नयेत् ॥५॥

मार्त्तण्डवल्लभा –

अथवृत्तद्वयेनकृषिकर्माह । उद्वाहेति । उद्वाहर्क्षाणिपूर्वोक्तानि मूलांत्यार्के-त्यादीनि एकादशसंख्याकानि चराणिप्रसिद्धानि द्विपंविशाखा इंद्रोज्येष्ठा लघु-भानिप्रसिद्धानित्वाष्ट्रंचित्रा तैर्व्यार्किज्ञारखगाह्नि आर्किः शनिः ज्ञोबुधः आरोभौमः विगता आर्किज्ञारायेभ्यस्ते तथातेचतेखगाश्चतेषामहः दिनंतस्मिन् शनिबुधभौमरहितवारे इत्यर्थः । युग्मझषगोकन्याविलग्ने युग्मंमिथुनं झषोमीनः गौर्वृषः कन्याप्रसिद्धा एषामन्यतमविलग्ने तिथौ व्यंकौजे विगतः अंकः नवमो-यस्मात् असौव्यंकः सचासौ ओजश्च ओजोविषमस्तस्मिन् नवमीव्यतिरिक्त-विषमतिथावित्यर्थः । किंलक्षणेव्यंकौजेतिथौ सदिशि दिग्दशमी तयासहवर्त-माने १, ३, ५, ७, ११, १३, १५, १० कृषिः शुभास्यात् । तथाचोक्तं—

चंद्रेशुभेशुभतिथौशुभवारयोगेवारेगुरौशशिजशुक्रगभस्तिवारे ।
लग्नेवृषेमिथुनकेझषकन्यकायां शस्तंकृषिप्रकरणंप्रवपेन्निधाने" इति ।

अन्यच्च —

दशम्येकादशीचैवतृतीयाचत्रयोदशी
सप्तमीपंचमीचैवप्रतिपच्चसुखावहा ।
हंत्यष्टमीबलीवर्दान्नवमीसस्यघातिनी
चतुर्थीकीटजननीपतिं हंतिचतुर्दशी ।
रवौबृहस्पतौचंद्रेशुक्रे कुर्याद्विशेषतः
बुधार्किभूमिपुत्राश्चनभवंतिफलप्रदाः" इति ।

अथविधिमाह । सिताच्छादनः श्वेतवस्त्रधरः पटुः कुशलः कर्ता खगभू-मुख्यान्देवान्प्रणम्य कृष्यारंभपूर्वोक्तः सीतायज्ञः क्रियते तत्रपूजितान्खग-भूमुख्यान् ग्रहभूम्यग्रचादीन् प्रदक्षिणापूर्वकंप्रणम्य मनोवाक्कायकर्मभिर्नम-स्कृत्य स्वर्णोद्घृष्टहलंसुवर्णघर्षिताग्रहलं समुष्कसुवृषैः मुष्कावृषणास्तैः सह-वर्तमानाः समुष्काः शोभनावृषाः सुवृषाः गुणावयवपूर्णाः नीरोगाः समुष्का-श्चतेसुवृषाश्चतथातैः कृत्वा सौमीमुत्तरांदिशंप्रतित्रिवारंनयेत् हलेनपद्धतीः कुर्यादितिभावः । उत्तरादिशंप्रतित्रिवारनयनेनपंचरेखा उत्पद्यन्ते । तद्यथा

प्रथमगमनेनैका आवर्तनेद्वितीया पुनरुत्तरांप्रतिद्वितीयगमनेनतृतीया पुनरावर्तनेचतुर्थी पुनरुत्तरांप्रतितृतीयगमनेनपञ्चमीरेखा उत्पद्यते अधिकानकार्या इतिभावः । सीमींपटुस्त्रिर्नयेदित्यत्रपटुपदग्रहणमखंडऋजुरेखाकरणार्थम् । तथाचोक्तम्—

शस्तासुचंद्रतारासुशुचिः शुक्लेनवाससा
स्नात्वागंधैश्चपुष्पैश्चपूजयित्वा विशेषतः ।
पृथिवींग्रहसंयुक्तांपूजयित्वाप्रजापतिम्
अग्निप्रदक्षिणीकृत्यदातव्याचैवदक्षिणा ।
कृष्णौवृषौनियोक्तव्यौजीवच्छुक्रयुतौनवौ
विबलंछिन्नलांगूलंकपिलंवृषभंत्यजेत् ।
हलप्रवाहनंकार्यं नीरुग्भिर्वृषकर्षकैः
हलादिभिर्दृढैः क्षेमंकुदृढैरशुभंभवेत् ।
वृषभायदियुध्येरंस्तस्यविघ्नः सदाभवेत्
हेमघृष्टहलाग्रेणछिन्नरेखांनकारयेत् ।
उत्तराभिमुखोभूत्वाक्षीरेणार्घ्यंप्रदापयेत्
तस्यसर्वप्रकारेणनिर्विघ्नंकारयेत्तदा ।
एकाजयकरीरेखातृतीयाचार्थवृद्धिदा
पंचमीचभवेद्रेखा बहुसस्यफलप्रदा ।
अत ऊर्ध्वंनकर्तव्यामहादोषस्ततोभवेत्
स्मर्तव्यावसवः शुक्रः पृथुनामासुचंद्रमाः ।
पराशरोहलीचैवसर्वविघ्नोपशांतये" इति ।

अत्रदुर्निमित्तानितत्रैवोक्तानि —

हलेप्रवाह्यमाणेतुकर्मं उत्पद्यते यदि
गृहिणोमृतयेतस्यततोऽग्नेश्चभयंभवेत् ।
ईषाभंगोयदाकृष्टुः संशयोजीवितस्य च
सुतनाशोयुगेभग्नेसमानेम्रियतेशिशुः ।
योक्त्रच्छेदेतुव्यासंगः सस्यहानिश्चजायते
हलेप्रवाह्यमाणेतुगौरेकः प्रपतेद्यदि ।
प्रपतेद्युक्तमात्रस्तुबंधनंचप्रयच्छति
ज्वरातिसाररोगेणकृषिभंगंविनिर्दिशेत् ।
प्रवहेद्युक्तमात्रस्तुततोगौः खनते यदि
हलेनयुक्तमात्रस्तुतदासस्यंचतुर्गुणम्" इति ।।५।।

मार्त्तण्डप्रिया —

विवाह के ९ नक्षत्र (रो. मृ. म. उफा. अनु. मू. उषा. उभा. रे.) चर संज्ञक (स्वा. पुन. श्र. ध. श.) वि. ज्ये. लघुसंज्ञक (ह. अश्वि. पुष्य.) और चित्रा इन २० नक्षत्रों में, शनि-बुध-मंगल वारों को छोड़कर अन्यवारों में, ३-१२-२-६ लग्नों में नवमी को छोड़कर अन्य विषम तिथियों में कृपिकार्य करना (हल चलाना) शुभ होता है।

हल चलाने वाला श्वेत वस्त्र धारण करके, ग्रह-पृथ्वी और देवताओं को नमस्कार करके, वृषणयुक्त बैलों को हल में जोतकर, हल के अग्रभाग में सुवर्ण को घिसकर उत्तराभिमुख ३ बार हल चलावे। इस प्रकार हल चलाने पर उत्तराभिमुख ३ और दक्षिणाभिमुख २ रेखायें मिलकर ५ रेखायें होती है। इससे अधिक उसदिन हल नहीं चलाना चाहिए ॥५॥

कृषिकर्म में लाङ्गलचक्र-बीजवपन फणिचक्र और धान्यच्छेदन—

त्रित्रित्रीष्वनलार्थरामहुतभुग्भेष्वर्कभुक्तादसत्
सद्भूयः कृषिभैर्विवारुणहरीन्द्रैर्बीजवापः शुभः ।
सूर्यर्क्षादितृतीयतोऽतिधृतितश्चाष्टाष्टभिः सत्फलः
प्रोक्तोऽन्यैः फणिसप्तमाद्रविमितैस्तच्छेदनं वापभैः ॥६॥

मार्त्तण्डवल्लभा —

अथ कृषिविषयेलांगलचक्रमाह। त्रित्रीति। अर्कभुक्तात्सूर्यभुक्तनक्षत्रात् सकाशात् त्रित्र्यादिषुस्थानाष्टस्थितेषुनक्षत्रेषु असत्सदित्येतत्फलद्वयं भूयः वारंवारंस्यात्। एतदुक्तंभवति। सूर्यक्रांतनक्षत्रस्य आदिमान्नक्षत्रात्सकाशात् त्रिषु असत् दुष्टफलंस्यात्। तदनंतरं त्रिषुसत्शुभंस्यात्। ततस्त्रिषु असत ततः इषुषु पंचसुसत् ततोनलेषुत्रिषु असत् ततः अर्थेषु पंचसुसत् ततोरामेषु त्रिषु असत् ततोहुतभुक्षुत्रिषुसत्स्यादित्यर्थः। अथबीजोप्तिमाह। कृषिभैरिति। कृषिभैः कृषिनक्षत्रैः उद्वाहर्क्षचरद्विपेत्यादिभिर्बीजवापः शुभः प्रोक्तः। किंलक्षणैः कृषिभैः विवारुणहरीन्द्रैः वारुणंशततारकाहरिःश्रवण इंद्रोजेष्ठा विगताः वारुणहरीन्द्रायेभ्यस्तानितथातैःशततारकाश्रवणज्येष्ठारहितैरित्यर्थः। कृषिभैरित्युपलक्षणम् तस्मात्कृष्युक्तंसर्वतिथिवारादिकंज्ञेयम्। तथाचोक्तं—

मूषकानांभयंभौमेमंदेशलभकीटयोः ।
नवमेचतिथौरिक्तेहीनेसोमेविशेषतः ॥
वृषलग्नेथवा मीनेकन्यायांमिथुनेथवा ।
वापयेत्सर्वसस्यानियदीच्छेत्सस्यसंपदः" इत्यादि।

लग्नबलंप्राग्वत् । अथबीजवापविषयेद्विभेदंफणिचक्रमाह । सूर्यर्क्षादिति । सूर्ययुक्तनक्षत्रात्तृतीयं तस्मादतिधृतिरेकोनविंशम् तस्मात् अष्टाष्टभिः तृतीयादष्टभिः एकोनविंशादष्टभिर्नक्षत्रैर्बीजवापःसत्फलः । अथद्वितीयभेदमाह । अन्यैरिती । अन्यैराचार्यैः फणिसप्तमात् राहुसप्तमात्सकाशात् रविमितैर्द्वादशभिर्नक्षत्रैः बीजवापःशुभः प्रोक्तः । एतदुक्तंभवति । राहुर्यस्मिन्नक्षत्रेभवति तस्माद्यत्सप्तमंनक्षत्रंतत्फणिसप्तममुच्यते तस्मात्सकाशात्द्वादशभिरित्यर्थः । राहोस्तुफणीतिनामग्रंथांतरेप्रसिद्धम् । वराहमिहिराचार्येणराहुस्वरूपविकल्पाग्रंथान्तरोक्ता उद्घाटिताः स्वकृतसंहितायाम्—

अमृतास्वादविशेषाच्छिन्नमपिशिरःकिलासुरस्येदम्
प्राणैरपरित्यक्तंग्रहतांयातंवदंत्येके ।
इंद्वर्कमंडला तिरसितत्वात्किलनदृश्यतेगगने
अन्यत्रपर्वकालाद्वरप्रधानात्कमलयोनेः ।
मुखपुच्छविभक्तांगंभुजंगमाकारमुपदिशंत्यन्ये" इति ।

भुजंगमाकारकथनात्फणीत्यभिधानंप्रसिद्धम् । रत्नमालायामपि—

फणिभाद्बीजोप्तिकालेस्फुट" इति ।

तथाचागमांतरे—

राहुभादष्टमंयावद्बीजोप्तिपरिवर्जयेत्" इति ।

अथधान्यच्छेदनमाह । तच्छेदनंवापभैरिति । तेषांधान्यानांछेदनंतच्छेदनं वापभैःबीजवापनक्षत्रैःप्रोक्तम् । ननु—

'यस्यांगंयददोंगिनोगदितभेकुर्यात्'

इतिपुरैवोक्तं तत्कथंपुनरुक्तंतच्छेदनंवापभैरिति । सत्यम् । कृषिनक्षत्राणांबीजवापनक्षत्राणांचकश्चिद्भेदोस्तिद्वयोःकृष्यंगत्वात् । कैः कार्यमितिसंदेहनिवारणार्थंतच्छेदनंवापभैरित्युक्तम् ॥६॥

मार्त्तण्डप्रिया—

सूर्य के भुक्तनक्षत्र[1] से आगे के ३ नक्षत्र कृषिकार्य में (हल चलाना) में अशुभ ३ शुभ ३ अशुभ ५ शुभ ३ अशुभ ५ शुभ ३ अशुभ और ३ शुभ होते हैं।

लाङ्गलचक्र—

सूर्य के भुक्त नक्षत्र से—	१.२.३.	शुभ	७.८.९.	शुभ
	अशुभ	४.५.६.	अशुभ	१०.११.१२.१३.१४.
१५.१६.१७.	शुभ	२३.२४ २५.	शुभ	
अशुभ	१८.१९.२०.२१.२२.	अशुभ	२६.२७.२८.	

१. सूर्य जिस नक्षत्र पर हो उससे १ नक्षत्र पूर्व से गणना करनी चाहिए। इसमें २८ नक्षत्रो की गणना होती है।

बीजवपन—शत श्र. और ज्ये. इन ३ नक्षत्रों को छोड़कर कृषिकर्म के नक्षत्रों में बीजवपन शुभ होता है।

फणिचक्र—सूर्य नक्षत्र[1] से आगे के ३ नक्षत्र अशुभ, ८ शुभ, ८ अशुभ, और ८ शुभ होते हैं।

सूर्य नक्षत्र से— १.२.३ / अशुभ   शुभ / ४.५ ६.७.८.९.१०.११.

१२.१३ १४.१५.१६.१७ १८ १९ / अशुभ

अशुभ / २०.२१.२२.२३.२४.२५.२६.२७

किसी आचार्य के मत से राहु के नक्षत्र से ७वाँ जो नक्षत्र हो उससे १२ नक्षत्र तक बीजवपन शुभ होता है।

धान्यच्छेदन—बीजवपन के जो नक्षत्र हैं उन नक्षत्रों में ही पके हुये फसलों को काटना शुभ होता है ॥६॥

नवान्न भक्षण और नृत्य संगीत का मुहूर्त—

मेथिं क्षीरतरोरुफानुरहितैरुद्वाहभै रोपये-
दन्नप्राशनवद्वसंतशरदोः प्रोक्तं नवान्नं बुधैः।
मैत्रार्कान्त्यवसूत्तरेज्यवरुणैः सेन्द्रैः शुभं नर्तनं
लग्नेज्ञे गुरुवीक्षिते हिबुकगैःसौम्यैश्च संगीतकम् ॥७॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथनिष्पन्नेधान्येक्रमप्राप्तंमेथिरोपणंवृत्तचरणेनाह। मेथिम्इति। क्षीरतरोर्वटवृक्षादेर्मेथिमुद्वाहभैर्विवाहनक्षत्रैर्मूलांत्यार्कत्यादिभिरारोपयेत् निखनेत्। मेथिर्नामखलेधान्यमर्दनार्थंवृषपंक्तियोजनार्थंकाष्ठमारोप्यते मेथ्यंतेसंगम्यंतेवृषभा अस्मिन्नितिमेथिः--

पुंसि मेथिःखले दारु न्यस्तं यत्पशुबंधने"[2] इत्यमरः।

किलक्षणैरुद्वाहभैः उफानुरहितैः उफा उत्तराफाल्गुनी अनुः अनुराधाताभ्यांरहितैः। उक्तंच—

रेवतीरोहिणीमूलंस्वातीहस्तोमृगस्तथा
आषाढोत्तराहस्तश्चतथाभाद्रपदामता।

---

१. फणिचक्र में २७ नक्षत्रों की ही गणना होती है।
२. अमरकोशः—द्वि० का० वैश्यवर्ग १५॥ (पाठभेद "मेधिः")

बंधनेसर्वबीजानांतथाशालाप्रवेशने
दुःखदावनदाचैवानुराधोत्तरफाल्गुनी ।
वटश्चसप्तपर्णश्चगंभारीशाल्मलीतथा
औदुंबरीतथाधात्रीयाचान्याक्षीरवाहिनी ।
स्त्रीनाम्नीकर्षकैर्नित्यंमेथिः कार्यफलप्रदा" इति ।

अथनवधान्यप्रसंगेननवान्नकर्मद्वितीयचरणेनाह । अन्नप्राशनभैरिति । वसंतशरदोः ऋत्वो । अन्नप्राशनभैर्नवान्नंनवान्नकर्मबुधैः प्रोक्तम् । अन्नप्राशनभैरित्युपलक्षणं तस्मादन्नप्राशनोक्तंतिथिवारादिकमत्रग्राह्यं साग्निकस्यनवान्नकर्मणाविनाव्रीह्यादीनांनवनवमितानांधान्यानांभक्षणेदोषप्रसंगादावश्यकंकर्मैतत् । नवधान्यानीमानि—

व्रीहयो यवगोधूमानीवाराः कंगुवैणकाः
शालयोमुद्गमाषाश्चनवधान्यानिचक्रमात्" ।

एषांमध्येशरत्संभवानि धान्यानिव्रीह्याग्रयणेनविना न भक्षणीया निवसंतभवानियवाग्रयणेनविना न भक्षणीयानीतिनियमादिकर्मशरद्वसंतयोः क्रियत् इतियत्तत् अन्नप्राशनोदितैस्तिथिभादिभिः मासेषष्ठेष्टमेवेत्यत्रोक्तैर्नवान्नंकर्तव्यमित्यर्थः । अथोत्तरार्द्धेननृत्यसंगीतयोरारम्भमाह । मैत्रार्कान्त्येति । मैत्रमनुराधा अर्कोहस्तः अंत्यंरेवती वसवोधनिष्ठा उत्तरास्तिस्रःइज्यः पुष्यः वरुणः शततारका इंद्रोज्येष्ठा तैर्नर्तनमारभेत संगीतकंच आरभेत कस्मिन्सति लग्नेवर्तमानेज्ञेगुरुवीक्षितेसति कैः हिबुकगैःसौम्यैःचतुर्थस्थानस्थितैः सौम्यग्रहैः शेषंप्राग्वत् ।।७।।

मार्त्तण्डप्रिया—

उफा. और अनुराधा इन २ नक्षत्रों को छोड़कर विवाह के शेष ९ नक्षत्रों में दुग्धवाले वृक्षों (वट, पीपल, गूलर) का मेंह (मेंथ) गाड़ना शुभहोता है ।

नवान्नभक्षण—वसन्तऋतु और शरदृतु में अन्नप्राशन के नक्षत्रों में नवान्नभक्षण शुभ होता है । वसन्तऋतु में यव-गेहूँ-चना इत्यादि और शरदृतु में साठी-श्यामा इत्यादि अन्न होते हैं । इन ऋतुओं में इन नये अन्नों का भक्षण ही नवान्नभक्षण कहलाता है । इस नवान्नभक्षण में अन्नप्राशन के नक्षत्र हीं लिए जाते हैं ।

नृत्य संगीत—ज्ये. अनु. ह. रे. ध. उफा. उषा. उभा. पुष्य और शतभिषा इन १० नक्षत्रों में, बुध लग्न में रहे और उसपर गुरु की दृष्टि रहे तथा चतुर्थ में शुभग्रह रहे तो नृत्य और संगीत का प्रारम्भ करना शुभ होता है ।।७।।

पशुकर्म मुहूर्त—

द्वीशार्केन्द्वदितीज्यवासवशिवाश्व्यंत्याग्निपाशीन्द्रभैः

पूर्वाभिः शुभदा विसिंहभतनौ नानापशूनां क्रिया ।

वारेष्वर्कचतुर्षु कोत्तरहरित्वाष्ट्रेष्वमारिक्तयो-

रष्टम्यां न हितोदिता स्वभगभे न स्याद्भदोषः किल ॥८॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथनानापशूनांकर्मवृत्तेनैकेनाह । द्वीशेति । द्वीशंविशाखा अर्कोहस्तः इंदुर्मृगः अदितिः पुनर्वसुः इज्यःपुष्यः वासवोधनिष्ठा शिवः आर्द्रा अश्विनी प्रसिद्धा अंत्यंरेवती अग्निःकृत्तिका पाशीशततारका इंद्रोज्येष्ठा तैः पूर्वाभिस्तिसृभिः विसिंहभतनौ विगतः सिंहोयेभ्यस्तानिविसिंहानितानिचतानिभानि विसिंहभानि सिंहरहितराशयस्तेषांतनुःलग्नंतस्मिन् नानापशूनांक्रियाशुभदा उदिता पशूनांक्रयविक्रयादिकर्म शुभदंप्रोक्तमित्यर्थः । अथोत्तरार्धेनवर्ज्यमाह । अर्कचतुर्षु वारेषु रविचंद्रभौमबुधवारेषु कोत्तरहरित्वाष्ट्रेषु कःरोहिणी उत्तरास्तिस्रः आसांसमाहारः कोत्तरंहरिः श्रवणः त्वाष्ट्रंचित्रा एषु अमातिरिक्तयोः अमा अमावास्या रिक्ताचतुर्थीनवमीचतुर्दशीनामन्यतमा तयोः अष्टमीप्रसिद्धा तस्यांनानापशूनांक्रियाहिता न उदिता : अपवादमाह । स्वभगभेसतिभदोषोनक्षत्रदोषः क्वचित्पशुकर्मणिनस्यात् लग्नबलंप्राग्वत् । उक्तंच—

द्वयादित्यद्विवसुद्वयांत्यकेन्द्रद्वीशैः क्रयादिगोः
दर्शभूताष्टमीचित्राध्रुवकर्णैर्गमाद्यसत् ।
सोमार्कवैधृतौपातेलग्ने पंचाननेबुधे
भद्रासंक्रांतिरिक्तासुपशुकर्मविवर्जयेत् ।
शुभग्रहोदयेशुद्धनैधनेस्वर्क्षयोनिषु
रक्षावृद्धिक्रियाशस्तापशूनांमुनिभिः स्मृता" इति ।

तथाचागमांतरे--

सोमेभौमेबुधे गावोनचाल्यास्तुरगाः शनौ" इति ।

अन्यच्च —

पूर्वात्रयामृतमयूखहुताशनेषुशक्राग्निवाजिवसुवारुणशांकरेषु ।
एतेषुगोमहिषदंतितुरंगमादिनानाप्रकारपशुजातिगतिःप्रशस्ता" इति॥८॥

मार्त्तण्डप्रिया—

वि. ह. मृ. पुन. पुष्य. ध. आ. अश्वि. रे. कृ. श. ज्ये. पूफा. पूषा. और पूभा. इन १५ नक्षत्रों में, सिंह लग्न को छोड़कर अन्य लग्नों में, पशुओं के सभी कार्य (क्रय-विक्रय-शिक्षा आदि) शुभ होते हैं ।

त्याज्य—रवि-सोम-मंगल-बुधवार, रो. उफा. उषा. उभा. श्र. और चित्रा नक्षत्र तथा अमा (३०) रिक्ता (४–९–१४) और अष्टमी तिथि, ये सब पशुकर्म में निन्दित होते हैं। यदि निन्दित नक्षत्र भी पशु का योनिनक्षत्र[1] हो तो उसमें दोष नही लगता है। स्वयोनि का निन्द्य नक्षत्र भी पशुकर्म में शुभ होता है ॥८॥

अश्वकर्म मुहुर्त—

द्व्यादित्यद्विवसुस्थिराश्विभमृदुस्वात्यर्कभौर्ज्ञत्रया-
र्क्राह्नीज्यभृगूदये द्विकमदेष्विन्दौ क्रियाऽऽश्वी हिता ।
तत्राप्यर्कभतः क्रमातिथिमितैः पश्चात्त्रिभिः साभिजि-
च्छस्ता या नृसमा तदुक्तभमुखैः कार्या परैर्भिर्बुधैः ॥९॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथाश्वकर्मवृत्तेनाह। द्व्यादित्येति। द्व्यादित्यंपुनर्वसुपुष्यौ द्विवसुधनिष्ठाशततारके स्थिराणिप्रसिद्धानि अश्विनीप्रसिद्धा मृदूनिप्रसिद्धानि स्वाती प्रसिद्धा अर्कोहस्तः तैः ज्ञत्रयार्काराह्निज्ञत्रयंबुधगुरुशुक्राः अर्कः सूर्यः आरो-भौमः एषामहः दिनं तस्मिन् इज्यभृगूदये उदयेलग्ने इज्यभृगू इति इज्यभृगूदयः तस्मिन् गुरुशुक्रयुतेलग्ने इत्यर्थः। द्विकमदेषु इन्दौ द्विद्वितीयं कचतुर्थं मदः सप्तमम् एषुचंद्रेसतीत्यर्थः आश्वीक्रिया क्रयविक्रयादिकीहिताशुभकर्त्रीस्यात्। अथाश्वचक्रमाह। तत्रापीति। तत्रापि द्वयादित्यादिषु नक्षत्रेषु सत्स्वपि अर्कभतः सूर्य नक्षत्रात्सकाशात् क्रमात्तिथिमितैर्नक्षत्रैः पश्चादुत्क्रमतस्त्रिभिर्नक्षत्रैः साभिजित्यथातथा अश्विनीकियाशस्ताशोभनास्यात्। एवं सामान्यतोश्वकर्मोक्त्वेदानीविशेषमाह। येति। या आश्वीक्रियानृसमामनुष्यसदृशीसाक्रियातदुक्तभमुखःकार्या तस्मैमनुष्याय उक्तानिभमुखानिनक्षत्रादीनितैः कार्येत्यर्थः। परायानृसमाना भवति सा एभिः सामान्यैर्द्व्यादित्यादिभिर्बुधैः कार्येत्यर्थः। लग्नबलंप्राग्वत्। तथाचनारदः—

"विविष्णु चरभे क्षिप्रे स्थिरभे मृदुभेषु च
वाजिकर्माखिलं सूर्यवारे कार्यं विशेषतः[2]" इत्यादि ॥

तथाचोक्तं—

"घृतान्नचणकक्षीरतृणमुद्गादिभक्षणे
अन्नप्राशनवद्दक्षंस्नानंसौम्यग्रहोदये।

---

१. विवाह प्रकरण श्लो ३।

२. नारद संहिता—अ० ६ श्लो० ३७।

चौलोक्तंक्षुरकर्मादौभेषजेभेषजोदितम्
गर्भाधानोक्तमश्वानांमैथुनेतुविलोकयेत् ।
गृहारंभोदितेकालेहयशालाविधीयते
शिक्षाविद्योक्तकालेचभूषणंभूषणोदिते ।
चर्मकर्मादिकं कार्यंजययोगेशुभोदये
एवंखरोष्ट्रादिकंकार्यंपूर्वाह्णेवाहनादिकम्" इति ॥९॥

मार्त्तण्डप्रिया—

पुन. पुष्य. ध. श. स्थिरसंज्ञक (उफा. उषा. उभा. रो.) अश्विनी, मृदुसंज्ञक (मृ. रे. चि. अनु.) स्वाती और हस्त इन १५ नक्षत्रों में, बुध-गुरु-शुक्र-रवि और मंगल इन वारों में,गुरु-शुक्र के उदित रहने पर, और अपनी राशि से २-४-७ स्थानों में चन्द्रमा रहे तो अश्व सम्बन्धी कार्य (क्रय-विक्रय-पालन-शिक्षा आदि) शुभ होते हैं।

नक्षत्र शुद्धि—सूर्य के नक्षत्र[1] से आगे के १५ नक्षत्र और पीछे के ३ नक्षत्र अश्वकार्य में शुभ होते हैं। शेष १० अशुभ होते हैं।

अश्वों के जो कार्य मनुष्यों के समान होते हैं जैसे दुग्धपान, अन्नभक्षण, स्नान; मैथुन आदि उसे मनुष्यों के लिए जो कथित हैं उन नक्षत्रों में ही करना चाहिए ॥९॥

तैलमर्दन में वर्ज्य और ग्राह्य समय—

भद्रासंक्रमपातवैधृतिसितेज्यार्कारषष्ठ्यादिषु
श्राद्धाहे प्रतिपद्द्वये परिहरेद्धेतुं विनाभ्यंजनम् ।
मांगल्यं विजयोत्सवोऽब्दवदनं दीपावली हेतवो-
ऽभ्यंगस्थ क्वथितादितैलमनसन्निन्द्येऽह्नि नित्येऽखिलम्॥१०॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथाभ्यंगनिषिद्धकालमाह। भद्रेति। भद्राप्रसिद्धा संक्रमः संक्रान्तिः पातोव्यतीपातः वैधृतिः प्रसिद्धा सितः शुक्रवारः इज्योगुरुवारः अर्कोरविवारः आरोभौमवासरः षष्ठ्यादयः सर्वास्तिथयः ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२, १३, १४, १५, ३० तासुश्राद्धाहः श्राद्धदिनं प्रतिपद्द्वयं प्रतिपद्द्वितीये तस्मिन् हेतुं-कारणंविना अभ्यंजनमभ्यंगं परिहरेत्। कारणेसति अवश्यंचरेदित्यर्था-त्सिद्धम्। तथाचोक्तं—

---

१. २८ नक्षत्रों की गणना।

सप्तम्यांनस्पृशेत्तैलं नवम्यांप्रतिपत्तिथौ
चतुर्दश्यामथाष्टम्यांषष्ठ्यांचैवविशेषतः" इति ।

ग्रंथांतरे—

चतुर्दश्यष्टमीचैवपौर्णमास्यर्कसंक्रमः
तैलस्नानंनकुर्वीतसुतबंधुधनक्षयात्" इति ।

तथाचवृद्धमनुः—

दर्शेस्नानंनकुर्वीतमातापित्रोस्तुजीविनोः
नवम्यांचनचेत्तत्रनिमित्तांतरसंभवः ।
प्रतिपद्यनपत्यःस्याद्द्वितीयायामपत्निकः
दशम्यामधनःस्नानेसर्वंहंतित्रयोदशी" इति ।

रत्नमालायां—

रविस्तापंकांतिवितरतिशशिर्भूमितनयो-
मृतिंलक्ष्मींचांद्रिःसुरपदिगुरुर्वित्तहरणम् ।
विपत्तिंदैत्यानांगुरुरखिलभोगानुभवनं-
नृणांतैलाभ्यंगात्सपदिकुरुतेसूर्यतनये" इति ।

अथाभ्यंगहेतूनाह । मांगल्यंविवाहादि विजयोत्सव आश्विनशुक्लदशम्यां क्रियते अब्दवदनंसंवत्सरप्रतिपत् दीपावलिःप्रसिद्धा एतेभ्यंगस्य हेतवः कारणानि एषुनिषिद्धतिथ्यादावपि अभ्यंगःकर्तव्यः । तथाचोक्तंव्यवहारसारे—

वत्सरादौवसंतादौसूतकांतेमहोत्सवे
दीपोत्सवचतुर्दश्यामभ्यंगनियमोनच" इति ।

तथाचोक्तंस्कांदेविजयादशमीविषयं—

निषिद्धमपिकर्तव्यंतैलाभ्यंजनमादरात्" इति ।

अथाभ्यंगनिषिद्धापवादमाह । क्वथितादीति । निन्द्येह्निक्वथितादितैलमनसच्छुभंस्यात् । आदिग्रहणात्सार्षपसुगंधपुष्पवासितादितैलंगृह्यते । एवंक्वथितादितैलंनिंद्यदिनेपिशुभमित्यर्थः । उक्तंच—

सार्षपंगंधतैलंचयत्तैलं पुष्पवासितम्
द्रव्यांतरयुतंवापिनदुष्यतिकदाचन ।
सूर्यशुक्रारवारेषुनिषिद्धासुतिथिष्वपि
कर्त्तव्येयदिवास्नानेपक्वतैलंनदुष्यति ।
रवौपुष्पंगुरौदूर्वाभौमवारेचमृत्तिका
भार्गवेगोमयंक्षिप्त्वातैलस्नानंसुखावहम्" इति ।

अथनित्याऽभ्यंगेविशेषमाह। नित्येखिलमिति। नित्येऽभ्यंगे अखिलंतैलं-तत्त्वादिकमनसत्शुभंस्यात्। उक्तंच नित्यस्नाने चकर्तव्ये तिथिदोषो न विद्यते ।।१०।।

मार्त्तण्डप्रिया--

भद्रा-संक्रान्ति-व्यतीपात-वैधृति में, शुक्र-गुरु-रवि-मंगल वारों में, ६-७-८-९-१०-११-१२-१३-१४-१५ इन तिथियों में, माता-पिता के श्राद्ध दिन में तथा प्रतिपदा और द्वितीया तिथि में तैल लगाना वर्जित है। यदि आवश्यक हो (उत्सव या रोगादि में) तो उसमें दोष नहीं लगता।

तैल लगाने में आवश्यक समय—

यज्ञोपवीत-विवाहादि माङ्गलिक कार्यों में, विजयादशमी-वर्षारम्भ और दीपावली, इनमें अवश्य तैल लगाना चाहिए। इन दिनों में निन्दित वार रहने पर भी दोष नहीं लगता। सुगन्धित तैल निन्दित वार को भी लगाने पर दोष नहीं लगता। जो प्रतिदिन तैल लगाता है उसे भी दोष नहीं लगता है ।।१०।।

आँवला स्नान में निषेध-प्रसूति स्नान--

दिग्विश्वाद्रिदृगंकदर्शतिथिषु स्नानं न धात्रीफलैः
श्रीकामोऽथ बुधांबुपर्क्षपितृभाभ्यंगात्पतिघ्न्यंगना।
पुत्री सोमदिने प्रसूर्यमपितृत्वाष्ट्रेन्द्रमिश्रांबुप
कव्यादेश्वरभे कुपुत्रहरिजे स्नायान्निशास्येऽपि न ।।११।।

मार्तण्डवल्लभा—

अथप्रसंगेनतिलामलकस्नानेनिषिद्धतिथीनाह। दिगिति। दिक्दशमी विश्वेत्रयोदशी अद्रिःसप्तमी दृक्द्वितीया अंकोनवमी दर्शो अमावास्या एतासु-तिथिषु श्रीकामः धात्रीफलैः आमलकीफलैः स्नाननाचरेत्। तथाचोक्तं—

यः करोतिदशम्यांचस्नानमामलकैः सह
पुत्रहानिर्भवेत्तस्यत्रयोदश्यांधनक्षयः ।
अर्थपुत्रक्षयस्तस्यद्वितीयायां नसंशयः
अमायांचनवम्यांचसप्तम्यांचकुलक्षयः" इति।

अथस्त्रीणांबुधादिषु अभ्यंगनिषेधमाह। बुधोबुधवारः अंबुपर्क्षशततारका पितृभंमघा तेषु अभ्यंगस्तस्मात् अंगनास्त्रीपतिघ्नीस्यात्। उक्तांच—

स्नानंकुर्वंतियानार्यश्चंद्रेशतभिषग्गते
सप्तजन्मभवेयुस्ताविधवादुर्भगाध्रुवम्" इति।

त्रिविक्रमशते—

स्नानंनारार्कशुक्रेज्यविष्टिसंक्रांतिपर्वसु
द्वयष्टषड्दिक्त्रयोदश्यांस्त्रियस्तुनमघाबुधैः" इति ।

अथपुत्रवतः सोमवारेभ्यंगनिषेधमाह । पुत्रीति । पुत्रवान्सोमवारे-नस्नायात् । उक्तांच--

पुत्रवान्स्वगृहेनित्यंनस्नायादुत्तरामुखः
सोमवारे तथाभ्यंगंवर्जयेत्सर्वथाबुधः" इति ।

अथ प्रसंगेनप्रसूतिकास्नानेनिषेधकालमाह प्रसूरिति । यमो भरणी पितरोमघा त्वाष्ट्रं चित्रा इंद्रोज्येष्ठा मिश्रे कृत्तिकाविशाखे अंबुपःशततारा क्रव्यादोमूलम् ईश्वरभमार्द्रा एषांसमाहारस्तस्मिन् । कुपुत्रहरिजे कुत्सितः पुत्रः पुत्रभावोयस्यतत्कुपुत्रंतच्चतद्धरिजंचतस्मिन् यस्माल्लग्नात्पंचमस्थः पापग्रहो भवतितस्मिन्नित्यर्थः निशास्यंरात्रिमुखंसायंकालस्तस्मिन् प्रसूता नस्नायात् । शेषंलग्नबलंप्राग्वत् । उक्तांच—

मघामूलविशाखार्द्राचित्रादितियमद्वये
ज्येष्ठासार्पजलेशर्क्षेनैव स्नायात्प्रसूतिका ।
शुभग्रहयुतेलग्नेपंचमेपापवर्जिते
परित्यज्यमहादोषान्सूतिकास्नानमाचरेत्" इति ॥११॥

मार्त्तण्डप्रिया--

श्रीवृद्धि चाहने वाले मनुष्य को १०-१३ ७-२-९ इन तिथियों में आँवला लगाकर स्नान नहीं करना चाहिए। सौभाग्यवती स्त्री को बुधवार तथा शतभिषा नक्षत्र में तैलमर्दन व उबटनमर्दन नहीं करना चाहिए। अन्यथा करने पर पति का अनिष्ट होता है। पुत्रवान व्यक्ति को सोमवार को तैलमर्दन नहीं करना चाहिए।

प्रसूति का स्नान—भ. म. चि. ज्ये. वि. कृ. श. मू. आ. इन नौ नक्षत्रों में, तथा जिस लग्न के पञ्चम में पापग्रह हों उस लग्न में और संध्याकाल में प्रसूतिस्नान वर्जित है। इससे बाकी के नक्षत्रों और लग्नों में प्रसूति स्नान शुभद होता है ॥११॥

वैद्यक कर्म--

मंदारान्यदिने मृदुध्रुवचरक्षिप्रैर्बलक्षे सुधा
योगे भेषजमाचरेत्सुमृतिकेन्द्रारिव्ययांगे भिषक् ।
तद्द्यादिह विधुवेन्दुतनयप्रद्योतने रोगिणे-
ऽसृक्स्रावव्रणकर्म सूर्यकुजयोरह्नीह केन्द्रस्थयोः ॥१२॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथौषधनिष्पादनमाह। मंदेति। मंदः शनिः आरोभौमः ताभ्यामन्ये रविचन्द्रबुधगुरुशुक्रास्तेषांदिनंतस्मिन् मृदुध्रुवचरक्षिप्रैर्नक्षत्रैः वलक्षेशुक्लपक्षे सुधायोगेअमृतयोगे ग्रंथातरप्रसिद्धे। सुमृति केन्द्रारिव्ययांगेशोभनानिपापग्रह-रहितानिमृतिकेन्द्रारिव्ययानियस्य तत्सुमृतिकेन्द्रारिव्ययंतच्चतत् अंगंचतस्मिन् भिषक्वैद्यः भेषजमाचरेत्कुर्यात्। शेषं लग्नबलंप्राग्वत्। अथौषधदानमाह। तदिति। तदौषधमिहानन्तरोक्तेभादौदद्यात्। कथंभूते इह विध्रुवेन्दुतनय-प्रद्योतनेध्रुवनक्षत्रबुधरविरहिते। अथरक्तस्रावव्रणयोर्विशेषमाह असृक्स्रावो-रक्तस्रावः व्रण क्षतम् अनयोःकर्मसूर्यकुजयोरह्निदिवसे आचरेत् कयोः सतोः इहानयोः सूर्यकुजयोः केन्द्रस्थयोःसतो। तथाचोक्तं —

"मंदारवर्जितेवारेचरक्षिप्रमृदुध्रुवैः
सूर्यसौम्यैःकेन्द्रगतैर्भैषजोत्पादनंहितम्।
रक्तस्रावंकुजेकुर्यात्तद्धोरायामथापिवा
कुजेकेन्द्रेऽथवामंदेरवौवाविखलेष्टमे।
व्रणक्रियाकुजेसूर्येकेन्द्रगेतद्दिनेऽष्टमे
शुद्धेषष्ठेचसक्रूरेचरलग्नेयुवस्वरे" इति ॥१२॥

मार्त्तण्डप्रिया—

औषधि निर्माण—शनि-मंगल को छोड़ अन्य वारों में, मृदुसंज्ञक (मृ. रे. चि. अनु.), ध्रुवसंज्ञक (उफा. उषा. उभा. रो.), चर संज्ञक (स्वा. पुन. श्र. ध. श.) क्षिप्रसंज्ञक (ह अश्वि. पुष्य) इन १६ नक्षत्रों में, शुक्लपक्ष में, अमृतयोग में, और जिस लग्न के ८-१-४-७-१०-६-१२ वें स्थानों में पापग्रह नहीं हों उस लग्न में औषधि निर्माण करना लाभप्रद होता है।

औषधि सेवन—उफा. उषा. उभा. रो. (ध्रुवसंज्ञक) नक्षत्र और बुधवार रविवार को छोड़कर औषधि निर्माण के अन्य मुहूर्तों में औषधि सेवन करना या कराना आरोग्यप्रद होता है।

आपरेशन—रविवार और मंगलवार को जिस लग्न के केन्द्र (१-४-७-१०) स्थान में सूर्य-मंगल रहें उस लग्न में आपरेशन करना या घाव आदि चिरवाना शुभ होता है ॥१२॥

रोगावधि-रोगविमुक्तस्नान—

यास्याहित्रयवायुमूलजलपो पांत्येन्द्रहस्तांबुभे
शांत्याजद्विपयोर्नृपैर्नवदिनैरन्यत्र रुग्णो विरुक्।
आदित्याह्यनिल ध्रुवांत्यपितृभे शुक्रेन्दुवारेगद-
त्यक्तस्नानमनिष्टमिष्टमशुभे भादौ खलास्तस्थिरे ॥१३॥

मार्त्तण्डवल्लभा --

अथप्रसंगेनरोगमुक्तिदिवसानाहवृत्तार्द्धेन। याम्यमिति। याम्यंभरणी अहित्रयम् आश्लेषात्रयं वायुः स्वाती मूलंप्रसिद्धं जलपः शततारका उपांत्यमुत्तराभाद्रपदा इन्द्रोज्येष्ठा हस्तः प्रसिद्धः अंबुभंपूर्वाषाढा अस्मिन्नक्षत्रगणे रुग्णः रोगीशांत्यायथोक्तशांतिकेनविरुक्ज्वरमुक्तोभवति। अजद्विपयोः श्रवणविशाखयोः रुग्णःनृपैः षोडशभिर्दिनैः विरुक्स्यात्। अन्यत्र अन्येषु नक्षत्रेषु रुग्णोनवदिनैर्विरुक्भवति। एतज्ज्यौतिषार्काभिप्रायांकिंचिद्रत्नकोशाभिप्रायमुक्तम्। तत्रयेषुनक्षत्रेषुज्वरितस्य मृत्युरुक्तःयेषुचकृच्छ्रेणबहुभिर्दिनैर्ज्वरमुक्तिरुक्ता तत्फलमत्रशांत्याविरुगित्युक्तम्। कचिदन्यथाफलदर्शनात्। तथायेषुयेषुनक्षत्रेषुसप्तभिरेकादशभिर्दिनैर्ज्वरनिर्मोचनमुक्तम् तत्फलमत्रमध्यमत्वेननवदिनैर्विरुगित्युक्तम्। ग्रंथलाघवाय स्वल्पांतरत्वात्। तथाचज्यौतिषार्के—

"सप्ताहमृतिनंदाद्रिरुद्रमृत्युनागाद्रिभिः
कृच्छ्रे मृत्यूमृतीशैश्चकृच्छ्रे शव्यसुतानृपैः" इत्यादि॥

अथोत्तरार्द्धेनरोगमुक्तिस्नानमाह। आदित्येति। आदित्यंपुनर्वसुः अहिराश्लेषा अनिलः स्वाती ध्रुवाणिपूर्वोक्तानि अंत्यं रेवती पितृभंमघा अस्मिन्नक्षत्रगणे शुक्रेन्दुवारेशुक्रसोमवारेगदत्यक्तस्नानंरोगमुक्तस्नानमनिष्टंस्यात्। तर्हिकुत्रकर्तव्यमित्यत आह। अशुभेभादौइष्टंशुभंस्यात्। कस्मिन्सति खलास्तस्थिरेसति खलः पापग्रहः अस्तेयस्यतत्तथातच्चतत्स्थिरंचतस्मिन् स्थिरलग्नेपापेसप्तमेसतीत्यर्थः। तथाचोक्तं--

"वैधृतौचव्यतीपातेभद्रायांधिष्ण्यसंक्रमे
रोगमुक्तोनरःस्नायात्कुवारर्क्षतिथिष्वपि।
द्यूनंपापयुतंशस्तंदशमंचशुभान्वितम्
सौम्यक्रूरयुतंरंध्रंरोगस्नानेरिभंतथा" इति॥

चन्द्रबलंसर्वत्रयोज्यम्। कुतिथिभादौसदित्यनेनचन्द्रादिबलविषयेमोहोमाभूदित्यतश्चन्द्रबलंसूचितम्। यतः ग्रन्थादौगर्भाधानेसदा इत्युक्तं तत्सर्वकर्मसुज्ञेयमितिसर्वग्रन्थकारसंमतम्। तथाचोक्तंसंहितायांस्पष्टं "स्नायाद्रोगविमुक्तस्तुशुभयोश्चन्द्रतारयोः" इति॥१३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

भ. श्ले. म. पूफा. स्वा. मू, श. उभा. ज्ये. ह. और पूषा इन ११ नक्षत्रों में यदि रोग उत्पन्न हुआ हो तो वह शान्ति (जप-पाठ-दानादि) कराने से ठीक होता है। श्र. वि. इन दो नक्षत्रों में रोग उत्पन्न हो तो १६ दिनों के बाद में ठीक होता है। बाकी के नक्षत्रों (१४ नक्षत्रों) में रोग उत्पन्न होने पर ९ दिनों में ठीक होता है।

रोगविमुक्त स्नान—पुन. श्ले. स्वा. ध्रुव संज्ञक (उफा. उषा. उभा. रो) रे. और मघा इन ९ नक्षत्रों में तथा शुक्रवार और सोमवार को रोगविमुक्त स्नान नहीं कराना चाहिए। अशुभवार-अशुभतिथि-अशुभनक्षत्रों में और जिस स्थिर लग्न के सप्तमस्थान में पापग्रह हों उस स्थिरलग्न में रोगविमुक्तस्नान शुभकर होता है ॥१३॥

ऋण व्यवहार मुहूर्त्त--

द्रव्यंसंव्यवहारतो लघुचरैर्योज्यं चरांगे बुधे
धर्माष्टात्मजगेऽथ तस्य हरणे हस्तो रविज्ञः कुजः।
संक्रांतिर्भरणी त्रिपुष्करयमौ कुंभांत्ययोश्चन्द्रमा
वृद्धिश्चेति शुभा विदून इह यत्कुर्यादृणं तत्स्थिरम् ॥१४॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथव्यवहारद्रव्यं वृत्तेनैकेनाह। द्रव्यमिति। द्रव्यंसुवर्णादि संव्यवहारतः कुसीदव्यवहारेण लघुचरैर्नक्षत्रैर्योज्यं देयमित्यर्थः। क्व चरांगेचरलग्ने। कस्मिन्सति बुधेधर्माष्टात्मजगेसति धर्मोनवमम् अष्टमंप्रसिद्धम आत्मजः पंचमम् एष्वन्यतमस्थानगतेसतीत्यर्थः। अन्यत्पूर्वोक्तंज्ञेयम् अथानंतरंतस्यप्रयुक्तस्य हरणंपुनर्ग्रहणंतस्मिन्विषये। हस्तोनक्षत्रं रविः रविवारः ज्ञोबुधवारः कुजोभौमवारः संक्रांतिः सूर्यसंक्रमणदिनं भरणीप्रसिद्धा त्रिपुष्करोयोगः यमोयमलयोगः त्रिपुष्करयमलयोगौग्रन्थांतरेप्रसिद्धौ। रत्नमालायाम्—

"विषमचरणंधिष्ण्यंभद्रातिथिर्यदिसंस्पृशेत्सुर-
गुरुशनिक्ष्मापुत्राणांकथंचनवासरे ।
मुनिभिरुदितः सोयंयोगस्त्रिपुष्करसंज्ञकः" इत्यादि ॥

कुंभांत्ययोश्चंद्रमाः धनिष्ठापंचकं वृद्धिवृद्धियोगोपिशुभः हस्तादयोत्रस्वकीयद्रव्यग्रहणेशुभाः विदूनेबुधदिनंविना इहहस्तादौयदृणंकुर्यात्तत्स्थिरंस्यात्। तथाचोक्तं--

"चरैः क्षिप्रैश्चरेलग्नेबुधेधर्मसुताष्टमे
व्यवहारंविनाद्रव्यप्रयोगोमुनिभिः स्मृतः।
भरण्यांसंग्रहंकुर्यात्पंचकेज्ञेत्रिपुष्करे
ऋणकर्मचरैः क्षिप्रैर्ऋणच्छेदः कुजेहितः।
पंचकेपंचगुणितंत्रिगुणंचत्रिपुष्करे
यमलेद्विगुणंप्रोक्तंहानिवृद्धयादिकंबुधैः ।
ऋणंभौमेनकुर्वीतनदेयंबुधवासरे
ऋणच्छेदंकुजेकुर्यात् संचयंसोमनंदने ।

हस्तार्कवारेसंक्रान्तौयदृणंस्यात्कुलेषुतत्
वृद्धियोगेतथाज्ञेयमृणच्छेदंतुकारयेत्" इति ॥१४॥

मार्त्तण्डप्रिया--

लघुसंज्ञक (ह. अश्वि. पुष्य.) चरसंज्ञक (स्वा. पुन. श्र. ध.श.) नक्षत्रों में, चर लग्नों (मे. क. तु. म.) में, जब बुध नवम-अष्टम या पंचम स्थान में रहे तो वृद्धि की (ब्याजकी) कामना से द्रव्य को देना चाहिए।

द्रव्य वापस लेने में हस्त नक्षत्र, सूर्य-बुध-भौम वार, संक्रान्ति दिन, भरणी नक्षत्र, त्रिपुष्कर-द्विपुष्कर[1] योग, कुम्भ-मीन राशि का चन्द्रमा (पंचक) और वृद्धि योग, ये सब प्रशस्त होते हैं।

बुधवार को छोड़कर अन्य (पूर्वोक्त) वार नक्षत्रादिकों में लिया गया ऋण चुकता नहीं हो पाता स्थिर हो जाता है अतः ऋण लेना हो तो बुधवार[2] को ही लेना चाहिए ॥१४॥

नष्ट द्रव्यप्राप्ति-द्रव्यसंग्रह-मन्त्रग्रहण-वृक्षारोपण—

तीक्ष्णोग्रध्रुवमिश्रवायुषु धनं नष्टादिकं नैतिकाद्-
भेऽब्ध्याप्ते त्रिखशेषयोर्नगतमेत्यन्त्याम्बुशुद्धौ क्षिपेत् ।
विद्यां प्रोक्तवदिष्टदेवतिथिभेऽथ द्वीशमूलध्रुवं
मृद्वश्वीज्यकरांबुपैःसुजलखाब्जांगे तरुन् रोपयेत् ॥१५॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथतीक्ष्णादिषुनष्टादिद्रव्यस्यप्राप्तितथाद्रव्यनिक्षेपंवृत्तार्द्धेनाह। तीक्ष्णेति। तीक्ष्णोग्रध्रुवमिश्राणिपूर्वोक्तानि वायुःस्वाती एषुनष्टादिकंधनंनष्टप्रयुक्तविनिक्षिप्तादिकंसुवर्णादिकंद्रव्यंनैति। तथाकात्रोहिणीनक्षत्रात् भे इष्टनक्षत्रेऽब्ध्याप्तेचतुर्भक्तेसतित्रिखशेषयोः गतंन एति। अथद्रव्यनिक्षेपमाह अंत्यांबुशुद्धौक्षिपेत् धनमित्यनुषंगः अंत्यंद्वादशम् अंबुचतुर्थम् अनयोः शुद्धिः पापराहित्यं तस्यांसत्यांक्षिपेत् निक्षिपेदित्यर्थः। तथाचोक्तं —

"साधारणोग्रतीक्ष्णेषुस्वात्यांद्रव्यंनलभ्यते
दत्तंप्रयुक्तंनिक्षिप्तंनष्टमित्याहनारदः"।

---

१. त्रिपुष्कर—रवि-भौम-शनिवार, २-७-१२ तिथि और वि. उफा. पूभा. पुन. कृ. उषा. नक्षत्र इन वार तिथि और नक्षत्रों का जब योग हो। द्विपुष्कर-रवि-भौम-शनि वार, १-७-१२ तिथि और ध. चि. मृ. नक्षत्र इनका जब योग हो।

२. "न च बुधे देयं कदाचित् धनम्" बुधवार को किसी को ऋण नहीं देना चाहिए। ऐसा मुहूर्त्तचिन्तामणि में भी लिखा है।

अथनृसिंहादिमन्त्रविद्यासाधनमुहूर्तंतथावृक्षारोपणमुहूर्तमुत्तरार्द्धेनाह । विद्यामिति । विद्यांमन्त्रविद्यां प्रोक्तवत्वेदविद्योक्तभादौ विद्यांमौञ्ज्युक्तभादौ इत्याद्युक्तेः । तथाइष्टस्वदेवतिथिभेस्वेष्टदेवतिथिनक्षत्रेसाधयेत् गुरुमुखात्गृह्णीयादित्यर्थः तत्र आगमोक्तमंत्रग्रहणे अनध्यायदोषोनास्ति । तत्तुस्वदेवंतिथिभे इत्यनेनैवपदेनपरिहृतम् । तथाचोक्तं—

"मृदुध्रुवचरक्षिप्रैर्वाराकौं धर्मसत्क्रिया ।
कार्याविद्योक्तभैर्दीक्षास्वदेवतिथिभेषुच" इति ।

अथवृक्षारोपणमाह । द्वीशंविशाखा मूलंप्रसिद्धं ध्रुवमृदूनि पूर्वोक्तानि अश्विनीप्रसिद्धा इज्यःपुष्यः करोहस्तः अंबुपःशततारा एभिर्नक्षत्रैः तरून्पादपान्रोपयेत्। कस्मिन् सुजलखाब्जांगे अंगेऽब्जः अब्जांगम् अंगंलग्नंतस्मिन्नब्जः जलचरराशिश्चन्द्रोवातदब्जांगमुच्यते । जलंचखंचजलखे शोभनेजलखेयस्यतत्सुजलखं तच्चतत् अब्जांगंचसुजलखाब्जांगंतस्मिन् शोभनेपापग्रहरहितेः जलखेचतुर्थदशमेयस्याब्जांगस्यतस्मिन्नित्यर्थः । शेषंपूर्ववत् ॥१५॥

मार्त्तण्डप्रिया—

तीक्ष्णसंज्ञक (मू. ज्ये. आ. श्ले.) उग्र संज्ञक (पूफा. पूषा. पूभा. भ म) ध्रुवसंज्ञक (उफा. उषा. उभा. रो.) मिश्रसंज्ञक (वि. कृ.) और स्वाती इन १६ नक्षत्रों में यदि धनापहरण (भूलना-चोरी होना) हो जाय तो प्राप्त नहीं होता है।

रोहिणी नक्षत्र से धनापहरण के नक्षत्र तक गिनकर ४ से भाग देने पर यदि ३ या ० शेष बचे तो वस्तु या धन की प्राप्ति नहीं होती है।

निक्षेप—जिस लग्न का १२-४ स्थान पापग्रह से रहित हो उस लग्न में द्रव्य को भूमि में गाड़ कर[1] रखना शुभ होता है।

मन्त्रग्रहण—जिस देवता का मन्त्र ग्रहण करना हो तो उसी के तिथि नक्षत्र में और विद्यारम्भ के मुहूर्त्त में गुरु के मुख से उस देव (इष्टदेव) का मन्त्र ग्रहण करना चाहिए।

वृक्षारोपण—वि. मू. ध्रुवसंज्ञक (उफा. उषा. उभा. रो.) मृदुसंज्ञक (मृ. रे. चि. अनु.), अश्वि. पुष्य. ह. और शतभिषा-इन १४ नक्षत्रों में एवं जलचर लग्नों (क.म.कु मी.) में से जिसका ४-१० स्थान पाप रहित हो उसमें वृक्षारोपण शुभ होता है ॥१५॥

१--अब द्रव्य को भूमि में गाड़ने की प्रथा नहीं है अतः इन मुहूर्त्तों में बैंक में फिक्स करना या लाकर में रखना शुभ होता है।

जलाशयारम्भ-राजदर्शन-शान्ति-पौष्टिक कर्म—

उद्वाहर्क्षहरित्रयादितिहयेज्यर्क्षैस्तडागादयो
ज्ञेज्याब्जैस्तनुगैः सिते दशमगे सिध्यंति सद्वासरे ।
राजेक्षा श्रवणत्रयध्रुवमृदुक्षिप्रैःस्वकेन्द्रायगैः
सौम्यैः शांतिकपौष्टिके सचरभैरेतैःसुधर्मोदये ।।१६।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथवापीकूपादीन्वृत्तार्द्धेनाह । उद्वाहेति । उद्वाहक्षण्येिकादशसंख्यानिपूर्वोक्तानि हरित्रयंश्रवणत्रयम् अदितिः पुनर्वसुः हयोऽश्विनी इज्यःपुष्यः एभिस्तडागादयोजलाशयाः सिध्यन्ति । कैः ज्ञेज्याब्जैस्तनुगैः ज्ञोबुधः इज्योगुरुः अब्जश्चन्द्रः जलचरराशिश्च एतैस्तनुगैः लग्नगतैः । कस्मिन्सति सितेदशमगेसतिशुक्रेदशमगेसति । क्व सद्वासरे सग्रहवासरे इत्यर्थः । तथाचोक्त—

"चित्रास्वातिपुनर्वसूमृगशिरोमूलाश्विनीरोहिणीहस्तः
पुष्यधनिष्ठिकाशतभिषग्मित्रोत्तरारेवती ।
एतेषुश्रवणान्वितेषुमकरेलग्नेचकुंभेझषे-
वापीकूपजलाशयादिखननंशस्तंप्रशस्तेदिने" इति।

अन्यच्चोक्तं—

"सर्वतोयाशयारम्भःकर्तव्योविबलैःखगैः
लग्नस्थेज्ञेथवाजीवेलग्नभेब्देस्थितेखगे" इति।।

अथोत्तरार्द्धेनराजदर्शनशान्तिकपौष्टिकंचाह । राजेक्षेति । श्रवणत्रयध्रुवमृदुक्षिप्रैर्नक्षत्रैः राजेक्षाराजदर्शनंकार्यम् । सुगमम् । पुनः कैः सौम्यग्रहैर्द्विकेन्द्रायगैः लग्नात् द्वि ३ केन्द्रा १, ४, ७, १० य ११ गैः शुभग्रहैरित्यर्थः । शेषंप्राग्वत् । शान्तिकपौष्टिके आह । शान्तिकपौष्टिके एतैरेवनक्षत्रैः श्रवणत्रयादिभिर्विधेये । कथंभूतैरेभिः सचरभैः चरनक्षत्रसहितैः । कस्मिन्सति सुधर्मोदये शोभनः पापरहितः धर्मोनवमोयस्यससुधर्मः सचासावुदयश्चस तथा उदयो लग्नंतस्मिन्नित्यर्थः । शेषंपूर्ववत् ।।१६।।

मार्त्तण्डप्रिया—

जलाशयारम्भ--वैवाहिक ११ नक्षत्रों में और श्र. ध. श. पुन. अश्वि. पुष्य इन ६ नक्षत्रों में, बु. गु. और चं. जिस लग्न में रहे उस लग्न में तथा शुभ (चं. बु. बृ. शु) वारों में, जलाशय (कुआँ-पोखरा) सम्बन्धी कार्य का आरम्भ करना शुभकर होता है ।

राजदर्शन—श्र. ध. श. ध्रुवसंज्ञक (उफा. उषा. उभा. रो.) मृदुसंज्ञक (मृ. रे. चि. अनु.) और क्षिप्रसंज्ञक(ह. अश्वि. पुष्य.), इन १४ नक्षत्रों में, जिस लग्न के

द्वितीयस्थान-केन्द्रस्थान (१-४-७-१०) और एकादशस्थान में शुभग्रह रहें उसमें राज-दर्शन शुभकारक होता है।

शान्तिकर्म – चरसंज्ञक (स्वा. पुन. श्र. ध. श.) नक्षत्रों में और राजदर्शन के नक्षत्रों में, तथा जिस लग्न का नवमस्थान शुद्ध हो उस लग्न में शान्तिकर्म (ग्रह-शान्ति विघ्नेश शान्ति आदि) शुभप्रद होता है ॥१६॥

शपथ ग्रहण (प्रतिज्ञा)—

दिव्यं नैवं मलिम्लुचे विधुसितेज्यास्ते रवावष्टमे
मंदाराह्नि खलोदये स्थिरतनौ कुर्यात्कृतेदोऽन्यथा।
श्रीशैलग्रहणायनेषु विषुवे संकीर्णजातावुपा-
कृत्युत्सर्गवधूप्रवेशनगयागोदासु नित्याब्दिके ॥१७॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथवृत्तार्द्धेनदिव्यमाह। दिव्यमिति मलिम्लुचेमासे विधुसितेज्यास्ते विधुश्चन्द्रः सितः शुक्रः इज्योगुरुस्तेषामस्ते विधोरस्तः कृष्णपक्षेभवति। रवा-वष्टमे गोचरेण सूर्येष्टमेमन्दाराह्निशनिभौमदिने खलोदयेपापराश्युदये यद्वा उदयेखलः खलोदयस्तस्मिन्स्थिरलग्ने दिव्यंनैवकुर्यात्। अत्रदिव्येकृतेसति अदोदिव्यमन्यथाविपरीतंस्यात्। असत्यथवा दिनोजयकरो भवतीत्यर्थः अर्थादन्यत्र कर्तव्यमितिसिद्धम् लग्न बलं प्राग्वत्।

अथ गुरुशुक्रयोर्मौढ्यदोषः कुत्रकुत्रनास्तीतिवृत्तार्द्धेनाह। श्रीशैलः प्रसिद्धः यत्रमल्लिकार्जुनाभिधानंलिंगमस्ति। ग्रहणंसूर्यचन्द्रयोः अयनेदक्षिणोत्तरे विषुवंमेषतुलासंक्रमः सकीर्णजातिर्हीनजातिः उपाकृतिरपाकर्म उत्सर्गश्छन्द-सामुत्सर्गः वधूप्रवेशनंप्रसिद्धंगयाप्रसिद्धा गोदागोदावरी नित्याब्दिकं प्रतिवर्षे-यत्क्रियते यथानवरात्रम् ॥१७॥

मार्त्तण्डप्रिया—

अधिमास में, चन्द्र[1] शुक्र-गुरु के अस्त रहने पर, जन्मराशि से अष्टम राशि में सूर्य के रहने पर, शनिभौमवारों में, पापग्रह की राशि[2] वाले लग्न में या लग्न में पाप-ग्रह के रहने पर तथा स्थिर लग्न में, शपथ (सट्टा-लाटरी-जुआ) नहीं करना चाहिए। यदि किया जाता है तो उल्टाफल होता है। अर्थात् असफलता मिलती है।

श्री शैल (मल्लिकार्जुन), सूर्य-चन्द्र ग्रहण, अयन (म. कर्क.) सन्क्रान्ति, विषुव (मे. तु.) संक्रान्ति, नीचकर्म, उपाकर्म (श्रावणी), उत्सर्ग (अध्ययन पूर्णता), वधू-

१. अमावस्या और शुक्ल प्रतिपदा को चन्द्र अस्त रहता है।

२. मेष-सिंह-वृश्चिक-मकर-कुम्भ राशि।

प्रवेश, गयाश्राद्ध, गोदावरी स्नान, नित्यक्षौर और वार्षिक कर्म, इन सब कार्यों में गुर्वस्त या शुक्रास्त का दोष नही लगता है ॥१७॥

कर्मविशेष-स्थानविशेष में गुरू शुक्र के अस्त का दोष—

ईशानाहिबलौहरेः शयनपर्यावर्तनेनैत्यके
यानेजीर्णगृहेऽवरोहदमनारोपे पवित्रार्पणे
चातुर्मास्यविधौ न जीवसितयोर्मूढत्वदोषोऽष्टका
सूत्साहांबरधारणेषु गदितो गर्भादिसप्तस्वपि ॥१८॥

मार्त्तण्डवल्लभा —

ईशानेति । ईशानाहिबलिः ईशानबलिः प्रसिद्धः अहिबलिः सर्पबलिः हरेः शयनपर्यावर्तनेविष्णोः शयनमाषाढशुक्लद्वादश्यांभवति । पर्यावर्तनं भाद्रपदशुक्लद्वादश्यां भवति । नैत्यकं यानंनित्यगमनं जीर्णगृहंप्रसिद्धम् अवरोहः देवानांदो वरोहः पूजाविशेषः दमनारोपश्चैत्र्यां पवित्रार्पणंश्रावण्यां चातुर्मास्यविधौ चातुर्मास्यव्रते अष्टकाः पर्वणियाऋक्षनाम्नांमासानांकृष्णाष्टम्योष्टकाः मार्गपौषमाघफाल्गुनानांकृष्णाष्टम्य इत्यर्थः । उत्साहाः पुत्रोत्पत्त्यादयः अंशुकधारणंवस्त्रधारणम् एषुजीवसितयोर्गुरुशुक्रयोर्मूढत्वदोषोनास्तीत्यर्थः । न केवलमेषु गर्भादिसप्तस्वपिगर्भाधानाद्यन्नप्रशनांतेषुसप्तसुसंस्कारेषुमूढत्वदोषोनगदितः गर्भाद्यन्नाशनांतेष्वित्यत्रश्लोकेयद्यप्युक्त तथाप्यत्रप्रसंगादुक्तम् । तथा चगर्गः—

"नित्ययानेगृहेजीर्णेप्राशनेपरिजीर्णके
वधूप्रवेशमांगल्येनमौढ्यंगुरुशुक्रयोः ।

भृगुः — "उपाकर्मोपसर्जनंपवित्रदमनार्पणम्
अवरोहः सहेमंतःसर्पाणां बलिरष्टकाः ।
ईशानस्यबलिर्विष्णोःशयनंपरिवर्तनम्
कुर्याच्छुक्रगुरोर्मौढ्येपीतीतिसुविनिश्चयात् ।

धर्मप्रदीपे--

"गोदावर्यांगयायांचश्रीशैलेग्रहणद्वये
अयनेविषुवेचैवचातुर्मास्यव्रतेषुच ।
उत्सवेषुचसर्वेषुसीमंतऋतुकर्मणि
सुरासुरेज्ययोश्चैवमौढ्यदोषोनविद्यते ।

कालनिर्णये—

"नष्टेशुक्रेतथाजीवेसिंहस्थेचबृहस्पतौ
कार्याचैवंस्वदेव्यर्चाप्रत्यब्दंकुलधर्मतः ।

मत्स्यपुराणे—

"मौढ्येपिचप्रकर्तव्यामिश्रजातिक्रियाःशुभाः
सुरेज्यशुक्रयोर्वर्णीक्रियाश्चौलादिकानच इति॥१८॥

मार्त्तण्डप्रिया—

ईशानबलि, सर्पबलि, विष्णुशयन (आषाढ़ शु. ११), विष्णु पार्श्वपरिवर्तन (भा. शु. ११), नित्य यात्रा, जीर्ण गृहप्रवेश, देवता का दोलारोहण, दमनारोप[1] (चैत्र पूर्णमासी में किया जाता है), पवित्रार्पण (जो श्रावणी में होता है) चातुर्मास्य व्रत (मार्ग. पौ. मा. फा. की कृष्णाष्टमी), पुत्र पौत्रादि के जन्मोत्सव में, नवीनवस्त्र धारण में और गर्भाधान से अन्नप्राशन तक के (सात) संस्कारों में, इन सब में गुरु और शुक्र के अस्त का दोष नहीं लगता है। ये सब कार्य गुर्वस्त-शुक्रास्त में भी किए जा सकते हैं ॥१८॥

तीर्थयात्रा में निषेध-प्रेतक्रिया—

शुक्रेज्यास्तमयेऽधिकक्षयजनुर्मासेषु जन्मर्क्षके
नापूर्वामरतीर्थदर्शनमियाद्गोदागयाभ्यामृते ।
एष्वाषाढसहस्यविष्णुशयनेष्वप्यंत्यकर्म त्यजेत्
यद्वर्षाधिकलंबितं भवति तद्गोदागयातोऽन्यतः ॥१९॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथतीर्थयात्रानिषेधंप्रेतकर्मनिषेधं च सापवादंवृत्तेनाह। शुक्रेति। शुक्रेज्ययोः अस्तसमये अधिकः अधिमासः क्षयः क्षयमासः जनुर्मासोजन्ममासः तेषु जन्मर्क्षके जन्मनक्षत्रे अपूर्वप्रथमं तीर्थामरदर्शनंतन्निमित्तं न इयान्नगच्छेत्। काभ्यामृते गोदागयाभ्यामृते गोदागययोर्दर्शनंसदैवकुर्यादित्यर्थः। प्रेतकर्मनिषेधमाह। एष्विति। एषुगुरुशुक्रास्तादिषु आषाढः प्रसिद्धः सहस्यः पौषः विष्णुशयनेष्वपियद्वर्षाधिकलंबितंप्रेतकर्मभवतित्त्यजेत्। गोदागयातोन्यतः गोदागययोः सदैवकार्यम्। आषाढशुक्लद्वादश्यादि कार्तिकशुक्ल द्वादशीपर्यन्तंविष्णुशयनम्। तथाचोक्तं—

बाल्येवाथदिवावृद्धेशुक्रेचास्तमुपागते
मलमास इवैतानिवर्जयेद्देवदर्शनम्"।

---

१. अशोक वृक्ष (दमनक) का पौधा लगाकर १५ दिनों तक विभिन्न देवों की पूजा की जाती है—जैसे प्रथमदिन उमा. शिव. अग्नि, दूसरे दिन ब्रह्मा आदि की ...... (देखें व्रतराज)।

व्यासः— अधिमासेचजन्मर्क्षेनष्टयोर्गुरुशुक्रयोः
तीर्थयात्रानकर्तव्यागयांगोदवरीविना ।
मलमासेप्यनावृत्तंतीर्थस्नानंविवर्जयेत्
अनादिदेवतांद्रष्टुंशुचिःस्यान्नभार्गवे" ।

तीर्थखंडे— गुरुशुक्रास्तादिदोषःप्रोक्तोयस्तीर्थयायिनाम्
अपूर्वयायिनामेषनत्वसौपूर्वगामिनाम्' ।

पितृखंडे--शुक्रस्यास्तमनेचैवदेवेज्यस्यतथैवच
प्रेतकार्यंप्रदुष्येतप्रथमंवत्सरंविना" ।

मांडव्यः— मलिनेजन्ममासेवामौढ्येवागुरुशुक्रयोः
तीर्थयात्रानकर्तव्यागयांगोदावरींविना" ।

गरुडपुराणे— नकुर्याद्गुरुशुक्रास्तेपुष्येस्वापेमलिम्लुचे
विलंबितंप्रेतकार्यंगयांगोदावरींविना" ।

मेधातिथिः--अस्तंगतेगुरौशुक्रेपुष्याषाढाधिमासके
प्रेतकार्यं नकुर्वीत गयांगोदावरींविना ।

प्रेतमंजर्यां—प्रेतकार्याणिसर्वाणिव्रतस्नानजपादिकम् ।
वर्ज्यंशुक्रेज्ययोरस्तेगयांगोदावरींविना" इति ॥१९॥

इति स्वोक्त मुहूर्तमार्त्तण्ड टीकायां मार्त्तण्डवल्लभायां मिश्रप्रकरणं समाप्तम् ॥८॥

मार्त्तण्डप्रिया—

शुक्र और बृहस्पति के अस्त रहने पर अधिमास-क्षयमास-जन्ममास और जन्म-नक्षत्र में गोदावरी और गया तीर्थ को छोड़ अन्य तीर्थस्थान की यात्रा या दर्शन निषिद्ध है। तात्पर्य यह कि गोदावरी और गयातीर्थ में कभी भी यात्रा या दर्शन प्रशस्त होता है।

गुरु-शुक्रास्तादि समय में, आषाढ़-पौष मासों में तथा विष्णुशयन (आषा. शु. ११ से का. शु. १० तक) में गोदावरी तथा गया से अन्यत्र स्थानों में एक वर्ष से अधिक समय तक चलने वाले श्राद्धादि (प्रेतक्रिया) कार्य को नहीं प्रारम्भ करना चाहिए। गोदावरी और गया क्षेत्र में जब कभी भी इच्छा हो श्राद्धादि (प्रेतकार्य) कार्य करना चाहिए और वर्षाभ्यन्तर में जो निषिद्ध कार्य हैं उसे भी करना चाहिए इसमें दोष नहीं लगता है ॥१९॥

मुहूर्त्तमार्त्तण्ड की "मार्त्तण्डप्रिया" हिन्दी टीका में मिश्रप्रकरण समाप्त—८

अनध्याय प्रकरणम्—६

अनध्याय विवेचन—

पर्वाग्रादियुगाष्टमीतितिथयो मध्वादिपक्षद्वये
ऽनध्यायाश्चरसंक्रमा अथ मधौ वह्निश्च शुक्रे यमः ।
राधेऽग्निस्त्वसितो यमः शुचिदृगाशार्कास्त्रयोदश्यथो
मार्गे कृष्णनगग्रहाविषदृगंकाशाग्नयःकीर्तिताः ॥१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथानंतरंशांतिप्रकरणमारभ्यते । छिद्राण्येतानिविप्राणांयेऽनध्यायाः प्रकीर्तिताः । छिद्रेभ्यः स्रवतिब्रह्मब्राह्मणेनतदर्जितम् । तत्कालेतस्यरक्षांसिश्रियं-ब्रह्मयशोबलम् । सर्वमादायगच्छन्तिवर्जयंतीप्सितंफलमित्यनध्यायेपठनादौप्रसं-गात्मौञ्ज्यादिनिषेधाच्चवृत्तद्वयेनानध्यायानाह । पर्वेति । पर्व अमापूर्णिमा । किंलक्षणंपर्व अग्रादियुक् अग्रंप्रतिपत् आदिश्चतुर्दशीताभ्यांयुक्युक्तम् अष्टमी-प्रसिद्धा इतितिथयश्चतस्रस्तिथयः मध्वादिपक्षद्वये मधुश्चैत्रः तदादिषुंमासेषु-पक्षद्वयंशुक्लकृष्णाख्यंतस्मिन् अनध्यायाः स्युः कीर्तिताः कथिताः बुधैरित्य-ध्याहारः । अथान्यानाह । चरसंक्रमाः चरराशिसंक्रांतयः मेषकर्कतुलामकर-संक्रांतयः इत्यर्थः । मधुश्चैत्रस्तस्मिन्वह्निः वह्निसंख्याकस्तिथिस्तृतीयेत्यर्थः । शुक्रे मासेज्येष्ठेमासे यमःद्वितीया । यत्रप्रकरणेशुक्लकृष्णपक्षनिर्देशोनदृश्यते तत्र शुक्लपक्षजस्तिथिर्ज्ञेयः । राधेवैशाखेऽग्निस्तृतीयाशुक्ले तुपुनः असितः कृष्णो यमः द्वितीय शुचिदृगाशार्काः शुचिराषाढः तस्य दृक्द्वितीया आशा-दमी अर्कोद्वादशी त्रयोदश्यपि आषाढशुक्लद्वितीयादशमीद्वादशीत्रयोदशी-त्यर्थः । अथमार्गेमार्गशीर्षे कृष्णनगग्रहौकृष्णसप्तमीनवम्यौ इषदृगंकाशाग्नयः इषः आश्विनः तस्य दृक् द्वितीया अंको नवमी आशादशमी अग्निस्तृतीया आश्विनशुक्लद्वितीयानवमी–दशमी–तृतीया इत्यर्थः ॥१॥

मार्त्तण्डप्रिया—

जिस समय में वेद-वेदाङ्गों का पठन-पाठन निषिद्ध होता है उसे अनध्याय कहा जाता है । अध्याय में पढ़ी हुई विद्या छिद्रयुक्त पात्र के जल जैसे निकल जाती है ।

सामान्य अनध्याय-चैत्रादि १२ मासों में शुक्लपक्ष और कृष्णपक्ष की चतुर्दशी-पूर्णिमा-अमावास्या-प्रतिपदा और अष्टमी ये तिथियाँ तथा मे. कर्क. तु. म. (चर) राशि की संक्रान्तियाँ, ये सामान्य अनध्याय मानी जाती है।

विशेष अनध्याय—चैत्र शुक्लपक्ष की ३, ज्येष्ठ शुक्लपक्ष की २, वैशाख शुक्ल पक्ष की ३ और कृष्णपक्ष की २, आषाढ़ शुक्लपक्ष की २-१०-१२-१३, मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष की ७-९ और आश्विन शुक्लपक्ष की २-९-१०-३ ये तिथियाँ विशेष अनध्याय मानी जाती है।।१।।

अनध्याय विवरण—

पौषेशस्त्वसिता दृगंकमुनयोंऽत्ये कृष्णखेटाद्रिदृङ्-
माघेऽर्काब्धिदृगद्रयस्त्वसितजा बाह्वंकपृथ्वीधराः ।
ऊर्जे द्व्यंकरवीश्वरास्त्वसितजा दृग्विश्वसूर्या नभ-
स्येऽग्निःकृष्णदृगद्रिविश्वनवमी पैत्र्यं यमोऽन्यःश्रवाः ।।२।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

पौषेति। पौषेशः पौषस्य ईशः एकादशीशुक्ला तुपुनः असिताकृष्णा दृगंकमुनयः द्वितीयानवमीसप्तम्यः अंत्येफाल्गुने कृष्णखेटाद्रिदृक् खेटोनवमी अद्रिःसप्तमी दृक् द्वितीया एषांसमाहारः खेटाद्रिदृक् कृष्णंचतत्खेटाद्रिदृक्च-तथा कृष्णनवमीसप्तमीद्वितीया इत्यर्थः। माघेर्काब्धिदृगद्रयः अर्कोद्वादशी अब्धिश्चतुर्थी दृक्द्वितीया अद्रिः सप्तमी एतेशुक्लाः। तुपुनः असितजाबाह्वंक-पृथ्वीधराः असितजाः कृष्णपक्षजाः बाह्वंकपृथ्वीधराः बाहुर्द्वितीया अंको-नवमी पृथ्वीधरः सप्तमी ऊर्जेकार्तिके द्वयंक रवीश्वराः द्विर्द्वितीया अंको-नवमी रविर्द्वादशी ईश्वर एकादशी एतेशुक्लाः तुपुनः असितजाः कृष्णपक्षजाः दृग्विश्वसूर्याः दृक्द्वितीया विश्वेत्रयोदशी सूर्योद्वादशी नभस्येभाद्रपदे अग्निस्तृ-तीया शुक्ला कृष्णदृगद्रिविश्वनवमीं दृक्द्वितीया अद्रिःसप्तमी विश्वेत्रयोदशी नवमी पैत्रंमघा यमोभरणी अन्यःशुक्लः श्रवाः श्रवणः भाद्रपदशुक्ल-श्रवणः इत्यर्थः ।।२।।

मार्त्तण्डप्रिया—

पौष शुक्लपक्ष की ११ और कृष्णपक्ष की २-७ ९, फाल्गुन कृष्णपक्ष की २-७-९, माघ शुक्लपक्ष की २-४-७-१२ और कृष्णपक्ष की २-७-९, कार्तिक शुक्लपक्ष की २-९-११-१२ और कृष्णपक्ष की २-१२-१३, भाद्रपद शुक्लपक्ष की ३ और कृष्ण पक्ष की २-७-९-१३ ये तिथियाँ तथा भाद्रपद के कृष्णपक्ष में मघा एवं भरणी नक्षत्र

और शुक्लपक्ष में श्रवणनक्षत्र, ये सब विशेष अनध्याय माने जाते हैं। आगे चक्र से स्पष्ट है—

अनध्याय बोधक चक्र

मास	पक्ष	तिथियाँ	नक्षत्र
चैत्र	कृष्ण	×	×
	शुक्ल	३	×
वैशाख	कृष्ण	२	×
	शुक्ल	३	×
ज्येष्ठ	कृष्ण	×	×
	शुक्ल	२	×
आषाढ़	कृष्ण	×	×
	शुक्ल	२.१०.१२.१३	×
श्रावण	कृष्ण	×	×
	शुक्ल	×	×
भाद्रपद	कृष्ण	२.७.९.१३	मघा, भरणी
	शुक्ल	३	श्रवण
आश्विन	कृष्ण	×	×
	शुक्ल	२ ३ ९.१०	×
कार्तिक	कृष्ण	२.१२.१३	×
	शुक्ल	२.९.११ १२	×
मार्गशीर्ष	कृष्ण	७ ९	×
	शुक्ल	×	×
पौष	कृष्ण	२.७.९	×
	शुक्ल	११	×
माघ	कृष्ण	२.७.९	×
	शुक्ल	२ ४.७.१२	×
फाल्गुन	कृष्ण	२.७.९	×
	शुक्ल	×	×

इसके अतिरिक्त जो उपरोक्त तिथियाँ १-८-१४-१५-३० हैं वे चैत्र से फाल्गुन मास तक दोनों पक्षों (कृ. शु) में पठन-पाठन में त्याज्य होती हैं ॥२।

अनध्याय निर्णय—

योऽनध्यायतिथिःस पूर्वदिवसेऽस्तात्प्राङ्मुहूर्तोन्मितो-
ऽन्यस्मिन्वोदिवसे क्षणत्रयगतो ब्रह्मेह नैवाभ्यसेत् ।
पर्वाग्रादियुगष्टमीति च तिथीस्त्यक्त्वैषु शास्त्रस्मृती
वेदांगानि समभ्यसेच्च निखिलेषूक्तं पठेन्नैत्यकम् ॥३॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथैषांनिर्णयंवृत्तेनैकेनाह । य इति । यःकश्चिदनध्यायतिथिः सपूर्वदिवसेऽस्तात्सूर्यास्तात्प्राक्मुहूर्त्तोन्मितः स्यात् । अत्रपूर्वदिवसेब्रह्मवेदंनोपठेत् । वा इत्यथवा अन्यस्मिन्दिवसेपरदिवसेक्षणत्रयगतोभवति । अत्रास्मिन्दिवसेब्रह्मनोसंपठेत् पर्वाग्रादियुगष्टमी पूर्ववत्पदविभागः इतिचतिथींस्त्यक्त्वा एषु अनन्तरोक्तेषु अनध्यायेषुशास्त्रस्मृतीवेदांगानिसमभ्यसेत् । सुगमम् । निखिलेषुसर्वेष्वनध्यायषु उक्तंपठेत् । नैत्यकंचपठेत् । उक्तमिति । यथा-अमावास्यायामश्नस्तुजपेद्वयाहृतिपूर्विकांगायत्रींसप्रणवांसकृत्त्रिर्वारिक्षोघ्नीः पित्र्यमंत्रान् पुरुषसूक्तमप्रतिरथमन्यानिचपवित्राणि नैत्यकंसंध्याहोमब्रह्मयज्ञादि । तथाचमनुः--

"वेदोपाकरणे चैव स्वाध्याये चैव नैत्यके
ननिरोधोस्त्यनध्याये होममंत्रजपेषु च"[१] इति ।

वेदोपाकरणानि अंगानि । स्मृतिरत्नावल्यां—

"नित्येजपेचनांगेचक्रतौपारायणेपिच
नानध्यायोऽस्तिवेदानांग्रहणेग्राहणेस्मृतः ।
देवतार्चनमंत्राणांनानध्यायः स्मृतः सदा
नानध्यायेजपेद्वेदान्रुद्रांश्चैवविशेषतः ।
पौरुषंपावमानं च गृहीतनियमादृतः" इति ।

स्मृत्यर्थसारे—

"चतुर्दश्यष्टमीपर्वप्रतिपद्वर्जितेषुच
वेदांगन्यायमीमांसाधर्मशास्त्राणिचाभ्यसेत्" इति ।

कूर्मपुराणे--

इंदौवृद्धिक्षयंप्राप्तेब्रह्मयज्ञंनकारयेत्
नजपेद्वैदिकंमंत्रंगायत्र्यष्टोत्तरंशतम्" इति ।

स्मृतिरत्नावल्याम्--

"अल्पंजपेदनध्यायेपर्वण्यल्पतरंजपेत्" इति ॥३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

अनध्याय वाली तिथि यदि पूर्व दिन सूर्यास्त से १ मुहूर्त पहले हो अथवा अगले दिन सूर्योदय से ३ मुहूर्त आगे तक हो तो पूर्व—पश्चात दोनों दिनों में अनध्याय होता है। उसमें वेदाध्ययनादि नहीं करना कराना चाहिए ।

---

१. मनुस्मृति—अ० ४श्लो १०५ ।

प्रतिपदा-अष्टमी-चतुर्दशी-पूर्णिमा-अमावस्या इनको छोड़ कर अन्य अनध्यायों में न्याय-मीमांसा (दर्शनशास्त्र), धर्मशास्त्र और वेदाङ्गों (ज्यो. व्या. निरुक्त. कल्प-शिक्षा-छन्द) का अध्ययन करना चाहिए केवल वेद का ही अध्ययनाध्यापन वर्जित है। अन्य विशिष्ट अनध्यायों में उपनयन (व्रतबन्ध) निषिद्ध है पठन-पाठन नहीं, परन्तु १-८-१४-१५-३० तिथियों में पठन-पाठन भी निषिद्ध है। जो नित्य नैमित्तिक देवार्चन संध्यावन्दनादि हैं उनके पाठ में अनध्याय का दोष नहीं लगता है ॥३॥

नैमित्तिक अनध्याय—

बभ्र्वोत्वेणखराग्न्यजांब्वहिगजाश्वोष्ट्रांत्यमूकोन्नता
नोयानांतरिते त्र्यहं प्लवखगाद्यैर्ना च सज्योतिषम् ।
स्त्रीगोस्थ्यन्तरितेऽहरुत्सवनिशीथाशौचमार्गेषु च
चछायायां न कपित्थशाल्मलिमधुश्लेष्मातकादेःपठेत् ॥४॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथनैमित्तिकाननध्यायान्वृत्तद्वयेनाह। बभ्रिवति। बभ्रुर्नकुलः ओतुर्मार्जारः एणो हरिणः खरः प्रसिद्धः अग्निः प्रसिद्धः अजोमेषः अंबु उदकम् अहिः सर्पः गजः प्रसिद्धः अश्वः प्रसिद्धः उष्ट्रःप्रसिद्धःअंत्योन्त्यजातिः रजकचर्मकारादयः मूकः प्रसिद्धः उतोमत्तः अनः शकटः यानंशिबिकादि एभिरंतरितेगुरौसति त्र्यहंत्रिरात्रमनध्यायः प्लवोमंडूकः खगः पक्षी आदिशब्दाद्गोधादि एभिरंतरितेसज्योतिषमनध्यायः। अयमर्थः दिवा अंतरितेसतिसूर्यास्तमानपर्यन्तमनध्यायः। रात्रावंतरितेरात्रिशेषपर्यंतमनध्याय इत्यर्थः। स्त्रीगोऽस्थ्यंतरितेऽहः स्त्रीप्रसिद्धा गौःप्रसिद्धः अस्थिप्राण्यंगम् एभिरंतरिते अर्हादिनमहोरात्रमनध्यायः। उत्सवोमहोत्सवोविवाहादिकः निशीथंमध्यरात्रम् अशौचंसूतकं मार्गोध्वा एषुनपठेत्। चपुनः कपित्थशाल्मलिमधुश्लेष्मातकादेश्छायायांनपठेत्। सुगमम्। आदिशब्दात्कोविदारविभीतकैरंडादीनांग्रहणम् ॥४॥

मार्त्तण्डप्रिया—

पढ़ने और पढ़ाने वाले के बीच में अनायास ही यदि नेवला-बिडाल-हरिण-गधा-आग-भेड़-बकरी-जल-साँप-हाथी-घोड़ा-ऊँट-नीचकर्मी-गूँगा-विक्षिप्त-गाड़ी या सवारी पड़ जाये तो तीन दिनों तक अनध्याय होता है।

यदि मेढ़क-पक्षी-कोईजलचरजीव या कोईमनुष्य पड़ जाये तो दिन हो तो दिन भर या रात हो तो रातभर का अनध्याय होता है।

यदि स्त्री-गौ या हड्डी पड़ जाए तो उसदिन दिनभर का अनध्याय होता है।

विवाहादि उत्सव में, मध्यरात्रि में, सूतक (अशौच) में, मार्ग (रास्ता) में और कैंथ (कपित्थ), सेमर (शाल्मलि), महुआ, बहेड़ा-हर्रे लिसोढ़ा आदि वृक्षों की छाया में भी पढ़ना निषिद्ध है ॥४॥

अनध्याय विशेष--

ग्रामांतःकुणपे श्वशूद्रनिकटे श्राद्धाशने वक्त्रगे
तांबूले ग्रहणाद्गुरुक्षितिपतिप्रांतादुपोत्सर्गतः ।
भूकंपाशनिपाततःपुरदहे रिष्टावलोकात्त्र्यहं
गर्जेऽनार्तवके त्र्यहं समयजे सज्योतिरंते सतः ॥५॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

ग्रामांतरिति । ग्रामांतःकुणपेग्राममध्यंकुणपेप्रेतेसतिनपठेत् । श्वशूद्रनिकटेश्वानशूद्रसन्निधौनपठेत्। श्राद्धाशनेश्राद्धभोजनेकृतेसतिजीर्णविधिनपठेत् । वक्त्रगेमुखगते तांबूलेसतिनपठेत् । ग्रहणात्सकाशात्त्र्यहंनपठेत् । तथागुरुक्षितिपतिप्रांतान्मरणात्त्र्यहं उपोत्सर्गतस्त्र्यहं उप उपाकर्म उत्सर्गश्छंदसामुत्सर्गः तथा उपोत्सर्गतःसकाशात् त्र्यहं भूकंपाशनिपातततस्त्र्यहं भूकंपः प्रसिद्धः अशनिपातोविद्युत्पातः ताभ्यांत्र्यहं पुरदहात्पुरदाहात् स्ववसतिग्रामदाहादित्यर्थः । त्र्यहंरिष्टावलोकात् गंधर्वनगरभूतादिदर्शनात्त्र्यहंनपठेत् । गर्जेनार्तवकेत्र्यहंऋतौभवःआर्तवः न आर्तवःअनार्तवः अनार्तव एव अनार्तवकस्तस्मिन् अकालगर्जनेजातेसतित्र्यहंनपठेत् । समयजेऋतुजेगर्जेसतिसज्योतिर्यथास्यात्तथा नपठेत्। दिवागर्जेसतिसूर्यास्तपर्यन्तं रात्रौगर्जेसतिसूर्योदयपर्यन्तंनपठेदित्यर्थः। सतः अंतेस्वशाखिसत्पुरुषस्यमृतौजातेसतिसज्योतिर्नपठेत् ॥५॥

मार्त्तण्डप्रिया--

अपने ग्राम में यदि किसी का मरण हो जाये तो उस दिन नहीं पढ़ना चाहिए। श्वान (कुत्ता) और नीचकर्म करने वाले के समीप भी पठन-पाठन निषिद्ध होता है।

श्राद्ध का अन्न खाकर या मुख में ताम्बूल रखकर भी पढना निषिद्ध है। सूर्यग्रहण या चन्द्रग्रहण, गुरुजन या राजा के मरण, उपाकर्म (श्रावणी) और उत्सर्ग (स्थगन), भूकम्प और वज्रपात, ग्राम के जलने पर, धूमकेतु आदि उत्पात के दर्शन

होने पर, असमय मेघ के गर्जन में, इन सब घटनाओं के पश्चात ३ दिन तक अनध्याय होता है। इसमें भी पठन-पाठन निषिद्ध होता है।

सामयिक मेघ के गर्जन और किसी सत्पुरुष के मरण में दिन में सूर्यास्त तक और रात्रि में सूर्योदय तक अनध्याय होता है ॥५॥

अनध्याय विशेष—

वाद्योलूकखरार्तजंबुकरवे साम्नां च वाते जले
नीहारे पतिताभिशस्तनिकटे धावज्जनालोकने।
ग्रामांते पितृकाननेऽप्यथ सतानूनप्त्रिणीते दिवं
तद्वत्सद्व्रतिनि त्र्यहं च न पठेद्भुक्त्वाऽऽर्द्रपाणिर्न च ॥६॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अनध्यायांतरमाह। वाद्येति। वाद्यादीनांरवेशब्देश्रूयमाणेसाम्नांचरवेश्रूयमाणे वाते वातस्यसर्वदाविद्यमानत्वादतिवाते जलेजलमध्येनीहारेधूमरूपोत्पाते पतितोजातिभ्रष्टः अभिशस्तोमिथ्याभिशापीतत्समीपे धावज्जनालोकने धावन्मनुष्यालोकने ग्रामांतग्रामसीमासमीपे पितृकाननेश्मशाने नपठेत्। सतानूनप्त्रिपीतेदिवंस्वर्गंप्रति इतेगतेमृतेसति त्र्यहंनपठेत्। तानूनप्त्रंनामघृतं यागेयेनयेनऋत्विजासहस्पृष्टंससतानूनप्त्रीतस्मिन्मृतेसति। त्र्यहंनपठेत्। तद्वत्सद्व्रतिनिमृते सद्व्रतंवेदव्रतंचरितंयेनससद्व्रतीतस्मिन्मृतेत्र्यहं नपठेत्। भुक्त्वायावदार्द्रपाणिस्तावन्नपठेत्। अन्येऽनध्यायामूलग्रंथतोऽवगंतव्याः ॥६॥

मार्त्तण्डप्रिया—

बाजे (बैण्ड बाजा) का शब्द सुनने पर, उल्लू-गधा-पीड़ितजीव और सियार, इनके शब्द सुनने पर, सामवेद का गान सुनने पर, जोर से वायु चलने पर, जल में, कुहासा में, पतित और अपयशी मनुष्य के पास, दौड़ते हुए मनुष्य को देखने पर, ग्राम के सीमान्त में, और श्मशान भूमि में नहीं पढ़ना चाहिए। सतानूनप्त्री[1] के मरने पर और वेदव्रती के भी मरने पर तीन दिन तक अनध्याय रहता है। भोजन के पश्चात जबतक हाथ भीगा रहें तबतक पढ़ना निषिद्ध है ॥६॥

---

१. यज्ञ में वर्ण लिया हुआ ब्राह्मण (ऋत्विज)।

प्रदोष अनध्याय—

रात्र्यर्द्धे मदनो मुनिर्दलयुते यामे चतुर्थ्याद्यके
प्राग्रात्रौ पठनं ह्युपाकरणतो मासं निशः प्राग्दले ।
श्वोऽनध्याय इतीह रात्रिपठनं वर्ज्यं सदासंध्ययो
श्चौरोपद्रवयामके त्रिदिवसं दुर्भुक्प्रतिग्राहयोः ॥७॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथप्रदोषानध्यायानाह । रात्र्यर्द्धेमदनस्त्रयोदशी यस्मिन्दिनेस्यात् मुनिः सप्तमी रात्रेर्दलयुतेयामेसार्द्धप्रहरेयद्दिनेस्यात् अत्रदिनेप्राग्रात्रौपठनंवर्ज्यम् । हिनिश्चयेन उपाकर्मतःसकाशात् मासमात्रं रात्रेःप्राग्दलेपठनंवर्ज्यं श्वोऽनध्याय इतीह इत्यत्ररात्रिपठनं वर्ज्यम् । सदासंध्ययोरुभयोः पठनंवर्ज्यम् चौरोपद्रवेण उपलक्षितोयामःप्रहरः तस्मिन्पठनंवर्ज्यम् त्रिदिवसंदुर्भुक्प्रतिग्राहयोः दुष्टभुक्प्रतिग्राहौदुर्भुक्प्रतिग्राहौतयोः दुष्टभोजनदुष्टप्रतिग्राहयोः त्रिदिवसंपठनंवर्ज्यम् । तथाचश्रीधर्यास्मृतिवचनानि—

अष्टम्योश्चचतुर्दश्योःपंचदश्योश्चसूतके
शाक्रेप्रतिपदोर्यत्रभयेचैवमहोत्सवे ।
रोगेयुद्धेविवादेचद्यूतेपथिनिशीथके
नाधीयीताशुचिश्चापिनास्नातश्चनतंद्रितः ।
उपाकर्मणिचोत्सर्गेग्रहणेचंद्रसूर्ययोः
त्रिरात्रंस्यादनध्यायोमृतेभूपेगुरावपि ।
फाल्गुन्यांपौर्णमास्यांतुचैत्र्यांतुत्र्यहमिष्यते
अनध्यायस्तथाषाढ्यांश्रावण्यांकार्तिकेतथा ।
तथैवमार्गशीर्षस्यपौर्णमास्यांनसंचरेत्
अशन्याःपतनेकंपेभूमेदाहपुरस्यच ।
मृगस्यसर्पमार्जारनकुलाद्यश्वदंतिनाम्
अंतरागमनेजोष्ट्रखराणांचत्र्यहंस्मृतम् ।
पताकातोरणादर्शरथयानजलाग्निनाम्
मूकोन्मत्तादिशूद्राणामंतरागमनत्र्यहम् ।
नारीणामपिसर्वासांगवांचैवांतरागमे
अहोरात्रमनध्यायोगर्जनेरात्रिसंभवे ।
द्युगर्जने चरात्रौचापररात्रेदिनंस्मृतम्
दिनंतूभयसंध्यायामथास्थ्नांचान्तरागमे ।

पक्षिमंडूकगोधासुनराणांचांतरागमे
दिनेदिवसशेषःस्याद्रात्र्यांरात्र्याश्चतद्भवेत् ।
श्वसृगालरवेनृणांश्रोत्रियागमनेध्वनि
तात्कालिकोऽप्यनध्यायस्तांबूलस्यचभक्षणे ।
श्राद्धेनिमंत्रितो यस्तुभुक्त्वानाध्ययनंचरेत्
करिष्यश्चनथाविप्रः प्राग्विप्राणांविसर्जनात् ।
एतेप्रोक्ताह्यनध्यायावैदिकास्तांत्रिकास्ततः
प्रवक्ष्यंतेऽष्टमीद्वंद्वे चतुर्दश्यांचकेवलैः ।
विषुवद्वितयेचैवमयनद्वितयेतथा
नपठेत्पाठयेद्धीमान्पुराणमपिसत्तमः ।
अष्टम्यांचचतुर्दश्यांयावदस्तमितेरवौ
दिनशेषमनध्यायंवैदिकंपरिकीर्तितम् ।
तथोदितेदिवारात्रंतत्कालमुदितेतयोः
प्रतिपद्यांचसंक्रांतौतत्कालमखिलासुच ।
नभोनभस्ययोः कृष्णेमासयोस्त्रिदिनंद्विजः
नसप्तम्यामधीयीतत्रयोदश्यांचपैत्र्ययोः ।
सदात्रयोदशीयावत्प्राङ्निशियातिथिर्भवेत्
प्राह्लादथापराह्लांतादधीयीतनचद्विजः ।
अष्टम्यांचचतुर्दश्यांप्रतिपद्यांचवर्जयेत्
धर्मशास्त्रपुराणानिशास्त्रंतात्कालिकंबुधः ।
विमिश्रितासुकर्तव्यंसप्तम्यादिषुयत्नतः
पुराणाभ्यसनादीनिपंचदश्योश्चवानवा ।
नांतरागमनेदोषः पुराणादिषुविद्यते
नशस्यतेचतत्कालेघृतंसप्राश्यवाबुधः ।
नीयमानंशवंदृष्ट्वामहीस्थंवाद्विजोत्तमः
अकालगर्जितादौचपर्वस्वाशौचकादिषु ।
अनध्यायाबुधैः कार्या उपरागादिकेषुच
श्वोनध्यायेचशर्वर्यांनाधीयीतकदाचन'' इति ।

स्मृत्यंतरे—

प्रदोषेचत्रयोदश्यांनाध्येयंप्रतिपत्स्वपि'' ।

प्रदोषलक्षणं—

षष्ठीचद्वादशीचैव अर्द्धरात्रोननाडिका
प्रदोषेनत्वधीयीततृतीयानवनाडिका'' ।

अर्द्धरात्रोननाडिका अर्द्धरात्रात् घटिकया एकयोनेत्यर्थः। अत्रनैमित्तिक-प्रदोषमाह आपस्तंबः—

श्रावण्यांपौर्णमास्यामध्ययनमुपाकृत्यमासंप्रदोषेनाधीयीत" इति।

प्रदोषः पूर्वरात्रः तथाचगर्गः—

"अध्यायानामुपाकर्मश्रावण्यांश्रवणेनवा
यावन्मासंपूर्वरात्रेनाधीयीतकदाचन" इति।

नारदः— अयनेविषुवेचैवशयनेबोधनेहरेः
अनध्यायंप्रकुर्वीतमन्वादिषुयुगादिषु"।

मन्वादयोमत्स्यपुराणेऽभिहिताः—

आश्वयुक्छुक्लनवमी कार्तिकी द्वादशी सिता
तृतीया चैत्रमासस्य तथाभाद्रपदस्य च।
फाल्गुनस्य त्वमावास्या पौषस्यैकादशी सिता
आषाढस्यापि दशमी माघमासस्य सप्तमी।
श्रावणस्याष्टमी कृष्णा आषाढस्यापिपौर्णिमा
कार्तिकी फाल्गुनी चैत्री ज्येष्ठी पंचदशीसिता।
मन्वंतरादयश्चैते दत्तस्याक्षयकारकाः"[१]।

युगादयोविष्णुपुराणदर्शिताः—

वैशाखमासस्यतुयातृतीयानवम्यसौकार्तिकशुक्लपक्षे
नभस्यमासस्यचकृष्णपक्षेत्रयोदशीपंचदशीचमाघे।
उपाकर्मणिचोत्सर्गेत्रिरात्रंक्षपणंस्मृतम्
अष्टकासुत्वहोरात्रंमृत्यंतासुचरात्रिषु
मार्गशीर्षेतथापौषेमाघेमासेतथैवच।
तिस्रोऽष्टकाः समाख्याताः कृष्णपक्षेतुसूरिभिः"।

स्मृतिरत्नावल्यां—

"चतुर्दश्यांयदापर्वप्रागस्तादृश्यतेरवेः
अनध्यायंप्रकुर्वीतत्रयोदश्यांतुधर्मवित्।
विद्युत्स्तनितंवर्षेतुमहोल्कानांतुसंभवे
आकालिकमनध्यायमेतेषुमनुरब्रवीत्।
"स्तनितंमेघगर्जितम्"
अनुराधर्क्षमारभ्यषोडशर्क्षेतुभास्करः
यावच्चरतिवैतावदकालंमुनयोविदुः।
कालेवृष्टौचतत्कालमकालेचत्रिरात्रकम्

१. मत्स्यपुराण—अ. १७।

अतिमात्राथवावृष्टिर्नाधीयीत दिनत्रयम् ।
अकालवर्षणेजातेजलौकाश्चप्रवर्तते
एकरात्रमनध्यायमिति कात्यायनोब्रवीत् ।
मेषेचवृषभेचैवतृणाग्रात्स्रवतेजलम्
भूमिद्रावमनध्यायंकुर्वन्तिवृषकुंभयोः ।
अतऊर्ध्वंद्विपादेषुतृणप्रच्यवनंजलम्
"तृणप्रच्यवनंतृणप्रवाहः"
चौरेरुपद्रुतेयावत्संग्रामेचाग्निकारिते
आकालिकमनध्यायंविद्यात्सर्वाद्भुतेषुच।
प्रादुष्कृतेष्वनग्नीषुविद्युत्स्तनितनिःस्वने
सज्योतिःस्यादनध्यायःशेषरात्रौतथादिवा'' इति ॥

मनुः—

"निर्घातेभूमिचलनेज्योतिषांचोपसर्जने
एतानाकालिकान्विद्यादनध्यायानृतावपि" ।

निर्घात आंतरालिकोध्वनिविशेषः। ज्योतिषांचोपसर्जनंचन्द्रसूर्ययोःपरिवेषः। आपस्तम्बः—

"प्रतिगृह्यद्विजोवेदानेकोद्दिष्टस्यकेतनम्
त्र्यहांतेकीर्तयेद्ब्रह्मराहोरन्यत्रसूतके" ।

केतनंनिमंत्रणम्। कूर्मपुराणे—

"समानविद्ये तुमृतेतथाचब्रह्मचारिणि
आचार्येसंस्थितेचापित्रिरात्रक्षपणंस्मृतम् ।

याज्ञवल्क्यः--

"त्र्यहंप्रेतेष्वनध्यायः शिष्यर्त्विग्गुरुबंधुषु
उपाकर्मणि चोत्सर्गे स्वशाखाश्रोत्रिये मृते ।
संध्यागर्जितनिर्घातभूकंपोल्कानिपातने
समाप्य वेदं द्युनिशमारण्यकमधीत्य च ।
पशुमंडूकनकुलश्वाहिमार्जारमूषकैः
कृतेऽन्तरे त्वहोरात्रं शक्रपाते तथोच्छ्रये"[1] इति ॥

पराशरः--

"सर्पस्य नकुलस्याथ अजमार्जारयोस्तथा
मूषकस्यतथोष्ट्रस्यमंडूकस्यचयोषितः ।

१. याज्ञवल्क्यः स्मृति आचाराध्याय श्लो० १४४, ४५, ४७।

पुरुषस्यैलकस्यापिशुनोश्वस्यखरस्यच
एषांयोविततश्चैव अन्तरागमनेकृते ।
त्रिरात्रमुपवासश्च त्रिरात्रमभिषेचनम्" ।

अथतात्कालिकाः—

"खरोष्ट्रगर्दभोलूकसामबाणार्तनिःस्वने
अमेध्यशवशूद्रांत्यश्मशानपतितांतिके ।
देशेऽश्चौवर्त्मनिचविद्युत्स्तनितसंप्लवे
भुक्तार्द्रपाणिरंभोंतरर्द्धरात्रेऽतिमारुते ।
पांसुवर्षेदिशांदाहेसंध्यानीहारभीतिषु
धावतः पूतिगंधेच शिष्टेचगृहमागते ।
खरोष्ट्रयानहस्त्यश्वनौवृक्षेरथरोहणे
सप्तत्रिंशदनध्यायानेतास्तात्कालिकान्विदुः" इति ॥

अथानध्यायापवादः । मनुः—

"वेदोपाकरणे चैव स्वाध्याये चैव नैत्यके
ननिरोधोस्त्यनध्याये होममंत्रजपेषु च"[1] इति ॥७॥

इति स्वोक्त मुहूर्तमार्त्तण्ड टीकायां अनध्याय प्रकरणम ॥९॥

मार्त्तण्डप्रिया--

मध्यरात्रि के समय यदि द्वादशी तिथि के बाद त्रयोदशी तिथि हो, डेढ़ प्रहर रात तक यदि षष्ठी के बाद सप्तमी तिथि हो, एक प्रहर रात के भीतर यदि तृतीया के बाद चतुर्थी लगे तो प्रदोष होता है । इन प्रदोषों से पूर्व की रात्रि में अनध्याय होता है ।

उपाकर्म (श्रावणी) के एक मास पूर्व से ही रात्रि में अध्ययन निषिद्ध होता है ।

कल अनध्याय है यह सोचकर रात्रि में पढ़ना भी निषिद्ध माना गया है । प्रातःकाल और सायंकाल दोनों समय में पठन-पाठन वर्जित है ।

दुर्भोजन (श्राद्धादि अन्न भक्षण), दुष्ट प्रतिग्रह (पापग्रह का दानग्रहण) आदि करने पर तीन दिन तक अनध्याय होता है ॥७॥

मुहूर्त्तमार्त्तण्ड की "मार्तण्डप्रिया" हिन्दीटीका में अनध्याय प्रकरण समाप्त—९ ।

---

१. मनु स्मृति अ० २ श्लो० १०५ ।

पल्ली-सरठ प्रकरणम्–१०

पल्लीपतन-सरठ आरोहण फल एवं शान्ति—

दक्षांगोदरनाभिहृत्सु पतिता पल्ली वरांगे हनुं
त्यक्त्वा नुः शुभदा स्त्रियाः फलमिदं वामेतरव्यत्ययात् ।
इत्याहुःसरठप्ररोहणफलं पातेऽन्यथैके वृथा
पल्ल्यारोहणकेऽपि वस्त्रसहितं स्नात्वा चरेच्छांतिकम् ।।१।।

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथ पल्लीसरठयोः[1] प्रकरणम् । अथपल्लीसरठयोः फलंवृत्तेनैकेनाह । दक्षांगोदरनाभिहृत्सुपतितापल्ली तथाहनुंत्यक्त्वावरांगे उत्तमांगेपतितापल्ली नुःनरस्यशुभदास्यात् । उत्तमांगेहनुंविनासर्वत्रशुभेत्यर्थः । अर्थादन्यत्रनशुभा अन्यांगेषुपुरः पार्श्वपृष्ठेषुनशुभा स्यात् । अथस्त्रियाः विशेषमाहः । स्त्रियाः इदंपुरुषोक्तंफलं वामेतरव्यत्ययात्ज्ञेयं वामंवामांगं तयोर्व्यत्ययोवैपरित्यं तस्मात्पुरुषस्यदक्षांगेयत्फलमुक्तंतत्स्त्रियाः वामांगे ज्ञेयम् । पुरुषस्यवामांगेय-दुक्तंतत्स्त्रियादक्षांगेज्ञेयमित्यर्थः । अर्थाद्यत्रांगेवामेतरविभागाभावस्तत्र पुरुषतुल्यंफलंज्ञेयम् । वरांगेतूभयोः समानमेवफलं वामदक्षिणफलाविशेषात् । सरठफलमाह । इत्याहुः सरठप्ररोहणफलमिति । एवमेवाहुर्मुनय इत्य-ध्याहारः । सरठस्यप्ररोहणेपल्लीवत्फलमित्यर्थः । पातेसरठस्यपाते अन्यथा-विपरीतंफलमाहुः सरठस्यप्ररोहणे यत्फलंतत्तस्यपातेविपरीतफलमाहुरित्यर्थः । एकेवृथा एके आचार्याः वृथाफलमाहुः । सरठस्यप्ररोहणे एवफलंपातेवृथा-फलंनशुभंनचाप्यशुभमित्याहुः इत्यर्थः । पल्लचारोहणकेपि अन्यथाफलमाहुः । पल्लीपतनेयत्फलंतत्तस्यारोहणे अन्यथाविपरीतफलमाहुः । एकेवृथाफलमाहुः पल्लचाः पतने एवफलं प्ररोहणेवृथेत्येके आहुरित्यर्थः । अथात्रविधिमाह । वस्त्रसहितंस्नात्वाचरेच्छान्तिकमिति सचैलस्नानंकृत्वाशान्तिकंशास्त्रोक्त-माचरेत् । तथाचज्योतिर्निबंधे--

"पल्लीस्पर्शफलंवक्ष्येयदुक्तंब्रह्मणापुरा
ब्रह्मस्थानेभवेद्राज्यं स्थानलाभोललाटके ।
कर्णयोर्भूषणावाप्तिर्नेत्रयोःप्रियदर्शनम्
नासिकायांसुगंधानिमुखेमिष्टान्नभोजनम् ।
कपोलयोर्भवेत्सौख्यंहनुदेशेमहद्भयम्
भ्रुकुटचांविग्रहश्चैवकंठेवाव्यसनागमः ।
कलिर्वन्शेसुखंपृष्ठचांदक्षेवामेगदादयः
दक्षांसेविजयोनित्यंवामांसे शत्रुजंभयम् ।

---

१. कोश ग्रन्थों में "सरट" शब्द है परन्तु ग्रन्थ की प्राचीन प्रतियों में सरठ ही लिखा है ।

इष्टलाभोभुजेसव्येकूर्परेमणिबधके
दक्षेकरतलेद्रव्यंतत्पृष्ठेसद्वचयोभवेत् ।
वामेभुजेकूर्परेचमणिबंधेधनक्षयः
वामेकरतलेहानिस्तत्पृष्ठेचार्थनाशनम् ।
हृदयेराजसंमानंसौभाग्यंदक्षिणेस्तने
दक्षपार्श्वेचभोगाप्तिःस्तनेवामेयशोधनम् ।
वामपार्श्वेभवेत्पीडावामकुक्षौशिशोस्तथा
दक्षकुक्षौसुतावाप्तिरुदरेचविशेषतः ।
वस्त्राप्तिर्दक्षकटयांचवामकटयांसुखक्षयः
नाभ्यांमनोरथावाप्तिर्बस्तौगर्भच्युतिर्भगेत्।
गुह्ये मृत्युर्गुदेरोगोदक्षोरौप्रीतिवर्द्धनम्
वामोरौमृत्युतोदुःखंदक्षजानौसुवाहनम् ।
पशु हानिर्वामजानौदक्षिणेजघनेसुखम्
क्लेशःस्याद्वामजंघायांस्फिचिदक्षेर्थवृद्धिकृत् ।
स्फिचिवामेस्त्रीवियोगोदक्षेगुल्फेप्रियागमः
उपप्लवोवामगुल्फेपादयोर्गमनंभवेत्" ।

अत्रयद्यपिसामान्येनोभयोर्गमनफलमुक्तं तथापिदक्षिणपादेगमनाल्लाभो वक्तव्यः । वामपादेगमनेहानिर्वक्तव्या—

"पुरोभागेचदुर्वार्त्तानष्टवार्त्ताचपृष्ठतः
वामेहानिर्धनंदक्षेपरितो भ्रमणेक्षितः ।
वामदक्षिणभागेनयत्फलंकथितंनृणाम्
विपर्ययेणतत्स्त्रीणांज्ञेयंशेषं द्वयोःसमम् ।
इत्थंपल्लयाःप्रपतनेफलंज्ञेयंविचक्षणैः
एतदेवफलंविद्यात्सरठस्यप्ररोहणे ।
पल्लयाःप्ररोहणेचैवपतनेसरठस्यच
तयोःफलस्यव्यत्यासात्तद्वदेवहिजायते ।
पल्लयाःप्ररोहणंरात्रौसरटस्यप्रपातनम्
नातिदुष्टफलंविद्यात्व्याधिमुग्रंविपर्यये ।
पतनानंतरंयस्यरोहणंयदिजायते
पतनेफलमुत्कृष्टंरोहणेल्पफलंभवेत् ।
मृत्युयोगे चजन्मर्क्षेविष्टयांपातेचवैधृतौ
चन्द्रेष्टमेचसक्रूरेलग्नेविघ्नःप्रजायते ।

अंगंदक्षिणमारुह्य वामेनोत्तारतिस्फुटम्
तदाहानिकरीज्ञेयाव्यत्ययेनतुहानिदा ।
चरणादूर्ध्वगोभूयः सद्योरोहतिशीर्षकम्
प्राज्यराज्यंतदादत्ते पल्लीश्वेताविशेषतः ।
चिंतिताभ्यधिकंलाभं स्थिताभोजनभाजने
पादांगुलीषुसंपाताद्धानिश्चमहतीभवेत् ।
पल्लयोःसरटयोर्वापि युग्ममंगेशुभेपतेत्
दंपत्योर्जायतेप्रीतिर्निन्द्यभागेवियोगता ।
शीर्षस्योपरिपतिताशुभायपल्लीसितानान्याः
सितगृहगोधास्पर्शेसर्वेष्वंगेषुशोभनाज्ञेया ।
कृकलासःपतेद्यस्यमूर्ध्निनतद्विघ्नशांतये
मृतसंजीविनींविद्यांजपेन्मुंडितमस्तकः" ।

अथपल्लीसरठयोः शान्तिः--

"पल्लीसरठयोःस्पर्शेसचैलंस्नानमाचरेत्
पंचगव्यंप्राशयित्वाकुर्यादाज्यावलोकनम् ।
शस्तेवाप्यथवाशस्तेयदीच्छेदात्मनःसुखम्
पुण्याहवाचनंकृत्वाशांतिकर्मसमाचरेत् ।
प्रतिरूपंसुवर्णेनकुर्याद्वित्तानुसारतः
रक्तवस्त्रेणसंवेष्टयगंधपुष्पैःप्रपूजयेत् ।
तदग्रेमृन्मयंरम्यंकलशंजलपूरितम्
वस्त्रमाल्यैरलंकृत्यस्थापयेत्तंडुलोपरि ।
पंचामृतंपंचगव्यंपंचरत्नानिशक्तितः
पंचवृक्षकषायांश्चनिक्षिप्यावाहयेत्ततः ।
पूजयेद्गंधपुष्पाद्यैर्लोकपालान्क्रमेणच
अग्निसंस्थापनंकृत्वाहोमकर्मसमाचरेत् ।
मृत्युंजयेनमंत्रेणसमिद्भिःखादिरैःशुभैः
तिलैर्व्याहृतिभिर्होममष्टोत्तरसहस्रकम् ।
अष्टोत्तरशतंवापिकुर्याद्वित्तानुसारतः
अभिषेकंततः कृत्वापावमान्यस्यचद्विजैः ।
पुण्यवारुणसूक्तैश्चदोषशांत्यैद्विजोत्तमः
धौतांबराणिधृत्वाथस्वर्णवस्त्रतिलान्ददेत्।
ब्राह्मणान्भोजयेदित्थंशांतिकर्मकरोतियः
तस्यायुर्विजयोलक्ष्मीःकीर्तिर्बुद्धिःशुभंभवेत्।

पल्लीसरठयोः शांतिः कथिताभृगुणापुरा
शौनकायमुनींद्रायलोकानुग्रहकारिणे" इति ॥१॥
इतिमार्त्तण्डवल्लभायांपल्लीसरठयोः शान्तिप्रकरणम् ॥१०॥

मार्त्तण्डप्रिया—

पल्ली (छिपकिली) पतन–पुरुष के पेट-नाभि-छाती और दाढ़ी को छोड़कर दाहिने भाग के किसी भी अंग पर पल्ली (छिपकिली) के पतन (गिरने) का शुभफल समझना चाहिए। इससे अन्य स्थानों यदि पल्ली पतन हो तो अशुभफल समझना चाहिए।

यह फल स्त्रियों के लिए विपरीत होता है। अर्थात् पुरुष के लिए दक्षिणभाग शुभ और वामभाग अशुभ होता है परन्तु स्त्रियों के लिए दक्षिणभाग अशुभ और वामभाग शुभ होता है।

पल्ली के गिरने का जो फल होता है वहीं सरठ (गिरगिट) के चढ़ने का फल होता है परन्तु पल्ली के चढ़ने और सरठ के गिरने में विपरीत फल समझना चाहिए। अर्थात जिस भाग में पल्ली पतन से अशुभफल होता है उस भाग में सरठ आरोहण का शुभफल और शुभफलवाले भाग में अशुभफल समझना चाहिए।

पल्ली-सरठ-चक्र

पतन	आरोहण	भाग	अङ्ग	पुरुष के लिए	स्त्री के लिए
पल्ली	सरठ	दाहिनें तरफ	पेट-नाभी-छाती-दाढ़ी को छोड़ किसी भी अंग पर	शुभ	अशुभ
		बायें तरफ	,,	शुभ	अशुभ
सरठ	पल्ली	दाहिनें तरफ	पेट-नाभि-छाती दाढ़ी को छोड़ किसी भी अंग पर	अशुभ	शुभ
		बायें तरफ	,,	शुभ	अशुभ

शुद्धि—पल्लीपतन और सरठआरोहण करने पर जो वस्त्र पहने हुए हों उसे पहने हुए ही स्नान करके तत्पश्चात् वस्त्र परिवर्तन करना चाहिए।

शान्ति——एक कटोरे में घी लेकर उसमें अपना मुख देखकर उस घी का दीपक किसी शिवमन्दिर में जला देना चाहिए और महामृत्युंजय मन्त्र का जप स्वयं कर लेना या किसी से करा लेना चाहिए। ऐसा कर देने से उसकी शान्ति हो जाती है ॥१॥

मुहुर्तमार्त्तण्ड की "मार्त्तण्डप्रिया" हिन्दी टीका में पल्ली-सरठ
प्रकरण समाप्त–१०

गोचर प्रकरणम्—११

जन्मराशि से ग्रहों का शुभाशुभत्व और ताराबल—

> स्वर्क्षाच्चचंद्रखलास्त्रिखारिषु शुभाःसप्ताद्यगोऽब्जःपुन-
> श्चापुत्राद्व्ययधर्ममृत्युषु कविःस्वास्तत्रिकोणे गुरुः।
> सौम्यो व्यंत्यसमेऽखिला भवगताःशुक्ले नवेषुद्विग-
> श्चंद्रोऽथो निजभाद्युभं नवहृतं त्र्यद्रीषुशेषं न सत् ॥१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथगोचरप्रकरणंविवक्षुस्तावज्जन्मराशेः सकाशात्कोग्रहः कस्मिन्-स्थानेशुभः कस्मिन्नशुभ इतिचन्द्रशुक्लपक्षेविशेषंताराबलंचवृत्तेनैकेनाह। स्वर्क्षाच्चिचन्द्रखला इति। स्वर्क्षात् स्वजन्मराशेः सकाशात्चन्द्रखलास्त्रिखा-रिषुशुभाः स्युः। त्रिःतृतीयं खंदशमम् अरिःषष्ठं तेषु चंद्रखलाः चंद्रः प्रसिद्धः खलाः पापग्रहाः रविभौमशनिराहुकेतवः शुभाः शुभफलाः भवन्ति। पुनः सप्ताद्यगः अब्जश्चंद्रः शुभः स्यात् सुगमम्। आपुत्राद्व्ययधर्ममृत्युषुकविः शुभःस्यात्। आपुत्राज्जन्मराशितः क्रमेणपंचपर्यन्तं १, २, ३, ४, ५, व्ययो-द्वादशं धर्मनवमं मृत्युरष्टमम् एषुकविःशुक्रःशुभः स्यात्। स्वास्तत्रिकोणेगुरुः शुभःस्यात्। स्वंद्वितीयम् अस्तंसप्तमं त्रिकोणं नवमं पंचमं तत्रगुरुः बृहस्पतिः शुभः स्यात्। सौम्यो व्यंत्यसमे शुभः स्यात्। सौम्योबुधः विगतमंत्यंयस्मात्त-द्व्यंत्यं तच्चतत्समंच तथा तस्मिन्द्वादशस्थानवर्जंसमस्थानेद्वितीयचतुर्थादि-केशुभः स्यादित्यर्थः। अखिलाभवगता शुभाः स्युः सर्वग्रहाः एकादशस्थाने-शुभाः स्युरिति। शुक्लेनवेषुद्विगः चंद्रः शुभः स्यान्नकृष्णपक्ष इति। अथतारा-बलमाह। निजभात्द्युभंनवहृतं त्र्यद्रीषु शेषं नसत्। निजभंस्वजन्मनक्षत्रं तस्मात्द्युभंदिननक्षत्रपर्यन्तंसंगण्य नवहृतं सत् त्र्यद्रीषुशेषं त्रिसप्तपंचशेषं नसत् नशुभम्। अन्यच्छुभमित्यर्थात्सिद्धम्। तथाचविशेषसंग्रहः व्यव-हारसारे—

> "पंथोहानिं प्रियंव्याधिदैन्यंस्वास्थ्यंगतिंगदम्
> पापंसुखंधनंहानिंकरोत्यर्कः स्वजन्मभात्।
> वस्त्रंहानिंधनंरोगंपीडांवित्तंप्रियंवसु
> भयंसुखंधनंरोगंकरोतीन्दुःस्वजन्मभात् ॥

भयंहानिर्धनंवैरंदुःखंलाभंभयंक्षयम्
पापंलाभंसुखंहानिजनेभौमफलंक्रमात् ।
बंधंलाभंभयंक्लेशोशोकंलक्ष्मीक्षयंधनम्
रोगंभोगंसुखंहानिकरोतिज्ञः स्वजन्मभात् ।
भयंवित्तंरुजं हानिलाभंशोकंसुखंरुजः
मानंदैन्यंधनंपीडांकरोतिजन्मभाद्गुरुः ।
जयंवित्तंधनंसौख्यंपुत्रान्वैरंशुभंसुखम्
धर्मंदुःखंधनंलाभंजनेः शुक्रोददातिवै ।
भयंशोकंधनंदुःखंहानिसुहृत्क्षयंमृतिम्
पापंश्रमंधनंहानिजनेः पंगुफलंक्रमात् ।
राहुकेत्वोःफलंशनिकुजवत् ॥१॥

मार्त्तण्डप्रिया--

जन्म की राशि से ३रे १०वें और ६ठे स्थानों में चन्द्रमा एवं पापग्रह रहें तो शुभ होता है । चन्द्रमा जन्मराशि से सातवें और प्रथम स्थान में भी शुभ होता है ।

जन्मराशि से १-२-३-४-५-१२-९ और ८' इन स्थानों में यदि शुक्र रहे तो शुभ होता है । बृहस्पति २-७-९ और ५ इन स्थानों में शुभ होता है। बुध २-४-६-८ और १० स्थानों में रहे तो शुभ होता है ।

कोई भी ग्रह ११वें स्थान में शुभ होता है, शुक्लपक्ष में चन्द्रमा ९-५ और २ स्थानों में शुभ होता है कृष्णपक्ष में नहीं ।

ग्रह गोचर चक्र

ग्रह	स्थान	शुभ	अशुभ
पापग्रह—	जन्मराशि से	३-६-१०	१-२-४-५-७ ८-९-११-१२
चन्द्रमा—	,,	१-३-६-७-१०	२-४-५-८-९ ११-१२
बुध—	,,	२-४-६-८-१०	१-२-५-७-९ ११-१२
बृहस्पति—	,,	२-५-७-९	१-३-४-६ ८-१०-११-१२
शुक्र—	,,	१-२-३-४-५-८ ९-१२	६-७-१०-११

ताराबल--जन्मनक्षत्र से दिन के नक्षत्र तक गिनने पर जो संख्या हो उसमें ९ से भाग देने पर यदि ३-५-७ शेष बचे तो अशुभ और यदि १-२-४-६-८-९ शेष बचे तो शुभ तारा होती है।

सत्ताईस नक्षत्रों में नौ-नौ नक्षत्रों की तीन आवृत्ति होती है। इन नौ नक्षत्रों की आवृत्ति को तारा भी कहा जाता है। नौ ताराओं के नाम इस प्रकार है—

१—जन्म	२—सम्पत्	३—विपत
४—क्षेम	५—प्रत्यरि	६—साधक
७—वध	८—मैत्र	९—अतिमैत्र

ये तारायें अपने नामानुसार फल देती हैं जैसे—३री (विपत). ५वीं (प्रत्यरि) और ७वी तारा (वध) अशुभ होती हैं ॥१॥

ग्रहों के परस्पर वेधस्थान—

षष्ठांत्ये खजले सुतायभवने त्र्यंके रवेःस्यान्मिथ
स्त्रयंके जन्मसुते खके मृतिभवे द्व्यस्ते षडंत्ये विधोः।
त्र्यर्कलाभसुते सपत्नतपसोर्व्यर्काशुभानां व्यधो-
ष्टाद्ये पुत्रधनेऽष्टखे कसहजेऽर्यङ्के भवांत्ये विदः ॥२॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथसर्वेषांग्रहाणांवेधंवृत्तद्वयेनाह। षष्ठांत्ये इति। षष्ठंप्रसिद्धम् अंत्यं-द्वादशंतस्मिन् मिथः परस्परंवेधः तद्वत्खजलेसुतायभवने त्र्यंके अयंरवेर्वेधः स्यात्। अत्रांकन्यास एवव्याख्यानम्। सप्तम्युपलक्षितैःपदैःवेधाज्ञेयाः। तद्यथा षष्ठां ६ त्ये १२ ख १० जले ४ सुता ५ य ११ भवने त्र्यं ३ के ९ रवेः सूर्यस्यायंवेधः। त्र्यं ३ के ९ जन्म १ सुते ५ ख १० के ४ मृति ८ भवे ११ द्व्य २ स्ते ७ षडं ६ त्ये १२ विधोरयंवेधः। त्र्य ३ र्क १२ लाभ ११ सुते ५ सपत्न ६ तपसो ९ व्यर्काशुभानां व्यधोयम्। विगतोर्कोयेभ्यस्तेव्यर्काः तेचते अशु-भाश्चव्यर्काशुभाः रविरहितपापग्रहाः तेषामयंवेध इत्यर्थः। अष्टा ८ द्ये १ पुत्र ५ धने २ ष्ट ८ खे १० क ४ सहजे ३ र्यं ६ के ९ भवां ११ त्ये १२ विदः बुधस्यायंवेधः ॥२॥

मार्त्तण्डप्रिया—

सूर्य का षष्ठ-द्वादश, दशम-चतुर्थ, पंचम-एकादश और तृतीय-नवम इन स्थानों में वेध होता है। अर्थात सूर्य षष्ठ में रहे तो दूसरा ग्रह द्वादश में अथवा सूर्य द्वादश में रहे तो दूसराग्रह षष्ठ में, ऐसी स्थिति रहने पर उस ग्रह से परस्पर

वेध होता है। इसीप्रकार चन्द्रमा का तृतीय-नवम, प्रथम–पंचम, दशम–चतुर्थ, अष्टम–एकादश, द्वितीय–सप्तम और षष्ठ–द्वादश इन स्थानों में परस्पर वेध होता हैं।

बुध का अष्टम–प्रथम, पंचम–द्वितीय, अष्टम–दशम, चतुर्थ–तृतीय, षष्ठ–नवम, और एकादश-द्वादश इन स्थानों में परस्पर वेध होता है। सूर्य को छोड़कर अन्य पापग्रहों का तृतीय–द्वादश, एकादश–पंचम और षष्ठ–नवम इन स्थानों में परस्पर वेध होता है ।।२।।

परस्पर वेधस्थान—

द्व्यस्तेऽष्टादिमयोःखके नवसुते त्रीशेऽष्टपुत्रे त्रिका-
ल्पेऽर्यन्त्ये कभवे भृगोर्ज्ञशशिनोःशन्यर्कयोर्नो व्यधः ।
विद्धो व्यस्तफलो भवेद्द्विचरो हेमाद्रिविंध्यांतरे
खेटर्क्षाद्व्यधखेचरं विगणयान्यत्रोभयं जन्मभात् ।।३।।

मार्त्तण्डवल्लभा—

द्व्यस्तेति। द्व्य २ स्ते ७ ष्टा ८ दिमयोः १ ख १० के ४ नव ९ सुते ५ त्री ३ शे ११ ष्ट ८ पुत्रे ५ त्रि ३ कल्पे १ यँ ६ त्यें १२ क ९ भवे ११ भृगोः शुक्रस्यायंवेधः। गुरोर्वेधः संस्कारप्रकरणेकथितः। सोत्रसिद्धोज्ञेयः। अत्र वेधविधानेज्ञशशिनोः बुधचन्द्रयो शन्यर्कयोश्चपरस्परं नो व्यधः स्यात्। परस्परं वेधोनास्ति। एतदुक्तंभवति—

विन्ध्यहिमालययोर्मध्येजन्मराशेःसकाशात् अन्यतमग्रहाधिष्ठितराशिपर्यंतंगणयित्वातद्राशेः सकाशात् यथोक्तवेधस्थानपर्यन्तंगणयेत्। तत्रयदिकश्चिद्ग्रहोभवतितदागणितोग्रहोविद्धोभवति। अन्यदेशेषुजन्मराशेः सकाशात् उभयग्रहंतद्वेधनस्थानंचगणयेत्। यदावेधस्थानेकश्चिद्ग्रहोभवति तदान्योग्रहोविद्धोभवति। तत्रसूर्यस्यशनिवेधोनास्ति शनेःसूर्यस्य वेधोनास्ति। एवं-चन्द्रबुधयोःपरस्परंज्ञेयम्। अथवेधनप्रयोजनमाह। विद्धोव्यस्तफलो भवेद्द्विचर इति। विद्धोग्रस्तोव्यस्तफलःस्यात् प्रथमश्लोकोदितंफलंव्यस्तंविपरीतं भवतीत्यर्थः रत्नमालायामपि—

बामवेधविधिनात्वशोभना अप्यमीशुभफलंदिशंत्यलम् ।
तेमृषावचनभाषिणोजनायांतिहास्यमपिकीर्तिलाञ्छनम्" इति ।।

अथदेशविशेषेणवेधगणनाविशेषमाह। हेमाद्रिविंध्यांतर इति। अस्यार्थः पूर्वमेवव्याख्यातः ॥३॥

इति मुहूर्तमार्त्तण्डे मार्त्तण्डवल्लभायां गोचरप्रकरणं समाप्तम् ॥११॥

मार्त्तण्डप्रिया—

शुक्र का द्वितीय–सप्तम, अष्टम–प्रथम, दशम–चतुर्थ, नवम–पंचम, तृतीय–एकादश, अष्टम–पंचम, तृतीय–प्रथम, षष्ठ–द्वादश और चतुर्थ–एकादश इन स्थानों में परस्पर वेध होता है।

उपरोक्त जो वेध के स्थान हैं उनमें चन्द्र–बुध और सूर्य–शनि में परस्पर वेध नहीं होता है, क्योंकि इन सबों में पिता-पुत्र का सम्बन्ध रहता है।

वेध फल— वेधित ग्रह का विपरीत फल होता है। अर्थात गोचर से यदि शुभस्थान में भी ग्रह रहे तो वेधित होने पर अशुभ फल ही देता है।

स्थान भेद से वेध नियम— हिमालय और विन्ध्यप्रदेश के बीच वाले क्षेत्रों में वेधराशि की गणना जन्मकालिक ग्रहाश्रित राशि से करनी चाहिए। जैसे सूर्य जन्मकाल में जिसराशि का रहे उससे छठी और १२वीं राशि में परस्पर सूर्य का वेध समझना चाहिए।

अन्य क्षेत्रों में जन्मराशि से ही ग्रहों का वेध देखना चाहिए। अर्थात जन्मराशि से छठे में सूर्य और १२वें में कोई दूसरा ग्रह रहे तो वेध होगा। इसी तरह अन्य ग्रहों का भी समझें।

वेध सारिणी

ग्रह	सूर्य	चन्द्र	बुध	शुक्र	भौम शनि राहु
परस्पर वेध स्थान	३–१९ १०–४ ५–११ ६–१२	१–५ २–७ ३–९ ६–१२ ८–११ १०–४	४–३ ५–२ ६–९ ८–१ ८–१० ११–१२	२–७ ३–१ ३–११ ४–११ ६–१२ ८–१ ८–५ ९–५ १०–४	३–१२ ५–११ ६–९

यहाँ बृहस्पति का वेधस्थान नहीं बतलाया गया है क्योंकि संस्कारप्रकरण के उपनयन मुहूर्त में पहले ही गुरु वेध का विचार किया जा चुका है ॥३॥

मुहूर्तमार्त्तण्ड की 'मार्त्तण्डप्रिया' हिन्दी टीका में गोचर प्रकरण समाप्त ॥११॥

संक्रान्ति प्रकरणम्–१२

राशिभेद से संक्रान्तियों का पुण्यकाल और फल—

ऊर्ध्वं द्व्यात्ममृगेऽर्कसंक्रमणतः पूर्वं स्थिरे कर्कटे
जूकाजोभयतःखरामघटिकाःपुण्या मृगे दिग्युता ।
कर्काजांत्यवृषेणसूर्यचलनं निश्यन्यभं सद्दिवा
सूर्यारार्किदिने तृतीयकरणे प्रांत्येऽष्टमे दुःखदम् ॥१॥

मार्त्तण्डवल्लभा––

अथसंक्रांतिफलंविवक्षुस्तावद्राशिपरत्वेनपुण्यकालंवृत्तार्द्धेनाह । द्व्यात्मनो द्विस्वभावाराशयः मिथुनकन्याधनुर्मीनाः मृगोमकरः एषांसमाहारस्तस्मिन्नर्क-संक्रमणतःसूर्य संक्रमणकालात्सकाशात् ऊर्ध्वमुपरिखरामघटिकाःपुण्याःस्युः । स्थिरेवृषसिंहवृश्चिककुंभानामन्यतमेराशौ कर्कटःप्रसिद्धःअर्कसंक्रमणतःपूर्वं प्रथमंखराम ३० घटिकाः पुण्याःस्युः । जूकाजोभयतः जूकस्तुला अजोमेषः अनयोरर्कसंक्रमणतःसकाशादुभयतःखराम ३० घटिकाःपुण्याःस्यु । पूर्वंपंच-दश ऊर्ध्वंपंचदशेतित्रिंशत्घटिका इत्यर्थः । एवंसर्वराशिसंक्रमणपुण्यकालमुक्त्वे-दानींमकरेपुण्यकालविशेषमाह । मृगेदिग्युता इति । मृगेमकरेताःखराम ३० घटिकादिग्युताःदशयुताः चत्वारिंशत्घटिकाःपुण्या इत्यर्थः । तथाचोक्तं-ज्योतिर्निबंधे—

संक्रांतिसमयःसूक्ष्मोदुर्लभःपिशितेक्षणैः
तस्ययोगादधश्चोर्ध्वं त्रिंशन्नाड्यःप्रकीर्तिताः ।
अर्वाक्षोडशनाड्यस्तुपरतश्चैवषोडशः
पुण्यकालोर्कसंक्रांतेः स्नानदानादिकर्मसु ।
त्रिंशत्कर्कटसंक्रांतौ पूर्वतःपुण्यनाडिकाः
मकरेतूत्तराः पुण्याश्चत्वारिंशच्चनाडिकाः ।
स्थिरेविष्णुपदेकर्कदक्षिणायनमादितः
मृगेसौम्यायनंद्व्यङ्गे षडशीतिमुखंपुरः। ।
घटजेविषुवेमध्येपुण्यंदानाद्यनंतकम्
प्रागर्द्धंरात्रात्पूर्वेद्युःपुण्यंपश्चात्परंदिनम्" ।

प्रागर्द्धरात्रादित्येतद्विषुवविषयम्—

कार्मुकंतुपरित्यज्यमृगंसंक्रमतेरविः
प्रदोषेवार्द्धरात्रेवातदाभोगः परेऽहनि।
रविसंक्रमणेपुण्येयोनस्नातीहमानवः
सप्तजन्मांतरेरोगी दुःखभाग्निर्धनोभवेत''।

आदित्यपुराणे—

शतमिंदुक्षयेदानमुपरागेत्वनंतकम्
षडशीत्यांसहस्रंतु विष्णुपद्यांतथैवच।
विषुवेशतसाहस्रकोटिघ्नंदक्षिणायने
शतकोटिगुणंपुण्यं जायते उत्तरायणे'' इति।

अथोत्तरार्द्धेनसंक्रांतेः सदसत्फलमाह। कर्केति। कर्कः प्रसिद्धः अजोमेषः अंत्योमीनः वृषःप्रसिद्धः एणो मकरः एतान् सूर्यचलनंनिशिरात्रौसत्स्यात्। अन्यभंप्रतिसूर्यचलनंसूर्यसंक्रमणंदिवा सत्स्यात्। अर्थाद्विपरीतंनशोभनम्। सूर्यारार्किदिनेरविभौमशनिदिनेतृतीयकरणेकौलवे प्रांत्येकिंस्तुघ्ने अष्टमेश-कुनौसर्वराशिसंक्रमणंदुःखदंयात्। तथाचोक्तं—

मृगकर्काजगोमीनसंक्रान्तिर्निशिसौख्यदा
शेषेषुसप्तसुदिवाव्यत्ययादशुभंभवेत्।
संक्रांतिर्जायतेयत्रभास्करेभूसुतेशनौ
तत्रमासिभवेद्घोरंदुर्भिक्षंवृष्टिचोरजम्।
स्यादुत्थितस्य किंस्तुघ्नेशकुनेकौलवेरवेः
संक्रांतिस्तैतिलेनागे प्रसुप्तस्यचतुष्पदे।
निविष्टस्यगरेविष्टौ वणिजेबालवेबवे
दुर्भिक्षंरोगबाहुल्यमूर्ध्वंसंक्रमतेरविः।
सुप्तःकरोतिकल्याणमुपविष्टःसमंफलम्'' इति ॥१॥

मार्त्तण्डप्रिया—

ग्रहों के एक राशि से दूसरी राशि में संक्रमण को संक्रान्ति कहते हैं। इस तरह प्रत्येक ग्रह के राशिसंचार को संक्रान्ति कहा जा सकता है परन्तु समस्त ग्रहों में सूर्य ही स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है अन्य ग्रहों का बिम्ब छोटा होने के कारण उनका संक्रान्ति काल भी बहुत कम होता है जिसके कारण उनकी संक्रान्तियों का उल्लेख नहीं किया जाता है और सूर्य की संक्रान्ति का उल्लेख इसलिए किया जाता है कि सूर्य का बिम्ब बड़ा होने के कारण उसका संक्रान्ति काल भी ज्यादा होता है। अतः संक्रान्ति शब्द से सूर्य की संक्रान्ति का ही बोध किया जाता है।

संक्रान्ति का पुण्यकाल--द्विस्वभाव राशियों (मि. कन्या, ध. मी.) और मकर राशि की संक्रान्ति के पश्चात् ३० घटी पुण्यकाल होता है। स्थिर राशियों (वृष. सिं. वृश्चि. कु.) और कर्क राशि की संक्रान्ति के पूर्व ३० घटी पुण्यकाल होता है। तुला और मेष राशि की संक्रान्ति में पूर्व और पश्चात में १५+१५ घटी मिलाकर ३० घटी का पुण्यकाल होता है। मकरराशि की संक्रान्तिसे सूर्य के उत्तरायण होने के कारण १० घटी का विशेष पुण्यकाल होता है जिसके कारण मकर संक्रान्ति में ३०+१०=४० घटी[1] का पुण्यकाल संक्रान्ति के पश्चात माना जाता है।

संकान्ति का फल—कर्क-मेष-मीन-वृष और मकर राशियों की संक्रान्ति यदि रात्रि में हो तो शुभ होती है अन्यथा दिन में होने पर अशुभ कारक होती है।

मिथुन-सिंह-कन्या-तुला-वृश्चिक-धनु और कुम्भ राशियों की संक्रान्ति दिन में शुभ और रात्रि में अशुभ होती है।

रवि-भौम-शनिवारों में और कौलव-किंस्तुघ्न शकुनि करणों में यदि कोई संक्रान्ति हो तो वह दुखदायक होती है। अन्य वारों और करणों में होने पर सुखदायक होती है ॥१॥

अधिमास-क्षयमास लक्षण--

ब्रह्माद्यैरिनमंडलांत उदितश्चांद्रस्त्वमांतःपरै-
र्मासोऽसंक्रमणो द्विसंक्रमणको ज्ञेयोऽधिकोऽथो क्षयः ।
कर्माण्यन्यगतीनि नात्र तनुयाद्यज्जन्ममृत्यू क्षये
तन्मासौ तिथिखंडयोश्चयमुखे भृत्येऽधिको गण्यते ॥२॥

मार्त्तण्डवल्लभा--

अथसंक्रातिप्रसंगेनअधिमासक्षयमासयोर्लक्षणंतत्रकर्तव्याकर्तव्यंक्षयमासे जन्ममरणादौमासज्ञानंवृत्तेकेनाह। ब्रह्माद्यैरिति। ब्रह्माद्यैःसिद्धांतकर्तृभिः-इनमंडलांतःसूर्यमंडलान्तः चांद्रःचांद्रोमासः उदितः। परैराचार्यैःअमांतश्चांद्रोमासः उदितः। एतदुक्तं भवति अमावास्यांतादपरो अमावस्यांतोयावत्तावदमांतोमासः। अमावास्यांतेसूर्यचंद्रमंडलयोर्योगोभवति परतः षड्भिर्घटिकादिभिर्वियोगोभवति। तस्माद्वियोगादपरा वियोगोयावत्तावद्रविमण्डलांतो-

१. "मकरे विंशती परा" ऐसा वचन मिलता है जिसके आधार पर विंशतिश्च विंशतिः=२०+२०=४० (विंशती) मकर संक्रान्ति का पुण्यकाल होता है।

मासः । सब्रह्माद्यैःक्षयमासाधिमासनिर्णयविषये अंगीकृतः अपरैरमांतोमांसोंगीकृत इत्यर्थः । अत्रयद्यपिसूर्यग्रहणेमध्यग्रहणकालानंतरं मोक्षस्थितिकालः षड्घटिकाभ्योन्यूनोदृश्यतेतथापिसूक्ष्मदर्शिभिः पूर्वाचार्यैः रसनाड्योर्क मंडलमित्युक्तम् । तत्रागमएवप्रमाणंतत्र उक्तलक्षणोमासःअसंक्रमणःसंक्रांतिरहित अधिकोज्ञेयः द्विसंक्रमणकःसंक्रांतिद्वययुक्तःक्षयोज्ञेयः । अस्योदाहरणंब्रह्ममतानुसारिणाश्रीभास्कराचार्येणसिद्धांतशिरोमणौदर्शितम्—

असंक्रांतिमासोऽधिमासःस्फुटं स्याद्विसंक्रांतिमासःक्षयाख्यःकदाचित् ।
क्षयःकार्तिकादित्रये नान्यथास्यात्तदावर्षमध्येऽधिमासद्वयंच ॥

गतोब्ध्यद्रिनंदै ९७४ मितेशाककाले
तिथीशैर्भविष्य १११५ त्यथांगाक्षसूर्यैः १२५६ ।
गजाद्र्यग्निभूभि १३७८ स्तथाप्रायशोऽयं-
कुवेदेंदुवर्षैः १४१ क्वचिद्गोकुभि १९ श्च''[1] ॥

श्रीभास्कराचार्येणाब्ध्यद्रिनंदै ९७४ मितशाककालादुपरितिथीशै १११५ मितशाककालात्पूर्वंसिद्धांतशिरोमणिर्विरचितः । अतएवोक्तं—

गतोब्ध्यद्रिनंदैर्मितेशाककालेतिथीशैर्भविष्यति'' इति ।

तत्रगजाद्र्यग्निभूभिः तुल्येशाककाले रविमंडलांतमासप्रामाणेनक्षयमासाधिमासौप्रदृश्येते आश्विनीअमावास्याबुधेचतुश्चत्वारिंशत्घटिका ४४ तस्मिन्नेवदिनेसप्तत्रिंशत् ३७ घटिकास्वतीतासुतुलासंक्रमणंमभूत् आश्विनस्तुलासंक्रांतियुक्तत्वाच्छुद्धः कार्तिकी अमावास्या शुक्रे सप्तदशघटिका १७ तस्मिन्नेवदिनेत्रिंशत्घटिकास्वतीतासुवृश्चिकसंक्रांतिरभूत्। अयनसंक्रांतित्वादधिकः कार्तिकः अपरोमासोवृश्चिकसंक्रांतियुक्तःतस्माच्छुद्धोयंकार्तिकःतस्यामावास्याशनौसप्तचत्वारिंशत् ४७ घटिकास्तस्मिन्नेवदिने एकोनषष्टिघटिका ५९ स्वतीतासुधनुःसक्रमणमभूत् । धनुःसंक्रमणंमार्गशीर्षेजातं तस्यामावास्यासोमेपादोनपचदशघटिका तस्मिन्नेवदिने एकोनविंशतिघटिकास्वतीतासुमकरसंक्रांतिरभूत् इयंमकरसंक्रांतिर्यद्यपि अमांतमतिक्रम्यजातातथापिरविमंडलांतमासप्रमाणेनपूर्वमास एवपतिता तस्मात्संक्रांतिद्वययुक्तत्वात् मार्गपौषयुगलंक्षयाख्यंजातम् । माघी अमाभौमे एकचत्वारिंशत् ४१ घटिकातस्मिन्नेवदिनेषट्चत्वारिंशत् ४६ घटिकास्वतीतासुकुंभसंक्रांतिरभूत् । इयमपिसंक्रांतिर्यद्यपिमासमतिक्रम्यजातातथापिमंडलांतमासप्रमाणेनपूर्वमासस्यैव तस्मान्माघः शुद्धः अन्यथामंडलांतमासानंगीकारे—

---

१. सिद्धान्तशिरोमणि—म० धि० अधि० निर्णय ६, ७ ॥

नक्षयोनाधिमासःस्यान्माघोवैपरिकीर्तितः"

इत्येतच्छास्त्रमनर्थकंस्यात् । आर्यपक्षेतुसंदेहोनास्ति यतोब्रह्मपक्षतिथितः आर्यपक्षतिथिश्चतुर्घटिका ब्रह्मपक्षसंक्रांतितः आर्यपक्षसंक्रांतिस्त्रिघटिकोना तस्मादार्यपक्षे संदेहाभावः तथाचफाल्गुनी अमागुरौषड्घटिकातस्मिन्नेवदिने-पंचत्रिंशत्घटिका ३५ स्वतीतासुमीनसंक्रांतिर्जातातस्मादयंफाल्गुनः असंक्रांति-त्वादधिकः—

क्षयःकार्तिकादित्रये नान्यथास्यात्तदावर्षमध्येऽधिमासद्वयंच"[1] इति ।

तस्योदाहरणंदर्शितम् । यत्तुब्रह्मपक्षे क्षयमासाधिमासनिर्णये अमांतंमासं-गणयंति तैर्ब्रह्ममतंनविदितम् । पौलस्त्यसिद्धन्ते—

स्फुटगत्यायदाचंद्रोरविमंडलमध्यगः
तदूर्ध्वंसंक्रमोभानोर्मासः सस्यान्मलिम्लुचः" ।

कालनिर्णये—

संक्रमोयदिभवेद्रवेस्ततोमंडलाद्बहिरनिर्गतेविधौ
उच्यतेथसहि संक्रमोबुधैःशुद्धमास इतरोमलिम्लुचः"।

लल्लः —

यदाशशी यातिगभिस्तमंडलं दिवाकरः संक्रमणंकरोत्यनु
विवाहयज्ञोत्सवनाशहेतुकस्तदाधिमासः कथितः स्वयंभुवा" ।

रत्नमालायाम् —

सवितृमंडलमेतियदाशशीतदनुसंक्रमणंकुरुतेरविः
मखमहोत्सवनाशकरस्तदामुनिवरैर्गदितोधिकमासकः" ।

शार्ङ्गधरफलग्रंथे—

चंद्रार्कयोस्तुबिंबैक्यंप्रतिपद्दर्शसंधिषु
तिथ्यंतात्तदुभयतोरसनाड्योर्कमंडलम् ।
तन्मंडलाच्छशीगच्छेत्ततः सूर्यस्यसंक्रमः
मासोऽसौमलिनः प्रोक्तोनतद्धीनोधिकः स्मृताः" ।

पितामहः—

प्रतिपद्दर्शसंधौतुबिंबैक्यंचंद्रसूर्ययोः
जवांतराप्तंषष्टिघ्नंनाडिका अर्कमंडलम्" ।

अत्रकलात्मकबिंबग्रहणं ज्योतिष्प्रकाशे—

दर्शांत एकैः कथितोत्रमासः परैःप्रदिष्टोरविमंडलांतः
मतद्वयेचेद्रविसंक्रमःस्यात्स एवपूर्वस्यनचापरस्य" ।

१. सि० शिरो०—म० धि० अधिमासनिर्णय ६ ॥

पितामहः—

अष्टाधिमासाः स्युर्नित्यंप्रोच्यंतेफाल्गुनादयः
सौम्यपौषौक्षयोर्नित्यंभवेतामितिनिश्चितम् ।
क्षयोवाप्यधिमासोवास्यादूर्जं इतिनिश्चितम्
नक्षयोनाधिमासःस्यान्माघोवैपरिकीर्तितः ।
पंचमासास्तुवंशाखादधिमासाव्यवस्थिताः
भवंतिचाष्टभिर्वर्षैर्भवै ११ र्वाकनिशाकरैः १९ ।
तथैवफाल्गुनश्चैत्र आश्विनःकार्तिकोधिकः
एतेर्विवद्रैः १४१ शरांगै ६५ र्वाकदाचिद्गोकुवत्सरैः १९ ।
मार्गपौषौक्षयौस्यातांकदाचित्कार्तिकोभवेत्
अधिमासस्तदाज्येष्ठोभवेन्नित्यंक्षयोयदा ।
क्षयात्प्रागधिमासःस्यान्नित्यंभाद्रपत्रये
आश्विनोर्जौ सदास्यातामादौभाद्रपदःसकृत्" ।

यस्मिन्वर्षेकार्तिकक्षयोभवति तस्मिन्वर्षेज्येष्ठाधिमासोभवेत् । अत्रज्येष्ठशब्देनभाद्रपदोज्ञेयः । यतः—

क्षयात्प्रागधिमासःस्यान्नित्यंभाद्रपदत्रये"

इतिनियमात् । भाद्रपदादीनांत्रयाणांमध्येभाद्रपदोज्येष्ठोजानीयादित्यर्थः अथाधिमासक्षयमासयोः कार्याकार्याण्याह । कर्माण्यन्यगतीनिनात्रतनुयादिति । अन्यागतिर्येषांतानि अन्यगतीनितानि अत्राधिमासक्षयमासयोर्नतनुयान्नविस्तारयेत्नकुर्यात् । अर्थादनन्यगतीनिकर्माण्यत्रापिकर्तव्यानीतिसिद्धम् । अन्यगतीनामनन्यगतीनामित्थंविचारः यानिकालनिरोधेनप्रोक्तानितान्यनन्यगतीनि यथाऋतोजायामुपेयात् तत्र—

ऋतुः स्वाभाविकः स्त्रीणां रात्रयः षोडश स्मृताः"

इतिमनुनाऋतुप्रमाणमुक्तम् । अथषोडशरात्रीणांमध्येनिंद्यदिनान्यपहायगच्छेत् । सऋतुर्यदिमलमासशुद्धमासांशैर्व्याप्नोतितदाशुद्धमासांशेदोषरहितेगर्भाधानंकुर्यात् । असंभवेमलमास एवकुर्यात् । तथाचोक्तम् —

अनन्यगतिकंकुर्यान्नित्यंनैमित्तिकंतथा" ।

एवमन्यान्यपिविचार्यकुर्यात् । गर्भाधानाद्यन्नप्राशनांतकर्मसुमलमासादीनांनिषेधोनास्तीतिसंस्कारेण उक्तमस्ति ।

गर्भाद्यन्नाशनांतेषुन गुरुसितमौढ्यम्" इत्यादि ।

तथाचगर्गः—

अग्न्याधेयप्रतिष्ठांचयज्ञदानव्रतानिच
वेदव्रतवृषोत्सर्गचूडाकरणमेखलाः ।
गमनंदेवतीर्थानांविवाहमभिषेचनम्
यानंचगृहकर्माणिमलमासेविवर्जयेत्" इति ।

तथाचसूर्योदये--

अवश्यकर्ममासाख्यंमलमासमृताब्दिकम्
तीर्थेभच्छाययोःश्राद्धंमघानंगपितृक्रियाम् ।
कुर्यान्मलिम्लुचेवर्षेमध्ये चेत्सर्वदाधिकम्
तत्रस्यान्मासिकंमृत्युं मासात्सद्वादशोयदि ।
प्रेतक्रियांसमाप्यात्र कुर्वीताभ्युदयंतथा
श्यामाकाग्रयणंकृच्छेनस्याद्वर्ज्यमतोन्यथा" ।

अन्यच्च—

काम्यारंभंवृषोत्सर्गंपर्वोत्सवमुपाकृतिम्
मेखलाचौलमांगल्याग्न्याधानोद्यापनक्रियाः ।
वेदव्रतमहादानाभिषेकान्वर्द्धमानकम्
इष्टापूर्तंतथायस्यविध्यलोपोन्यदाकृतौ ।
तत्सर्वमष्टकादन्यदधिमासेविवर्जयेत्
सूतकेपिचकर्तव्यंस्नानाद्यं राहुदर्शने" इति ।

स्मृतिरत्नावल्याम्—

प्रवृत्तंमलमासात्प्राग्यत्कार्यमसमापितम्
आगतेमलमासेपितसमाप्यमसंशयम्" इति ।

अथक्षयमासेजन्मादौमासज्ञानमाह । यज्जन्मेति । जन्मचमृत्युश्चजन्म-मृत्यू यस्यजन्ममृत्यूयज्जन्ममृत्यू क्षयेक्षयमासिभवतस्तस्यमासौतिथिखंडौज्ञा-तव्यौ तिथेःप्रथमेर्धेजन्मवामृत्युर्वाभवति तदाप्रथममासः । द्वितीयेर्द्धेद्वितीयो-मासोज्ञेयः । तथाचबृहत्कालनिर्णये--

तिथ्यर्द्धेप्रथमेपूर्वोद्वितीयेर्द्धेतथोत्तरः
मासावितिधर्ज्ञेयौक्षयमासस्यमध्यगौ" इति ।

अथमलमासःकुत्रकुत्रगण्यत इत्याह चयमुख इति । चयोगर्भाधानादेर्वृद्धिः गर्भस्यकलिलंघनांकुरास्थिचर्मादिचयःप्रतिमासे भवति घनादीनांदिनकलांत-राचयस्तदादिके प्रेष्योभृत्योवेतनदानार्थमधिकोमासोगण्यते । तथाचयमः—

गर्भेवार्धुषिकेभृत्योश्राद्धकर्मणिमासिके
सपिंडीकरणे नित्ये नाधिमासंविवर्जयेत्" इति ।

पाठांतरव्याख्यानम्। अधियुगेपूर्वोधिमाः प्राकृत इति एकस्मिन्वर्षे-अधियुगे अधिकद्वयेसतिपूर्वोधिमाः प्रथमोधिमासः प्राकृतः प्राकृतमासवज्ज्ञेयः-अधिकवन्नत्याज्यः। अर्थादुत्तरोधिकमासोमलमासः। तदुक्तं—

मासद्वयेब्दमध्येच संक्रम्येनभवेद्यदा।
प्राकृतस्तत्रपूर्वंस्यादुत्तरस्तुमलिम्लुचः" इति ॥२॥

इतिमुहूर्तमार्त्तण्डटीकायांमार्त्तण्डवल्लभायांसंक्रांतिप्रकरणंसमाप्तम् ॥१२॥

मार्त्तंण्डप्रिया—

ब्रह्मादि सिद्धान्तानुसार सूर्य और चन्द्रमा के बिम्बों के प्रथम वियोगकाल से द्वितीय वियोगकाल तक एक चान्द्रमास होता है। कुछ अन्य आचार्यों के मत से एक अमान्त से दूसरे अमान्त तक एक चान्द्रमास होता है। जिस चान्द्रमास (अमान्त से अमान्त) में सूर्य की संक्रान्वि नहीं होती है वह चान्द्रमास "अधिमास" संज्ञक होता है, तथा जिस चान्द्रमास में सूर्य की दो संक्रान्तियाँ होती हैं वह "क्षयमास" संज्ञक होता है।

जैसे ज्येष्ठ की अमावास्या से आषाढ़ की अमावास्या तक जो चान्द्रमास होता है उसमें यदि सूर्य की मिथुनसंक्रान्ति हो तो वह ज्येष्ठमास होता है अन्यथा संक्रान्ति नहीं होने पर वह् अधिमास कहलाता है। ऐसी स्थिति में ज्येष्ठ कृष्ण १४ को वृषकी संक्रान्ति और आषाढ़ शुक्ल १ को मिथुन की संक्रान्ति होती है जिसके कारण बीच का मास "अधिमास" हो जाता है। फलस्वरूप उस वर्ष १३ चान्द्रमास हो जाते हैं।

एक अमान्त से दूसरे अमान्त के बीच यदि सूर्य की दो संक्रान्तियाँ हो जाती हैं तो वह मास "क्षयमास" हो जाता है। जैसे यदि ज्येष्ठ अमान्त को वृष की संक्रान्ति और आषाढ़ अमान्त को मिथुन की संक्रान्ति हो जाय तो वह क्षयमास हो जायेगा। परन्तु क्षयमास की स्थिति कार्तिक मार्गशीर्ष और पौष मास में ही होती है।

अधिकमास क्षयमास में कृत्य--जो संस्कार दूसरे समय में भी किए जा सकते हैं वे संस्कार (मुण्डन व्रतबन्ध-विवाह) अधिकमास-क्षयमास में नहीं करना चाहिए तथा जो संस्कार दूसरे समय तक के लिए नहीं टाले जा सकते वे (गर्भाधान-जातकर्म-अन्नप्राशनादि) संस्कार अधिकमास क्षयमास में भी करना चाहिए इसमें दोष नहीं लगता है।

जिसका जन्म या मरण क्षयमास में हो उसकी वार्षिकी हेतु मास का निर्धारण तिथि के पूर्वापरभाग (करण) द्वारा करना चाहिए। अर्थात् तिथि के पूर्वार्द्ध (पहले करण) में पहले का मास और परार्द्ध (दूसरे करण) में आगे का मास लेना चाहिए।

अधिकमास की गणना--गर्भावस्था में, धन के व्याज निर्धारण में और सेवकों (नौकरों) को वेतनादि देने में अधिकमास की गणना करनी चाहिए अन्यत्र इसकी गणना नहीं होती है ॥२॥

मुहूर्तमार्त्तण्ड की "मार्त्तण्डप्रिया" हिन्दीटीका में संक्रान्ति प्रकरण समाप्त-१२।

ग्रन्थकर्तुः परिचयप्रकरणम्–१३

जन्मस्थान एवं कुल-गोत्र—

> श्रीमत्कौशिकपावनो हरिपदद्वन्द्वार्पितात्मा हरि-
> स्तज्जाऽनन्त इलासुरार्चितगुणो नारायणस्तत्सुतः।
> ख्यातं देवगिरेःशिवालयमुदक् तस्मादुदक् टापर
> ग्रामस्तद्वसतिर्मुहूर्त्तभवनं मार्तण्डमत्राकरोत् ॥१॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथालंकारमाह। श्रीमत्कौशिकेति। कुशिकस्यगोत्रापत्यानिकौशिकाः श्रीमन्तश्च तेकौशिकाश्चतेतथा तान्पावयतीतितथा हरिपदद्वंद्वार्पितात्मा हरिर्वासुदेवः तस्यपदद्वंद्वं चरणयुगंतस्मिन्नर्पितः आत्मा अंतःकरणं येनसतथा—

"आत्मादेहेधृतौजीवे"

इत्यभिधानात् एवंविधोयोहरिस्तज्जस्तस्माज्जातोयोनंतनामा। किंलक्षणः इलासुरार्चितगुणः इलापृथ्वी तस्यांसुरादेवाब्राह्मणाः तैरर्चिताः पूजितागुणाः शमदमतपोदानाध्ययनादिगुणायस्य स तथा जितेंद्रियोवेदनिधिः स्मृतिज्ञोदृढव्रतोयज्ञकृदन्नदातेत्यादिगुणसंपन्न इत्यर्थः। तत्सुतो नारायणः मुहूर्त्तभवनं-मुहूर्त्तानांभवनं सद्ममार्तण्डनामग्रंथमकरोत्। अत्र कुत्रः देवगिरेः सकाशात् उदक्उत्तरस्यांदिशियत्ख्यातंपुराणप्रसिद्धंशिवालयंघुश्मेशशिवालयमितिप्रसिद्धम्। ज्योतिर्लिङ्गस्थानमस्ति तस्माच्छिवालयादुदगुत्तरस्यांदिशि यः टापर ग्रामोऽस्ति तत्रटापरग्रामे अकरोदित्यर्थः। किंभूतोनारायणः तद्वसतिः तस्मिन्टापरग्रामेवसतिर्वासोयस्यसतथेति ॥१॥

मार्त्तण्डप्रिया—

देवगिरि पर्वत से उत्तर में जो घुश्मेश[1] ज्योतिर्लिङ्ग का स्थान है वहाँ से उत्तर में टापर[2] नामक ग्राम में निवास करने वाले कौशिकगोत्रीय "हरि" का पौत्र और "अनन्त" का पुत्र "नारायण" ने अपने ग्राम में इस "मुहूर्तमार्त्तण्ड" ग्रन्थ का निर्माण किया।

विशेष——भारतीय ज्यौतिष[3] के अनुसार ग्रन्थकार "नारायण" कौशिक गोत्रीय वाजसनेई ब्राह्मण थे। देवगिरि[4] "दौलताबाद" के उत्तर में शिवालय (घृश्णेश्वर) नामक जो प्रसिद्ध स्थान है उससे उत्तर में "टापर" नामक ग्राम के ये निवासी थे। इनके पूर्वजों का मूल निवासस्थान "सासमणूर" था। इनका वंशवृत्त इस प्रकार मिलता है—

अनन्त
|
कृष्णा
|
हरि
|
अनन्त
|
नारायण (मुहूर्तमार्त्तण्ड के रचयिता) ॥१॥

---

१. प्रसिद्ध एलोरा गुफाओं के निकट स्थित "घुश्मेश्वर" महादेव शिव के द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में से एक हैं। इसके महत्व के सम्बन्ध में एक कथा मिलती है कि देवगिरि के पास के निवासी सुधर्मा नामक ब्राह्मण ने सन्तान हेतु द्वितीयविवाह किया उसकी दूसरी पत्नी "घुश्मा" नित्य पार्थिवपूजा करके उन पार्थिव लिङ्गों को एक तालाब में विसर्जित कर देती थी। समय आने पर उसने एक पुत्र को जन्म दिया। कुछ समयबाद ईर्ष्यावश उसकी सौत ने बालक को मारकर उसी तालाब में डाल दिया उधर जब घुश्मा पार्थिव विसर्जन करके लौट रही थी तो उसका पुत्र जीवित होकर उसके पास आ गया और शिव भी प्रगट होकर उसको दर्शन दिए बाद में घुश्मा की प्रार्थना पर वे ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में वहाँस्थापित हो गये जिसके कारण उनका घुश्मेश्वर नाम प्रसिद्ध हुआ।

२. १९।५७ उत्तर अक्षांश और ७५।१५ पूर्व देशान्तर पर यह स्थान है।

३. "शंकर बालकृष्ण दीक्षित" द्वारा रचित।

४. महाराष्ट्र राज्य के औरङ्गाबाद जिले में।

ग्रन्थमाहात्म्य—

यःषष्ट्यायुत शतवृत्तबद्धमेनं
मार्त्तण्डं पठतिनरः स विश्वपूज्यः।
बह्वायुः सुखधनपुत्रमित्रभृत्यान्
संप्राप्नोत्यविकलधीश्चतीर्थसिद्धिम् ॥२॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथास्यपठनेफलश्रुतितथाग्रन्थेवृत्तासंख्यांप्रहर्षिण्याह। षष्ट्यायुतंशतं १६० तन्मितानिवृत्तानितैर्निबद्धः कृतः योयं मार्तण्डः तमेनंमार्तण्डं योनरः पठतिसविश्वपूज्योभवति। न केवलंविश्वपूज्योभवति। अपितुबह्वायुःसुखधनमित्रपुत्रभृत्यान् संप्राप्नोति। मुहूर्त्तादानात्साधितकार्यस्यविश्वस्यपूज्योभवतीतियुक्तं जनानांयथाथमुहूर्त्तादानात्कार्यसिद्धिजनितपुण्येनबह्वायुरारोग्यादीनिसंप्राप्नोतीतियुक्तम्। च परम् अविकलधीर्भवति नविकलाधीर्बुद्धिर्यस्येतितथा। अत्रमुहूर्त्तमार्त्तण्डेयद्गर्भाधानादिकमुक्तंतत्रान्यबहुसंहिताग्रंथानपेक्षत्वादविकलधीत्वमुक्तम्। अतएवतीर्थसिद्धिप्राप्नोति। तीर्थशास्त्रं तस्यसिद्धिस्ताम्। अल्पग्रन्थेन बह्वर्थसिद्धेः। यद्वा तीर्थगुरुस्तस्यसिद्धिः शास्त्रोपदेशलक्षणा ताम्। यद्वा तीर्थयागस्तेन कृत्वायागसुखादिलक्षणासिद्धिस्तांप्राप्नोति। "तीर्थशास्त्राध्वरक्षेत्रोपायोपाध्यायमन्त्रिषु" इति विश्वः॥ २॥

मार्त्तण्डप्रिया—

जो कोई भी "एक सौ साठ" श्लोकों से निबद्ध इस मुहूर्तमार्त्तण्ड को पढ़ेगा वह निर्मल बुद्धि और विश्वपूज्य होकर अनेकानेक सुख साधनों को प्राप्त करते हुए बहुत विधाओं में सुयश प्राप्त करेगा।

ग्रन्थकार के इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि इस ग्रन्थ में १६० श्लोक हैं और प्रत्येक विषयों के मुहूर्तो की युक्तियुक्त व्यवस्था १६० श्लोकों में ही की गई है अतः इस ग्रन्थ को भलीभाँति पढ़नेवाला और स्मरणरखनेवाला अवश्य ही विश्ववन्द्य और सुखी होगा ॥२॥

---

१. इस ग्रन्थ में प्रकरणानुसार ५-४-१९-५५-१-२१-२१-१९-७-१-३-२-४ १६२ श्लोक हैं। परन्तु ग्रन्थकार ने मंगलाचरण से ग्रन्थ माहात्म्य के श्लोक तक की संख्या को ही लिखा है आगे के २ श्लोकों को (रचनाकाल और उद्देश्य) कों नहीं बताया है।

रचनाकाल––

त्र्यंकेन्द्रप्रमितेवर्षे शालिवाहनजन्मतः ।
कृतस्तपसि मार्त्तण्डोऽयमलंजयतूद्गतः ॥३॥

मार्त्तण्डवल्लभा—

अथग्रन्थस्याशिषमनुष्टुभाह । त्र्यंकेति शालिवाहनजन्मतः त्र्यंकेन्द्रप्रमिते वर्षे १४९३ तपसि माघेमार्तण्डोः मुहूर्तमार्त्तण्डः कृतः । नामैकदेशग्रहणेनाम-ग्रहणम् । अयंमुहूर्त्तमार्तण्डः अलम् अतिशयेनजयतु । यद्वायमलंमार्त्तण्डयुग्म-मुद्गतमुदयंप्राप्तंजयतु सर्वोत्कर्षेणास्तु ॥३॥

मार्त्तण्डप्रिया—

शालिवाहन शक[1] १४९३ (विक्रम-संवत १६२८) के माघमास में रचित[2] यह ग्रन्थ "मुहूर्तमार्त्तण्ड" उदित (प्रकाशित) होकर इस जगत (संसार) में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त करे ॥३॥

रचना का उद्देश्य––

पूर्ववाक्यार्थमादाय ग्रंथोऽयं रचितो लघुः ।
पठनार्थमशक्तानामंगी कार्यो बुधैर्मुदा ॥४॥

समाप्तोऽयं नारायणदैवज्ञ विरचितो मुहूर्तमार्त्तण्डः ॥

मार्त्तण्डवल्लभा––

अथैतद्ग्रन्थांगीकारार्थबुधप्रार्थना, सुगमम् । इतिमुहूर्त्तमार्त्तण्डव्याख्या-समाप्ता ।

---

१. ईशवीय सन १५७२ ।

२. माघमास में मकर संक्रान्ति से "मार्त्तण्ड" देव के उत्तरायण होने पर देवताओं का दिन प्रारम्भ होता है और "मार्तण्ड" में तेज बढ़ना शुरू हो जाता है । संभवत इसी कारण लेखक ने इस ग्रन्थ का समापन माघमास में सूर्य के उत्तरायण होने पर किया क्योंकि इस मुहूर्त्तग्रन्थका वैशिष्ट्य "मार्त्तण्ड" ही है ।

आसीत्सासमणूरनामनगरेश्रीकौशिकस्यान्वयो-
ऽनंतोवाजसनेयिपूज्यचरणोमाध्यंदिनीयाग्रणीः।
कृष्णस्तत्तनयःश्रुतिस्मृतिविदामग्रेसरेज्योहरि-
स्तत्पुत्रःश्रुतिवित्तदात्मजवरोनंतोग्निहोत्रीगुरुः॥
तत्पुत्रस्तदनुग्रहात्तधिषणो　　नारायणष्टापर
ग्रामेशिष्यगणेच्छयानिजकृतग्रंथस्यटीकांस्फुटम् ।
चक्रेऽस्यांकृपयापरोपकृतयेशोध्यंदुरुक्तंबुधै-
र्मादृक्षस्यविलोक्यधार्ष्टर्यमपितेकुप्यन्तिनोसज्जनाः ॥
सुखनिधिपुरुषार्थक्ष्मा१४९४भिः　समाभिः
परिमितशककालेजातमार्त्तण्डटीकाम् ।
लिखतिपठतिविप्रःसोत्रभूयाद्धरित्र्यां
सुखनिधिपुरुषार्थक्ष्मासमोवाक्षमावान् ॥४॥
इतिस्वकृतमुहूर्त्तमार्त्तण्डटीका मार्त्तंडवल्लभाख्या समाप्ता ॥

॥ शुभंभवतु ॥

मार्त्तण्डप्रिया—

पूर्व के आचार्यों के मतों का सारांश लेकर अशक्तों (साधारण ज्ञान वालों) के पढ़ने लायक यह छोटा सा "ग्रन्थ" मैंने (नारायण) रचा है विद्वान लोगों से मेरी प्रार्थना है कि इसको सहर्ष स्वीकार करें ॥४॥

मुहूर्तमार्त्तण्ड को "मार्तण्डप्रिया" हिन्दीटीका में ग्रन्थकार परिचयप्रकरण समाप्त—१३।

श्लोकानुक्रमणिका

य वर्ग

श वर्ग